MAED-04

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

शैक्षिक तकनीकी

Educational Technology

MAED-04

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

शैक्षिक तकनीकी

Educational Technology

g

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. दामीना चौधरी
सहआचार्य, शिक्षा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

सदस्य

- **प्रो. सोहन वीर सिंह चौधरी**
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली
- **प्रो. मंजूलिका श्रीवास्तव**
  दूरस्थ शिक्षा परिषद
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
  नई दिल्ली
- **प्रो. एस.पी. मल्होत्रा**
  कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र
- **डॉ. अनिल शुक्ला**
  लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.)
- **प्रो. डी.आर. गोयल**
  एम.एस. विश्वविद्यालय
  बड़ौदा, गुजरात

संपादन तथा पाठ लेखन

संपादक मंडल

- **प्रो.(डॉ.) चन्द्र भूषण शर्मा**
  इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
- **सरोजिनी उपाध्याय**
  श्री स्वरूप गोविन्द पारीक स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जयपुर
- **प्रो.(डॉ.) रीता अरोड़ा**
  राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
- **डॉ. दामीना चौधरी,** सहआचार्य, शिक्षा
  वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

लेखक

- **प्रो.(डॉ.) रीता अरोड़ा**
  शिक्षा विभाग **राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)**
- **डॉ. सी.बी. शर्मा**
  शिक्षा अध्ययनशाला
  इन्दिरा गांधी मुक्त विश्वविद्यालय नई दिल्ली
- **सरोजिनी उपाध्याय**
  श्री स्वरूप गोविन्द पारीक
  स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जयपुर
- **प्रो. जगन्नाथ मोहन्ती**
  2935, गौरी नगर, भुवनेश्वर
- **प्रो.पी.के. साहू**
  शिक्षा विभाग
  इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
- **प्रो. त्रिलोक राज बावा**
  सी.आई.ई.टी., एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली
- **श्रीमति एस. मित्तल**
  आई/सी, ट्रेनिंग प्रोग्राम
  राजस्थान संस्कृत अकादमिक, जयपुर
- **डॉ. हरमेश लाल**
  सी.आई.ई.टी., एन.सी.ई.आर.टी.,
  नई दिल्ली
- **डॉ. हंसराज पाल**
  इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन
  देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. प्रभाकर सिंह**
  दृश्य श्रव्य शोध केन्द्र
  देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. अनिल शुक्ला**
  शिक्षा विभाग
  लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
- **डॉ. ओ.पी. शर्मा**
  एस.जी.एल. काबरा, टी.टी. कॉलेज, जोधपुर
- **डॉ. हरमेश लाल**
  सी.आई.ई.टी., एन.सी.ई.आर.टी.,
  नई दिल्ली
- **रजनी शर्मा**
  श्री अग्रसेन पी.जी.टी.टी. कॉलेज
  केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर
- **रीटा शर्मा**
  श्री अग्रसेन पी.जी.टी.टी. कॉलेज
  केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. नरेश दाधीच	**प्रो. अनाम जैतली**	**प्रो. पी.के. शर्मा**
कुलपति	निदेशक	प्रभारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	**संकाय विभाग**	**पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

MAED-04

शैक्षिक तकनीकी

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अनुक्रमणिका

	इकाई	पृष्ठ संख्या
1.	शैक्षिक तकनीकी : अवधारणा, प्रकृति एवं क्षेत्र	6
2.	शैक्षिक तकनीकी का सैद्धान्तिक आधार- प्रथम	25
3.	शैक्षिक तकनीकी का सैद्धान्तिक आधार- (द्वितीय)	39
4.	प्रणाली उपागम	55
5.	भारत मे शैक्षिक तकनीकी में शोध की प्रवृत्ति	73
6.	ई - लर्निंग : अर्थ, रीतियाँ एवं कार्यविधि	94
7.	ज्ञान रचनावाद	109
8.	अधिगम का प्रबन्ध	123
9.	साधिकारिता अधिगम	137
10.	अभिक्रमित अनुदेशन - संकल्पना, सिद्धान्त, प्रकार, प्रक्रिया अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक तथा इसके विकास में प्रेसी, स्किनर,क्राउडर, गिलबर्ट का योगदान	150
11.	कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन : अवधारणा एवं क्षेत्र, शोध, कार्यालय प्रबन्ध तथा पुस्तकालय में कम्प्यूटरों का प्रयोग	170
12.	व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति	180
13.	सहयोगात्मक अधिगम	186
14.	सूक्ष्म- शिक्षण	204
15.	शिक्षण प्रतिमान	218
16.	अन्तः क्रिया विश्लेषण प्रणाली	231
17.	शिक्षण व्यूह रचनाएँ	251
18.	शिक्षण कि व्यवस्था	263
19.	सम्प्रेषण	277
20.	सम्प्रेषण के सिद्धान्त	288
21.	दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री	300
22.	अन्तः क्रियात्मक टेलिविजन	310
23.	मुद्रित सामग्री का महत्व, औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में अनुरूपक एवं खेल	322
24.	माध्यम वर्गीकरण योजना	330
25.	स्थायी प्रक्षेपित सामग्री एवं गतिशील चित्र	343
26.	शिक्षा मे आकाशवाणी प्रसारण एवं श्रव्य टेप का महत्व तथा रेडियो पाठ का निर्माण	354
27.	ई.टी.वी. क्लोज सर्किट टी.वी., वी.सी.आर. तथा उपग्रह सम्प्रेषण का महत्व	364
28.	बहु आयामी उपागम कि अवधारणा, भूमिका एवं महत्व	378
29.	दूरस्थ शिक्षा में मुद्रण आधारित, स्व-अध्ययन सामग्री, इलैक्ट्रॉनिक मीडिया, सी.ए.आई., इन्टरेक्टिव वीडियो, टैलीकॉन्फ्रैंन्सिंग, कम्प्यूटर नैटवर्किंग माध्यम का प्रयोग	393

इकाई-1

शैक्षिक तकनीकी : अवधारणा, प्रकृति एवं क्षेत्र Educational Technology - Concept, Nature and Scope

इकाई की संरचना

(Structure of unit)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objective)

1.1 प्रस्तावना
(Introduction)

1.2 शैक्षिक तकनीकी की अवधारणा
(Concept of Education Technology)

1.3 शैक्षिक तकनीकी की परिभाषाएँ
(Definitions of Educational Technology)

1.4 भौतिक विज्ञान
(Physical Science)

1.5 व्यावहारिक विज्ञान
(Applied Science)

1.6 प्रणाली उपागम
(System Applied)

1.7 शैक्षिक तकनीकी में आघतन विकास
(Latest Development in Educational Technology)

1.8 शैक्षिक तकनीक मे का प्रयोग
(Use of Educational Technology)

1.9 सारांश
(Summary)

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

1.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन की समाप्ति पर विद्यार्थी -

(i) शैक्षिक तकनीकी का अर्थ एवं प्रकृति को समझ पाएगें।

(ii) शैक्षिक तकनीकी के विभिन्न प्रकारों को वर्गीकृत करेंगें एवं शिक्षा में उनके प्रयोगों को जान पायेगें।

(iii) शिक्षा में उन्नत तकनीक के योगदान का विश्लेषण कर पायेगें।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रिय विद्यार्थी, शैक्षिक तकनीकी शिक्षा अध्ययन में एक उन्नत क्षेत्र के रुप में विकसित हो चुकी है। इस क्षेत्र का विकास छठे दशक से हुआ है । इसका कारण तकनीकी प्रगति एवं शिक्षा में इसका प्रयोग रहा है । भारत में हमने शिक्षण अधिगम व्यवस्था को प्रभावित करने वाले बहुत से प्रयोगों को देखा है । इस इकाई का उद्देश्य शैक्षिक तकनीकी की अवधारणा, इसकी प्रकृति एवं शिक्षा में इसके प्रयोग से आपको अवगत करवाना है।

1.2 शैक्षिक तकनीकी की अवधारणा (Concept of Educational Technology)

शैक्षिक तकनीकी की अवधारणा पर विभिन्न लेखकों ने कार्य किया है । किन्तु निम्न शैक्षिक तकनीकी की स्पष्ट तस्वीर प्रस्तुत करेगें।

ऐरिक अशबी (1987) ने शिक्षा में चार क्रान्तियों का उल्लेख किया है: बालकों एवं युवाओं को शिक्षित करने के केन्द्र के रुप में विद्यालयों की स्थापना, शिक्षा के साधन के रुप में लिखित शब्द अपनाना, प्रिंटिंग प्रेस का अन्वेषण एवं इलैक्ट्रिकोनिक्स में विकास शैक्षिक तकनीकी मे यह दृष्टिकोण समाहित होता है, जिसके द्वारा दर्शन शास्त्र, मनोविज्ञान, समाज शास्त्र, भाषा शास्त्र, संचार, प्रबन्ध अध्ययन एवं सम्बन्धित क्षेत्रों द्वारा विकसित उपयुक्त वैज्ञानिक एवं तकनीकी पद्धतियों एवं अवधारणाओं को प्रयोग किया जा सकता है। एक अवधारणा के रुप में शैक्षिक तकनीक में अनिवार्य रुप से मशीनों एवं हार्डवेयर का प्रयोग होना जरुरी नहीं है किन्तु इसके अन्तर्गत सक्षमता एवं प्रभावशीलता के लिए जरुरी संचार, उपकरण एवं स्त्रोतों का प्रयोग किया जाता है। संक्षेप में, शैक्षिक तकनीक के अन्तर्गत व्यवस्थाओं के विकास, प्रयोग एवं मूल्यांकन तथा अधिगम के क्षेत्र में तकनीक एवं अन्य उपकरणों के प्रयोग को लिया जाता है।

1.3 शैक्षिक तकनीकी की परिभाषा (Definition of Educational Technology)

शैक्षिक तकनीक की अवधारणा में शिक्षा की तकनीक एवं शिक्षा में तकनीक की द्विपक्षी व्यवस्था को सम्मलित किया गया है। शिक्षा की तकनीक मुख्य क्षेत्र है, जिसमें सिद्धान्तों एवं मूल तत्वों का अध्ययन तथा अनुदेशन प्रक्रिया अवधारणाओं एवं पद्धतियों को लिया जाता है। जबकि शिक्षा में तकनीक का तात्पर्य ओडियो-विडियो उपकरणों, टेलिविजन तथा कम्प्यूटर जैसे विभिन्न संचार तरीकों के प्रयोग के अध्ययन से है। ये संचार उपकरण अनुदेशन प्रक्रिया को और प्रभावी एवं सक्षम बनाते है। इसी द्विपक्षी व्यवस्था पर केन्द्रित

करते हुए बहुत से विशेषज्ञों एवं संस्थाओं ने शैक्षिक तकनीक शब्दावली की विभिन्न परिभाषाएँ प्रस्तुत की है। उनमें व्यापक स्वीकृत कुछ परिभाषायें निम्न हैं -

यूनेस्को विशेषज्ञों (1969) ने शैक्षिक तकनीक को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "यह तकनीक एवं पद्धतियों का विज्ञान है, जिनके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। इसका मुख्य सम्बन्ध उद्देश्यों के निर्धारण के काम से नहीं है.....सम्बन्ध व्यवस्थाओं के विकास, प्रयोग एवं मूल्यांकन से होता है। यह मानव अधिगम प्रक्रिया को उन्नत बनाने हेतु तकनीक एवं उपकरणों के प्रयोग से जुड़ी होती है। यह अध्ययन अधिगम की व्यवहारवादी विज्ञान में वैज्ञानिक रीतियों के अनुकरण के फलस्वरुप उपजी संचार प्रक्रिया होती है। इस प्रक्रिया में विस्तार संचार जैसे प्रसारण, टेलिविजन फिल्म तथा अन्य ऑडियो-विडियो संचार के प्रयोग की आवश्यकता हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती है । "

नेशनल सेंटर फार प्रोग्रामड लर्निग, यू.के. की रिपोर्ट (1971) में कहा गया है कि "शैक्षिक तकनीक अध्ययन एवं प्रशिक्षण की प्रभावशीलता एवं सक्षमता की वृद्धि हेतु अधिगम एवं अधिगम दशाओं के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान के प्रयोग को कहते हैं। वैज्ञानिक रुप से प्रतिष्ठित सिद्धान्तों के अभाव में शैक्षिक तकनीक अनुभवात्मक रुप से जांची गयी तकनीकों को अधिगम दशाओं के उन्नयन हेतु प्रयोग करती है।

गेसेस (1971) के अनुसार "शैक्षिक तकनीक को विद्यार्थी, शिक्षक एवं तकनीकी, साधनों को प्रभावकारी तरीके से एक साथ लाने के निरंतर एवं जटिल प्रयास के एक भाग के रुप में देखा जा सकता है।"

शैक्षिक संचार एवं तकनीकी संघ (AECT) की तकनीकी समिति (1972) ने स्पष्ट करते हुये लिखा है कि"शैक्षिक तकनीक एक ऐसा क्षेत्र है, जो कि व्यवस्थात्मक पहचान, विकास संगठन एवं अधिगम स्त्रेतों के पूर्ण उपयोग द्वारा, प्रक्रिया प्रबन्ध द्वारा मानवीय अधिगम को सुविधाजनक बनाता है। इसके ' अन्तर्गत इन निर्देशनात्मक व्यवस्थाओं के विकास, उपस्थित स्त्रोतों की पहचान, विद्यार्थियों को स्त्रोत उपलब्ध करवाना तथा इन प्रक्रियाओं का प्रबंध करना सम्मलित किया जा सकता है। किन्तु यह केवल इन्हीं चीजों तक सीमित नहीं रहती है। इसके कार्यो में उन सभी की कम-ज्यादा भागीदारी होती है, जो कि इसके उद्देश्यों एवं मानवीय अधिगम के सरलीकरण पक्ष से जुड़े होते हैं। किन्तु इसके संवालनकर्ताओं की मान्यताओं एवं विशिष्ट धारणाओं के अनुरुप इसकी क्षेत्र एंव सीमायें तय की जा सकती हैं तथा उन्हें स्पष्टत: परिभाषित किया जा सकता है।"

राष्ट्रीय शैक्षिक तकनीक परिषद (1973) ने इसको परिभाषित करते हुए लिखा है कि शैक्षिक तकनीक का तात्पर्य तीन विभिन्न चीजों (i) तकनीक (ii) व्यवस्थायें, एवं (iii) मानवीय अधिगम की प्रक्रिया को उन्नत बनाने हेतु सहायता उपकरणों का विकास प्रयोग एवं मूल्यांकन है।"

जॉन लीथम (1973) ने शिक्षक की अनुकूलन भूमिका पर विशिष्टि विचार विमर्श करते हुए "शैक्षिक तकनीक' शब्दावली को परिभाषित किया है। उनके अनुसार "शैक्षिक तकनीक का

सम्बंध अध्ययन एवं अधिगम की आधुनिक पद्धतियों एवं तकनीकों के व्यवस्थात्मक प्रयोग से है। यह शिक्षक की विभिन्न भूमिकायें मानकर चलती है, जिनमें कुछ भूमिकायें परम्परागत होती है तथा कुछ नयी उभरती हुई होती है।' जॉन लीथम का मानना रहा है कि कार्यक्रम अधिगम के विकास में क्लोज सर्किट टेलिविजन', कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन तथा शिक्षक की भूमिका अधिगम की प्रभावशीलता के महत्वपूर्ण निर्धारक कारक होते है। शैक्षिक तकनीक के अध्ययन का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्रत्येक शिक्षक की क्षमताओं को उजागर करना होता है। शिक्षक की भूमिका को सम्मलित किये बिना शैक्षिक तकनीक को परिभाषित करना अव्यावहारिक होगा। आज यह लगभग सभी स्वीकार करते हैं कि विगत में अध्ययन मशीनों का प्रयोग इसलिए असफल हो गया क्योंकि इन्हें शिक्षक की क्षमताओं के प्रसार की अपेक्षा उसकी उपस्थिति के विकल्प के रुप में प्रयोग किया गया।

शैक्षिक तकनीक की' कुछ अन्य विशेषतायें निम्नलिखित हैं -

APEID (1975) के अन्तर्गत 'एशिया के टेक्नीकल वर्किंग मूप फार एजुकेशनल टेक्नोलोजी की रिपोर्ट में कहा गया है कि "शैक्षिक तकनीक को अधिगम व्यवस्था को प्रभावी, अच्छा एवं प्रवीण बनाने हेतु साधन एवं सेवा दोनों रुपों में देखा जाता है। यह औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा दोनों का ही एकीकृत भाग है। शैक्षिक तकनीक का एक पक्ष शैक्षिक टेलिविजन, रेडियो तथा अन्य ऑडियो-वीडियो उपकरणों जैसी विशिष्ट तकनीकियों के प्रयोग से जुडा हुआ है तो दूसरे पक्ष के अन्तर्गत शैक्षिक तकनीक की दिशा की व्यवहारिक समस्याओं के लिए वैज्ञानिक एवं अन्य संगठित ज्ञान के प्रयोग के रुप में देखा जाता है। विकासशील देशों के विशिष्ट संदर्भ में, इसके अन्तर्गत मुख्य आग्रह उपलव्य मानवीय एवं तकनीकी स्त्रोतों के अधिकतम उपयोग हेतु तकनीक एव ज्ञान के प्रयोग पर होता है।"

OECD (1976) की रिपोर्ट में शैक्षिक तकनीक को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि "यह मैकेनिकल युक्तियों का थैला नहीं है वरन् यह अधिगम व्यवस्था का प्रारुप एवं क्रियान्वयन है। इसमें आधुनिक संचार पद्धतियों, दृश्य उपकरणों, कक्षा संगठन एवं अध्ययन पद्धतियों का सहारा लिया जाता है। इससे हमें किसी चमत्कार की आशा नहीं करनी चाहिये।"

युनेस्को/यू.एन.डी.पी. (1976) ने शैक्षिक तकनीक को शिक्षा सिद्धान्त के एक पृथक क्षेत्र के रुप में परिभाषित किया है, जिसका सम्बन्ध शैक्षिक स्त्रोतों के उपयोग के विकास एवं प्रयोग से होता है । अगर विस्तार से देखें तो इसमें निम्न सिद्धान्तों को लिया जाता है :-

1. स्पष्ट शैक्षिक उद्देश्य
2. विषय सूची के तत्वों का तार्किक क्रम
3. अध्ययन अधिगम प्रक्रिया की संरचना
4. ज्ञान प्राप्ति हेतु मॉडलों का विकास
5. अध्ययन अधिगम प्रक्रिया के साथ पृष्ठपोषण (Feedback) परिचय
6. मीडिया चयन एवं मीडिया चयन की कसौटी

7. उपकरण विकास - जो कि शैक्षिक, आर्थिक, सौन्दर्यबोधी एवं तकनीक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं।
8. व्यावहारिक परिस्थितियों में हार्डवेयर एवं सॉफ्टवेयर की प्रभावशीलता का अध्ययन, एवं
9. शैक्षिक व्यवस्था की प्रभावशीलता के विभिन्न उपागम।

दि फोन्टाना डिक्शनरी ऑव मॉडर्न थोट (1978) में इस शब्दावली को आगे विस्तृत करते हुए लिखा है कि उपकरण एवं मशीनें, भाषा प्रयोगशालायें, फिल्म, स्टाइड टेप रिकार्डर, टेलिविजन, रेडियो, विडियो टेप तथा कैमरे भी शिक्षक की प्रभावशीलता के क्षेत्र में बहुत ज्यादा विस्तृत कर दिया है। शैक्षिक तकनीक के आलोचक हमें सचेत कर रहे हैं कि निपुण लोगों के लिए यह उपयोगी है, जबकि आकस्मिक श्रमिकों को मशीनों पर काम करने पर अनअपेक्षित रुप से अटपटा लगता है तथा शिक्षकों को यह नहीं करना चाहिए कि उनके उत्तरदायित्वों को मशीने नियन्त्रित करने लगें। शैक्षिक तकनीक के समर्थकों का तर्क है कि यह शिक्षक का विकल्प नहीं वरन् उसकी सहायतार्थ एक उपकरण है तथा बालक आज तकनीकी विश्व में बड़े हो रहे हैं तथा उन्हें तकनीकी क्रियाविधि का प्रयोग एवं मूल्यांकन करना आना चाहिये।

दि इन्टरनेशनल एनसाइक्लोपीडिया ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलोजी (1996)ए में शैक्षिक तकनीक को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि 'यह एक समस्या निराकरण प्रक्रिया है। इसके अधिकांश पक्ष मीडिया एवं तकनीकी के द्वारा, शिक्षा एवं प्रशिक्षण के संदर्भ में, अध्ययन एवं अधिगम से जुडे होते हैं। शिक्षा के उपक्षेत्रों जैसे पाठ्यक्रम, निर्देशन एवं अधिगम, पद्धति एवं मीडिया, संगठन एवं प्रबन्ध में समस्या पैदा हो सकती हे। इनके समाधान करने के प्रयास में सूचना एवं सेचार तकनीकी से जुड़ी किसी भी शैक्षिक तकनीक का प्रयोग किया जा सकता है।"

विवेचन को और आसान बनाने के लिए यह अच्छा होगा कि हम कोलियर (1976) के इस प्रश्न का उत्तर खोजें कि "शैक्षिक तकनीक क्या है?" उसने शैक्षिक तकनीक की एक पुस्तक को उद्धृत करते हुए लिखा है कि यह पुस्तक ऑडियोवीडियो सहायता उपकरणों से सम्बन्धित नहीं है। मेरा लक्ष्य टेलिविजन को बढ़ावा देना नहीं है। शैक्षिक तकनीक को इलेक्ट्रोनिक युक्तियों से भ्रमित नहीं किया जाना चाहिए। शैक्षिक तकनीक उतनी ही विस्तृत है, जितनी की शिक्षा स्वयं विस्तृत है। इसका सम्बन्ध पाठ्यक्रम प्रारुप एवं मूल्यांकन तथा अधिगम अनुभव एव क्रियान्वयन की समस्या से होता है । वास्तव में यह शिक्षा के प्रति समस्या समाधान का विवेकीय दृष्टिकोण है, यह अधिगम एवं शिक्षण के बारे में एक व्यवस्थित एवं संशयवादी चिन्तन तरीका है। "

जेक्वेटा ब्लूमर ने कहा है "शैक्षिक तकनीक व्यावहारिक अधिगम की विधियों की सहायता से सिद्धान्तों और सामग्रियों का सुसंयोजित अनुप्रयोग है।"

शैक्षिक तकनीक का आधार विज्ञान है यह विज्ञान के व्यावहारिक पक्ष पर बल देती है। शिक्षा के अधिकाधिक प्रचार तथा प्रसार हेतु संचार की नव विकसित अवधारणा से 1950

की दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री को एक नयी दिशा में बढ़ने में सहायता मिली। इसके फलस्वरुप शिक्षा में साधनों तथा माध्यमों की भूमिका तथा उनके कार्य पर की जाने वाली विचार प्रक्रिया का स्थानान्तरण सरलता पूर्वक विचार संचार पर हो गया। शैक्षिक तकनीक का क्षेत्र नवीन सम्बन्धो तथा तर्कधारों की ओर प्रसारित हुआ। फलतः शैक्षिक तकनीक के सम्बन्ध में दो सम्प्रत्यों का उदय हुआ -

1. शैक्षिक तकनीक की भौतिक विज्ञान सम्बन्धी अवधारणा
2. शैक्षिक तकनीक की व्यावहारिक अवधारणा

सर्वप्रथम **लुम्सडेन** ने इस अन्तर को स्पष्ट किया और **सेइटलर** ने भी इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट किए। यह भिन्नता बौद्धिक स्तर तक ही नहीं, अपितु उससे भी अधिक है। भौतिक विज्ञान सम्बन्धी अवधारणा यन्त्रों का निर्माण तथा शैक्षिक अभिकल्पों को निर्माण करती है तो व्यावहारिक अवधारणा उनके प्रयोग पर बल देती है। इन दोनों के लिए विभिन्न प्रकार के कौशल प्रशिक्षण, ज्ञान तथा अभिवृति की आवश्यकता है।

मेरीडिथ (1965) ने ठीक ही कहा है कि "एक उत्तम वर्गीकरण विज्ञान का कार्य केवल मात्र सामग्री अथवा वस्तुओं को क्रमबद्ध करना ही नहीं, बल्कि वस्तुओं के सम्बन्ध में लोगों की विचार प्रक्रिया को भी क्रमबद्ध करना होता है।"

शिक्षक का सम्बन्ध निष्क्रिय तथा कच्ची सामग्री से नहीं होता वह तो जीते जागते ऐसे मस्तिष्कों के सम्पर्क में आता है जो अपने आस-पास के सामाजिक भौतिक पर्यावरण के साथ सार्थक समायोजन करने हेतु अपनी मूल प्रवृति से प्रेरित होते रहते है। शिक्षण प्रक्रिया का उत्पाद या परिणाम कठिनाई से ही उपलब्ध हो सकता है। हमारे सामने एक जटिल प्रश्न यह है कि हम अपेक्षाकृत कम लागत पर किस प्रकार और कितने प्रभावी तरीके से शैक्षिक तकनीक का उपयोग संचार प्रणाली के उत्थान के लिए कर सकते हैं । इस सम्बन्ध में और विकासशील राष्ट्रों के प्रसंग में, उल्लेखनीय बात यह है कि शैक्षिक तकनीक को स्थूल संसाधन जैसे शिक्षण मशीन के समान ही नहीं माना जा सकता। यदि ऐसा किया गया तो शैक्षिक तकनीक समाप्त हो जायेगी।

शैक्षिक तकनीक केवल एक अनुभव नहीं बल्कि अनेकानेक अनुभवों का संग्रह है। इसे ठीक-ठीक समझने के लिए जरुरी है कि हम सामान्य कक्षा कक्ष में हो रहे व्यापार तथा क्रियाकलापों का नवीन ढंग से अध्ययन करें।

स्किनर ने भी कहा है कि "हमारी सभी प्रमुख समस्याओं में मानवीय व्यवहार अन्तर्निहित है और उनका समाधान केवल जैव तकनीक से ही अप्राप्य है। इसके लिए व्यवहार की तकनीक की आवश्यकता है।"

यहां शैक्षिक तकनीक के तीन रुपों का वर्णन प्रस्तुत किया जा रहा है -

1. शैक्षिक तकनीक पर भौतिक विज्ञान का प्रभाव
2. शैक्षिक तकनीक पर व्यावहारिक विज्ञान का प्रभाव
3. प्रणाली उपागम

1.4 भौतिक विज्ञान
(Physical Science)

आधुनिक वैज्ञानिक युग में मानव ने विविध क्षेत्रों में तीव्रगति से विकास किया तथा विज्ञान की विभिन्न उपलब्धियों को सही स्वीकार किया और उसका चिन्तन वैज्ञानिक बनता चला गया, किन्तु वैज्ञानिक मानववादी चिन्तन में एक अनिवार्य अन्तर्विरोध दृष्टिगत होने लगा।

एक ओर मानव, मानव को ही विज्ञान के अमानवीय प्रभाव से मुक्त करना चाहता है तो दूसरी ओर वह मानवीय सहानुभूति के लिए विज्ञान की ही शरण लेता है।

वैज्ञानिक मानववाद का प्रभाव न केवल मानव के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, चारित्रिक तथा अध्यात्मिक चिन्तन पर पड़ा, अपितु इसने शिक्षा के विविध क्षेत्रों जैसे - पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, शिक्षा प्रणाली, अनुशासन, विद्यालय तथा मूल्यों पर भी अपना प्रभाव डाला है। वैज्ञानिक विकास ने एक ओर मनुष्य की शक्ति को अनन्त गुना बढ़ा ।दिया तो दूसरी ओर उसके भावात्मक पक्ष को संकुचित कर दिया । ज्ञान प्राप्ति की प्रचलित पद्धतियां व्यर्थ होती गई। फलत: शिक्षा के क्षेत्र में नव चिन्तन तथा नवीन तकनीकों का विकास हुआ।

इस नव शैक्षिक तकनीक का आधार मानवीय न होकर भौतिक होता है, अत: जब तक मानवीय अधिगम के लक्ष्यों को व्यवहारपरक नहीं बनाया जाये तब तक अधिगम क्रिया को यात्रिन्क आधारों पर आयोजित नहीं किया जा सकता, क्योंकि मशीन मनुष्य के भावात्मक पक्ष का आकलन नहीं करती, अपितु जिसे प्रत्यक्ष व्यवहार के रुप में देखा जा सकता है, तोला जा सकता है, नापा जा सकता है, बाह्य उद्दीपन द्वारा जिसे परिवर्तित किया जा सकता है उसका आकलन करती है ।

एरिक ऐशबी के अनुसार हम शैक्षिक तकनीक की दृष्टि से चतुर्थ क्रान्ति से गुजर रहे हैं। इस क्रान्ति में यन्त्रों का प्रयोग तीव्र गति से शिक्षा के क्षेत्र में किया जा रहा है, किन्तु यह विचारणीय बिन्दु है कि - "जो कुछ शिक्षक नहीं कर सकता उसे मशीन द्वारा किये जाने की परम्परा को चलने देने के स्थान पर हमें स्वयं से पूछना चाहिए कि वे कौन से क्षेत्र या भाग है जिन्हें मशीन नहीं कर सकती और इसे शिक्षक को ही करना चाहिए।"

शैक्षिक तकनीक के भौतिक विज्ञान की अवधारणा के रुप में अनुदेशन तकनीकी को लिया जा सकता है। अनुदेशन एवं शिक्षण दोनो ही सीखने की प्रेरणा मात्र है फिर भी दोनों में काफी अन्तर है अनुदेशन का भावार्थ है - सूचना देना। यह सूचना देने का कार्य शिक्षक के अतिरिक्त भी कोई दूसरा कर सकता है। जैसे विभिन्न प्रकार की दृश्य श्रव्य सामग्री छात्रों के सम्मुख पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत कर सकती है। इसमें शिक्षक एवं छात्रों के मध्य अन्तःक्रिया का होना आवश्यक नहीं है। यह तकनीकी हार्डवेयर उपागम पर आधारित है। इसमें कक्षा अथवा कक्षा से बाहर पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करने का वर्णन किया जाता है। पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करने का कार्य पत्राचार पाठ्यक्रम एवं खुले विश्वविद्यालय के प्रेस या टेलीविजन द्वारा पूर्ण

किया जा सकता है। अनुदेशन तकनीकी के अन्तर्गत टेपरिकार्डर, रिकार्ड प्लेयर, दूरदर्शन तथा शिक्षण मशीनों पर आधारित शिक्षण सामग्री आती है जिसकी सहायता से छात्रों के बड़े से बड़े समूह को थोड़े समय एवं खर्चे पर शिक्षा दी जा सकती है। यह तकनीक केवल ज्ञानात्मक पक्ष को ही विकसित का पाती है। भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों के विकास को यह अधिक महत्व नहीं देती है।

1.4.1 अनुदेशनात्मक तकनीकी की अवधारणायें

(Assumptions of Instructional Technology)

1. इसमें छात्र, शिक्षक की अनुपस्थिति में भी स्वयं अध्ययन से सीख सकते हैं।
2. इसमें छात्रों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए सीखने के अवसर प्रदान किये जाते है।
3. इसके निरन्तर प्रयोग से छात्रों को अधिगम हेतु समुचित/पुनर्बलन प्रदान किया जा सकता है।
4. पाठ्यवस्तु को छोटे-छोटे तत्वों में विभाजित किया जा सकता है तथा प्रत्येक का प्रस्तुतीकरण स्वतन्त्र रुप में किया जाता है।
5. इस तकनीकी में विविध विधियों एवं प्रविधियों की सहायता से अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है ।
6. इसमें अधिगम तत्वों को तार्किक क्रम में व्यवस्थित करके सीखने का समुचित वातावरण उत्पन्न किया जा सकता है ।

1.5 व्यावहारिक विज्ञान (Behavioural Science)

'मनोविज्ञान' का अर्थ है मानव व्यवहार के अध्ययन का विज्ञान। यह विज्ञान मानव व्यवहार का अध्ययन तथा विश्लेषण करता है तथा शिक्षा उस व्यवहार मे वांछित संशोधन कर मनुष्य को समाज के आदर्शों तथा मानकों के अनुरुप बनाती है। इस प्रकार अधिगम, अनुभव एवं प्रशिक्षण द्वारा व्यवहार में परिवर्तन होता है।

बोरिंग लैंगफील्ड एवं वेल्ड के अनुसार "जब अनुक्रिया जटिल होती है उस समय यह व्यवहार कहलाती है। व्यवहार का परिस्थिति से वैसा ही सम्बन्ध होता है जैसा कि अनुक्रिया का उद्दीपन से होता है।"

गतिशीलता ही व्यवहार का प्राण है और इस विशेषता के कारण व्यवहार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र ' में अध्ययन का विषय बना है। व्यवहार जिस भी क्षेत्र में होता है, परिस्थिति से प्रभावित होता है। इसमें 'वैयक्तिक विभिन्नता पाई जाती है। कक्षा में समान परिस्थिति के होते हुए भी कुछ छात्र बहुत अच्छे अंक प्राप्त करते हैंअन्य नहीं। इस प्रकार व्यवहार में संशोधन की प्रक्रिया को अधिगम की प्रक्रिया के रुप में जाना जाता है।

शैक्षिक तकनीक के क्षेत्र में जो मानव के व्यवहार का अध्ययन करती है उसे व्यवहार तकनीकी कहते हैं। व्यवहार तकनीकी शिक्षण में मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों एवं उपायों के प्रयोग पर बल देती है। जिससे छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सके। व्यवहार तकनीकी के क्षेत्र में वी.एफ स्किनर जैसे सुप्रसिद्ध व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिकों का विशेष योगदान है। स्किनर ने अधिगम सम्बन्धी सक्रिय अनुकूलन सिद्धान्त प्रतिपादित' किया और अपने द्वारा किये गये प्रयोगों से यह सिद्ध किया कि सक्रिय अनुकूलन सिद्धान्त द्वारा न केवल पशुओं को अपितु बालकों तथा युवकों को भी सफलतापूर्वक प्रशिक्षित किया जा सकता है।

स्किनर ने अपनी पुस्तक में व्यवहार तकनीकी का उल्लेख भी किया है। स्किनर के अतिरिक्त फलेण्डर्स, एमीडोन रॉयन, ओवर तथा एण्डरसन ने व्यवहार तकनीकी के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। व्यवहार तकनीकी के प्रणेताओं ने मनुष्य को विषयवस्तु बनाया है। इसमें छात्र व्यवहार के अध्ययन के साथ-साथ शिक्षक व्यवहार का अध्ययन भी किया जाता है।

1.5.1 व्यवहार तकनीकी की अवधारणायें

(Assumptions of Behavioural Technology)

व्यवहार तकनीकी सम्प्रत्यय निम्नलिखित अवधारणाओं पर आधारित है -

(क) शिक्षक व्यवहार निरीक्षणीय है।

(ख) शिक्षक व्यवहार मापनीय है।

(ग) शिक्षक व्यवहार सापेक्षिक है।

(घ) शिक्षक व्यवहार सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक है।

(ङ) शिक्षक व्यवहार परिवर्तनीय है।

व्यवहार तकनीकी का कार्य क्षेत्र शिक्षक के कक्षा व्यवहार का अध्ययन, निरीक्षण, विश्लेषण एवं मूल्यांकन करना है तथा इसमें शिक्षक के व्यवहार को प्रभावशाली बनाने हेतु अनेक प्रकार की नवीन शिक्षण विधियों को अपनाया जाता है जैसे - अभिक्रमित अनुदेशन, सूक्ष्म शिक्षण, कक्षा शिक्षण अन्त: प्रक्रिया, समूह शिक्षण, अनुकरणीय शिक्षण आदि।

1.5.2 व्यवहार तकनीकी की विशेषताएं

(Characteristics of Behavioural Technology)

1. इसमें मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों का अनुकरण किया जाता है।
2. व्यवहार तकनीकी सॉफ्टवेयर उपागम का अनुसरण करती है।
3. यह ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक दोनों ही उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता प्रदान करती है।
4. व्यवहार तकनीकी का उद्देश्य कक्षा व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना है।
5. इस तकनीकी के द्वारा कक्षा में शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों प्रकार के व्यवहारों का अध्ययन किया जा सकता है।

6. इस तकनीक के माध्यम से छात्राध्यापकों का ध्यान छात्रों की व्यक्तिगत विभिन्नताओं की ओर केन्द्रित करवाया जाता है ताकि इन विभिन्नताओं को ध्यान में रखते हुए शिक्षण किया जा सके।
7. इस तकनीक से मूल्यांकन को वैज्ञानिकता प्रदान की जा सकती है।
8. इस तकनीकी के द्वारा शिक्षण के मध्य में छात्रों तथा शिक्षण अभ्यास काल में छात्राध्यापकों को पुनर्बलित किया जाता है।

1.5.3 व्यवहार तकनीकी के तत्व

(Elements of Behavioural technology)

व्यवहार तकनीकी में निम्नलिखित तत्व निहित हैं -

1. अधिगम प्रक्रिया- अधिगम का मुख्य उद्देश्य छात्र के व्यवहार में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन करना है। अधिगम प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पूर्व शिक्षक को कुछ ऐसे बिन्दुओं को विशेष रुप से ध्यान रखना चाहिए, जो छात्र के अधिगम को प्रभावित करते हैं जैसे - मूलप्रवृतियां, सहज क्रियाएं, परिपक्वता तथा थकान।

(अ) मूल प्रवृतियां तथा सहज क्रियाएं प्रत्येक बालक जन्म से लेकर पैदा होता है, अत: उन्हें सिखाया नहीं जाता। ये मूल प्रवृतियां तथा सहज क्रियाएं बालक के अधिगम को प्रभावित करती हैं ।

(ब) परिपक्वता बालक के अधिगम को प्रभावित करती है, यदि किसी विषय को सीखने की दृष्टि से बालक शारीरिक अथवा मानसिक दृष्टि से परिपक्व ही नहीं हैं तब अधिगम प्रक्रिया के द्वारा उसमें वांछित परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

(स) शारीरिक एवं मानसिक थकान भी बालक के अधिगम को प्रभावित करती है।

2. अधिगम तत्व (**Learning Elements**) - अधिगम हेतु मुख्य रुप से तीन तत्व आवश्यक है -

(अ) सीखने वाला

(ब) उद्दीपक

(स) अनुक्रिया

इन तीनों तत्वों में जितना अच्छा परस्पर समन्वय रखा जायेगा उतना ही अधिगम अधिक प्रभावशाली रहेगा।

3. सामीप्यता (Proximity) - व्यवहार तकनीकी का प्रयोग करते समय समीपता एक अनिवार्य तत्व है। किन्हीं भी दो विषयों में जितनी अधिक समीपता तथा समानता होगी अधिगम उतना ही सरल तथा स्थायी होगा।

4. अभ्यास (Excercise) - करत करत अभ्यास के जडमति होत सुजान" इस कहावत की तरह अधिगम हेतु अभ्यास किया जाना आवश्यक है। अभ्यास के द्वारा सीखे गये विषय पर अधिकार प्राप्त होता है। अभ्यास से अभिप्राय है उद्दीपन तथा अनुक्रिया की पुनरावृति। आजकल लाभप्रद ज्ञानात्मक उद्दीपक पर अधिक बल दिया जाता है। अत: सभी प्रकार की अधिगम प्रक्रियाओं में अभ्यास का विशेष महत्व है।

5. पुनर्बलन (Reinforcement) - अधिगम की प्रक्रिया में सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने हेतु पुरस्कार तथा दण्ड, प्रशंसा तथा निन्दा अपना विशेष महत्व रखते हैं। इसके माध्यम से व्यवहार परिवर्तन में सहायता मिलती है। इस प्रक्रिया को ही पुनर्बलन कहते है।

6. सामान्यीकरण तथा विभेदीकरण (Generalization and Discrimination) -व्यवहार तकनीकी में विभेदीकरण तथा सामान्यीकरण व्यवहार परिवर्तन के द्योतक हैं। शिक्षा शास्त्री शैक्षिक परिस्थितियों में अर्जित व्यवहार में सामान्यीकरण के माध्यम से ही परिवर्तन देखते हैं। इसी प्रकार यदि किसी अनुक्रिया के अनेक उद्दीपक या एक उद्दीपक की अनेक अनुक्रियायें होती हैं तब उनमें विभेद करना आवश्यक होता है। विभेदीकरण जितना सशक्त होगा व्यवहार पर नियन्त्रण भी उतना ही अधिक होगा।

मानव व्यवहार सतत गतिशील तथा परिवर्तनीय है, अत: व्यवहार की स्थायी प्रवृत्ति को विकसित करने में कठिनाई होती है। व्यवहार तकनीकी की सफलता अभ्यास पर निर्भर करती है, यदि व्यवहार परिवर्तन के पश्चात अभ्यास छोड दिया जाए तब निश्चय की व्यवहार तकनीकी अनुपयोगी हो जाएगी।

अध्यापक व्यवहार परिवर्तन की दृष्टि से "व्यवहार तकनीकी" में अध्यापक व्यवहार के अध्ययन हेतु निम्न प्रक्रिया अपनाई जाती है -

1. अध्यापक व्यवहार का अर्थ
2. अध्यापक व्यवहार के सिद्धान्त
3. अध्यापक की कक्षागत अन्त: क्रिया का अवलोकन
4. अध्यापक व्यवहार का विश्लेषण एवं स्वरुप
5. अध्यापक व्यवहार की व्याख्या एवं मूल्यांकन
6. अध्यापक के कक्षागत अन्तक्रिया व्यवहार के प्रतिमान
7. अध्यापक व्यवहार को विकसित करने की नवीनतम विधियां ।

आधुनिक काल में कक्षागत व्यवहार का अध्ययन करने में अन्तःक्रिया विश्लेषण (Interaction Analysis) विधि का प्रयोग किया जा रहा है। इस विधि का विकास 1930 से प्रारम्भ हुआ अनेक शिक्षा शास्त्रियों ने इस क्षेत्र में अनेक अध्ययन व शोध किए, किन्तु फलैण्डर्स 1951 में कक्षागत व्यवहारों का विश्लेषण करने में विशेष योगदान दिया है। फलैण्डर्स ने सम्पूर्ण कक्षागत व्यवहार को दस श्रेणियों में बाँटा और उसका विश्लेषण किया।

1.5.4 कक्षागतविश्लेषण - फलैण्डर्स विधि (Flanders' Interaction Analysis)

अध्यापक क्रिया (Teacher Activity)

अप्रत्यक्ष प्रभाव (Indirect Effect)

1. विचारों को स्वीकार करना
2. प्रशंसा तथा प्रोत्साहन देना
3. छात्रों के विचारों का उपयोग करना।

4. प्रश्न करना

प्रत्यक्ष प्रभाव (Direct Effect)

5. भाषण देना
6. निर्देश देना
7. आलोचना करना

छात्र क्रिया (Pupil Activity)

स्वोपक्रम अनुक्रिया (Initiation-Response)

8. छात्र-कथन अनुक्रिया
9. छात्र-कथन स्वोपक्रम- छात्र प्रश्न पूछता है या स्पष्टीकरण द्वारा जिज्ञासा शान्त करता है।
10. मौन/विश्रान्ति - कक्षा में कुछ समय के लिए सभी बोलते है, रुकते हैं तथा चुप रहते हैं। फ्लैण्डर्स द्वारा दिये गये कक्षागत व्यवहार को इस तरह भी समझा जा सकता है, जो कि पूर्णत: व्यवहार तकनीकी से सम्बद्ध है -

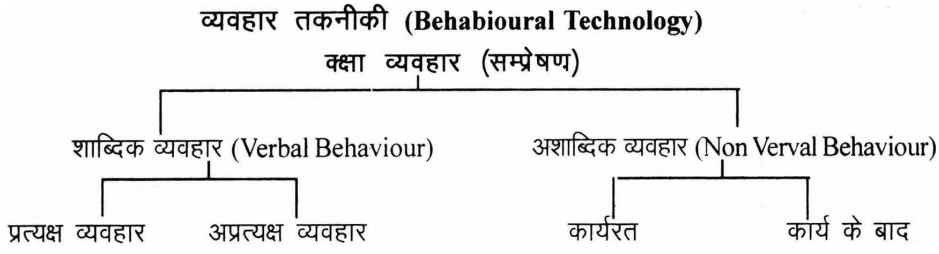

व्यवहार तकनीकी छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन कैसे किया जा सकता है, इस क्षेत्र में विशेष कार्य करती है इसके साथ ही शिक्षक के कक्षा सम्बन्धी व्यवहार का निरीक्षण, विश्लेषण, व्याख्या तथा विकास की प्रविधियों का उल्लेख भी इसमें किया जाता है और उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन कैसे किया जाये, जिससे शिक्षण कौशल का विकास हो, इसका अध्ययन करना भी व्यवहार तकनीकी का कार्य क्षेत्र है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. व्यवहार तकनीकी के तत्व कोन-कोन से है?
   Which are the Elements of Behavioural Technology?

1.6 प्रणाली उपागम (System Approach)

व्यवस्था उपागम को जटिल समस्याओं के समाधान हेतु वैज्ञानिक रणनीतियों के प्रयोग के रुप में समझा जा सकता है। व्यवस्था सिद्धान्त समस्या को एक समग्रता में देखता है। एक व्यवस्था के सभी अंग एक दूसरे के अन्तर-सम्बन्धित होते हैं। उदाहरण के लिए, अध्ययन अधिगम व्यवस्था में समस्या का विश्लेषण बाह्य एवं आन्तरिक कारकों के संदर्भ में किया जाता है। समस्या के समाधान

का प्रारम्भ आवश्यकताओं, उद्देश्यों, उपलव्य स्त्रोतों, वैकल्पिक साधनों एवं पद्धतियों, मूल्यांकन व्यवस्था आदि के विश्लेषण से होता है। शिक्षा व्यवस्था को समग्रता में देखा जाता है। शिक्षा के विभिन्न अंग जैसे, विद्यार्थी, पाठ्यक्रम, शिक्षक, अध्यापन अधिगम पद्धति एवं संचार, मूल्यांकन एक-दूसरे से परस्पर सम्बन्धित होते

है।

व्यवस्था उपागम समस्या के विश्लेषण एवं व्यवस्था परिकल्पना से विकसित होता है। दूसरे शब्दों में इसका तात्पर्य क्या करने की आवश्यकता है, के विश्लेषण एवं समस्याओं का समाधान प्रभावी एवं सक्षम तरीके से कैसे किया जाये, से होता है। इसका उपलब्ध उद्देश्यों, संभावित परिणाम के विश्लेषण, आगतों के विश्लेषण, उपयुक्त साधनों की खोज, उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पद्धतियों एवं संचार से होता है। साथ ही इसका सम्बन्ध कसौटी मापन के विकास से भी जुड़ा होता है, जिससे यह अध्ययन किया जा सकता है कि रणनीति के प्रयोग उपरान्त उद्देश्यों की प्राप्ति हो रही है या नहीं।

व्यवस्था उपागम के निम्नलिखित चार अंग होते हैं

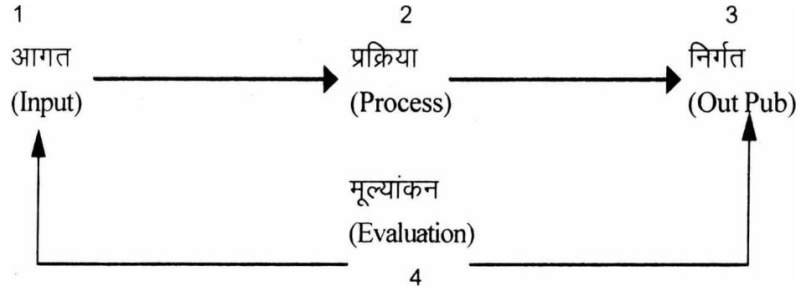

शैक्षिक विकास की दृष्टि से प्रत्येक अंग एक-दूसरे से आगत होता है। उदाहरण के लिए विद्यार्थियों का पूर्व ज्ञान, उनकी मानसिक क्षमता, रुचि, अभिरुचि आदि आगत होते है। शिक्षक, पाठ्यचर्चा भौतिक सुविधायें आदि निर्देशनात्मक आगत होते हैं। प्रक्रिया का तात्पर्य अध्ययन अधिगम व्यवस्था के अन्तर्गत प्रयोग में ली जाने वाली पद्धति एव संचार से होता है। निर्देशात्मक प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियों का जो व्यवहारगत परिवर्तन होता है, वह निर्गत एव अग्रस्थ व्यवहार होता है1 मूल्यांकन यह इंगित करता है कि उपयुक्त साधनों, पद्धतियों एवं संचार के अनुकरण के फलस्वरुप विद्यार्थियों को किस आकांक्षित परिणाम की किस सीमा तक प्राप्ति हुयी है। मूल्यांकन शिक्षा में व्यवस्था परिकल्पना की चक्रीय प्रक्रिया का समर्थक है। दूसरे शब्दों में, उद्देश्यों को फिर से विश्लेषित किया जाता है, आगतों को फिर से विशिष्टीकृत किया जाता है तथा रणनीतियों को उपलब्ध लक्ष्यों एवं पूर्व अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए संशोधित किया जाता है।

शिक्षा में व्यवहार उपागम के मुख्य चरण निम्न होते हैं -

1. विशिष्ट अधिगम उद्देश्यों को प्रतिपादित करना
2. विद्यार्थियों की विशेषताओं को परिभाषित करना
3. विषय वस्तु का विश्लेषण करना

4. कसौटी सूचक संदर्भ परीक्षण तैयार करना
5. अधिगम अनुभव एवं उपयुक्त पद्धतियों एवं संचार का चयन करना
6. उपयुक्त सामग्री एवं उपकरणों का चयन करना
7. शिक्षकों, विद्यार्थियों एवं सहायक कर्मचारियों की उपयुक्त भूमिका निर्धारित करना
8. कार्यक्रम क्रियान्वयन
9. कसौटी मापन द्वारा विद्यार्थियों की प्रगति का मूल्यांकन करना
10. रणनीतियों की प्रभावशीलता एवं सक्षमता में वृद्धि हेतु व्यवस्था में संशोधन

भारत में सातवें दशक से शिक्षा में, विशेषकर निर्देशन व्यवस्था में व्यवस्था उपागम के प्रयोग के संदर्भ में बहुत से विकास हुये है।

कठो एवं कोमल उपागम (Hardware and Soft Ware Approach) - जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि शैक्षिक व्यवस्था में इंजिनियरिंग उत्पादों का प्रयोग शैक्षिक तकनीक के हार्डवेयर उपागम को इंगित करता है। हार्डवेयर उपागम का तात्पर्य विशिष्ट समस्याओं के समाधान हेतु जुगतों (Gadgets) या मशीनों के प्रयोग करने से है। अध्यापन अधिगम व्यवस्था में बहुत से जुगतों एवं मशीनों के प्रयोगों से परिचित होते है । उदाहरण के लिए अध्यापन अधिगम में पेन, पुस्तक, ब्लेक बोर्ड, चॉक, ऑवरहैड प्रोजेक्टर, विडियो कैसेट प्लेयर, चित्रों आदि प्रयुक्त होने वाले हार्डवेयर होते हैं। अध्यापन अधिगम व्यवस्था में हार्डवेयर का प्रयोग व्यवस्था के मशीनीकरण को दर्शाता है। दृश्य-श्रव्य सहायक उपकरणों के रुप मे मशीनों के प्रयोग से हम भलि भांति परिचित हैं।

सॉफ्टवेयर उपागम शैक्षिक तकनीक के अमूर्त स्वरुप को प्रकट करती है। उदाहरण के लिए पाठ्यचर्या मे विषय सूची सॉफ्टवेयर होता है। कार्यक्रम अधिगम सामग्री सॉफ्टवेयर होता है। रेडियो पाठ पाण्डुलिपि या विडियो पाठ आलेख का अर्थ सॉफ्टवेयर होता है। सॉफ्टवेयर की प्रकृति क्या होगी, उनका कैसे विकास एवं प्रयोग होगा आदि का निर्धारण व्यावहारिक विज्ञानों एवं निर्देशनात्मक तकनीक के योगदान पर निर्भर करता है। निर्देशनात्मक उद्देश्य कैसे लिखे जायें? अध्ययन सामग्री का विकास कैसे किया जाये? अधिगम सामग्री का प्रयोग कैसे हो? स्व पृष्ठपोषण (Feedback) कैसे प्राप्त किया जाए? आदि निर्देशनात्मक तकनीकी द्वारा सम्भव हो सकता है।

निर्देशन के व्यवस्था उपागम के योगदान के फलस्वरुप हार्डवेयर एवं साफ्टवेयर उपागमों के मध्य कोई विवाद नहीं पाया जाता है। हार्डवेयर एवं सोफ्टवेयर उपागमों के एकीकरण के माध्यम द्वारा लक्ष्यों एव उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्ता रणनीतियों का विकास किया जाता है।

1.7 शैक्षिक तकनीकी में आद्यतन विकास (Latest Development in Educational Technology)

शिक्षा तकनीक के उपर्युक्त घटकों के अतिरिक्त संचार तकनीक एवं शिक्षा में इसके प्रयोग से सम्बन्धित अभिनव विकासों के बारे में भी आप जानोगे।

वैकंटैया (1996) ने इन्हें निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत बांटा है:

1. डायल पहुंच (Dial Access)
2. शैक्षिक टेलिविजन (Educational Television)
3. विडियो (Video)
4. अन्तक्रियात्मक विडियो (Interactive Video)
5. टेलिकॉन्फ्रेसिंग (Tele Conferencing)
6. ई-मेल (E-Mail)
7. कम्प्यूटर (Computer)
8. कृत्रिम बुद्धिमता (Artificial Intelligence)
9. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (Computer Assisted Instruction)
10. स्थानीय क्षेत्र (Local New Network)
11. सी-डी रोम (CD Rom)
12. डिजीटल विडियो अन्तःक्रिया (Digital Video Interaction)

1. डायल पहुंच (Dial Access)- डायल पहुंच का तात्पर्य शिक्षा में टेलिफोन नेटवर्किंग से है। डायल पहुंच के माध्यम से विद्यार्थी ऑडियो डिलीवर व्यवस्था एवं अपनी पसंद का निवेदन करते हैं। टेलीफोन करने वालों को वृहद पुस्तकालय एवं शिक्षा सम्बन्धित ओडियो कैसट कार्यक्रमों की सुविधा मिल जाती है।

2. शैक्षिक टेलिविजन (ETV)- भारत में शैक्षिक टेलिविजन शिक्षा की लोकप्रिय पद्धति है। आप विभिन्न स्तरों पर विशिष्ट शैक्षिक टेलिविजन कार्यक्रमों के सम्पर्क में आओगे। जैसे केन्द्रीय शैक्षिक तकनीकी संस्थान (CIET) एवं राज्य शैक्षिक तकनीकी संस्थान (SIET) द्वारा विकसित विद्यालय स्तरीय शैक्षिक टेलिविजन, विश्वविद्यालय अनुदान आयेगा (UGC) द्वारा महाविद्यालय स्तरीय देशव्यापक कक्षा कक्ष कार्यक्रम, इन्दिरा गॉधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (IGNOU) द्वारा विकसित दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम आदि। आपने निश्चित रुप से दूरदर्शन राष्ट्रीय नेटवर्क द्वारा प्रसारित प्रौढ़ शिक्षा, कृषक विस्तार शिक्षा कार्यक्रम आदि से सम्बन्धित विशिष्ट शैक्षिक टेलिविजन कार्यक्रम देखे होंगे। भारत में सेटेलाइटों के सफल प्रक्षेपणों के माध्यम से प्रसारण के वैकल्पिक चैनल खोलने में सुविधा हो गयी है। शैक्षिक टेलिविजन द्वारा इन सुविधाओं का भरपूर उपयोग किया जाता है।

3. वीडियो (Video)- शिक्षा एवं प्रशिक्षण गतिविधियों में विडियो कार्यक्रमों का काफी प्रयोग बढ़ गया है। विशिष्ट विडियो कार्यक्रम अध्यापन कौशल के विकास, गतिविधियों के प्रदर्शन विचारों के चित्रण में हमारी सहायता करते हैं। विद्यार्थी अपनी आवश्यकता एवं सुविधायुक्त विडियो कैसेटों का प्रयोग

कर सकता है। विडियो कैसेट रिकार्डरों पर विडियो कार्यक्रमों को रिकार्ड करना एवं उनको देखना काफी लोकप्रिय है।

4. इन्दरएक्टीव विडियो (Interactive)- अन्तःक्रियात्मक विडियो (interactive Video) के माध्यम द्वारा समीक्षक को प्रस्तुतकर्ता से अन्तःक्रिया करने की सुविधा प्राप्त होती है। टेलिविजन पटल पर विडियो लेखन के दौरान समीक्षक प्रश्न पूछ सकते है। उन्नत संचार तकनीक प्रस्तुतकर्ता एवं समीक्षक के मध्य दोनों ओर से अन्तक्रिया को बढावा देती है। प्रश्नों के उत्तर विडियो शिक्षक के द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। विद्यार्थी को टेलिविजन पटल, जो कि विडियो डिस्क से जुडा होता है, से स्वरुपित अन्तःक्रिया होती है।

5. विडियोटेक्स्ट (Videotext)- विडियोटेक्स्ट के अन्तर्गत टेलीफोन लाइनों द्वारा जुडे टेलिविजन रोटों के माध्यम द्वारा पाठ एवं रेखाचित्र (Graphics) प्रस्तुत किये जाते है। दर्शक विडियोटेक्स्ट के माध्यम द्वारा प्रश्न पूछ सकता है। इन प्रश्नों का उत्तर पहले से ही कम्प्यूटर के पास संग्रहित होता है। विद्यार्थी के प्रश्नों के अनुसार उत्तर टी.वी. पटल पर आ जाता है। उदाहरण के लिए एक दूरस्थ शिक्षा का विद्यार्थी खुले विश्वविद्यालय द्वारा प्रस्तुत पाठ्यक्रमों, कॉउन्सलिंग समय, परीक्षायें आदि के बारे में विशिष्ट जानकारी प्राप्त करना चाहता है तो उसे इस तरह की सूचनायें विडियो टेक्स के माध्यम से प्राप्त हो सकती है।

6. टेलिकॉन्फ्रैसिंग (Teleconferencing)- उपग्रह आधारित सूचना तकनीकी ने टी.वी. कार्यक्रमों में प्रस्तुतकर्ता एवं दर्शकों के मध्य दोहरी अन्तक्रिया स्थापित करने में सहायता की है। टेलिकॉन्फ्रैसिंग के माध्यम के द्वारा दूरस्थ विद्यार्थी एजूकेशनल टेलिविजन कार्यक्रम देख सकता है। टेलीफोन के माध्यम से प्रस्तुत कर्ताओं से प्रश्न पुछ सकते हैं तथा प्रस्तुतकर्ता टेलिविजन पटल के माध्यम द्वारा उनका उत्तर दे सकते हैं। इसे एक तरफा विडियो तथा दोतरफा ऑडियो टेलिकॉन्फ्रेसिंग कहा जाता है। भारत में इगनु सी.आई.ई.टी, यू.जी.सी. के कार्यक्रमों ने इस तरह की टेलिकॉन्फ्रेसिंग को लोकप्रिय बनाया है। आप टेलिविजन नेटवर्क पर विभिन्न शहरों के टेलिविजन केन्द्रों पर बैठे लोगों के मध्य आमने सामने की अन्तःक्रियात्मक सम्बन्ध को (टेलिकॉन्फ्रेसिंग) को देख सकते हैं। इसे दोतरफा विडियो टेलिकॉन्फ्रेसिंग कहा जाता है।

7. ई-मेल (E-Mail)- इलेक्ट्रोनिक मेल को ई-मेल के नाम से जाना जाता है। दूर संचार सम्पर्क के प्रयोग द्वारा ई-मेल के माध्यम से आँकडे, बिम्ब तथा जुबानी सूचना भेजी जा सकती है। भेजने वाले के कम्प्यूटर से सूचना प्रारम्भ होकर एक या बहुत से प्राप्तकर्ताओं के कम्प्यूटरों पर प्राप्त होती है। वे इन सूचनाओं को भूमण्डल के किसी भी दूर-दराज के क्षेत्र में अपने कम्प्यूटर पर प्राप्त कर सकते है। ई-मेल के माध्यम से शिक्षकों, शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों तथा शैक्षणिक प्रशासकों को तीव्र सूचनायें भेजी जा सकती है। भारत में यह तंत्र संस्थाओं के स्तर पर दिखायी देता है, जो शिक्षकों, शोधकर्ताओं तथा प्रशासकों के मध्य तीव्र सूचना उपलव्य कराने में सहायक सिद्ध हो रहा है।

8. कम्प्यूटर (Computer)- यह इस युग की उन्नत तकनीक की बहुत ही महत्वपूर्ण देन है। आप कम्प्यूटर का प्रयोग ऑकड़ों को एकत्र करने, एक जगह से दूसरी जगह संदेश भिजवाने, विभिन्न स्थितियों में आँकडों के परीक्षण आदि में कर सकते हैं। कम्प्यूटर में तीव्र स्मरण ' शक्ति; गणना क्षमता,

बहुत सारे आँकडों के संग्रहण तथा समस्या समाधान की क्षमताहोती है। शैक्षणिक स्थितियों में पाठ्यक्रम के विभिन्न चरणों में कम्प्यूटर आधारित निर्देशों का प्रयोग काफी लोकप्रिय हो गया है।

9. कृत्रिम बुद्धिमत्ता (Artificial Intelligence) - कम्प्यूटर द्वारा कृत्रिम बुद्धिमत्ता रखी जाती है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा विद्यार्थी अधिगम समस्याओं का समाधान खोज सकता है। इन समस्याओं के समाधानों को तलाशा जा सकता है विद्यार्थियों को निर्देशन एवं प्रतिक्रिया बतायी जा सकती है। कम्प्यूटर कृत्रिम बुद्धिमत्ता द्वारा विभिन्न क्षेत्रों की बहुत व्यापक जानकारी रख सकता है तथा जटिल प्रकृति की शैक्षणिक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

10. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन (CAI)- कम्प्यूटर सहायतित निर्देश रच निर्देशन का लोकप्रिय तरीका है। स्व निर्देशित पैकेजों को कम्प्यूटर में संग्रहित किया जाता है। विद्यार्थी कम्प्यूटर सहायतित निर्देशन के माध्यम द्वारा चरणगत रुप से अधिगम गतिविधियों के साथ आगे बढता है। विद्यार्थियों को प्रतिक्रिया हेतु फीडबैक दिया जाता है, विद्यार्थी अपनी सुविधा अनुसार प्रगति कर सकता है सामग्री प्राप्त कर सकता है तथा उसका चयन कर सकता है तथा स्वतंत्र रुप से निर्देशन स्तर का क्रम तय कर सकता है। प्रत्येक विद्यार्थी की प्रगति का मूल्यांकन किया जा सकता है। विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया को संग्रहित किया जा सकता है। स्व फीडबैक प्रदान किया जा सकता है। विभिन्न पृष्ठभूमि के विद्यार्थी अपनी स्वयं की क्षमता एवं कठिनायी के स्तर के अनुरुप प्रगति कर सकते हैं। दूरस्थ शिक्षा के संदर्भ में कम्प्यूटर सहायतित निर्देशन ने शिक्षक का स्थान ले लिया है।

11. स्थानीय क्षेत्र नेटवर्क (Local Network)- स्थानीय स्तर के नेटवर्क द्वारा विभिन्न माइक्रो कम्प्यूटरों को एक दूसरे से जोड़ा जा सकता है। मुख्य कम्प्यूटर के पास सॉफ्टवेयर होता है। विद्यालय की विभिन्न कक्षाओं में लगे अन्य कम्प्यूटर मुख्य कम्प्यूटर से एक दूसरे से जुडे होते है। मुख्य कम्प्यूटर का सॉफ्टवेयर इलेक्ट्रोनिक माध्यम द्वारा अन्य कम्प्यूटरों से जुड़ जाता है। माइक्रो कम्प्यूटरों पर काम करने वाले विद्यार्थी एवं शिक्षक स्थानीय क्षेत्र नेटवर्क के माध्यम द्वारा एक-दूसरे से सम्पर्क बना सकते हैं। रिकार्ड रख सकते हैं। विज्ञप्ति जारी की जा सकती है। सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं। आजकल स्थानीय क्षेत्र नेटवर्क के माध्यम द्वारा दिन की कम्प्यूटर कॉन्फ्रेन्सिंग या सेमीनार भी होने लगे

12. सी-डी रोम (CD Rom: Compact Disk- Read Only memory)- सी-डी रोम कम्प्यूटर व्यवस्था का एक उन्नत अंश है। सी-डी रोम में बहुत कम लागत में बहुत सारे ऑकडों को संग्रहित किया जा सकता है। हम एक सी-डी रोम में 100 शब्दकोशों या दस वर्षो के विभिन्न पत्रिकाओं के पिछले अंको को संग्रहित कर सकते हैं। यह हमें मुद्रित सामग्री प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है। साथ ही सी-डी रोम को विडियो तकनीकी से भी जोडा जा सकता है।

13. डिजीटल विडियो अन्तःक्रिया (Digital Video Interaction)- यह तकनीकी विडियो एवं सी.डी.रोम की अच्छी विशेषताओं को एक माध्यम एवं तीन आयामी प्रस्तुतीकरण में जोडती है। डिजीटल विडियो अन्तःक्रिया के माध्यम से ओडियो-विडियो निर्गत सहित बहु संचार प्रस्तुतीकरण को उत्पन्न किया जा सकता है। डिजीटल विडियो अन्तःक्रिया के माध्यम द्वारा मुख्यत: लेजर मुद्रण, बहुआयामी ऑडियो-विडियो प्रस्तुतीकरण को प्रस्तुत किया जा सकता है।

1.8 शैक्षिक तकनीकी का प्रयोग (Application of Educational Technology)

शैक्षणिक व्यवस्था के प्रयोगों में शैक्षिक तकनीक का बहुत योगदान रहा है। इसने अध्ययन अधिगम व्यवस्था के प्रबंध, दूरस्थ शिक्षा के अवधारणीकरण पाठ्यक्रम विकास प्रक्रिया, विद्यार्थी केन्द्रित निर्देशन, पद्धतियों, संचार तथा मूल्यांकन पद्धतियों में योगदान किया है।

शैक्षिक तकनीकी ने अध्ययन अधिगम व्यवस्था के सुचारु प्रबन्ध में बहुत योगदान दिया है। अध्ययन अधिगम व्यवस्था के उद्देश्यों तथा विद्यार्थियों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षा के अनुरुप योजना शैक्षिक तकनीक का केन्द्र बिन्दु रहा है। इसी व्यवस्था को पाठ्यक्रम विकास, पाठ्य सामग्री विकास संचार चयन तथा अध्ययन अधिगम व्यवस्था के मूल्यांकन उपागमों की पहचान पर भी लागू किया जा सकता है।

शैक्षिक तकनीकी ने आज की आवश्यकताओं के अनुरुप अपने क्षेत्र का विस्तार कर लिया है। संचार तकनीक के विकास ने शिक्षा व्यवस्था के सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। शिक्षा प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की रीतियों एवं संचार ने प्रवेश कर लिया है। उन्नत संचार तकनीक, उपग्रह आधारित नेटवर्क, कृत्रिम बुद्धिमत्ता ने शिक्षा व्यवस्था में खुलेपन को प्रदान करने में योगदान दिया है। संचार प्रयोग के द्वारा वैकल्पिक शैक्षणिक व्यवस्था जैसे दूरस्थ शिक्षा, खुले विद्यालय, औपचारिक शिक्षा, प्रयोगात्मक शिक्षा तथा विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा को आगे बढ़ाया।

एक शिक्षक के रुप में आपकी आवश्यकता केवल स्तरीय निर्देशन सामग्री पर ही केन्द्रित नहीं रहती है। शैक्षिक तकनीकी आपको इसके लिये सक्षम बनाती है कि आप विशेष संदर्भ के अनुरुप निर्देशन सामग्री तैयार कर सके। शैक्षिक तकनीकी आपको इसके लिए सक्षम बनाती है कि आप अपनी विशिष्ट कक्षा स्थितियों के अनुरुप वैकल्पिक पद्धतियों एवं संचार की खोज कर सके। एक शिक्षक के रुप में आप उपयुक्त रणनीति अपनाकर के अध्ययन अधिगम गतिविधियों को व्यवस्थित करने में सक्षम हो पाओगे। शैक्षिक तकनीकी सुदृढ़ीकरण के विभिन्न यात्रिकियों के द्वारा व्यवहार संशोधन पर ज्यादा जोर ' देती है। मूल्यांकन के वैकल्पिक तरीकों में विभिन्न विकास हुये हैं। विकास केन्द्रित मूल्यांकन शिक्षक एव विद्यार्थी को अधिगम में क्रमिक प्रगति के संदर्भ में सक्षम बनाती है। स्व मूल्यांकन यांत्रिकी के विभिन्न तरीके विद्यार्थियों के निरन्तर पृष्ठपोषण में योगदान प्रदान करते है।

शैक्षिक तकनीक के उन्नयन के संदर्भ में शिक्षक की भूमिका बदल गयी है। संचार एवं सामग्री शिक्षक की परम्परागत संचार भूमिका का स्थान ले रही है। शैक्षिक तकनीकी के बदलते संदर्भ में शिक्षक की भूमिका को एक मददगार, प्रबन्धक तथा कॉउन्सलर के रुप में देखा जाता हैं। आधुनिक शैक्षिक तकनीक के प्रयोग द्वारा विद्यार्थी केन्द्रित शिक्षा को बढ़ावा मिला है।

1.9 साराश
(Summary)

इस इकाई के द्वारा आपने शैक्षिक तकनीक की अवधारणा, इसके क्षेत्र एवं शैक्षणिक स्थितियों में इसके प्रयोग के बारे में जान पाये होगें। यह एक परिचयात्मक इकाई है। अगली इकाइयों में आप शैक्षणिक तकनीक के प्रत्येक अंश के बारे में विस्तार से जान पायेंगे। साथ ही औपचारिक विद्यालय व्यवस्था एवं दूरस्थ शिक्षा व्यवस्था में इसके प्रयोग के बारे में भी' आप जान पायेंगे।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. व्यवहार तकनीकी एवं अनुदेशनात्मक तकनीकी में अन्तर को स्पष्ट करें ।
   Differentiate between Behavioural Technology and nstructional.
2. शिक्षा तकनीकी पद की व्याख्या करें ।
   Describe the term of Educational Technology.
3. शिक्षा तकनीकी में अभिनव विकास का वर्णन करें ।
   Explain the latest development in Educational Technology.

1.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

- वेंकटैहिया, एन : एजुकेशनलटेक्नोलोजी ए.पी.एच. पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली 1996
- एनसाइक्लोपिडिया ऑफ एजुकेशनल टेक्नोलोजी
- मोहंती, जे. : एजुकेशनल टेक्नोलोजी
- कुलकर्णी, एसएस. : एजुकेशनल
- मुखोपाध्याय, एम : एजुकेशनल टेक्नोलोजी इयर बुक, 1988
- ए.आइ.ए.ई.टी., नई दिल्ली 1989

इकाई-2

शैक्षिक तकनीकी का सैद्धान्तिक आधार-प्रथम Theoretical Bases of Education Technology-I

इकाई की संरचना
(Structure Objective)

2.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objective)

2.1 प्रस्तावना
(Introduction)

2.2 शैक्षिक तकनीकी-प्रथम - प्रत्यय
(Concept of Education Technology-I)

2.3 गैने का अधिगम सम्बन्धित पदानुक्रमित उपागम

2.3.1 गैने वर्णित अधिगम के स्वरुप
(Gagne's Hierarchical Approach)

2.3.2 अधिगम क्षमतायें
(Learning Capacities)

2.3.3 माध्यम का चयन
(Selection of Media)

2.4 स्किनर अनुसार वर्तमान शिक्षण पद्धति के दोष
(Demerits of Modern teaching Methods according to Skinnew)

2.4.1 अनुक्रिया केन्द्रित उपागम (Response Centred Approach)

2.5 सारांश
(Summary)

2.6 संदर्भ ग्रंथ सूची
(Bibliography)

2.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर विद्यार्थी

1. अधिगम के स्वरुपों की व्याख्या कर सकेगें।
2. अधिगम के स्वरुपों के अनुरुप माध्यम का चयन कर सकेगें।
3. कक्षा में अधिगम के गैने के पदानुक्रमिक स्वरुप का प्रयोग कर सकेगें।

4. स्किनर के क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का वर्णन कर सकेगें।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

अधिगम के सम्बन्ध में अनेक मनोवैज्ञानिक ने अनेक प्रकार के सिद्धान्त प्रस्तुत किये है। सीखने वाले में अनुक्रिया उत्पन्न करना तथा उद्दीपन तथा अनुक्रिया (Rond) की प्रक्रिया प्रस्तुत करता है तथा इनको शाब्दिक रूप में व्यक्त करता है और सरल शब्दों से लेकर जटिलतम वाक्यों तक सारी प्रक्रिया प्रस्तुत करता है।

2.2 शिक्षा-तकनीकी-प्रथम (Educational Technology-I) : Concept

जब कोई व्यक्ति अनुदेशन प्रणाली में शिक्षा-तकनीकी के प्रभाव के विषय में पढता या समझता है, तब इस सम्बन्ध में "हार्डवेयर उपागम" के संदर्भ में ही सोचता है। यह सही है कि अनुदेशन में हार्डवेयर के प्रयोग से उत्पन्न हुये परिवर्तन एवं प्रयोग प्रत्यक्ष रुप में दिखलाई पड़ते हैं। प्रयोगात्मक स्कूलों या कक्षाओं में जहां विद्यार्थी तल्लीन हो कर दूरदर्शन पर पाठों से टिप्पणियां लेते दिखाई देते हैं या प्रश्नों के उत्तरों को टेप करते होते हैं, वहां वह परिवर्तन और भी स्पष्ट रुप में दिखाई पड़ता है।

शिक्षण में तकनीकी का उपयोग सर्वप्रथम 1926 में अमेरीका में सिडनी प्रैसी ने ओहियो विश्वविद्यालय में शिक्षण मशीनों के निर्माण द्वारा आरम्भ किया। इसके पश्चात् लुम्सडेन तथा ग्लेजर आदि तकनीकीवेत्ताओं ने शिक्षण के यन्त्रीकरण का प्रयास किया। यह कार्य कुछ विशेष प्रकार की पुस्तकों, कार्डो व बोर्डों के रुप में प्रस्तुत किया गया। किन्तु शिक्षा तकनीकी के क्षेत्र में 1954 में बी.एफ. स्किनर के द्वारा किये गये प्रयोगों के फलस्वरुप हुआ।

शिक्षण में अभियन्त्रण की मशीनों के प्रयोग को ही शिक्षा तकनीकी -प्रथम कहते हैं। तकनीकी व मशीनों का प्रयोग शिक्षण व सीखने की क्रियाओं को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता है जिससे शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति अधिकतम रुप से की जा सके।

स्किनर व गैने ने शिक्षा-तकनीकी-प्रथम से सम्बन्धित उपागमों को निम्न प्रकार से बताया है।

2.3 गैने का अधिगम सम्बन्धित पदानुक्रमिक उपागम (Gagne's Hierarchical Approach)

गैने के अनुसार "मानवीय प्रवृत्ति या क्षमता में उस तबदीली को अधिगम कहा जा सकता है जिसे प्रतिधारित किया जा सके और जिसे वृद्धि प्रक्रिया के कारण न माना जा सके।

उन्होंने यह स्पष्ट किया कि अधिगम में हुई तबदीली व्यवहार परिवर्तन के रुप में प्रदर्शित होती है और इसके बारे में अनुमान प्राणी की अधिगम परिस्थिति से पूर्व के व्यवहारों

की तुलना द्वारा किया जाता है। अधिगम की प्रक्रिया की तुलना औपचारिक रुप से अन्य क्रियाओं जैसे पाचन व सांस लेने से भी की जा सकती है। अधिगम को व्यक्ति की निरीक्षण की जा सकने वाली क्रिया या व्यवहार कहा जा सकता है। यह एक आन्तरिक व्यवहार या निष्पादन है।

गैने ने अधिगम का कोई सिद्धांत प्रतिपादित नहीं किया। गैने ने बताया कि सूचना प्रक्रियाकरण (Information Processing) मनुष्यों में कम्प्यूटर की भांति होती है। वे अधिगम को पदानुक्रमित मानते हैं। प्रत्येक अधिगम परिस्थिति के लिये पूर्व परिस्थिति विद्यार्थी के लिये आवश्यक होती है। जिससे धारण शक्ति विकसित होती है। गैने का उपागम पदानुक्रमिक होने के साथ-साथ समहारवाद पर अधिक केन्द्रित होने के साथ-साथ गेस्टाल्ट क्षेत्र सिद्धान्त को भी कुछ सीमा तक लिये हुये है । गैने ने निम्न आठ अधिगम के स्वरुप बताये है।

2.3.1 अधिगम के स्वरुप :-

प्रथम प्रकार: संकेत अधिगम (Signal Learning)- इसके अंतर्गत अधिगमकर्ता एक तटस्थ उद्दीपक को स्वाभाविक उद्दीपक के साहचर्य से ऐसा संकेत मानना सीख लेता है जिससे उसकी (तटस्थ या अनुबन्धिक उद्दीपक) उपस्थिति में वहीं अनुक्रिया उत्पन्न करने लगता है, जो स्वाभाविक उद्दीपक से सम्बन्धित होती है। यहा अधिगम क्लासिकी या पावलव अनुबन्धन की विधि द्वारा घटित होती है। पावलव के प्रयोग में घन्टी तथा खाने को उनके सामने एक साथ प्रस्तुत किया गया था। घन्टी संकेत का कार्य करती है। बालकों को अक्षर ज्ञान संकेत अधिगम परिस्थिति के आधार पर कराया जाता है।

द्वितीय प्रकार: उद्दीपक-अनुक्रिया अधिगम (Stimulus Response Learning)- इस प्रकार के अधिगम में सीखने वाला व्यक्ति एक विभेदीकृत उद्दीपक के प्रति अत्यन्त परिशुद्ध अनुक्रिया उत्पन्न या अवरुद्ध करना सीख जाता है। इसमें विभेदीकृत उद्दीपक, अनुक्रिया तथा उसके बाद घटित उद्दीपन के सम्बन्ध महत्वपूर्ण माने जाते हैं। यह अधिगम क्रिया-प्रसूत या नैमित्रिक अनुबन्धन (Operant Conditioning) द्वारा सम्पन्न होता है।

तृतीय प्रकार: श्रृंखला अधिगम (Chain Learning)- इस अधिगम के अंतर्गत दो या दो से अधिक उद्दीपक अनुक्रिया सम्बन्धों को श्रृंखलित किया जाता है। इस प्रकार के अधिगम में शिक्षक पाठ्यवस्तु को एक क्रम में प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के अधिगम के लिये अपेक्षित परिस्थितियों का विवरण स्किनर तथा गिलबर्ट ने विशेष रुप से किया है।

चतुर्थ प्रकार: शाब्दिक साहचर्यों का अधिगम (Verbal Association)- इसमें उद्दीपक अनुक्रिया की ऐसी श्रृंखलाओं को सीख जाता है जो शाब्दिक होती है। उदाहरणार्थ कविता, ललित कला, गद्यांश या भाषण आदि को कण्ठस्थ कर लेना। यह भाषा शिक्षण के लिए अधिक उपयुक्त है। अधिक जटिल शाब्दिक श्रृंखला के लिए व्यवस्था क्रम एक संकेत (Que) का कार्य करती है। शाब्दिक इकाई को सीखने के लिये उससे पूर्व की इकाई सहायता प्रदान करती है।

पंचम प्रकार: विभेदात्मक अधिगम (Discriminative Learning)- यह अधिगम की वह श्रेणी है जिसमें व्यक्ति एक जैसे किन्तु परस्पर भिन्न उद्दीपकों के प्रति भिन्न-भिन्न

अनुक्रियाओं को उत्पन्न करना सीख जाता है। जैसे बालक का एक विशेष प्रकार के व्यक्ति समूहों में एक को पापा, दूसरे को चाचा, मामा, दादा आदि सम्बन्धों से पुकारना। इसे विभेदन अधिगम कहते है।

षष्टम प्रकार: प्रत्यय अधिगम (Concept Learning)- इनके अंतर्गत अधिगमकर्ता वस्तुओं, घटनाओं या तथ्यों के पूरे समूह के बारे में सामान्यीकरण करता है। ऐसा करते समय वह एक समूह या वर्ग की विशेषता को पृथक करना सीख जाता है। इस प्रक्रिया में वह वर्ग के भीतर सामान्यीकरण तथा विभिन्न वर्गो में विभेद करने की कुशलता प्रकट करता है। प्रत्यय अधिगम के बिना नियम अधिगम तथा समस्या समाधान अधिगम सम्भव नहीं है।

सप्तम प्रकार: नियम अधिगम (Rule Learning)- दो या दो से अधिक संप्रत्यों की श्रृंखला या जोड़ के नियम को अधिगम का नाम दिया जाता है। उदाहरणार्थ: न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का सिद्धांत। यदि "अ" होता है तो "ब" जरुर होगा। इस प्रकार की सम्भावना को उपकल्पित कर लेना नियम अधिगम की प्रमुख विशेषता हैं।

अष्टम प्रकार: समस्या समाधान अधिगम (Problem Solving Learning)- इस प्रकार के अधिगम में आन्तरिक घटनायें जैसे चिन्तन व तर्क वितर्क का विशेष महत्त्व होता है। इसके अंतर्गत दो या दो से अधिक नियमों को जोड़कर किसी समस्या का समाधान प्राप्त करने की कोशिश होती है। शिक्षण की प्रक्रिया में समस्या समाधान अधिगम को उच्चस्तरीय लक्ष्यों की कोटि में माना जाता है।

गैने ने अधिगम के उपयुक्त आठों प्रकार को एक दूसरे पर निर्भर तथा इनमें अभिक्रमित होने की सम्भावना के बारे में दृढ़ मत व्यक्त किया है। इनके अनुसार संकेत अधिगम के बिना उद्दीपन-अनुक्रिया अधिगम तथा इन दोनों के बगैर संप्रत्यय अधिगम का होना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार संप्रत्यय अधिगम के बिना नियम अधिगम तथा नियम अधिगम के बगैर समस्या समाधान अधिगम की कल्पना असम्भव है।

गैने ने इस अधिनियम क्रम को व्यवहारिक बनाने के लिये शिक्षण तथा अनुदेशन में मनोवैज्ञानिक शक्तियों का एक विशिष्ट क्रम प्रस्तुत किया है। प्रथम-अभिप्रेरणा, द्वितीय-स्थानान्तरण, तृतीय-मापन, चतुर्थ अधिगम स्वरुप, पंचम ज्ञान का स्वरुप तथा षष्टम अधिगम के उद्देश्य।

किसी भी अधिगम परिस्थिति में उचित अधिगम पदानुक्रम में पूर्व आवश्यक बौद्धिक कुशलताओं व अधिगम की दशाओं को सम्मिलित किया जाता है। अधिगम के आठों स्वरुप या दशाऐं संकेत अधिगम, उद्दीपन-अनुक्रिया, श्रृंखलाबद्ध अधिगम, शाब्दिक साहचर्य विभेदात्मक, प्रत्यात्मक, नियम अधिगम व समस्या समाधान है। प्रत्येक प्रकार मनुष्य में अलग-अलग प्रकार की क्षमताओं को विकसित करता है।

2.3.2 अधिगम क्षमतायें (Learning Capacities)

आठों प्रकार के अधिगम द्वारा निम्न पांच प्रकार की क्षमतायें विकसित होती हैं

1. शाब्दिक सूचनाऐं
2. बौद्धिक कुशलतायें
3. संज्ञानात्मक व्यूह रचना
4. अभिवृत्तियॉ
5. गामक कुशलताएँ

शाब्दिक सूचनाऐं (Verbal Information) - बाल्यावस्था से ही व्यक्ति सूचनाओं को एकत्र करना सीख जाते है। कुछ सूचनाओं को व्यक्ति दीर्घकाल तक धारित किये रहते है, जबकि कुछ सूचनाओं का धारण अल्पकाल के लिये किया जाता है। शाब्दिक सूचनाओं के अधिगम से तात्पर्य उन सूचनाओं से है, जो मौखिक रुप से प्रस्तुत की जा सकें। मेज शब्द को सीखने के उपरान्त मेज कहने के स्थान पर यदि बालक यह कह सकें "वह मेज है", अधिगम है। दूसरे शब्दों में किसी तथ्य या विचार को प्रस्ताव के रुप में (Able to reinstate proposition) करना है।

शाब्दिक सूचनाओं का अधिगम व्यक्ति के जीवन भर काम में आता है। उदाहरणार्थ संख्यायें, दिन, महीने व तौल आदि।

शाब्दिक सूचनाओं का अधिगम का उपयोग अन्य बौद्धिक कुशलताओं को विकसित करने के लिये आवश्यक है। अभिवृतियाँ समस्या समाधान व संज्ञानात्मक व्यूह रचना के लिये विशिष्ट सूचनाओं के लिए आवश्यक है।

शाब्दिक सूचनाओं के अधिगम बिना व्यक्ति की चिन्तन प्रक्रिया विकसित नहीं हो सकती।

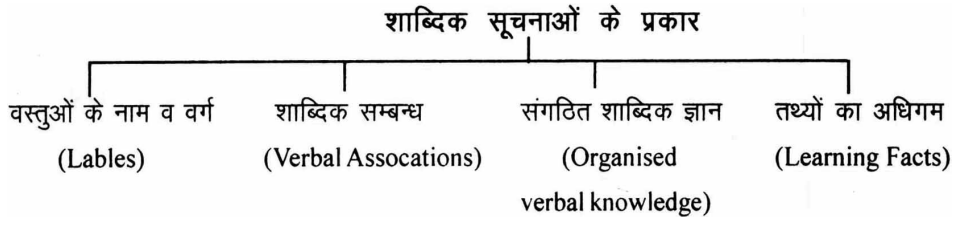

किसी भी पुस्तक को पढ़ते समय न केवल वस्तुओं के नाम व वर्गो को जानना आवश्यक है बल्कि शाब्दिक सम्बन्धों के साथ तथ्यों का अधिगम करना भी आवश्यक होता है, तभी पढ्ने के उपरान्त अधिगमकर्ता ज्ञान को संगठित कर पाता है।

बौद्धिक कुशलतायें (Intellectual Skills)- व्यक्ति अपने वातावरण के साथ अन्तःक्रिया करने के लिये संकेतों व प्रतीकों का प्रयोग करता है। विद्यालयी शिक्षा के साथ बालक प्रतीकों का जटिल तरीकों से प्रयोग करना सीख जाता है, जैसे सारणीकरण, वर्गीकरण व विश्लेषण। इस प्रकार की अधिगम योग्यताओं को प्राप्त करना बौद्धिक योग्यता कहलाती है। किसी नियम को सीख कर बौद्धिक कुशलता को प्रदर्शन नियम आधारित व्यवहार (Rule Governed Behaviour) कहलाता है। भाषा को सीखने में भी योग्यता दिखलाई देती है।

बौद्धिक कुशलता-

प्रत्यय (Concept)

विभेदीकरण (Discrimination)

उच्च स्तरीय नियम (High order Rule)

कार्य प्रणाली (Procedure)

बौद्धिक कुशलताओं को अर्जित करने के लिए प्रत्यय, विभेदीकरण, उच्च स्तरीय नियम व कार्य प्रणाली को जानना आवश्यक होता है। प्रत्यय - उद्दीपनों का वह समूह होता है जिनमें कुछ सामान विशेषतायें होती है। उद्दीपन का रुप व्यक्ति या घटना होते हैं। विभेदीकरण - प्रत्ययों को समझाने के लिए विभेदीकरण जैसे क्षमता को विकसित करना आवश्यक है। विभिन्न वस्तुओं और घटनाओं में समान व असमान तत्वों को पहिचानना विशेषताओं में अन्तर करना विभेदीकरण है। उच्चस्तरीय नियम- दो या दो से अधिक प्रत्ययों के सम्बन्ध में कथन को अधिनियम कहते हैं। कभी-कभी अधिनियमों को सामान्यीकरण या नियम भी कहते हैं। सरल नियमों का जोड़ना उच्च स्तरीय नियम कहलाता है। कार्यप्रणाली - कार्यप्रणाली में सरल नियमों को एक श्रृंखला में क्रमबद्ध करना होता है।

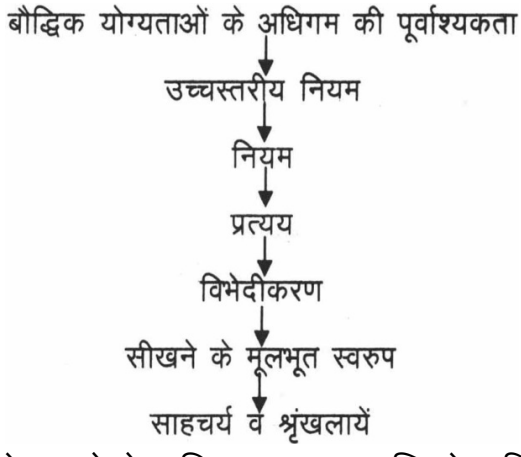

किसी वाद्य को बजाने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने के लिये आवश्यक है कि व्यक्ति को वह वाद्य बजाना आये। कभी कभी गामक कुशलता भी अभिवृति के लिए पूर्व आवश्यकता बन जाती है।

संज्ञानात्मक व्यूह रचना (Cognitive Strategies)- संज्ञानात्मक व्यूह रचना से तात्पर्य व्यक्ति के द्वारा अपनी आन्तरिक प्रक्रियाओं (अवधान केन्द्रित, स्मरण करना, विचार करना) को नियमन करने की कुशलता हासिल करना है। स्किनर ने इसे स्वप्रबन्धित व्यवहारों की संज्ञा दी है।

अभिवृतियाँ (Attitude)- व्यक्तियों की क्रियाओं व पसन्दगियों को प्रभावित करने वाली आन्तरिक दशाओं को अभिवृति कहते हैं। अभिवृति में ज्ञानात्मक, भावात्मक व क्रियात्मक पक्ष या व्यवहारिक परिणाम सम्मिलित होते है। अभिवृतियों को विकसित करने के लिये बौद्धिक कुशलताओं को सीखना पूर्व आवश्यक है। ड्रग्स के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण के लिये उसके भयानक परिणामों को जानना आवश्यक है।

गामक कुशलतायें (Motor Skills)- बहुत सी मानवीय क्रियाओं में पेशीय गतिशीलता व समन्वय की आवश्यकता होती है। नर्सरी से ही बालकों को विभिन्न गामक क्रियाओं को जैसे जूते के फीते बन्द करना, बटन बन्द करना व कपड़े पहनना-उतारना सिखाया जाता है। विकास के साथ-साथ जटिल गामक क्रियाओं को करना सिखाया जाता है। गामक कुशलताओं को अर्जित करना भी एक अधिगम क्षमता है।

गामक कौशल
- परिशुद्ध व सूक्ष्म (Fine versus Gross)
- सम्पूर्ण (Complete)
- निरन्तर अविच्छन्न (Continuous Discrete)

जिन क्रियाओं को करने से शुद्धता (Precision) की आवश्यकता होती हैं उन्हें परिशुद्ध या सूक्ष्म गामक क्रियायें कहा जाता है। जैसे सुई में धागा डालना। सम्पूर्ण गामक क्रियाओं में माँसपेशियों की सहायता से सम्पूर्ण शरीर को क्रियाशील बनाया जाता है। जैसे - तैरना, कूदना, व खेलना निरन्तर गामक कुशलता से तात्पर्य व्यक्ति का विभिन्न उद्दीपनों के प्रति लगातार संशोधन व समायोजन करके अनुक्रिया करना है।

जबकि विच्छिन्न गामक कुशलताओं से तात्पर्य किसी एक विशिष्ट उद्दीपन के प्रति एक विशिष्ट प्रकार की अनुक्रिया या अंग संचालन करना है। जैसे अलग-अलग प्रकार के बटनों को अलग-अलग प्रकार से या दिशाओं में घुमाना।

2.3.3 अनुदेशन के लिये माध्यम का चयन (Selecting Media for Instruction)

अधिगम की परिस्थितियों को उत्पन्न करने तथा अधिगम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये सम्प्रेषण, शिक्षण युक्तियों तथा व्यूह रचना का चयन किया जाता है। इनको प्रभावशाली बनाने में माध्यम (Media) का विशेष महत्व है। माध्यम या सहायक सामग्री के प्रयोग से अधिगम की परिस्थितियों (Learning condition) को अधिक प्रभावशाली ढंग से उत्पन्न किया जा सकता है और उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

गैने के अनुसार माध्यम वे सभी वस्तुयें हैं जिनके द्वारा हम सम्प्रेषण करते है। इसमें अनुदेशक की आवाज भी शामिल है।

माध्यम का चयन अनुदेशनात्मक परिस्थिति पर निर्भर करता है। गैने ने अपनी पुस्तक (Conditions of Learning and Theory of Instruction) में निम्न परिस्थितियों का वर्णन किया है-

(1) दोष मुक्त निष्पादन (Fault free Performance)

(2) केन्द्रीय प्रसारण व्यवस्था (Central Broad Casting)

(3) स्व अनुदेशन (Self Instruction)

(4) विद्यार्थियों की विशेषतायें (Characterstics of learners)

1. **दोषमुक्त निष्पादन-** विभिन्न व्यवसायों में दोषमुक्त निष्पादन के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। जान-माल की हानि को रोकने के लिये प्रायोगिक अभ्यास की आवश्यकता होती है। ऐसे में अनुरुपित

मशीनों (Simulators) व वास्तविक उपकरणों का उपयोग किया जाता है। विमान चालकों व नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों में कार्य वाले तकनीकी विशेषज्ञों को इसी प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है।

2. **केन्द्रीय प्रसारण-** जब अनुदेशन किसी एक केन्द्र से विभिन्न स्थानों पर बैठे अधिगमकर्ताओं तक पहुंचाना होता है तो ऐसी स्थिति में रेडियों व दूरदर्शन का प्रयोग किया जाता है। तथापि इन दोनों साधनों के द्वारा अन्तःक्रिया व पुष्ट पोषण प्रदान नहीं किया जा सकता। प्रत्येक माध्यम की कुछ अपनी सीमायें हैं।

3. **स्व अनुदेशन-** अधिगमकर्ता किसी एक माध्यम से स्वयं सम्प्रेषण प्राप्त करता है। उसे किसी अनुदेशनकर्ता के द्वारा किसी प्रकार की सहायता नहीं मिलती। स्व अनुदेशन माध्यमों के विकल्पों के चयन में सीमा निर्धारित कर देती है। इस विकल्प में पुष्ट पोषण, अन्तःक्रिया व मानव आदर्श (Human model) का प्रकार्य सम्भव नहीं हो पाता।

4. **अधिगमकर्ता की विशेषतायें-** सीखने वाले की विशेषताओं के आधार पर भी माध्यम का चयन किया जाता है। वाचिक योग्यता, आयु व अधिगमकर्ता को माध्यमों की उपलब्धता आदि कुछ विशेषताओं को मद्देनजर रखा जाता है।

अधिगम स्वरुपों को देखें, तो गैने के संकेतात्मक अधिगम स्वरुप को टेपरिकार्डर, प्रतिमानों, चलचित्र व दूरदर्शन के प्रयोग से प्रभावशाली रुप, से उत्पन्न किया जा सकता है।

श्रृंखलाबद्ध अधिगम को भी रेडियो, टेपरिकॉर्डर, चलचित्र और दूरदर्शन के प्रयोग से भली-भाँति उत्पन्न किया जा सकता है।

बहु भेदीय अधिगम के स्वरुप को रेखाचित्र व टेपरिकॉर्डर के प्रयोग द्वारा उत्पन्न किया जा सकता है।

प्रत्यय अधिगम की परिस्थिति को रेखाचित्र,चलचित्र, चित्र व दूरदर्शन के उपयोग से प्रस्तुत किया जा सकता है।

विभिन्न अधिगम प्रकारों के लिये गैने व रीजर (Gagne & Reiser) ने एक प्रवाह चित्र दिया है कि गामक क्रियाओं के लिए इधर-उधर ले जा सकने योग्य उपकरण (Portable equipment) आवश्यक है। गामक कुशलता के लिये मुद्रित सामग्री व पुस्तकों का प्रयोग भी पूरक के रुप में आवश्यक है। बौद्धिक कुशलताओं को विकसित करने के लिये अभिक्रमित निर्देशन युक्त पुस्तकों की सहायता ली जानी चाहिये। बौद्धिक कुशलताओं के लिये उन माध्यमों का चयन किया जाना चाहिये जिनसे अंतःक्रिया सम्भव हो। कम्प्यूटर के द्वारा पृष्ठपोषण प्राप्त किया जा सकता है। अनुदेशक भी माध्यम के रुप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

अभिवृतियों को विकसित करने हेतु चलचित्रों टीवी, कैसेट व स्लाइड, टेप प्रयोग में लिये जा सकते हैं परन्तु मानव आदर्श व मानव क्रियाये अधिक प्रभावशाली माध्यम है। अभिवृत्तियों प्रदर्शन व सम्प्रेषण के द्वारा सर्वोत्तम रुप से विकसित सामग्री भी प्रभावशाली है।

शाब्दिक सूचनाओं के अधिगम के लिये दृश्य (Visual) माध्यमों व चित्रों का प्रयोग लिया जा सकता है। फिल्म-स्ट्रिप, चलचित्र, पुस्तकें, व प्रशिक्षण की जा सकती है।

शिक्षा के क्षेत्र में सिद्धांतों को व्यावहारिक रुप में प्रयोग करने का श्रेय स्किनर को जाता है। इन्होंने अधिगम के सिद्धात "सक्रिय अनुबद्ध अनुक्रिया सिद्धांत" (Operant conditioning theory) का प्रतिपादन किया। उन्होंने इस अधिगम सिद्धात को शिक्षण व अनुदेशन में प्रयुक्त किया।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. गेने के अनुसार अधिगम के कितने प्रकार है? संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
2. गेने के अनुसार अधिगम द्वारा कितने प्रकार की क्षमतायें विकसित की जा सकती है? उन्हे समझाइये।

2.4 वर्तमान शिक्षण पद्धति के दोष (Demerits of Modern Educational System)

स्किनर ने अपनी पुस्तक "The Technology of Teaching" में कहा है वर्तमान शिक्षा पद्धति में शिक्षण पद्धतियों पर ध्यान नहीं दिया गया। आधी से अधिक शताब्दी शिक्षा मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षण के परिणामों को मापने के प्रयास किये हैं परन्तु शिक्षण पर ध्यान नहीं दिया है। स्किनर के अनुसार वर्तमान शिक्षा पद्धति में -

(1) विद्यार्थी आलोचना व दंड से बचने के लिये व्यवहार करता है। व्यवहार का कारण अभिभावकों व अध्यापकों से बचाव है।

(2) व्यवहार के तुरन्त बाद पुनर्बलन नहीं दिया जाता।

(3) अन्तिम व्यवहार तक पहुंचाने के लिये विषयवस्तु को क्रमबद्ध रुप मे लघु अंशों में प्रस्तुत नहीं किया जाता।

(4) वांछित व्यवहार को पुनर्बलन को बहुत कम दिया जाता है।

2.4.1 स्किनर का अनुक्रिया केन्द्रित उपागम

(अ) व्यवहार (Behaviour) - स्किनर यह मानते है कि प्राणी द्वारा स्वयं या बाह्य तत्वों के संदर्भ में व्यक्त उसके पूरे या आंशिक गति को व्यवहार कहना चाहिये।

"Behaviour is the movement of an organism or of its parts in a frame of reference provided by the organism itself or by various external objects or fields of sources"

(ब) अधिगम (Learning) - अधिगम अनुक्रियाओं के स्वरुप या सम्भावनाओं में परिवर्तन है। यह परिवर्तन क्रियाप्रसूत अनुबन्धन के द्वारा लाया जाता है। अधिगम को दो भागों में बॉटा गया है-

प्रतिवादी व्यवहार (Respondent Behaviour)

सक्रिय व्यवहार (Operant Behaviour)

प्रतिवादी व्यवहार विशिष्ट उद्दीपनों तथा विशिष्ट अनुक्रियाओं के सम्बन्धों में किया जाता है। पावलव के अनुकूलित अनुक्रिया सिद्धांत में घन्टी के बजने पर कुत्ते के मुंह में लार का आना प्रतिवादी व्यवहार है।

सक्रिय व्यवहार मे उद्दीपन का पूर्ण सम्बोधन नहीं होता है जो लगातार एक ही अनुक्रिया को उत्पन्न करे। इसमें वातावरण को महत्त्व दिया जाता है। जीव जब अपेक्षित व्यवहार करता है, उसकी पुष्टि रही जाती है। जिससे उसे अन्य अपेक्षित व्यवहार करने के लिये पुनर्बलन मिलता है।

(स) क्रियाप्रसूत अनुबन्धन (Operant Conditioning)- पावलव के अनुकूलित अनुक्रिया -सिद्धांत में दो उद्दीपकों के साहचर्य द्वारा प्राणी में अनुबन्धित अनुक्रिया उत्पन्न करने की क्षमता विकसित की जाती है। यह पूरी प्रक्रिया एक प्रकार से सक्रिय न हो कर निष्क्रिय होती है। क्रियाप्रसूत अनुबन्धन मे प्राणी की क्रिया एवं उससे उत्पन्न प्रसूत (परिणाम) अत्यन्त महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इसके अन्तर्गत प्रणाली को सक्रिय हो कर अनुक्रिया करने के लिये बाध्य किया जाता है। अनुक्रिया द्वारा परिणामों के अनुसार उसे दृढ़ बनाया जाता है।

सक्रिय अनुबद्ध अनुक्रिया या क्रिया प्रसूत अनुबन्धन एक अधिगम प्रक्रिया है जिसमें अनुक्रिया को पुनर्बलन द्वारा अधिक सम्भावित बनाया जाता है और सक्रिय व्यवहार को सबल बनाते है अथवा पुनर्बलन देते हैं।

Operant condition is the learning process whereby a response is made probable. An operant is strengthened or reinforced.

उदाहरण द्वारा प्रत्यय को स्पष्ट कर सकते हैं - छोटा बालक किसी नवागुन्तक को नमस्ते करता है और माता-पिता इस प्रकार के व्यवहार से मुग्ध होकर उसे थपथपाते हैं। वह भविष्य में भी नमस्ते करने की अनुक्रिया सीख लेता है। यहां ध्यान देना होगा कि सर्वप्रथम अनुक्रिया जैसे नमस्ते कहना व तदुपरान्त माता-पिता द्वारा थपथपाना अत्यन्त आवश्यक माने जाते हैं।

स्किनर की दृष्टि मे अधिकांश मानव-व्यवहार को क्रियाप्रसूत पुनर्बलन का परिणाम मानना चाहिये।

Stimulus.....Response.....

उद्दीपन.....अनुक्रिया..... पुनर्बलन

(द) पुनर्बलन (Reinforcement)- पुनर्बलन दो प्रकार का होता है सकारात्मक व नकारात्मक। सकारात्मक पुनर्बलन उसे कहते हैं जिसके अन्तर्गत उद्दीपक की प्राप्ति अनुक्रिया पर निर्भर होती है। सकारात्मक पुनर्बलन प्रदान करने वाला उद्दीपन की गति में वृद्धि करता है। जबकि प्रत्येक अनुक्रिया के तुरन्त बाद इसका प्रयोग किया जाये। नकारात्मक पुनर्बलन अनुक्रिया की सम्भावना को तुरन्त कम कर देता है। यदि प्रत्येक अवांछनीय अनुक्रिया के तुरन्त बाद इसका प्रयोग किया जाये।

स्किनर का विचार है कि मानव के लगभग सभी व्यवहार सक्रिय पुनर्बलन का परिणाम होते है। सक्रिय अनुक्रिया एक ऐसा व्यवहार होता है जिस पर पुनर्बलन एक शक्ति दल (Contingent) होता है। अत: पुनर्बल सक्रिय अनुबद्ध अनुक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है।

(य) क्रियाप्रसूत अनुबन्धन की प्रविधि (Techniquers of Operant conditioning) - क्रियाप्रसूत अनुबन्धन के जरिये व्यवहार रचना (Shaping) सम्भव है। इसके अंतर्गत अभिक्रमित सोपानों के माध्यम से अधिगम जनित कराया जाता है तथा उत्तरोत्तर क्रम से ऐसी अनुक्रिया उत्पन्न करने की व्यवस्था की जाती है जो अभी दृष्टि निष्पादन से मिलती-जुलती है। इसे क्रमिक सन्निकट प्रणाली (Methods of successive approximation) कहा जाता है। भाषा का बोलना, खेल खेलना, रस्सी पर चलना जैसे कार्यो को छोटे-छोटे पदों में क्रमिक सन्निकटन प्रणाली के द्वारा सिखाया जाता है।

क्रियाप्रसूत अनुबन्धन के द्वारा व्यवहार को पादन (Fading) भी किया जाता है। इसके अंतर्गत अधिगम परिस्थिति में पहले से घटित हो रहे व्यवहार को विघटित किये बिना नयं उद्दीपक को क्रमिक ढंग से प्रस्तुत किया जाता है बाद में चल कर उद्दीपक को और अधिक स्पष्ट कर दिया जाता है। जिसे प्रकटन के नाम से पुकारा जाता है।

एक बार अनुक्रिया की सम्प्राप्ति हो जाने पर उसमें विलोप (Extinction) किया जाना सम्भव है। इसके लिये यह आवश्यक है कि अनुक्रिया के उत्पन्न होने पर कोई पुनर्बलन उपलब्ध नहीं कराया जाये। ऐसा कई बार घटित होने पर पूर्व अर्जित अनुक्रिया की शक्ति में ह्रास होने लगता है और एक ऐसी अवस्था भी आती है, जबकि वह पूर्णत: लुप्त हो जाती है। इस प्रक्रिया को विलोप के नाम से पुकारा जाता है।

विलोप के अतिरिक्त क्रियाप्रसूत का प्रयोग सामान्यीकरण व विभेद की क्षमता विकसित करने में किया जाता है। प्राणी किसी अनुक्रिया को कई पुनर्बलन संकेतों या विभेदक उद्दीपकों की उपस्थिति में उत्सर्जित करने की क्षमता अर्जित कर लेता है। कबूतर एक खास "की" या "बटन" पर चोंच मारना सीख जाये और उसके उपरान्त अन्य बटनों पर भी चोंच मारे और खाना प्राप्त कर ले तो यह सामान्यीकरण है।

कई अनुक्रियाओं, आदतों या आपरेन्ट को क्रमिक रुप में संयोजित किया जाता है। इस प्रक्रिया को श्रृंखलन (Chaining) कहते हैं।

स्किनर ने व्यवहार के प्रयोगात्मक विश्लेषण के द्वारा अभिक्रमित अनुदेशन का विकास किया। अभिक्रमित अनुदेशन एक ऐसी प्रविधि है जिसमें अनुदेशन सामग्री को क्रमबद्ध रुप में प्रस्तुत किया जाता है। इसके द्वारा अधिगम स्वरुपों का विकास किया जाता है और विद्यार्थियों की सही अनुक्रियाओं के लिये पुनर्बलन दिया जाता है। अभिक्रमित अनुदेशन में छोटे-छोटे पदों की सहायता से अधिगम स्वरुपों को उत्पन्न किया जाता है। जिससे व्यवहार श्रृंखला विकसित होती है और अंतिम उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।

(र) शिक्षण मशीनें व उपकरण (Teaching Machine and Tool) - शिक्षण मशीनें व उपकरणों का प्रयोग 'पुनर्बलन के शक्तिदल" (Contingences of reinforces) के लिये

आवश्यक है। स्किनर का मत है कि अधिकाधिक अध्यापक तैयार करने से या विद्यालय खोलने से शिक्षा का कार्य पूरा नहीं हो सकता। शिक्षा को प्रभावपूर्ण बनाने के लिये श्रम मितव्ययी पूंजीगत साधनों का उपयोग अर्थात् शिक्षण मशीनों का प्रयोग किया जाना चाहिये। उनकी धारणा है कि शिक्षण मशीनें अनुदेशन प्रक्रिया में विद्यार्थी को सक्रिय बनाती है जबकि परम्परागत शिक्षण में विद्यार्थी की भूमिका निष्क्रिय होती है।

उपयुक्त शिक्षण मशीन के विभिन्न विकल्पों में से सही विकल्प का चयन करने की अपेक्षा विद्यार्थी आवश्यक तत्व द्वारा स्वयं अनुक्रिया जटिल व्यवहारों को सीखने के लिये व्यवस्थित पदों के क्रम से गुजरने की व्यवस्था।

शिक्षण मशीन एक ऐसा तंत्र है जो एक रिकॉर्डप्लेयर के जैसा होता है। इसमें भंडारक (Storage), पटल (Screen) कुंजी पटल (Key Board) तथा गणक (Calculator) को सम्मिलित करते हैं। ये सभी एक दूसरे से सम्बन्धित होते हैं। स्क्रीन पर टाइप किये हुये पृष्ठ या समस्या को देखा जा सकता है। विद्यार्थी स्लाइड को हिलाकर उत्तर देता है। विद्यार्थी के द्वारा दिया हुआ उत्तर टाइप किये हुये पृष्ठ पर दिये गये छेद में आ जाता है। विद्यार्थी कुंजी पटल पर दिये गये बटन को दबाकर अपने उत्तर के सही या गलत होने का संकेत प्राप्त करता है। उत्तर गलत होने पर विद्यार्थी को पुन: उस प्रश्न का उत्तर देना होता है। ऐसा न करने पर उगली समस्या या प्रश्न सतह या पटल पर नहीं आता। यह शिक्षण मशीन का कठोर अवयव है। शिक्षण मशीन में आवश्यक तथ्यों व सूचनाओं को क्रमबद्ध रुप में अभिक्रमित अनुदेशन के अनुसार डालना कोमल अवयव कहलाता है।

स्किनर ने "Technologies of Teaching" में शिक्षण मशीनों के लाभों की निम्न सूची दी है।

1. सही अनुक्रिया के लिये तुरन्त पुनर्बलन
2. सम्पूर्ण कक्षा या पर्यवेक्षण अध्यापक द्वारा सम्भव होता है। इसके साथ ही प्रत्येक विद्यार्थी अपनी गति के अनुसार जितना सीखना चाहे सीख सकता है।
3. यदि विद्यार्थी को बीच में विद्यालय छोडना भी पड़े तो वह दुबारा से किसी भी समय उसी विषयवस्तु को प्रारम्भ कर सकता है।
4. प्रत्येक विद्यार्थी अपनी गति से सीख सकता है। सबसे आगे निकल जाने पर विद्यार्थी को सीखने के अन्य और कार्य दिये जाते है।
5. शिक्षण मशीनें गलत अनुक्रियाओं को लेखबद्ध करती है। इससे टेप (Tape) को संशोधित करके उनकी भावशीलता को बढाया जा सकता है।
6. विद्यार्थियों की उपलब्धियों को ध्यान में रखकर अध्यापक आवश्यक बिन्दुओं पर पूरक पुनर्बलन दे सकता है।
7. अध्यापक समस्याओं को क्रम से आयोजित करके जटिल आलेख (Report) बनाया जा सकता है।

स्किनर ने "Teaching Machine" में कहा है कि शिक्षण मशीनों का प्रभाव प्रत्येक विद्यार्थी पर आश्चर्यजनक रुप से निजी ट्यूटर के जैसा होता है।

स्किनर की यह मान्यता है कि शिक्षण मशीनों के द्वारा चिन्तन प्रक्रिया को विकसित किया जा सकता है। चिन्तन प्रक्रिया को स्वाभाविक प्रक्रिया नहीं माना जाना चाहिए। उनके अनुसार बिना नियमों के चिन्तन प्रक्रिया विकसित नहीं होती। चिन्तन प्रक्रिया भी अन्य व्यवहारों की तरह नियमबद्ध तरीके से विकसित होने वाली प्रक्रिया है। उनके अनुसार विद्यार्थी बिना किसी शिक्षण के सीखें। विद्यार्थी स्वयं समस्याओं का समाधान ढूंढे, निर्णय ले मौखिक व्यवहार कर और अज्ञात को खोजें इन क्रियाओं को करने के लिये शिक्षण किया जाये।

"It is important that the student should learn without being taught, solve problems by himself, explore the unknown, make decision and behave in original ways and these activities should, if possible, be taught"

विषयवस्तु के शिक्षण के समय चिन्तन का शिक्षण नहीं किया जाना चाहिये। ज्ञान के शिक्षण में अन्तिम व्यवहार को परिभाषित करना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यदि चिन्तन प्रक्रिया को अलग से विश्लेषित करके सिखाया जाये तो पहले से प्राप्त ज्ञान का संचरण प्रभावशाली ढंग से हो सकता है। चिन्तन के प्रभावशाली शिक्षण के लिये तुरन्त पृष्ठपोषण दिया जाना चाहिये। तर्कशास्त्र, गणित, विज्ञान, व मनोविज्ञान में चिन्तन के लिये विशिष्ट रुप से प्रोग्राम तैयार किये जा सकते हैं।

स्किनर ने अपनी पुस्तक "Technology of Teaching" में वांछित व्यवहारों को विकसित करने के लिये चार प्रश्नों पर ध्यान देने की अनुशंसा की है -

(1) किस व्यवहार को विकसित करना है?

(2) कौन से पुनर्बलन उपलब्ध है?

(3) कौनसी अनुक्रियायें उपलब्ध है?

(4) किन पुनर्बलनों का विभिन्न प्रविधियों में प्रभावपूर्ण तरीके से प्रयोग किया जा सकता है?

इनमें से अन्तिम तीन प्रश्नों में शिक्षण मशीनों का प्रयोग भली-भाँति किया जा सकता है। स्किनर का मनोविज्ञान पूर्णयता विज्ञान का अभियांत्रिक प्रकार है।

2.5 सारांश (Summary)

शैक्षिक तकनीकी के अन्तर्गत शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए उपयोग में लाये जाने वाले नवाचारों का वर्णन होता है। एम.गेने. ने अधिगम के स्वरूप के स्पष्टीकरण के लिए अधिगम के विभिन्न सिद्धान्तों का विश्लेषण भी किया तथा उन्होंने अधिगम परिस्थितियों की व्याख्या भी की है। उनके अनुसार कोई भी अधिगमकर्ता नया व्यवहार उस समय तक अर्जित नही कर सकता है जब तक कि पूर्वपेक्षित योग्यताएँ विकसित नही कर लेता है।

बी.एफ. स्किलन ने क्रियाप्रसूत अनुबन्धन का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। स्किनर द्वारा शिक्षण प्रक्रिया को सफल एवं प्रभावी बनाने के लिए शिक्षण मशीन का भी प्रतिपादन

किया गया। जिसमें शिक्षार्थी स्वयं की गति से सीखता है तथा सही प्रतिक्रिया करने पर पुनर्बलन की प्राप्ति भी होती है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्रश्न-1 गेने के अनुसार शिक्षण की उपलब्धियां क्या है?

What are the learning capacities according to Gange?

प्रश्न-2 शिक्षण अधिगम व्यवस्था में पुनर्बलन की भूमिका का वर्णन करें?

Describe the role of Reinforcement in teaching learning system.

प्रश्न-3 आप सहायक सामग्री का चयन शिक्षण में किस आधार पर करेंगे?

(संकेत-अधिगम के स्वरूप व अधिगम उद्देश्य)

On what basis will you select the material aid in teaching?

प्रश्न-5 शिक्षण मशीनों के द्वारा अनुदेशन को कैसे प्रभावशाली बनाया जा सकता है? उदाहरण देकर समझायें।

How can teaching machine make instruction effective? Explain with example.

2.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Bichler F. Robert - psychology Applied to Teaching, Boston at 1974
2. 2.Gange,M.Robert - The condition of learning and Theory of instruction Holt-Savanders international 1977
3. Skinner B.F. - The Technology of Teaching, Appleton-Century craits- 1968
4. Bigge,Moris - Learning Theories for, Harper and Row, New York-1982

इकाई-3

शैक्षिक तकनीकी का सैद्धान्तिक आधार - (द्वितीय) आसुबल, का अर्थपूर्ण शाब्दिक अधिगम का सिद्धांत, ब्रूनर का संकल्पना विकास का सिद्धांत तथा प्याजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धांत तथा विकास की विभिन्न अवस्थाएं Theoretical Bases of Educational Technology-II Ausubel's theory of Meaningful Verbal learning, Burner's theory of Concept Development and Piaget's theory of Cognitive Development and different stages of Development

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

3.1 प्रस्तावना
(Introduction)

3.2 आसुबल का अर्थ-पूर्ण शाब्दिक अधिगम का सिद्धांत
(Ausubel's Theory of Meaningful Verbal Learning)

3.2.1 लक्ष्य तथा मान्यताएँ
(Goals and Assumptions)

3.2.2 रट कर सीखने के मुद्दे
(The rote learning Issues)

3.2.3 सूचनाओं का संगठन
(Organizing Information)

3.3 ब्रूनर का संकल्पना विकास सिद्धांत
(Burner's Theory of Concept Development)

3.3.1 संकल्पना के प्रकार
(Type of Concept)

3.3.2 संज्ञानात्मक विकास

(Cognitive Development)
3.3.3 क्रियाओं द्वारा सीखना
(Enactive Representation)
3.3.4 प्रतिमाओं द्वारा सीखना
(Ikonic representation)
3.3.5 चिन्हों द्वारा सीखना
(Symbolic representation)
3.4 प्याजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धांत
(Paget's Theory of Cognitive Development)
3.5 संज्ञानात्मक विकास की विभिन्न अवस्थाएं
(Different Stages of Cognitive Development)
3.6 सारांश
(Summary)
3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

3.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी-

- अर्थ पूर्ण शाब्दिक अधिगम तथा उसके निहितार्थो के संदर्भ में आसुबेल के विचारों को समझ सकेगें।
- संकल्पना विकास तथा उसके शैक्षिक निहितार्थो के संदर्भ में ब्रूनर के विचारों से अवगत हो सकेगें।
- संज्ञानात्मक विकास तथा संज्ञानात्मक विकास की विभिन्न अवस्थाओं के बारे में प्याजे के सिद्धांत से परिचित हो सकेगें।

3.1 प्रस्तावना
(Introduction)

अधिगम के सम्बन्ध में अनेक शिक्षा शास्त्रियों ने सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। आसुबैल के अनुसार प्रत्येक विषय की अपनी एक संरचना है। इसी को आधार बिन्दु मानकर शिक्षक को नया ज्ञान प्रदान करता है। नया ज्ञान तभी अर्थपूर्ण होगा जबकि स्थापित संरचना के संदर्भ में नया ज्ञान विकसित हो इसके लिए आसुबैल ने Advance organizer model बनाया। जो Advance organiser पुराने संरचना को प्रस्तुत करता है और नये ज्ञान को इसके माध्यम से प्रस्तुत करता है तथा नया ज्ञान पुराने ज्ञान से सम्बन्धित होता है। अतः नया ज्ञान विद्यार्थी को अर्थपूर्ण प्रतीत होता है वो सीखने को तत्पर होता है।

ब्रूनर ने सम्प्रत्यय के विकास पर बल दिया है। सम्प्रत्यय के विकास में किस प्रकार बाह्य प्रेरकों का तथा आन्तरिक विचार की क्या भूमिका है? जिससे कि विचारात्मक प्रक्रिया में बाह्य वातावरण समायोजित हो जावे और क्रमिक रूप से सम्प्रत्ययों का विकास होता चले।

प्याजे ने संज्ञानात्मक विकास की चर्चा की है।

इस इकाई में आप उपरोक्त विषय वस्तु से सम्बन्धित अध्ययन करेगें।

3.2 आसुबल का अर्थ-पूर्ण शाब्दिक अधिगम का सिद्धांत (Ausubel's Theory of Meaningful Verbal Learning)

3.2.1 लक्ष्य तथा मान्यताएँ (Goals and Assumption)- आसुबल का प्राथमिक उद्देश्य शिक्षकों को इस संदर्भ में सहायता करना था कि वह अधिक से अधिक सूचनाओं को अर्थ पूर्ण तथा प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सकें। उनका मानना था कि सूचनाओं का संग्रहण करना उचित है तथा विद्यालय और शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह छात्रों को अधिक से अधिक सूचनाऐं संप्रेषित करें। यह सूचनाएँ किस प्रकार सम्प्रेषित होकर अधिगमित होती है - इसको उन्होंने अपने सिद्धांत 'Meaningful verbal learning' में विशद् रुप से समझाया है। इसके अनुसार शिक्षक का दायित्व है कि जो सीखा जाना है, उसे छात्रों के समक्ष स्पष्ट रुप से रखें। आगमन विधि (Inductive Approach) में जहां छात्र संकल्पनाओं की खोज व पुन: खोज करते हैं, जबकि एडवांस आर्गेनाइजर विधि में संकल्पनाएं तथा सिद्धांत छात्रों को सीधे बताए जाते हैं। आसुबल का माडल इस प्रकार प्रकल्पित किया गया है, ताकि छात्र की संज्ञानात्मक संरचना दिए जाने वाले ज्ञान के अनुरुप मजबूती (Strengthen) हो सके। आसुबेल ने कहा है कि छात्र की वर्तमान की ज्ञानात्मक संरचना ही यह तय करती है कि उसको सिखाया जाने वाला नया ज्ञान किस प्रकार से दिया जाए तथा यह ज्ञान उस छात्र के लिए अर्थपूर्ण होगा या नहीं। आसुबेल उन विद्वानों से सहमत नहीं है जो यह मानते है कि बाह्य अधिगम (Expositery learning) निष्क्रिय है, अर्थपूर्ण नहीं होता है तथा रटने को बढावा देती है।

3.2.2 रट कर सीखना का मुद्दे (The Rote Learning Iss)-अर्थपूर्ण अधिगम (Meaningful Learning) का अर्थ है कि दिया जाने वाला ज्ञान, हमारे पूर्व ज्ञान से जुडा हो तथा इस नये ज्ञान का हम सृजनात्मक रुप से नई परिस्थितियों में प्रयोग कर सके। जबकि रटने वाले अधिगम (Rote Learning) से संकल्पनाओं को समालोचनात्मक रुप से समझना कठिन होता है तथा उसमें भूलने की भी संभावना बहुत अधिक होती है। परन्तु आसुबल का मानना है कि विभिन्न प्रकार के शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार से प्रकल्पित अधिगम के प्रकारों (Different type of Learning) की आवश्यकता होती है तथा एक अधिगम विधि से समस्त शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकती है, जैसे खोज विधि से इस उद्देश्य की पूर्ति हो सकती है कि छात्रों में खोज की प्रवृत्ति बढ़ाकर कैसे सिखाएँ, परन्तु इसके द्वारा विषयवस्तु पर प्रवीणता (Mastery) हासिल करना कठिन कार्य होता है।

अर्थपूर्ण अधिगम क्या है? (What is Meaningful Learning)- आसुबल इस बात से सहमत नहीं है कि अर्थपूर्ण अधिगम का प्रस्तुतीकरण (presentation) नहीं किया जा सकता है और यह केवल स्वतंत्र समस्या समाधान विधि व अनुभवों के पुनर्गणन (Manipulative experience) के द्वारा ही उत्पन्न होता है। आसुबल कहते है कि यदि सीखने वाला सही ढंग से तैयार (Right 'Set') है तथा अधिगम सामग्री समझने योग्य है, तो अर्थपूर्ण अधिगम होगा ही बशर्ते कि नया ज्ञान छात्र के ज्ञानात्मक संरचना के वर्तमान ज्ञान से सही ढंग से जुड (Link) सके।

3.2.3 सूचनाओं का संगठन - विषय की संरचना तथा ज्ञानात्मक संरचना (Organizing Information- The Structure of the discipline and Cognitive structure)- आसुबेल के अनुसार इन दो तथ्यों में काफी समानता होती है कि विषय का ज्ञान किस प्रकार संगठित है तथा सीखने वाला किस प्रकार से इस ज्ञान को अपने मस्तिष्क (ज्ञानात्मक संरचना) में संरचित करता है। उन्होनें कहा है कि प्रत्येक विषय में संकल्पनाओं की संरचनाऐं होती है जोकि पदानुक्रम (Hierarchical) मे संगठित होती है अर्थात प्रत्येक विषय के ऊपरी भाग में (At the top each discipline) वृहत व अमूर्त संकल्पनाऐ होती है, जबकि उस विषय के निचले हिस्से में सरल तथा मूर्त संकल्पनाएं संगठित होती है। जे. ब्रूनर की तरह आसुबल का मानना है कि प्रत्येक विषय की संरचनात्मक संकल्पनाओं को पहचाना जा सकता है तथा उससे छात्रों को पढ़ाया जा सकता है, जो कि छात्रों के लिए सूचना प्रक्रमण तंत्र (Information processing System) के रुप में कार्य करता है, जिससे छात्रों के दिमाग में एक ज्ञानात्मक चित्र (Intellectual Map) बनता है, इसकी सहायता से छात्र विशेष पक्ष (Particular Domain) का विश्लेषण कर सकता है तथा उस पक्ष से सम्बन्धित समस्याओं का हल कर सकता है।

आसुबल ने मानव मस्तिष्क की व्याख्या सूचना प्रक्रमण तंत्र तथा सूचनाओं के संग्रहण (information Storing System) के रुप में की है जिसकी तुलना किसी भी विषय की संकल्पना की संरचना के साथ की जा सकती है। किसी शैक्षिक (Academic Discipline) विषय की तरह मस्तिष्क में भी विभिन्न विचारों के सेट एक क्रम में जमे होते हैं जो कि सूचनाओं तथा विचारों हेतु Anchor प्रदान करते हैं तथा वह भण्डारगृह (Store house) के रुप में अपनी सेवाएं देते है। आसुबल ने आगे कहा है कि जैसे ही व्यक्ति का सूचना प्रक्रमण तंत्र नई सूचनाओं तथा विचारों को प्राप्त करता है, वह इन्हें पहचान कर अपने साथ सामंजस्वित (Accommodate) करता है। संक्षेप में इस तंत्रे (System) में लगातार परिवर्तन होता रहता है।

आसुबल बार-बार कहते हैं कि नये विचार उसी सीमा तक उपयोगी ढंग से सीखे तथा धारित (Retain) किए जा सकते हैं जिस स्तर तक वह मस्तिष्क में पहले से विद्यमान संकल्पनाओं के साथ सम्बन्धित हो पाते हैं। यदि नयी संकल्पना की संरचना तथा ज्ञानात्मक संरचना में विद्यमान संकल्पना में ठीक से सम्बन्ध नहीं बन पाता है या संघर्ष रहता है तो नई सूचना को न अच्छी तरह से सीखा जा सकता है और न ही उसे ठीक से धारित किया जा सकता है। इस समस्या से बचने के लिए शिक्षक का दायित्व है कि वह दिए जाने वाले

ज्ञान को एक क्रम में व्यवस्थित करें तथा उसे इस रुप में छात्रों को दे कि उसे स्वीकार करने हेतु बच्चे के मस्तिष्क में उपयुक्त विचारात्मक कड़ी (Ideational anchors) हो। परन्तु इसके साथ यह भी आवश्यक है कि सीखने वाला नये ज्ञान के प्रति उचित ढंग से प्रतिक्रिया (Actively Reflects) करे, नये तथा पुराने ज्ञान के सम्बन्धों (Linkages) को आधार बनाकर सोचे तथा यदि इन दोनों सूचनाओं में अन्तर हो तो उसे दूर करने का प्रयास करें तथा समानताओं को प्राथमिकता दें।

3.3 ब्रूनर का संकल्पना निर्माण सिद्धान्त (Bruner's Theory of Concept Development)

3.3.1 संकल्पना के प्रकार- ब्रूनर (1956) संकल्पना निर्माण (Formation) तथा संकल्पना प्राप्ति (Concept attainment) में अन्तर को काफी महत्वपूर्ण मानते हैं। उसके अनुसार वस्तुओं के प्राथमिक वर्गीकरण (Primary Categorization) की प्रक्रिया को 'संकल्पना निर्माण' कहा जा सकता है। जबकि संकल्पना प्राप्ति में वस्तुओं या विषयों के जो विशिष्ट लक्षण अथवा विभिन्न कारक (Dimension) पहले से मालूम रहते है, उन्हें प्राप्त करना होता है।

संकल्पनाएं मुख्यत: तीन प्रकार की होती हैं -

3.3.1.1 संयुक्त संकल्पना (Conjuctive Concept) - इस संकल्पना से आश्य है कि उचित मूल्यों (Appropriate value) के कई लक्षणों की सामूहिक उपस्थिति जैसे कुर्सी, मेज, पंखा आदि।

3.3.1.2 असंयुक्त संकल्पना (Disconjuctive Concept) - इस संकल्पना से आश्य है कि किसी वस्तु के निर्धारक लक्षणों (Criterial attributes) के समालोचनात्मक वर्ग (Critical Combination) की उपस्थिति जैसे मूल्य वृद्धि, अभाव आदि।

3.3.1.3 सम्बन्धीय संकल्पना (Relational Concept) - इस संकल्पना से आशय है कि किसी वस्तु के लक्षणों के विभिन्न तत्वों के बीच सामान्य सम्बन्ध (Common Relation) जैसे - माता-पिता, चाचा-भतीजा आदि।

3.3.2 ब्रूनर का संज्ञानात्मक विकास - ब्रूनर (1967) ने बालकों के संज्ञानात्मक उन्नति की विकासात्मक उपागम का भाषा विकास के सम्बन्ध में विशद विवेचन किया है। ब्रूनर ने विभिन्न विषयों (Themes) का सुझाव दिया है जो कि बच्चे के विकास के साथ विचारित किए जाने चाहिए। इनमें से दो विषय (Themes) संज्ञानात्मक विकास के सम्बन्ध में अधिक महत्वपूर्ण हैं। पहले यह कि बढ़ता हुआ बच्चा किस प्रकार से इस संसार के अपने अनुभवों को प्रदर्शित (Represent) करता है और दूसरा है बालक का संज्ञानात्मक विकास। ब्रूनर के अनुसार बौद्धिक विकास में उस समाज (जिसमें बालक रहता है) सांस्कृतिक तथा भाषाई वातावरण का प्रभाव पडता है।

बच्चे की प्रथमत इस संसार का ज्ञान अपने आदतीय क्रियाओं (Habitual Action) तथा कार्य द्वारा सीखना (Know through doing thing) कहा जाता है यह इनेक्टिव (Enactive) प्रकार की सीखने की प्रक्रिया है।

थोड़े समय के पश्चात् बच्चा दूसरी विधि से सीखना शुरु कर देता है, जिसमें कार्य द्वारा सीखना नहीं होता है बल्कि बालक कल्पना तथा चित्रों के माध्यम से इस संसार को समझने का प्रयास करता है। इसे आइकोनिक (Ikonic) वर्ग का सीखना कहा जाता है।

इसके पश्चात् सीखने का अलग चरण प्रतीक रुप (Symbolic) में सीखना होता है। यह सीखने की बड़ी सशक्त विधि है, जिसके द्वारा बच्चा अपनी क्रियाओं (Action Images) तथा प्रतिमाओं को भाषा में परिवर्तित करता है।

ब्रूनर के उपर्युक्त सम्बन्ध मे विचारों का वर्णन संक्षेप में यहां किया जा रहा है।

3.3.3 क्रियाओं द्वारा सीखना (Enactive Representation)- इसके अन्तर्गत बालक अपनी क्रियाओं के द्वारा इस संसार को समझने का प्रयास करता है। इनेक्टिव से आइकोनिक ढंग से सीखने के बीच का रास्ता बड़ा महत्वपूर्ण है। बच्चा क्रमिक व्यवहार से क्रिया (Action) करना प्रारम्भ करता है तथा उसका हर नया कदम बाह्य पर्यावरणीय उद्दीपन (Enviromental stimuli) द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इस के साथ-साथ उसकी गामक क्रियाएँ नियमित (Regularize) हो जाती हैं तथा उसका व्यवहार उद्दीपक नियन्त्रित न होकर स्वत: होने लगता है तथा धीमे-धीमे क्रिया द्वारा इस संसार को समझने के उसके प्रयास समाप्त होने लगते हैं। तथा बच्चों को तब इतनी स्वतंत्रता मिल जाती है कि वह इस संसार को समझने हेतु अनुक्रिया अधिगम की जगह पर स्थान अधिगम (Place Learning) का उपयोग करने लगता है। क्रमिक अधिगम (Serial Learning) में बालक की अनुक्रियाऐं एक क्रम में होती है। बाद में यह सब क्रियाएँ इस प्रकार मिल जाती हैं कि एक प्रारुप बन जाता है। किन्तु इस प्रकार के क्रमिक अधिगम में स्थानिक संदर्भ (Spatial Context) का विशेष महत्व होता है।

यह स्थानिक संदर्भ एक ऐसा फ्रेमवर्क प्रदान करता है, जिसमें बालक का व्यवहार अनुकूल बैठता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इनेक्टिव प्रक्रिया में बच्चे के सीखने की स्वायत्त व्यवस्था (Autonomous System) नहीं होती है। बल्कि बच्चा पहले अपने स्थानिक संसार (Spatial World of vision) तथा कार्य (Action) के क्रमिक अधिगम के मध्य एक सम्बन्ध स्थापित करता है, जिससे बालक की क्रिया पर निर्भरता कम होती है।

3.3.4 प्रतिमाओं द्वारा सीखना (Ikonic Representation) - आइकानिक प्रतिदर्शन (Ikonic Representation) इसके अन्तर्गत बालक संसार को अपने मस्तिष्क में प्रतिमाओं द्वारा अथवा स्थानिक योजनाओं (Spatial Scheme) द्वारा समझने का प्रयास करता है तथा इनमें क्रियाओं (Actions) की कोई आवश्यकता नहीं होती है। लगभग एक वर्ष की उम्र में बालक प्रतिमाओं (Images) के माध्यम से सीखने लगता है। ब्रूनर कहते हैं कि इस अवस्था में प्रतिमाओं से सीधे कुछ अर्थ निकालना कठिन होता है, परन्तु ऐसा लगता है कि इस अवस्था

में प्रत्यक्षीकरण की कुछ विशेषताएँ, प्रतिमाओं के निर्माण व समझने में कुछ सहायता करती है।

ब्रूनर के अनुसार इस अवस्था मे बालक का प्रत्यक्षीकरण काफी अनमनीय (Rigid) होता है तथा यह 'स्व' और उसकी प्रभाव (Affect) से प्रभावित रहता है। ब्रूनर ने आइकोनिक सीखने के तंत्र को इतना सरल नहीं माना है। इस अवस्था में बालक सीखने हेतु प्रतिमाओं से बद्ध (Image-bound) रहते हैं, परन्तु वह चीजों को गहराई से न समझकर उसके ऊपरी आवरण (Surface of thing) से अधिक प्रभावित होते हैं। आइकोनिक प्रतिदर्शन में बालक, जो उसके दिमाग मे है, उसे बाह्य वातावरण की वस्तुओं के साथ मिलाकर (match) सीखना चाहता है। जब बालक इस (Direct Matching) की स्थिति से बाहर निकलता है व आगे की अवस्था में पहुंचता है तब वह विभिन्न संख्याओं के बीच सम्बन्ध तथा सुधारपरिअवस्था (Relation between quantities and Invariance-across transformation) आदि के द्वारा वस्तुओं को समझने के योग्य होता है।

3.3.5 चिन्हों द्वारा सीखना (Symbolic Representation) - यह योग्यता बालकों में जन्मजात होती है, जो कि धीमे-धीमे विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्टता प्राप्त करती है। यह विभिन्न क्षेत्र (Different system) है, भाषा, यांत्रीकरण व्यवहार (Tol using Type of Behaviour) तथा व्यवहार को संगठित करने के काम पलाउर (A Team paraller) व व्यवस्थित प्रकार (Skilled form)।

ब्रूनर ने (Proto Symbolic Activity) की प्रकृति 'जो कि भाषा सीखने में सहायक है' को समझने हेतु बालक की प्रारम्भिक अवस्था की भाषा को काफी महत्वपूर्ण माना है। इसके लिये उन्होंने भाषा के semantic Function में अंतर करते हुए कहा कि बालक में सीखने Semantic Function (संदर्भ शब्दों तथा उनके अर्थ को समझना) की गति काफी धीमी होती है क्योंकि इस प्रकार से भाषा सीखने में, संचयी प्रक्रिया (Cumulative process) समाहित होती है। भाषा के Syntactic Learning Process (वाक्य की संरचना व प्रारुप को सीखना) की गति संदर्भ शब्दों तथा उसके अर्थ के सीखने से काफी तेज होती है।

बालक, प्रारम्भ में जिस प्रकार से भाषा सीखता है वह वर्गीकरण (Categorical) की प्रक्रिया है। शब्द वस्तुओं हेतु वर्ग (Classes) बनाते हैं तथा यह वर्ग अपने आप में कुछ नियमों से नियंत्रित (Rule governed) रहते हैं, जिससे कि नये वर्ग इनके साथ स्वत: जुड़ते रहते है। प्रत्येक भाषा में 'एक शब्द' के पश्चात् कुछ निश्चित व्याकरण की संरचना होती है। व्याकरण का अर्थ है, नियमों का एक निश्चित के,पश्चात जिससे वह सब चीजें उत्पन्न होती है, जो कि भाषा के माध्यम से कही जा सकती है।

बालक की आरम्भ की भाषा में व्याकरण का प्रयोग कैसे होता है, इसकी व्याख्या करना कठिन है। परन्तु 2 वर्ष के बालक की भाषा में व्याकरण का कुछ न कुछ प्रयोग अवश्य रहता है, परन्तु बालक किस प्रकार शब्दों के वर्ग बनाता है तथा इन वर्गो के अनुक्रम बनाता है, इसे समझना मुश्किल है। यह कहा जा सकता है कि भाषा सीखने के लिए कुछ निश्चित संज्ञानात्मक

प्रक्रिया आवश्यक होती है। ब्रूनर के अनुसार यह संकल्पनाएं पहले प्रयोग की जाती है, फिर भाषा के रुप में ढाली जाती

है और फिर धीमे-धीमे विचारों में परिवर्तित होती है, और प्राय: यह परिवर्तन अच्छी प्रकार से नहीं हो पाता है।

ब्रूनर ने बालक की भाषा सीखने की प्रक्रिया हेतु ब्राउन और बेलुगी (1964) के कार्य का उल्लेख विशेष रुप से किया, जिन्होंने बताया था कि बालकों के भाषा सीखने में अभिभावक या ट्यूटर तथा बालक के बीच एक Contingent Cycle बनता है, जिससे ना केवल व्याकरण के नियमों का, अधिगम होता है बल्कि बच्चा अपने विचारों को भी इस प्रक्रिया से संगठित करना सीखता है।

ब्रूनर ने कहा कि आवाजें (Sounds) जो शब्द बनाती हैं, वह व्यैक्तिक (Individual) होती हैं तथा शब्द जो वाक्य बनाते हैं, वे भी व्यैक्तिक (Discrateness) होते हैं। यह सुनने वाले से यह अपेक्षा करती है कि वह आवाज तथा उसके अर्थ का विश्लेषण करे तथा उससे प्राप्त संदेश को संरचित करे। ब्रूनर की राय में जो भाषा सीखता है उसके लिए विश्लेषण तथा संश्लेषण की प्रक्रिया एक प्रकार से जबर्दस्ती (Forced) होती है। डिसप्लेसमेण्ट (Displacement) भाषा सीखने में एक अन्य महत्वपूर्ण कारक है, जोकि बालक में यह योग्यता उत्पन्न करता है कि वह दूरस्थ सामयिक व स्थानिक फ्रेमवर्क (Temporel-Spatial) में स्थित वस्तुओं अथवा घटनाओं के साथ किस प्रकार सम्बन्ध स्थापित करता है। प्रारम्भ में बालक केवल उन्हीं वस्तुओं के साथ सम्बन्ध स्थापित कर पाते है, जो उनके सामने होती हैं, अथवा जिनके बीते हुए या भविष्य में आने में बहुत कम समय बीता होता है।

संक्षेप में बालक बाह्य वातावरण के आइकोनिक अथवा चित्रीय (Pictureable) पक्षों के बारे में शब्दों को प्रयोग करना सीखता है। यह शब्द वर्गो के एक अनुक्रमित व्यवस्था (Hierarchical System) में बेधे होते हैं। इसके पश्चात् बालक वाक्यों के निर्माण हेतु पूर्वानुमान, कारण (Causation) तथा संशोधन (Modification) के नियमों का प्रयोग करता है। इन तत्वों का प्रयोग बालक अपने अनुभवों को संरचित करने के लिये अभी नहीं कर पाता है, क्योंकि उसे अभी वस्तुओं की दुरुहता (Architecture of Complexity) को समझने में प्रवीणता नहीं मिली होती है। लगभग 6 वर्ष की अवस्था के आसपास जब बालक बाह्य वातावरण को चिन्हीय माध्यमों (Symbolic Mode) से सीखने लगता है, तो बाह्य वस्तुओं का सीखना उसके नियंत्रण मे आने लगता है। जो विचारों को संगठित करने का सिद्धान्त है वह आइसोमारफिक (Isomorphic) होता है तथा उसमें Syntax संरचना का सिद्धान्त भी समाहित होता है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. आसुबल के अर्थपूर्ण शाब्दिक अधिगम के मुख्य लक्षण क्या है?
2. विभिन्न प्रकार की संकल्पनाएं कौन-कौन सी है?

3.4 पियाजे का संज्ञानात्मक विकास का सिद्धान्त (Piaget's Theory of Cognitive Development)

संज्ञानात्मक विकास के गुणात्मक पहलू (Qualitative aspects of Cognitive development) - कुछ समय पूर्व बुद्धि (Intelligence) को एक गतिशील सोचने की प्रक्रिया स्वीकार किया गया है। स्विस मनोवैज्ञानिक जीन पियाजे बालक के संज्ञानात्मक-विकास के गुणात्मक पहलू के विकास को जानने में अग्रणी है। पियाजे ने विकास को प्रयोज्य-वस्तु अन्तःक्रिया (Subject-Object interaction) के कार्य के रूप में माना है, जो विभिन्न अवस्थायों से गुजरता है।

पियाजे के सिद्धान्त (Piaget's theory) के अनुसार बुद्धि एक मौलिक वातानुकूलित गुण (Adaptive quality) है जिसके विकास को मानसिक संरचना के गुणात्मक परिवर्तनों के रुप में देखा जा सकता है (विटबोर्न तथा विनस्टोक 1979)। व्यक्ति वातावरण (Environment) के साथ अन्तःक्रिया करता है, तथा अपनी मानसिक संरचना (Schema) को उसके द्वारा देखी हुई घटनाओं, वस्तुओं तथा व्यक्तियों के बारे में संगठित करता है। ऐसी मानसिक स्थिति सामान्यीकृत ज्ञान का पथ प्रशस्त करने वाली घटनाओं और तथ्यों में अन्तर्सम्बन्धों के बारे में विकसित हो सकती है। दूसरे शब्दों में वातावरण के साथ अन्तःक्रिया करते समय बालक में संगठित अनुभवों के रुप में कई योजना उपाय (Schema) विकसित होते हैं। ऐसी योजनाएँ सरल अथवा जटिल, विभेदित अथवा अविभेदित के रुप में भिन्नता लिए हुए हो सकती है। संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया में मानसिक संरचना को आगामी योजनाओं के विकास के रुप में माना जा सकता है।

3.4.1 स्कीमा के संगठन की प्रक्रिया (Process of Organisation of Schemeas) - स्कीमा के संगठन अथवा अनुकूलन (Adaption) की प्रक्रिया दो प्रमुख गतिविधियों द्वारा होती है: -स्वांगीकरण (Assimilation) एवं समायोजन (Accommodation)। पियाजे के अनुसार यह प्रक्रिया वृद्धि एवं व्यक्तित्व विकास के सभी स्तरों पर आवश्यक मानसिक विकास के सभी पहलुओं के मूल आधार के रुप में मानी जाती है।

3.4.2 स्वांगीकरण (Assimilation) - स्वांगीकरण के अन्तर्गत पूर्व में प्राप्त किए गए अनुभव का उपयोग नई घटनाओं तथा अनुभवों को परिचित स्वरुप में समझने के लिये किया जाता है। दूसरे शब्दों में स्वांगीकरण का तात्पर्य है, विगत अनुभवों का उपयोग करते हुए नए अनुभवों को परिचित परिस्थितियों में रुपान्तरित करना। एक बालक पूर्व में सीखे गए व्यवहार का उपयोग नई उत्पन्न परिस्थितियों में प्रदर्शित करता है। उदाहरण के तौर पर एक बालक जो रंगों के सात मौलिक वर्गो को वर्गीकृत करना जान चुका है, वह भूरे रंग की कमीज पहने व्यक्ति व नीले रंग की कमीज पहने व्यक्ति में विभेद कर सकता है। यद्यपि बालक ने अभी तक विभिन्न रंगों के शेड व उनमें अन्तर के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं की है, फिर भी सात मूल रंगों के वर्गीकरण के पूर्व अनुभव को काम में लेते हुए भूरे रंग व नीले रंग की

कमीज के अन्तर को पहचान लेता है। इस प्रकार बालक पूर्व में प्राप्त अनुभवों के आधार पर वास्तविकता का धुँधला सा चित्र प्राप्त कर लेता है।

3.4.3 समायोजन (Accommodation) - समायोजन वर्तमान मानसिक संरचना के संपरिवर्द्धन में सहायता करता है तथा अनुभवों का बड़े पैमाने पर विभेदीकरण कराता है। उदाहरण के तौर पर जब बालक लाल व गुलाबी कमीज के मध्य अन्तर करना सीख जाता है, तो वह पूर्व में उपस्थित लाल रंग की मानसिक संरचना (Schema) की सहायता से लाल रंग के शेड के रुप में गुलाबी रंग को पहचानने का नया अनुभव समायोजित कर लेता है। जब बालक वातावरण की नवीन परिस्थितियों में अनुक्रिया करना सीख जाता है, तो समायोजन होता है।

संक्षिप्त रुप में नवीन परिस्थितियों में अन्तःक्रिया करते समय जीव द्वारा पूर्व में सीखे गये व्यवहार के प्रदर्शन से स्वांगीकरण का होना प्रदर्शित होता है, जबकि जीव द्वारा किसी परिस्थिति में नई अनुक्रिया करने से समायोजन होता है। समायोजन वर्तमान में उपस्थित मानसिक संरचना के अन्दर परिवर्तन करता है। समायोजन के द्वारा किसी वस्तु अथवा परिस्थिति के विशेष लक्षणों सम्बन्धी अनुभव प्राप्त किए जाते है।

3.4.4 स्वांगीकरण परिपाक व समायोजन में संतुलन (Equilibrium of Assimilation and Accommodation)- पियाजे के सिद्धान्त के अनुसार अच्छे स्तर का बोधात्मक कार्य तब होता है, जबकि स्वांगीकरण एवं समायोजन में साम्य (Equilibrium) स्थापित हो जाता है। संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया में मानसिक संरचना का संगठन एक चक्रीय पथ का अनुसरण करता है।

नए अनुभव फिट करने के उद्देश्य से वर्तमान नए अनुभवों को परिचित परिस्थितियों में देखना मानसिक संरचना में परिवर्तन करना पूर्व में सीखे गये अनुभवों का प्रदर्शन

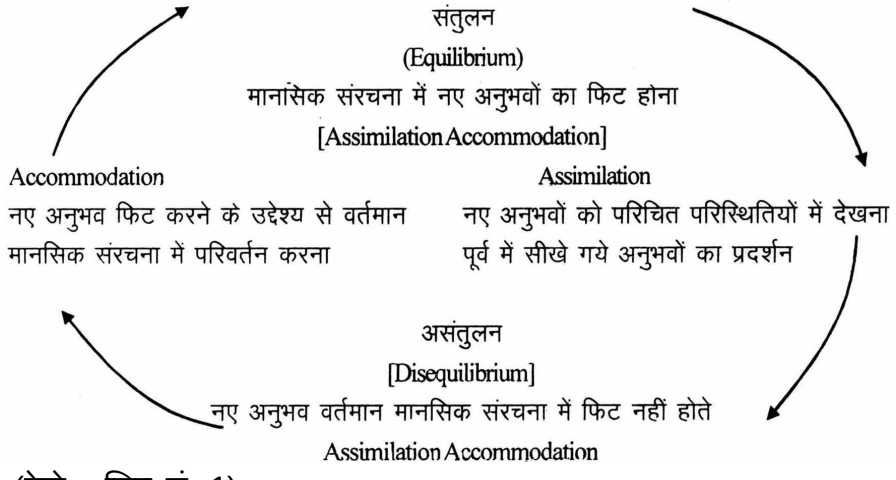

(देखे - चित्र सं. 1)

चित्र- 1: मानसिक सरंचना का चक्र निर्माण

स्त्रोतः. विटबोर्न एस.के. एवं विनस्टोक, सी.एस. 1979

पहले बालक नए अनुभवों को परिचित तरीकों से काम में लाता हुआ अनुभवों का स्वांगीकरण करता है। हो सकता है, इस विधि से बालक को घटनाओं तथा वस्तुओं की सही जानकारी नहीं हो पाती हो। यह दूसरी अवस्था है, जिसमें कि नए अनुभव वर्तमान मानसिक संरचना में फिट नहीं हो पाते हैं। इस स्थिति में स्वांगीकरण एवं समायोजन में असंतुलन पैदा हो जाता है। तीसरे स्तर में बालक नयी संज्ञानात्मक संरचना प्राप्त करता है, जो कि नए अनुभवों में फिट हो जाती है। इसमें अनुभवों का समायोजन होता है। अनुभव संज्ञानात्मक संरचना में सही स्वरुप में फिट हो जाते है, तब स्वांगीकरण एवं समायोजन में संतुलन प्रारम्भ हो जाता है। इसके फलस्वरुप नयी वस्तुएँ एव मानसिक संरचनाओं का बनना प्रारम्भ हो जाता है। यहां तक कि ऐसी मानसिक संरचनाओं का उपयोग नए अनुभवों के स्वांगीकरण के उपकरणों के रुप में किया जा सकता है। इससे आगे नवीन मानसिक संरचनाएँ निर्मित होंगी। इस प्रकार संज्ञानात्मक विकास को स्वांगीकरण व समायोजन के मध्य उन्नत संतुलन की स्थिति द्वारा विशिष्टीकृत किया जा सकता है। पियाजे के अनुसार, द्विधुवीयता (Bipolarity) के रुप में व्यक्ति / प्रयोज्य (Subject) वस्तु (Object) को अपनी मानसिक संरचना में स्वांगीकरण करता है और ठीक उसी समय अपनी मानसिक संरचनाओं में वस्तु के विशिष्ट लक्षणों को समायोजित करता है। स्केमेटा (Schemeta) के संगठन की यह प्रक्रिया इन दोनों गतिविधियों में संतुलन बनने से शक्तिशाली हो जाती है।

नोट:(1) अपने उत्तर का मिलान पुस्तिका के अन्त में दिए गए उत्तरों से करें।

3.5 संज्ञानात्मक विकास की अवस्थाऐं (Stages of Cognitive Development)

मानसिक संरचना का विकास एक क्रमिक प्रक्रिया है। मनुष्य के जीवन में ठीक जन्म से लेकर परिपक्वता तक संज्ञानात्मक विकास निश्चित क्रम से आगे बढ़ता है। प्रत्येक अवस्था को स्केमेटा (Schemeta) के अपने विशेष स्वरुप द्वारा पहचाना जाता है। व्यक्ति में संज्ञानात्मक संरचना का निर्माण किशोरावस्था अथवा प्रारम्भिक युवावस्था में हो जाता है। इसी संरचना के निर्माण के कारण व्यक्ति में व्यस्क स्तर के बौद्धिक कार्य करने की क्षमताएं उत्पन्न हो जाती-हैं। पियाजे कहता है कि वह स्केमेटा, जिसकी उपस्थिति प्रत्येक अवस्था को अंकित करती है, प्रारम्भिक अवस्था से ही विकसित होना प्रारम्भ हो जाती है। पियाजे के विचार से मानसिक संरचना अथवा किशोरावस्था की विकासात्मक प्रक्रिया को समझने की दृष्टि से हमें संज्ञानात्मक विकास के पूर्व की स्थितियों को समझना होगा। पियाजे के अनुसार बौद्धिक विकास चार प्रमुख अवस्थाओं के अन्तर्गत होता है।

इन व्यवहारों को सारिणी मे निम्नानुसार प्रदर्शित किया गया है:

अवस्था	उम्र	मुख्य लक्षण
(1) मुख्य लक्षण (Sensri motor)	शैशव काल (Infancy)	विचार कार्य योजना तक सीमित

	जन्म से 2 वर्ष तक	
(2) पूर्व क्रियात्मक	विद्यालय पूर्व अवस्था (Pre-Schoolstage) 2 से 7 वर्ष	अन्तर्ज्ञानात्मक एवं प्रस्तुत्यात्मक विचार। तार्किक विचारों का आभाव
(3) स्थूल क्रियात्मक (Concrete operational)	बाल्यकाल (Childhood) 7 से 11 वर्ष	सुव्यवस्थित तार्किक विचार, लेकिन साकार वस्तुओं के बारे में।
(4) औपचारिक क्रियात्मक (Formal Operational)	किशोरावस्था एवं यौवन	सार, तार्किक विचार

आयु अनुमानित

(स्त्रेत: हाफमेन, एल, पेरिस, एस; हाल, ई. एवं षैल, आर; 1988)

3.5.1 संवेगात्मक गामक अवधि (Sensory Motor stage) - इस अवधि में बालक अनुबंधित अनुक्रिया (Conditional reflex) अथवा कार्यकारण की अपरिपक्व समझ के कारण बालक विभिन्न वस्तुओं को पहचानने लगता है। नवजात शिशु चूसना स्वर निकालना, सुनना, देखना आदि विभिन्न गतिविधियों में व्यस्त रहते है। इन गतिविधियों में वे त्रुटि एवं प्रयास (Trial) की श्रृंखला में भटकते हुए अपना मार्ग ढूँढ लेते हैं। एक से पाँच माह की अवधि में शिशु विभिन्न स्केमेटा में विलोम समन्वयन (Reciprocal Co-ordination) में लिप्त हो जाते हैं। उदाहरण के तौर पर उनके हाथों की गति कुछ सीमा तक चूसने की क्रिया से समन्वित रहती है वे लक्षित वस्तु तक पहुंचने एवं पकड़ने का प्रयास करते हैं। 5 से 8 या 9 माह की आयु में शिशु उनके आसपास उपस्थित वस्तुओं से उत्पन्न परिणाम पर अपना ध्यान केन्द्रित करते है। वे उस वस्तु की आवश्यकता (उपयोग) के उद्देश्य से उसे पकड़ते हैं। वे विभिन्न परिणाम प्राप्त करने की दृष्टि से वस्तु पर विभिन्न प्रकार से झपटते हैं। यह कार्यकारण सम्बन्धों को जानने की प्रारम्भिक अवस्था है। जब वे 10 से 12 महीने की आयु में पहुँचते हैं, तब विशिष्ट संकल्पों को लिए विभिन्न प्रकार की गतिविधियों में लिप्त होते हैं। वे ऐसे व्यवहारों का प्रदर्शन करना प्रारम्भ करते हैं, जिसमें साधन एवं साध्य (Means and end) में अन्तर होता है। बालक अपने इर्द-गिर्द होने वाली घटनाओं (जो कि उसकी गतिविधियों से स्वतंत्र होती है) को अनुभव करने लगता है। दूसरे वर्ष के प्रारम्भ में वह अपनी ज्ञात परिणाम वाली तथा चिर परिचित कृत्यों से हटकर अनोखेपन के उद्देश्यों से नवीन गतिविधियाँ करने का प्रयास करता है। वह वस्तुओं को हिलाता है, पहचानता है, वस्तुओं द्वारा उत्पन्न ध्वनियों को पहचानता है, उन्हें फेंकता है और नाचता हुआ तथा घूमता हुआ देखता है। प्रयास एवं त्रुटि के व्यवहार के फलस्वरुप प्राथमिक स्तर पर सामयिक क्रम में संबंधों का विकास होता है। डेढ़ वर्ष का होते-होते बालक में सामान्य मानसिक घटा-बढी की संचेतना विकसित होती है। भौतिक रुप से जाँच किए बगैर उनको सफल होना अथवा असफल होने का कार्यो का पूर्वानुभास हो जाता है।

3.5.2 पूर्व क्रियात्मक अवस्था (Pre-operational stage) - इस अवस्था में बालक जटिलतर ब्रह्माण्ड को शैशवकाल की अपेक्षा अधिक संज्ञानात्मक रुप से जानने लगता है। इस अवस्था में बालक भाषा का ज्ञान तथा सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों, घटनाओं तथा वस्तुओं के प्रतिनिधि व्यवहार को प्रदर्शित करना सीख जाता है। बालक पूर्व में प्राप्त किए हुए ज्ञान को प्रदर्शित करते हैं, तथा भूत में घटित घटनाओं के बारे में विचार करते हैं। वे याद रखने का खेल खेलते हैं। व अक्सर बीती हुई घटनाओं अथवा अनुभव जिसमें उन्होंने भाग लिया हो, - को प्रदर्शित करने के लिए एक अथवा दो शब्दों का उपयोग करते हैं। व्यक्ति, घटनाओं अथवा वस्तुओं की मौखिक अभिव्यक्ति के अतिरिक्त बालक चित्र बनाने अथवा उन वस्तुओं की सांकेतिक प्रस्तुति (वस्तु की अनुपस्थिति) के योग्य हो जाता है। उनमें स्व- केन्द्रित (ego-centric) अनुभूति पैदा हो जाती है। उनमें वस्तुओं अथवा घटनाओं से अन्तःक्रिया करते समय वस्तुओं को अपने यर्थाथ स्वरुप में जानने की क्षमता नहीं होती। उनकी समस्या समाधान की क्षमताएँ एक समय वस्तुओं के वर्गीकरण के एक ही आयाम तक सीमित रहती है। वस्तुओं के विभिन्न आकारों को देखते हुए बालक विश्वास करता है कि वस्तुओं के आकार व संख्या में परिवर्तन होता रहता है।

3.5.3 मूर्त्त संक्रियात्मक अवस्था (Concrete-Operational stage) - इस अवस्था का प्रारम्भ, जब लगभग सात वर्ष की आयु होती है बालक स्कूल में प्रवेश की अवस्था से होता है, इस अवस्था को (मूर्त्त संक्रियात्मक) कहते हैं। इस अवस्था में बालक में उपस्थित वस्तुओं के बारे में समस्या समाधान के वि में तार्किक रुप से सोचने की प्रक्रिया का उपयोग होने लगता है। यहां क्रिया से (Operational) शब्द का अर्थ है, सोचना अथवा मानसिक कार्यप्रणाली बालक एक वस्तु के विभिन्न भागों के सम्बन्ध के बारे में सोचने योग्य होता है। किसी वस्तु की कार्यप्रणाली के तरीकों को पहचानने लगता है। वस्तु के पीछे छुपी हुई किसी वस्तु को देखने लगता है। यह सोचने की प्रक्रिया उनके पिछले अनुभवों तथा कल्पनाओं से सम्बन्धित होती है।

बालक में वस्तुओं को उनके अपेक्षित आकार के हिसाब से सही क्रम में रखने की क्षमताएँ विकसित हो जाती हैं। वे वस्तुओं के उत्क्रमणीय रुपान्तरण में भी संलग्न हो जाते हैं। ये यह समझने लगते है कि जब कोई वस्तु अपना आकार बदलती है, तो वे वस्तुएँ अपने पहले वाले आकार व संख्या में आ सकती है। बालक वस्तु अथवा घटनाओं के एक ही समय में एक से अधिक पहलुओं के बारे में सोचने योग्य हो जाता है तथा वस्तुओं को उनके दिशा के अनुसार वर्गीकृत कर सकता है। वह वस्तुओं को उनके प्रकार, आकृति एवं रंगों के आधार पर समूहीकृत कर सकता है।

पियाजे (1977) ने मूर्त्त संक्रियात्मक चिन्तन को निम्न प्रकार परिभाषित किया है:

'In order to think, Children in the concrete stage need to have objects in front of them that are easy to handle or else be able to visualize object that have been handled and that are easily imagined without any real effort.'

3.5.4 औपचारिक क्रिया अवस्था (Formal operational stage) - इस अवस्था को संज्ञानात्मक संरचनाओं के पूर्ण विकास से पहचाना जाता है। यद्यपि यह प्रक्रिया बालक की 11 वर्ष की उम्र से प्रारम्भ होती है तथा किशोरावस्था के पूरे समय तथा वयस्क अवस्था में भी बनी रहती है। व्यस्क

अवस्था में संज्ञानात्मक विकास के कुछ विशिष्ट लक्षण व्यक्ति की समन्वय, परिकल्पना, नियंत्रण, समस्या समाधान, सत्यापन करना, सोचना आदि की वैयक्तिक समस्याओं से सम्बन्धित होते हैं।

किशोर अपने आपको मूर्त-सक्रियात्मक से मुक्त रखना चाहता है। वह गुणित वर्गीकरण (Multiple classification), अनुपातिक चिंतन (Proportional Thinking), क्रमिकता (Seriation), संभाव्यता (Correlational) एवं सह-सम्बन्धात्मक चिंतन आदि तार्किक कार्यो (Logical operations) के योग्य हो जाता है। मूर्त संक्रियात्मक अवस्था के लक्षणों से भिन्न बालक, किशोर और वयस्क संभव अथवा सार के बारे में सोचता है। किशोर वस्तुओं तथा उनसे सम्बन्धित परिकल्पनाओं को उनकी मौजूदा स्थिति में देखते हैं। दूसरे शब्दों में किशोर किसी समस्या के संभावित कारणों के बारे में परिकल्पना विकसित कर सकता है।

किशोरों में वस्तुनिष्ठ बनने व परिकल्पनाओं के व्यवस्थित सत्यापन की क्षमता का विकास हो जाता है। वह मानसिक रुप से एक चर को स्थिर रखते हुए दूसरे चर को व्यवस्थित रुप में कम ज्यादा कर सकता है। एक छोटा बालक किशोर से इस बात में भिन्न होता हैं बालक तथ्यों को परिकल्पनाओं में समायोजित करने का प्रयास करता है और परिकल्पनात्मक समाधानों (Hypothetical Solutions) में विचरता है। किशोर घटना के अनेकों घटकों से एक साथ व्यवहार करता है। विभिन्न सम्बन्धित घटकों के समन्वयन तथा जटिल समस्या के सही समाधान को पहचानने की क्षमता प्रारम्भिक किशोरावस्था में नहीं होती। किशोर समस्या से सम्बन्धित तंत्र के बाहरी तथा भीतरी विभिन्न घटकों से तालमेल बैठाते हुए सम्पूर्ण समस्या के बारे में सोचता है। निश्चित तौर पर यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि किशोर जो संक्रियात्मक औपचारिक अवस्था में है, एक छोटा वैज्ञानिक है। यद्यपि वह बडे-बडे सिद्धांतों का प्रतिपादन तो नहीं करता, परन्तु एक परिपक्व वैज्ञानिक की भाँति किशोर में परिकल्पनात्मक निगमन (Hypothetical Solution) आधारित तर्क की क्षमता का विकास हो जाता है।

किशोर औपचारिक रुप से कार्य करते हुए वस्तुओं के स्थान पर मौखिक शब्दों को प्रतिस्थापित करने योग्य होता है, जबकि बालक नहीं। इसे निर्दिष्ट तर्क (Propositional Logic) कहते है। पियाजे के सिद्धांत के अनुसार जैसा फलेवेल (Flavell) (1963) ने कहा है, महत्वपूर्ण सत्ता जिसे कि किशोर अपने तर्को मे प्रस्तुत करता है वे वास्तव में सही ऑकडे तथा स्थायी वास्तविकताएँ नहीं होती, बल्कि ऐसे ऑकडे घोषणाएँ अथवा कथन, कार्य करने के निर्देश आदि होते हैं। 7 से 11 वर्ष की अवधि में वास्तव मे सार-ठोस (Concrete) वस्तुएँ अथवा घटनाओं का सुव्यवस्थित ज्ञान प्राप्त होता है। किशोर यह प्रथम वर्ग के उद्यम करता

है, लेकिन इसके साथ-साथ वह जो कुछ सोचता है, ठोस एवं सार की अपेक्षा औपचारिक होता है। वह इन (Concrete operations) के परिणाम निकालता है, इनको कार्य करने के निर्देशों के रुप में स्थापित करता है और उन पर कार्य के लिए आगे बढ जाता है। अर्थात् उनके मध्य विभिन्न तार्किक सम्बन्ध स्थापित करता है। औपचारिक उद्यम तब वास्तव में पूर्व में किए गए उद्यमों के परिणाम पर आधारित उद्यम होते है। इस प्रकार इसका यह मतलब नहीं कि किशोर हमेशा सूक्ष्म समस्या (Abstract problem) से ही व्यवहार करता है। वह मूर्त्त (Concrete problem) का भी सामना कर सकता है तथा उनका दक्षतापूर्वक समाधान कर सकता है। किशोरावस्था पूर्व अवस्था से भिन्न किशोर आदर्श स्थितियों के बारे में सोचता है तथा स्वप्न संसार में विचरण करता है। आदर्श के बारे में किशोर के विचार एक प्रकार से "भविष्य की सोच" के रुप में होते हैं। ऐसे आदर्श विचार किशोर को अपने स्वयं के भविष्य की योजना बनाने तथा इन उद्देशित लक्ष्यों को प्राप्त करने के तरीकों को जानने के लिए प्रेरित करते हैं। वे वर्तमान से हटकर सोचते हैं। वे क्या हैं' और क्या अस्तित्व में है' से हटकर वे क्या हो सकते है? तथा क्या होना चाहिए' के बारे में सोचने लगते हैं। कालान्तर में उनको यह बोध हो जाता है कि वे क्या हैं? और वे क्या बनना चाहते हैं?

आरलिन (1979) जैसे कुछ मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि औपचारिक संक्रियात्मक की अवस्था को सूक्ष्म समस्या के समाधान तक सीमित नहीं किया जाना चाहिए बल्कि इसको समस्या तलाशने की अवस्था तक बढ़ाया जाना चाहिए। इस नई अवस्था को पूछे जाने योग्य नए प्रश्नों की खोज द्वारा प्रदर्शित/पहचाना जा सकता है, न कि पूर्व में पूछे गये प्रश्नों के उत्तर देने तक। इसके समस्या समाधान के अभियान में सृजनात्मक चिंतन होकर नए विचारों का उदय होगा।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. आसुबल के अर्थपूर्ण शाब्दिक अधिगम के मुख्य लक्षण क्या है?
   What are the main feature of Ausubel's Meaningful verbal learning?
2. विभिन्न प्रकार की संकल्पनाएं कौन-कौन सही है?
   What are the various types of concepts?
3. स्वांगीकरण तथा समायोजन की अवधारणा में अंतर कीजिये।
   Differential between Assimilations and Accommodation.
4. औपचारिक संक्रियात्मक अवस्था के मूल लक्षण क्या है?
   What are the basic characteristics/features of formal operational stage?

3.8 सारांश
(Summary)

इस इकाई में आपको संज्ञानात्मक विकास से सम्बन्धित सिद्धांतों के बारे में विभिन्न मनोवैज्ञानिकों जैसे आसुबल, ब्रूनर एवं पियाजे आदि के योगदान के बारे में बताया गया है। ये विचार शिक्षण के विभिन्न प्रतिमानों (Teaching Models) के लिए आधार बनाते हैं। यह विचार आपको पाठ्यक्रम से संगठन, पाठ्येत्तर गतिविधियाँ तथा शिक्षार्थी के मूल्यांकन में सहायक होंगे।

3.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

1. Piaget,J. : 1952 Originally Published in 1936) Judgement and Reasoning in the child, Humanities press, New York 1936
2. Piaget,J. : (1977) Problems of Equilibration, In Appel, M.P. & Goldberg, L.S. (Eds.) Topics in Cognitive Development, vol. 1] Plennum Press, New York 1977
3. Flavell, J.H. : (1963) The Development psychology of Jean Piaget, Princeton, N.J. van Nor Stand 1963
4. Hoffman, L. : Pairs, S. and Schell, R., Developmental Psychology today Mc Graw Hill Publishing Co., New York 1988
5. Bruner J.S. : Towards a Theory of Instruction, Howard University press Masachussrets,1966

इकाई-4

प्रणाली उपागम System approach

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

4.1 प्रस्तावना
(Introduction)

4.2 प्रणाली की परिभाषा
(Definition of system)

4.2.1 विभिन्न क्षेत्रों में प्रणाली की अवधारणा
(Concept of System in different Areas)

4.3 प्रणाली उपागम
(System Approach)

4.4 मुक्त उपागम के रुप में शिक्षा
(Education as an open system)

4.4.1 मुक्त प्रणाली की विशेषताऐं
(Characteristics of open system)

4.5 शिक्षा में प्रणाली उपागम
(System Approach in Education)

4.5.1 शिक्षा में प्रणाली उपागम का विकास
(Development of System Approach in Education)

4.5.1.1 उद्देश्यों एवं लक्ष्यों के कथनों का विश्लेषण
(Analysis of Statement of Aims And Objectives)

4.5.1.2 प्रणालियों का प्रारुप
(Formation of Format or System)

4.5.1.3 प्रणाली का संचालन
(Implementation of System)

4.5.1.4 शिक्षा में प्रणाली उपागम की उपयोगिता
(Utility of System Approach in Education)

4.6 भारत के सन्दर्भ में प्रणाली उपागम में अनुसंधान अनुभव
(Research Experiences of System Approach in India)

4.7 सारांश
(Summary)
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

4.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई को पढने के बाद विद्यार्थी -

1. प्रणाली, प्रणाली उपागम तथा इसके विभिन्न घटकों को समझ सकेंगे।
2. शिक्षा को मुक्त प्रणाली के रुप में परिभाषित कर सकेंगे।
3. शिक्षा अधिगम संस्थितियो में प्रणाली उपागम को लागू कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना
(Introduction)

आप जानते है कि प्रणाली उपागम शैक्षिक प्रोद्यौगिकी का प्रमुख घटक है। शैक्षिक तकनीकी के विकास के साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में अनेक प्रकार के नवाचार काम में लिये जा रहे है। इन सभी का प्रमुख उद्देश्य है शिक्षण का प्रभावी एवं बोधगम्य बनाना है। प्रणाली का अर्थ है किसी जटिल समस्या के समाधान के लिए वैज्ञानिक तरीके को उपयोग में लाना है। इस इकाई में आपको प्रणाली उपागम का अर्थ, प्रकृति एवं इसकी शिक्षा में उपयोगिता के बारे में बतलाया जायेगा।

4.2 प्रणाली की परिभाषा
(Definition of System)

आप विभिन्न स्त्रोतों के माध्यम से प्रणाली की परिभाषा जानेंगे। आक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्द कोष प्रणाली के दो अर्थों की ओर संकेत करती है -

1. प्रणाली एक सुसंगठित अथवा उद्देश्यों का सम्बन्धित समूह है, एक दूसरे से सम्बन्धित, सम्बद्ध वस्तुओं/बातों का एकीकृत अथवा स्वतन्त्र रुप से ताकि एक जटिल इकाई बन सके, सारा का सारा एक योजनानुसार अलग-अलग खण्डों के नियमपूर्वक सम्मिलित होने से निर्मित होता है।
2. प्रणाली, “सिद्धान्तों को समूह, एक योजना, तरीका" है।

संचालन की दृष्टि से प्रणाली को इस प्रकार परिभाषित किया जा सकता है, एक अवधारणात्मक संरचना, जो किसी परिणाम को दक्षतापूर्वक एवं प्रभावशाली तरीके से प्राप्त करने के लिए किये जा रहे अर्न्तसम्बन्धित जैविक कार्यो के सुसंघटन से बनी हो"।

उक्त बातों से आपके सम्मुख प्रणाली की एक सामान्य तस्वीर स्पष्ट हो गई होगी। यह विभिन्न अर्न्तसम्बन्धित उप प्रणालियों अथवा भागों के संयोजन से निर्मित तथा अपने आप से सम्पूर्ण होती है। प्रणाली के अपने लक्ष्य होते हैं। विभिन्न उप प्रणालियॉ आपस में

अन्र्तसम्बन्धित होती है तथा प्रणाली के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये कार्य करती है। प्रणाली निर्धारित योजना तथा व्यवस्था के अनुरुप कार्य करती है अत: इसका एक प्रारुप होता है।

4.2.1 विभिन्न क्षेत्रों में प्रणाली की अवधारणा (Concept of System in different Areas) - प्रणाली अवधारणा भौतिक विज्ञानों, जैविक विज्ञानों तथा सामाजिक विज्ञानों में लागू होती है।

जीव विज्ञान के विषयों में मानवीय जीवों को एक प्रणाली से समान माना गया है। इसमें शरीर को एक प्रणाली माना जाता है। मानव शरीर में अनेक उप प्रणालियाँ अथवा उप तन्त्र है, जैसे आन्तरिक संरचना, पाचन तंत्र, रुधिर परिवहन तंत्र बनाते है। सब उप प्रणालियाँ आपस में मिलकर शरीर प्रणाली के घटकों के रुप में अन्तःक्रिया करते है। आगे हम प्रत्येक उपतन्त्र को व्यापक एवं स्वतन्त्र रुप में समझने के लिये एक प्रणाली / तन्त्र मान सकते हैं तथा इसके घटकों को उपतंत्र। उदाहरण के तौर पर शरीर प्रणाली के भाग के रुप में श्वसन उपतंत्र को एक प्रणाली माना जा सकता है। इसी प्रकार भौतिक दृष्टि से एक पेन, घड़ी अथवा साईकिल को एक भौतिक प्रणाली माना जा सकता है। पेन में निब, स्याही, कोयला, ढक्कन आदि सब एक दूसरे से मिलकर एक क्रियात्मक तंत्र बनाते हैं। यदि पेन का एक घटक अक्रियाशील हो जाये तो उससे सम्पूर्ण पेन की क्रियात्मकता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक वैज्ञानिकों के दृष्टिकोण से समाज को एक प्रणाली के रुप में माना जाता है। इसमें कुछ उप प्रणालियाँ जैसे आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं प्रौद्योगिकी आदि होती है। प्रत्येक उपतंत्र को पुन: छोटे घटकों / तंत्रे / प्रणालियों में विभाजित किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर शैक्षिक उप प्रणाली में विश्वविद्यालय, महाविद्यालय, महाविद्यालय आदि घटक होते है। विद्यालय के अपने घटक होते हैं जैसे छात्र, अध्यापक, पाठ्यक्रम, प्रशासन एवं मूल्यांकन आदि। दूसरे शब्दों में विभिन्न घटक और उप घटक आपस में अन्तक्रिया करके एक जटिल सामाजिक प्रणाली बनाते है। एक व्यापक सामाजिक प्रणाली के अपने उपतन्त्र होते हैं। प्रत्येक उप प्रणाली के पुन: छोटे घटक होते हैं। वे आपस में एक दूसरे पर निर्भर होते हैं तथा एक जटिल सामाजिक प्रणाली का निर्माण करते हैं।

उक्त विवेचन से आप समझ गये होंगे कि प्रणाली अवधारणा इकाईयों तथा उप इकाईयों को ध्यान में रखते हुए सम्पूर्णता पर बल देती है। किसी प्रणाली की क्रियाशीलता के सन्दर्भ में विभिन्न घटकों की परस्पर निर्भरता पर बल दिया जोता है।

किसी प्रणाली में लक्ष्यों को प्राप्त करने की दृष्टि से निर्धारित प्रारुप एवं सिद्धान्तों की सीमा में इसके उप घटकों में कुछ तोडमरोड़ / कुशलतापूर्वक प्रबन्धन किया जा सकता है। अत: किसी प्रणाली के उद्देश्यों को एक उपयुक्त व्यूह रचना द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

4.3 प्रणाली उपागम
(System Approach)

प्रणाली उपागम का अर्थ है किसी जटिल समस्या के समाधान के लिए वैज्ञानिक तरीके का उपयोग। दूसरे शब्दों में उद्देश्यों से उनकी प्राप्ति की ओर बढ़ने के लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग। उद्देश्यों से उनकी प्राप्ति की ओर बढ़ना एक समस्या है। इसकी विधि शास्त्र के भाग के रुप में प्रणाली उपागम में प्रणाली विश्लेषण तथा प्रणाली प्रारुप को लिया जाता है।

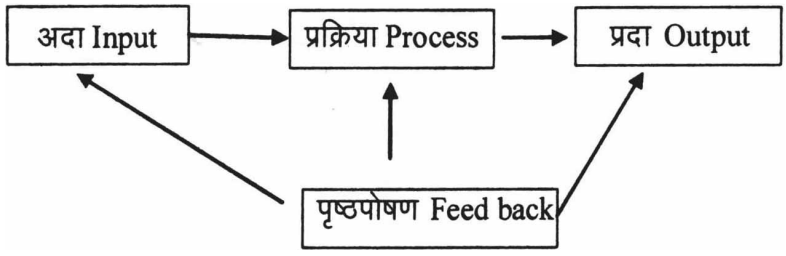

चित्र- 1: प्रणाली उपागम के घटक

सामान्य रुप से अब आप समझ गये होगे कि प्रणाली उपागम के चार घटक क्रमश: इनपुट, प्रोसेस, आऊटपुट एवं फीडबैक होते हैं। अन्तिम उत्पाद एवं समस्या समाधान के उद्देश्य से इनपुट सामग्री विभिन्न चरणों से गुजरती है। उत्पादन की गुणवत्ता के बारे में फीडबैक दिया जाता है। उसके आधार पर इनपुट सामग्री तथा प्रक्रिया में सुधार किया जाता है। इस प्रकार के सम्बन्धों को विस्तार से समझने के लिये आपको निम्न बातों पर ध्यान देना होगा-

1. किये जाने योग्य कार्यो का विश्लेषण (प्रणाली विश्लेषण)
2. कार्य संचालन हेतु प्रारुप / योजना (प्रणाली प्रारुप)

इसके बाद व्यक्ति प्रणाली के प्रारुप की क्रियान्विति की ओर बढता है।

उक्त बातों से आप प्रणाली, प्रणाली उपागम, प्रणाली विश्लेषण, प्रणाली प्रारुप चारों के बारे में समझ गये होंगे ।

निम्न शब्दों के बारे में पुन: पढ़ें ।

- एक प्रणाली को निम्न प्रकार समझा जा सकता है।
- प्रणाली एक अवधारणात्मक संरचना है, जिसमें वांछित परिणाम को प्रवीणता एवं प्रभावशाली ढंग से प्राप्त करने के लिए सम्पादित अर्न्तसम्बन्धित कार्य सम्मिलित होते हैं।
- प्रणाली उपागम एक व्यूह रचना है, जिसमें निर्धारित लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में विश्लेषण, प्रारुप एवं प्रबन्ध का उपयोग किया जाता है।
- प्रणाली विश्लेषण में लक्ष्य प्राप्ति हेतु आवश्यक घटकों एवं स्त्रोतों की जानकारी प्राप्त की जाती है।
- प्रणाली प्रारुप एक अवधारणात्मक प्रदर्शन है, जो इस बात को स्पष्ट करता है कि अत्यन्त प्रभावकारी विकल्पों का उपयोग करते हुए लक्ष्य को किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है।
- प्रणाली उपागम तथा इसकी उपयोगिता को विस्तार पूर्वक समझने से पूर्व हमें शिक्षा को एक प्रणाली के रुप में समझना होगा।

4.4 खुले तंत्र के रुप में शिक्षा (Education as an open system)

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है शिक्षा बड़े सामाजिक तंत्र का एक उपतंत्र है। यदि हम इस उपतंत्र की जटिलता को समझना चाहें, तथा इसकी समस्याओं को हल करना चाहें, तो इसे बडी सामाजिक व्यवस्था में एक तंत्र के रुप में मानना होगा। अत: शिक्षा एक प्रणाली है। इसी प्रकार पाठ्यक्रम भी शिक्षा प्रणाली का एक उपतंत्र है और अनुदेशन को विद्यालय पाठ्यक्रम की एक प्रणाली माना जा सकता है।

शिक्षा प्रणाली के आन्तरिक घटकों में शिक्षार्थी, अनुदेशन, पाठ्यक्रम, शिक्षक एवं शिक्षालय आदि सम्मिलित है। शिक्षा को प्रभावित करने वाले बाह्य वातावरण में संस्कृति, अर्थ व्यवस्था, राजनीति तथा प्रौद्योगिकी शामिल है।

4.4.1 खुले तंत्र की विशेषताएं (Characteristics of ओपें System) - यांत्रिक प्रणाली से भिन्न शिक्षा प्रणाली एक खुली प्रणाली है। आईये, हम शिक्षा के सन्दर्भ में खुले तंत्र की प्रकृति पर चर्चा करें-

कट्ज एवं कान ने खुले तंत्र की प्रमुख विशेषताएं निम्न प्रकार बताई हैं-

4.4.1.1 ऊर्जा का आगमन- खुले तंत्र मे ऊर्जा का आगमन बाहरी वातावरण से होता है तथा अपना उत्पादन देता है। शिक्षा प्रणाली समाज की सांस्कृतिक प्रणाली, प्रौद्योगिक प्रणाली, आर्थिक प्रणाली एवं राजनैतिक प्रणाली पर निर्भर होती है। इससे भिन्न स्वचलित घड़ी बाहरी वातावरण से अप्रभावित अपना कार्य करती है। एक यांत्रिक प्रणाली बन्द प्रणाली तथा स्वचालित होती है। यह बाहरी वातावरण से प्रभावित नहीं होती।

4.4.1.2 संसाधित होने वाली सामग्री एवं उत्पादन (Througnput & Output)- खुले तंत्र में अदा को चातुर्थपूर्ण प्रक्रिया में डालकर अपेक्षित उत्पादन प्राप्त किया जाता है। प्रबन्ध इसके उत्पादन को बाहरी वातावरण में भेजता है। खुले तंत्र की साख इसके उत्पादन की गुणवत्ता एवं बाहरी वातावरण द्वारा मांग पर निर्भर करती है। बाहरी वातावरण की आवश्यकता एवं मांग के आधार पर इसकी गुणवत्ता एवं ढांचे में परिवर्तन कर दिया जाता है। शिक्षा प्रणाली सामाजिक व्यवस्था से तालमेल बनाते हुए उत्पादन के इनपुट प्रक्रिया एवं उत्पादन चक्र को निर्धारित करती है। दूसरी ओर बन्द प्रणाली में बाहरी वातावरण की मांग के आधार पर उत्पादन का पुर्नचक्रण नहीं होता।

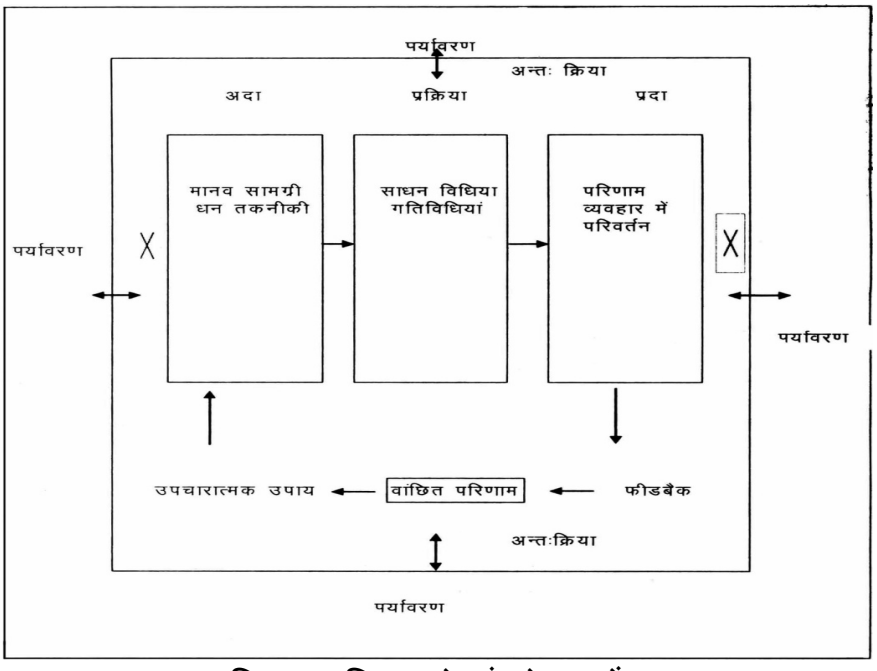

चित्र - 2: शिक्षा खुले: तंत्र के रुप में

(Educations as an open system)

4.4.1.3 ऋणात्मक एन्ट्रॉपी - प्रणाली को नुकसान पहुंचाने तथा अवरुद्ध करने वाले तत्व खुले तंत्र में एन्ट्रॉपी का मुकाबला करने की अन्दरुनी ताकत होती है। विद्यालय व्यवस्था में कुछ नकारात्मक एन्ट्रॉपी जैसे असंतोष, रूढ़िगत पाठ्यक्रम, असफलताएं आदि का मुकाबला करने के लिये कुछ यांत्रिक व्यवस्थाएं काम में ली जाती हैं। शिक्षा प्रणाली में प्रणाली को कार्यरत रखने के लिए जटिल चुनौतियों का सामना करने के कुछ नियम, नवाचार तथा लचीलापन काम में लिया जाता है।

खु

ले तंत्र (शिक्षा) एवं बन्द तंत्र की तुलना (Comparison of Open Close System)

	खुला तंत्र	बन्द तंत्र
1.	समस्त जीवित प्राणी खुले तंत्रा के अन्तर्गत आते है। शिक्षा मानव के विकास से संबन्धित होने से एक खुले तंत्र के सदृश्य है।	समस्त निर्जीव वस्तु बन्द तंत्रा में आते हैं। जैसे घड़ी अथवा अन्य मशीनें।
2.	इसमें ऊर्जा ली जाती है और उत्पादन दिया जाता है । इसकी कार्यप्रणाली बाहरी तावरण पर निर्भर होती है। इसमें वातावरण से अन्तःक्रिया करके शक्ति के स्त्रोतों का विकास किया जाता है।	यह अपने आप में परिपूर्ण होता है। आवश्यक सामग्री बाहर से नहीं ली जाती। जैसे स्वचालित घड़ी।
3.	यह अत्यन्त गतिशील हैं तथा परिवर्तन एवं विकास आधारित होते हैं । शिक्षा एक गतिशील तथा निरंतर	ये स्थिर तथा यांत्रिक होते है तथा एक मुश्त कार्य आधारित होते है।

	प्रक्रिया है।	
4.	इनमें लचीलापन होता है।	ये दृढ़ होते है।
5.	नकारात्मक एन्ट्रॉपी वातावरण के प्रभाव से उत्पन्न अन्दरुनी यांत्रिकी व्यवस्था द्वारा खुले तंत्रा का अस्तित्व बनाए रखने में सहायता करता है। निरन्तर फीडबेक खुले तंत्र का स्तर बनाए रखने में सहयोग करता है। शिक्षा प्रणाली के समक्ष नियमों में परिवर्तन प्रक्रिया तथा स्त्रोतों को उपयोग में लाने की चुनौती होती है।	इसमें भावी प्रगति के लिए विभिन्न प्रकार के फीडबेक देने की स्वतंत्रता होती है। यह बंद घेरे के समान होता है तथा वातावरण से अन्तःक्रिया नहीं करता।

4.4.1.5 पृष्ठपोषण (Feedback) - खुला तंत्र बाह्य तंत्र से अन्तःक्रिया करता है। निर्मित सामग्री की तुलना अपेक्षित उत्पादन से करने के लिए फीडबेक की निर्धारित व्यवस्था काम में ली जाती है। इसमें बाहर से तथा भीतर वातावरण से सूचनाएँ प्राप्त की जाती है। आवश्यकतानुसार प्रक्रिया में परिवर्तन किया जाता है तथा सन्तुलन को बनाये रखा जाता है।

शिक्षा प्रणाली अनके आन्तरिक घटकों में सुधार करते हुए अपना स्तर बनाये रखती है। उच्च स्तर की शिक्षा बाहरी गुणवत्ता भी बनाये रखती है। इस हेतु शिक्षा प्रणाली में निरन्तर फीडबेक चलता रहता है।

4.5 शिक्षा में प्रणाली उपागम (System Approach is Education)

जैसाकि ऊपर बताया जा चुका है, प्रणाली उपागम को एक जटिल समस्या को हल करने वैज्ञानिक ढंग के रुप में समझा जा सकता है। रेमो (1973) ने इसे निम्न प्रकार परिभाषित किया है वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करते हुए किसी जटिल समस्या का समाधान करने की प्रविधि की प्रणाली उपागम है। यह घटकों तथा अंशों से भिन्न सम्पूर्ण प्रारुप एवं विश्लेषण पर अपना ध्यान केन्द्रित करती है। यह समस्या के सामाजिक एवं प्रौद्योगिक समस्त पहलुओं एवं चरों को ध्यान में रखते हुए समग्र रुप से देखने पर बल देती है"।

जैसा कहा जा चुका है कि प्रणाली उपागम का लक्ष्य जटिल समस्याओं को उनके विश्लेषण के आधार पर समग्र रुप से हल करना है। यहां तक कि प्रणाली से सम्बन्धित सभी भागों का समग्रता में विश्लेषण किया जाता है। इस विश्लेषण के आधार पर समस्याओं को हल करने के लिए उपयुक्त प्रारुप (कार्य योजना) तैयार की जाती है। कार्य योजना को लागू कर फीडबेक के आधार पर उसमें परिवर्तन किये जाते है।

4.5.1 शिक्षा में प्रणाली उपागम का निर्माण (Formation of system approach in Education) - हम जान चुके है कि शिक्षा एक प्रणाली है। इसमें कई उप प्रणालियां हैं। इसकी उप प्रणालियों तथा बाहरी वातावरण को ध्यान में रखते हुए शिक्षा को समग्र रुप से देखा जाना चाहिए। शिक्षा प्रणाली की विभिन्न उप प्रणालियों के मध्य होने वाली अन्तःक्रियाओ से शिक्षा

की समग्रता को प्रदर्शित करते हैं। समस्त सम्बन्धित घटकों के मध्य होने वाली अन्त:क्रियाओं को विस्तार से जानने के बाद ही शिक्षा की सम्पूर्णता / समग्रता को समझा जा सकता है। अत: शिक्षा प्रणाली से सम्बन्धित किसी भी समस्या को सम्बन्धित घटकों के परिप्रेक्षय में देखा जाना चाहिए। जैसे भौतिक संसाधन, मानवीय शक्तियों, पाठ्यक्रम, मानव संसाधनों का विकास, प्रौद्योगिकी का प्रवेश, वित्त, मूल्यांकन, रोजगार के अवसर तथा सामाजिक एवं राजनैतिक वातावरण आदि। शिक्षा की किसी समस्या को एकांगी रुप से देखने पर शिक्षा की सम्पूर्णता नष्ट हो जायेगी। यदि हम शिक्षा की समस्या को खण्डों में हल करेंगे, तो एक स्थान पर समस्या हल होने के साथ दूसरे स्थान अथवा उप प्रणाली में समस्या खडी हो जायेगी। उदाहरण के तौर पर प्राथमिक स्तर पर शत-प्रतिशत नामांकन की समस्या को मात्र एक-दो उप प्रणालियों पर ध्यान देने से ही हल नहीं किया जा सकता। जैसे दिन का मध्यावधि भोजन, शिक्षार्थियों को गणवेश व पाठ्य-सामग्री का वितरण। इससे समस्या का आंशिक समाधान ही संभव है, जब तक कि हम स्थायी उपचार के रुप में उनकी उपस्थिति की बात सोचें।

इन समस्याओं को समग्रता से हल करना होगा। शत-प्रतिशत नामांकन के साथ-साथ विद्यालय का परिवेश, भौतिक संसाधन, विद्यालय में पठन-पाठन संस्थितियां विद्यालय प्रबन्ध, पाठ्यक्रम, अभिभावकों की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक पृष्ठभूमि, शिक्षानीति, विकास अभिकरणों का समन्वय सामाजिक सांस्कृतिक आधार आदि पर भी विचार करना होगा। दूसरे शब्दों में प्रणाली उपागम द्वारा शिक्षा की समस्या का समाधान करने के लिये सम्पूर्णता का दृष्टिकोण विकसित करना होगा।

सबसे पहले यह समझना आवश्यक होगा कि समस्या का प्रभावी एवं प्रवीण व्यूह रचना द्वारा समाधान ही प्रणाली उपागम का उद्देश्य है। प्रणाली उपागम निर्धारित करती है कि वास्तविक उत्पादन निर्धारित लक्ष्य की तुलना में कैसा है? दूसरे शब्दों में प्रणाली उपागम के पूर्व निर्धारित लक्ष्य होने चाहिए, जिन्हें वैज्ञानिक साधनों से प्राप्त किया जाता है। वैज्ञानिक साधन तभी प्रभावशाली माने जायेंगे जब उत्पादन पूर्व निर्धारित लक्ष्यों के अनुरुप होगा। खर्च की गयी शक्ति एवं लगे हुए समय के रुप में उपागम सामर्थ्य एवं कार्यकुशलता प्रदर्शित होती है। दक्ष साधनों को काम में लेते हुए अनुकूलतम उत्पादन की अपेक्षा की जाती है। दूसरे शब्दों में सामर्थ्यहीन साधनों द्वारा प्राप्त किये गये लक्ष्य अपव्ययी है। इसी प्रकार वे प्रवीण साधन भी व्यर्थ हैं जिनसे वांछित उपलब्धियाँ प्राप्त नहीं होती। अस्तु, प्रणाली उपागम को प्रभावशाली तथा सामर्थ्यवान बनाया जाना चाहिए।

इस सन्दर्भ में यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि प्रणाली उपागम का अनुसरण निम्न चरणों के अन्तर्गत किया जाये-

क्या करना आवश्यक है? - विश्लेषण

कैसा करना है?- प्रारुप

प्रणाली का संचालन - क्रियान्विति

4.5.1.1 लक्ष्य एवं उद्देश्यों के कथन एवं आवश्यकताओं का विश्लेषण (Analysis of statement of Aims and Objectives and their need) - प्रणाली का विश्लेषण जटिल समस्याओं के वैज्ञानिक ढंग से विश्लेषण से सम्बन्धित है। इसका तात्पर्य है जो लक्ष्य हमने निर्धारित किए हैं, वे समस्याओं के विश्लेषण से प्राप्त होने चाहिए। प्रणाली की जटिल समस्याओं का हल करना हमारी प्रमुख आवश्यकता है। अत: हमारी समस्याएं एवं आवश्यकताओं का विश्लेषण प्रथम चरण है। हमें हमारी प्रमुख आवश्यकताओं को उद्देश्यों के रुप में उल्लेखित करना चाहिए।

लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये अन्तिम उद्देश्य हमारी दूसरी आवश्यकताऐं हैं। अन्तिम लक्ष्य तक पहुंचने के लिए हमें एक समाधान प्रक्रिया का निर्माण करना पड़ता है जो अपने क्रम में नई आवश्यकताओं को जन्म देता है। क्रियान्मुखी उद्देश्य (Enabling Objective)

उदाहरण के लिये प्राथमिक शिक्षा का एक प्रमुख लक्ष्य बालक को अपने विचारों को लिखकर अभिव्यक्त करने के योग्य बनाना है। अन्तिम उद्देश्यों के अन्तर्गत लेखन कौशल विकसित करने के लिये विद्यार्थी द्वारा की जाने वाली विभिन्न गतिविधियां होगी। अग्रिम उद्देश्य प्रत्येक अन्तिम उद्देश्य से सम्बंधित विस्तृत घटकों को प्रदर्शित करेगें। शिक्षा के सन्दर्भ में हम इन्हें व्यवहारगत उद्देश्य कह सकते हैं। लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं आवश्यकताओं का विश्लेषण करते समय हमें निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए-

1. हमारा उद्देश्य कथन इतना स्पष्ट होना चाहिए कि हर कोई यह जान सके कि लक्ष्य प्राप्ति के बाद वस्तुओं अथवा व्यक्तियों में क्या अन्तर आवेगा।
2. हमारे उद्देश्य विस्तृत रुप से उल्लेखित होने चाहिए, कि कार्यक्रम के अन्त में व्यक्ति अथवा वस्तु द्वारा कैसा व्यवहार किया जायेगा?
3. प्रत्येक उद्देश्य की प्रगति जानने के लिए उपयुक्त तरीका काम में लिया जाना चाहिए। इसे ही लक्ष्यों एवं तत्सम्बन्धी उद्देश्यों के लिये मानदण्ड परीक्षण / मापन (Criterion measure) कहते है। प्रणाली विश्लेषक को निम्न बातों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए - (1) विकल्पों पर विचार (2) प्रारम्भिक मानदण्डों की स्थापना तथा (3) प्रत्येक लक्ष्य तथा उससे सम्बन्धित उद्देश्यों में बाधाओं की पहचान।

(1) विकल्पों पर विचार : विकल्पों पर विचार के सन्दर्भ में वर्तमान परिस्थितियों को समझना महत्वपूर्ण है। वर्तमान कार्यक्रम के क्या लक्ष्य है? वर्तमान में क्या-क्या कार्य किये जाने हैं? इन कार्यो को करने के लिए कौन से माध्यम व विधियां काम में ली जानी हैं? परिवर्तन क्यों आवश्यक है? प्रणाली विश्ले को इन प्रश्नों के उत्तर खोजने होंगे। लक्ष्यों को निर्धारित करते समय सर्वोत्तम संभव समाधान भी उल्लेखित किये जाने चाहिए। इसलिए समस्या समाधान के लिए विभिन्न विकल्पों की तलाश प्रथम कार्य है। प्रणाली के लक्ष्य अथवा आवश्यकताओं के रुप में सर्वोत्तम समाधान पर ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए। एक बार लक्ष्य निर्धारित हो जाने के बाद उद्देश्यों का स्पष्ट रुप से निर्धारण कर लेना चाहिए।

(2) मानदण्डों को निर्धारित करना : लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को अंतिम रुप देने के बाद मानदण्डों का निर्धारण आवश्यक है। इस स्तर पर हमें इस बात पर भी विचार करना चाहिए कि मानदण्ड प्राप्ति

की परख कैसे की जायेगी? मानदण्डों की जांच के लिये हमें उन व्यवहारों अथवा कार्यो का उल्लेख करना चाहिए जो लक्ष्य प्राप्ति के प्रतीक के रुप में अपेक्षित है, तथा जो कार्य के मानक के अनुरुप हो। प्रणाली उपागम मे अनुदेशन प्रणाली काम में ली जाती है, जिसमें सामान्य उद्देश्यों में से एक को विशिष्ट उद्देश्यों में रुप में अभिलिखित किया जाना चाहिए। मेजर (1982) ने अनुदेशन उद्देश्य लिखने के लिए निम्न बातों का सुझाव दिया है -

- सर्वप्रथम अन्तिम व्यवहार की नाम से पहचान करें । आप उन व्यवहारों का प्रकार लिख सकते हैं जो शिक्षार्थी द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के प्रमाण के रुप में स्वीकृत किये जा सकते हैं।
- दूसरा वांछित व्यवहार को परिभाषित करने का प्रयास करें। उन परिस्थितियों को भी उल्लेखित करें जो इस परिवर्तन के लिए आवश्यक है।
- तीसरा अपेक्षित कार्य का मानदण्ड निर्धारित करें।

उदाहरण के तौर पर इस पाठ को पूर्ण करने के बाद कक्षा-3 का छात्र एक छोटे अनुच्छेद को पढ़कर 4 मिनट में सुना सकेगा, जिसमें 100 शब्दों मे ज्यादा से ज्यादा 4 जगह अटक सकता हैं इसे एक अनुदेशन माना जा सकता है। इससे मानदण्ड परख के लिए सीधा-सीधा संकेत मिलता है।

(3) बाधाओं की पहचान: कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उद्देश्य निर्धारित करते समय लक्ष्य प्राप्ति के मार्ग में आने वाली रुकावटों की पहचान करना भी अत्यावश्यक है। उपयुक्त इनपुट, उपयुक्त विधि एवं उपयुक्त प्रबोधन तकनीक तलाशने की दृष्टि से बाधाओं को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण हो जाता है। लक्ष्यों को अन्तिम स्वरुप प्रदान करने के पूर्व ऐसी बाधाओं के समाधान को ध्यान में रखने की आवश्यकता है। ज्ञात तकनीक तथा उपलब्ध साधनों / स्त्रोतों को ध्यान में रखते हुए लक्ष्यों में परिवर्तन किया जा सकता है। उसी के अनुरुप बाधाओं को ध्यान में रखते हुए उद्देश्यों में फेर बदल किया जा सकता है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्रश्न-1 प्रणाली विश्लेषण से आप क्या समझते है?

प्रश्न-2 प्रणाली विश्लेषण के विभिन्न चरण कौन कौन से है?

प्रश्न-3 आप किसी प्रणाली के उद्देश्यों का निर्धारण कैसे करेंगे?

4.5.1.2 प्रणाली के प्रारुप का निर्माण (Formation of Format Of System) - एक बार आवश्यकताओं का विश्लेषण लक्ष्यों एवं उद्देश्यों का निर्धारण तथा मानदण्डों का विकास हो जाने के बाद विश्लेषणकर्ता प्रणाली के प्रारुप निर्माण के दूसरे चरण की ओर अग्रसर होता है। प्रारुप निर्माण के निम्न चरण होते हैं -

1. वर्तमान प्रारुप के अध्ययन
2. संरचना की भावना को समझना
3. उपयुक्त प्रादर्श का चयन
4. विधि एवं साधनों का चयन

उक्त चरण प्रदर्शित करते हैं कि प्रणाली प्रारुप हमें यह बताता है कि लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को कैसे प्राप्त किया जाये? दूसरे शब्दों में इकाई का प्रारुप भाग हमें निर्देशित उद्देश्यों को प्राप्त

करने के लिए प्रणाली के विभिन्न घटकों की पहचान कराता है। आइये, अब हम प्रणाली प्रारुप के विभिन्न चरणों का अध्ययन करें।

(1) **वर्तमान प्रारुप का अध्ययन (Study of Present Format) -** वर्तमान प्रारुप के अध्ययन से हमें यह पता चलता है कि निर्धारित उत्पादन प्राप्त करने में कहां कमी रह रही है? साथ ही वर्तमान प्रारुप के अध्ययन से हमें प्रणाली को प्रभावित करने वाले विभिन्न घटकों के बारे में पर्याप्त सूचनाएं प्राप्त होती हैं। इससे हमें यह भी पता चलता है कि वर्तमान प्रणाली प्रवीण तथा प्रभावकारी है अथवा नहीं? क्या प्रणाली के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों में परिवर्तन की आवश्यकता है? अथवा वर्तमान उद्देश्यों के समूह में किसी परिवर्तन की आवश्यकता है। उद्देश्यों की प्राप्ति में कौन-कौन सी बाधाएं उपस्थित हो रही है? आदि प्रश्नों के उत्तरों से नवीन प्रणाली के जटिल प्रश्नों को हल करने के लिए मजबूत आधार मिलेगा। दूसरे शब्दों में वर्तमान प्रारुप के अध्ययन की अवहेलना करने से हमें पुन: गलतियों की ओर अग्रसर हो जायेंगे।

(2) **संरचना की भावना को समझना-** प्रणाली उपागम के सन्दर्भ में विभिन्न तरीकों का एक तर्कसंगत प्रवाह चार्ट बनाया जाता है। प्रणाली के प्रत्येक घटक की पहचान की जानी चाहिए। प्रणाली के प्रत्येक स्वरुप के कार्य की पहचान की जाती है। बाधाओं को पहचाना जाता है। अन्तत: क्रमिक रुप से अन्तिम स्वरुप की पहचान की जाती है।

उदाहरण के तौर पर एक विद्यालय प्रणाली का प्रारुप निर्मित करने के लिए भौतिक संरचना सम्बन्धी अपेक्षित एक पक्ष प्रस्तुत करती है। संकाय सदस्यों से सम्बन्धित अपेक्षाएं दूसरी संरचना प्रस्तुत करती है। छात्रों के परीक्षा परिणाम से सम्बन्धित अपेक्षाएं अन्य पक्ष को उजागर करती है। प्रणाली के अन्तिम स्वरुप तक पहुंचते हुए सभी पक्षों से सम्बन्धित सारी अपेक्षाएं सम्मिलित रुप से विद्यालय प्रणाली की अन्तिम संरचना को प्रस्तुत करती है। प्रारम्भिक आवश्यकताएं, उत्पादन प्रक्रिया एवं फीडबेक तकनीक के सन्दर्भ में सरंचना तय की जाती है। हमें यह समझना चाहिए कि हमारी प्रणाली नेटवर्क समस्त घटकों के सन्दर्भ में कैसे कार्य करता है।

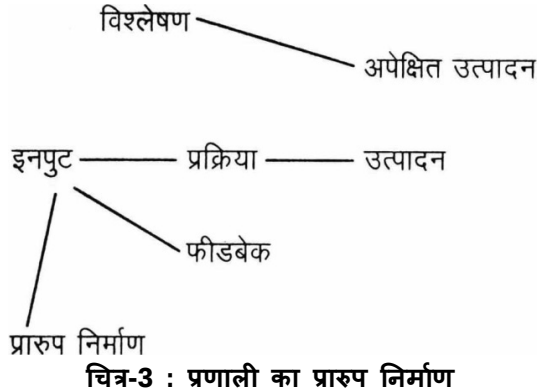

चित्र-3 : प्रणाली का प्रारुप निर्माण

(3) **उपयुक्त प्रादर्श का चयन (Selection of proper sample) -** प्रादर्श के माध्यम से वास्तविक जीवन की स्थितियां प्रस्तुत की जाती है। शिक्षा प्रणाली के सन्दर्भ में विद्यालय की वास्तविक कार्यप्रणाली को प्रस्तावित किया जाता है। इसे एक प्रवाह चार्ट अथवा वर्णनात्मक कथनों के रुप मे प्रस्तुत किया जाता है इसमें समस्त उपघटकों तथा उनके भी उपघटकों के अन्तर्सम्बन्धों को ध्यान में रखा

जाता है। उदाहरण के तौर पर एक निर्देशन व्यूह रचना निर्मित करते समय आपको एक प्रवाह चार्ट बनाना होगा जिसमें समस्त/उपघटकों (जैसे इनपुट, विधियां, प्रक्रिया, अपेक्षित उत्पादन तथा फीडबेक) का उल्लेख हो। किसी प्रणाली के विस्तार पर उपलब्ध ऑकडे अनुदेशन तंत्र के उपयुक्त मॉडल का स्वरुप प्रस्तुत कर सकते है।

(4) **विधि एवं साधनों का चयन (Selection of methods and sources) -** यह एक महत्वपूर्ण अवस्था है। आपको उन साधनों की पहचान करनी है, जिसमें इनपुट लक्ष्य तक पहुंच सके। उद्देश्यों तक कैसे पहुंचे? इसके उत्तर के लिए आपको प्रत्येक विशिष्ट उद्देश्यों तथा व्यावहारिक विशेषताओं का विश्लेषण करना होगा। समग्रता के सन्दर्भ में हमारे सम्मुख छोटे-छोटे खण्डित कार्यो की सूची उपस्थित हो जायेगी। तरीके एवं साधनों का चयन करने के बाद आपको इनपुट, लक्षण ताकि उत्पादन घटकों एवं साधनो एवं तरीकों की ऊर्जा पर विचार करना होगा। प्रत्येक विधि एवं साधन की प्रवीणता एवं प्रभावशीलता को ध्यान में रखा जाना चाहिए। किसी उद्देश्य की प्राप्ति हेतु कौन सा साधन उपयुक्त है, इसकी पहचान की जानी चाहिए।

किसी अनुदेशन प्रणाली में विधि एवं साधनों के चयन का तरीका (Way of Selecting Method and Sources for instructional system) : शिक्षार्थी के लक्षण, सामाजिक आर्थिक घटक, प्रोद्योगिकी, उपलब्धता, प्रशिक्षित शिक्षक, भौतिक सुविधाएं, पाठ्यक्रम की संरचना आदि पर निर्भर करता है। प्रत्येक विधि इनपुट, अपेक्षित उत्पादन तथा इसके संचालन के तरीके से सम्बन्धित है।

विधि एवं साधनों के वैकल्पिक घटकों की पहचान (Identification of Alternative method and Sources) : घटकों के विश्लेषण द्वारा उपलब्धि के सन्दर्भ में वैकल्पिक विधियों एवं साधनो को सुझाया जाना चाहिए। यह प्रणाली के संचालकों को संचालन बाधाओं, प्रवीणता तथा बाधाओं को ध्यान में रखते हुए सर्वोत्तम विधियां एवं साधन चुनने की व्यापकता प्रदान करती है। यदि वैकल्पिक विधियों तथा साधनों का चुनाव पूर्व में ही कर लिया जावे तो प्रणाली संचालन के समय निर्णय लेने में लचीलापन रहता है।

4.5.1.3 प्रणाली का संचालन (Implementation of System) - इसके अन्तर्गत प्रणाली उपागम के क्रियात्मक भाग का वर्णन किया जायेगा। प्रणाली विशेषज्ञ समस्या समाधान के लिए प्रणाली प्रारुप का उपयोग करते है। इनपुट की पहचान की जाती है। प्रारम्भिक व्यवहार की जांच की जाती है। इस हेतु मानदण्ड परख का निर्माण किया जाता है। विधि एवं साधनों की पहचान की जाती है। यह एक अनुदेशित व्यूह रचना है। विभिन्न माध्यमों से सम्बन्धित अनुदेशन सामग्री का निर्माण किया जाता है। उनके संचालन की विस्तृत रुपरेखा तैयार की जाती है। प्रणाली के प्रारुप निर्माण का अवस्था में क्षेत्र में होने वाले कार्य की विस्तृत कार्य योजना पर विचार किया जाता है। इनपुट व प्रक्रिया के बारे में आन्तरिक फीडबेक प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रणाली संचालन की विभिन्न अवस्थाओं में टेस्ट लिये जा सकते हैं। कार्यक्रम के अन्त में प्राप्त उत्पादन एव अपेक्षित उत्पादन की तुलना के उद्देश्य से अन्तिम परख ली जा सकती है। जब प्रणाली संचालन की स्थिति में होती है, उस समय इनपुट व प्रक्रिया को

सुधारने के लिए फीडबेक दिया जा सकता है। प्रणाली संचालन की स्थिति में उत्पादन का विश्लेषण हमें विधियों एव साधनों के बारे में सही निर्णय लेने में मदद करता है। किसी प्रणाली की प्रभावशीलता का निर्णय प्रणाली संचालन के अन्त में ही किया जा सकता है।

अत: प्रणाली के मूल्यांकन हेतु पूर्व में ही उपयुक्त योजना बना लेनी चाहिए। इससे हमें इनपुट, प्रक्रिया व उत्पादन के साथ-साथ मूल्यांकन करने में सहायता मिलती है। मूल्यांकन से प्राप्त समग्र फीडबेक की सहायता से विभिन्न बाधाओं को ध्यान में रखते हुए तथा प्रणाली की प्रवीणता और प्रभावशीलता को बढ़ाने के उद्देश्य से प्रणाली में परिवर्तन कर सकते है। उदाहरण के तौर पर प्रणाली संचालन की स्थिति में हमें उपलब्ध इनपुट की किसी प्रणाली के लिए अपेक्षित आऊटपुट से मिलान करना होगा। आवश्यक फीडबेक से हमें इनपुट तथा प्रक्रिया को सुधारने में सहायता मिलेगी। मानलो किसी संस्था के लिए प्रवेश परीक्षा में 80% अंक वाले छात्र अपेक्षित है जब कि भर्ती किये गये छात्र 90% से ऊपर के हैं, तो प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन के लिए फीडबेक देना होगा। दूसरी ओर जिस प्रणाली मे निम्न प्रवेशांक वाले शिक्षार्थियों को प्रवेश दिया गया है उसे थोडा लचीला छोड़ना होगा क्योंकि प्रणाली का प्रारुप उच्च प्रवेशांक वाले शिक्षार्थियों के लिए निर्मित किया गया है।

प्रणाली उपागम में मूल्यांकन प्रक्रिया के फीडबेक पर विशेष तौर से ध्यान केन्द्रित किया जाता है। प्रक्रिया आधारित मूल्यांकन का उद्देश्य विभिन्न अवस्थाओं में प्रणाली संचालन को निरन्तर फीडबेक देना है। यदि प्रणाली में लचीलापन है तो यह प्रक्रिया मूल्यांकन की ओर प्रवृत्त होती है। उदाहरण के तौर पर स्व अध्ययन प्रक्रिया में स्व अधिगम सामग्री के उपयोग करने की समस्या पर पूरक सामग्री उपलब्ध कराने अथवा माध्यमों/साधनों के द्वारा सामग्री हल करने सम्बन्धी निर्णय मौके पर लेने की आवश्यकता हो सकती है।

एक लचीली प्रणाली में प्रणाली संचालन के समय प्रक्रिया की आवश्यकताओं की पूर्ति का विकल्प खुला रहता है।

जैसा कि आप जानते है चित्र संख्या-6 में उत्पादन का मूल्यांकन लक्ष्यों तथा पूर्व निर्धारित उत्पादन के सन्दर्भ में किया जाता है। यह उत्पादन मूल्यांकन कहलाता है। उत्पादन के गुणों का मूल्यांकन संचालन की विभिन्न अवस्थाओं में तथा संचालन के अन्त में किया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर प्रत्येक इकाई के अन्त में इकाई जांच प्रशासित की जा सकती है। किसी प्रकरण के विशिष्ट भाग की समाप्ति पर गृह कार्य दिया जा सकता है।

इसे रूप देय/रचनात्मक मूल्यांकन(Formative evaluation) कहते हैं। ऐसे मूल्यांकन संचालन अवस्था के दौरान इनपुट तथा प्रक्रिया को सुधारने में सहयोग करते हैं। अध्ययन में सुधार के लिए शिक्षार्थी, शिक्षक तथा अभिभावक को फीडबेक दिया जा सकता है। उत्पादन का पाठ्यक्रम के अन्त में मूल्यांकन से यह जानने में मदद मिलती है कि प्रणाली प्रभावशाली है अथवा नहीं? इससे समग्र प्रणाली के विभिन्न घटकों (यथा: इनपुट, विधियां एवं साधन, मूल्यांकन प्रणाली एवं सहयोगी तंत्र अथवा बाहा वातावरण) की प्रभावशीलता का पता चलता है। समग्र प्रणाली के फीडबेक से प्रणाली विश्लेषण तथा प्रणाली के प्रारुप निर्माण की दूसरी

श्रंखला की ओर अग्रसर होने में सहायता मिलेगी। अत: शिक्षा जैसी खुली प्रणाली के सन्दर्भ में प्रणाली उपागम एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया मानी जा सकती है।

स्व मूल्यांकन प्रश्न (Self Evaluation)

1. प्रणाली को अपने शब्दों मे समझाइये।
2. शिक्षा को एक खुला तंत्र क्यों माना गया है?

4.5.2 प्रणाली उपागम की शिक्षा में उपयोगिता (Use of System Approach in Education) - प्रणाली उपागम का उपयोग विभिन्न प्रकार की समस्याओं के समाधान में किया जाता है। सत्रहवीं शताब्दी से प्रणाली उपागम का शिक्षा में कई प्रकार से उपयोग किया जाता है। प्रणाली उपागम का शिक्षा में व्यापक उपयोग शैक्षिक आयोजना, पाठ्यक्रम निर्माण, प्रशिक्षण सामग्री का निर्माण, निर्देशन प्रणाली का निर्माण, शैक्षिक कार्यक्रमों का मूल्यांकन एवं शिक्षा में आगामी अध्ययन आदि के क्षेत्र में किया जा सकता है।

प्रणाली उपागम के अन्तर्गत पाठ्यक्रम निर्माण प्रशिक्षण सामग्री निर्माण एवं अनुदेशन प्रणाली आदि में कुछ एक जैसे बिन्दु दिखाई देते हैं, जो निम्न हैं।

4.5.2.1 अनुदेशन प्रणाली के विभिन्न चरण (Steps of Instructional System) -

1. अधिगम आवश्यकताओं का विश्लेषण, लक्ष्यों का कथन, बाधाएँ एवं प्राथमिकताओं की पहचान।
2. विषयवस्तु का विश्लेषण एवं विषयवस्तु का चयन।
3. शिक्षार्थी की विशेषताओं, उनका प्रारम्भिक व्यवहार एवं क्षमताओं का अध्ययन।
4. अधिगम उद्देश्य एवं अन्तिम व्यवहार का निर्धारण करना।
5. उपलब्ध अधिगम स्त्रोतों एवं उनके विकल्पों की खोज।
6. संभावित सीमाओं एवं बाधाओं का अनुमान लगाना।
7. अनुदेशन व्यूह रचना, तथा जनसंचार माध्यमों सहित सहायक सेवाओं का चयन एवं योजना निर्माण।
8. शिक्षार्थियों को समूहों में विभाजित करना।
9. समय एवं अधिगम स्थान तय करना।
10. शिक्षार्थियों के मूल्यांकन की प्रक्रिया का प्रारुप निर्मित करना।
11. प्रतिनिधि समूह के साथ जाँच कर कार्यक्रम की वैधता स्थापित करना।
12. परिणामों का विश्लेषण करना एवं संपरिवर्द्धन करते हुए पुर्नचक्रण करना।

उक्त चरण प्रणाली उपागम के निम्न चार घटकों को प्रदर्शित करते हैं -

1. विषयवस्तु एवं शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि के सन्दर्भ में अनुदेशन लक्ष्य/उद्देश्यों की पहचान।
2. अपेक्षित प्रक्रिया एवं उद्देश्यों के सन्दर्भ में प्रणाली संचालन के लिए स्रोतो की खोज करना।

3. उद्देश्य, शिक्षार्थी एवं उपलब्ध स्त्रोतों के सन्दर्भ में वैकल्पिक विधियों एवं साधनों की पहचान करना। छात्रों की मूल्यांकन प्रक्रिया का निर्माण। प्रतिनिधि समूह में व्यूह रचना का संचालन।
4. इनपुट, प्रक्रिया एवं उद्देश्यों का फीडबेक एवं मूल्यांकन करना। प्रणाली उपागम में सुधार करते हुए दोहराना एवं पुर्नचक्रण।

4.5.2.2 प्रशिक्षण सामग्री के निर्माण के चरण (Steps for preparation of training material) - प्रशिक्षण कार्यक्रम के प्रारुप को निम्न चित्र द्वारा समझा जा सकता है:

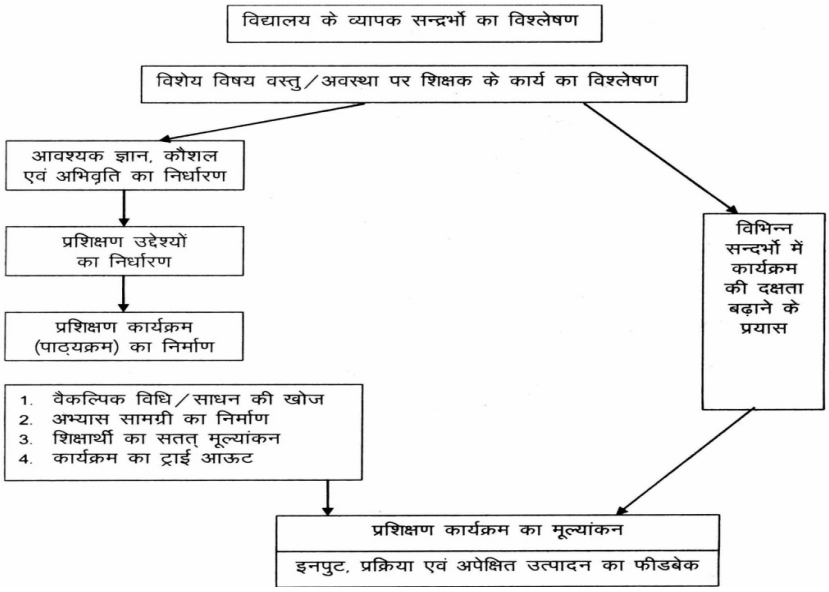

चित्र-4: प्रणाली उपागम का प्रारुप

अनुदेशन सामग्री को बनाते समय ऊपर बताये अनुसार विभिन्न प्रक्रिया में आते है। उदाहरण के तौर पर यदि आप सेवारत प्राथमिक स्कूली शिक्षकों के लिए लघु अवधि प्रशिक्षण शिविर आयोजित करना चाहते हैं, तो आप उक्त मॉडल को निम्न प्रकार काम में ले सकते हैं-

प्रथम चरण- सर्वप्रथम आपको प्राथमिक विद्यालय एवं वहां के शिक्षकों की पृष्ठभूमि का विश्लेषण करना।

द्वितीय चरण- आपको विभिन्न सन्दर्भो में प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के कार्यो का विश्लेषण करना होगा जैसे पठन-पाठन गतिविधि, कक्षा-कक्ष प्रबन्ध, विद्यालय प्रबन्ध, सामाजिक सम्बन्ध आदि। आपको अध्यापकों की व्यावसायिक पृष्ठभूमि तथा विभिन्न प्रकार की गतिविधियां करते समय महसूस की जाने वाली समस्याओं की पहचान करनी होगी।

तृतीय चरण- इस अवस्था पर शिक्षकों के कार्य एवं समस्याओं के स्तर के सन्दर्भ में ज्ञान, कौशल तथा अभिवति का प्रारुप निर्मित करना होगा।

चतुर्थ चरण- व्यावहारिक रुप में प्रशिक्षण के उद्देश्य निर्धारित करें। जैसे सेवारत प्रशिक्षण कार्यक्रम के अपेक्षित उत्पादन।

पंचम चरण- इस अवस्था पर विषय वस्तु का विश्लेषण किया जाता है। प्रशिक्षण के उद्देश्य, प्रशिक्षण की आवश्यकताएं तथा प्रशिक्षणार्थियों की पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम निर्मित किया जाता है। कई प्रकार के कार्यक्रमों के लिए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम निर्मित किये जा सकते है। इसे मॉड्यूलर रुप में व्यवस्थित किया जा सकता है।

भाष्टम चरण- इस अवस्था में कार्यक्रम के अन्त में शिक्षकों की व्यावसायिक कार्यक्षमता की पहचान की जानी चाहिए। कार्यक्रम की वैधता परखने के लिए मानदण्ड परख, प्रतिक्रिया मापनी, अभिवृति मापनी आदि का निर्माण किया जाना चाहिए।

सप्तम चरण- प्रविधि के निर्माण के क्रम में यह अवस्था अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इससे स्त्रेत की खोज की जाती है। स्त्रोतों की समस्याओं का विश्लेषण किया जाता है।

प्रशिक्षण उद्देश्य, प्रशिक्षण विषय वस्तु एवं प्रशिक्षणार्थियों की पृष्ठभूमि, उपलब्ध स्त्रोत तकनीकी समर्थन, आर्थिक एवं मानवीय आधार आदि को ध्यान में रखते हुए वैकल्पिक विधियों एवं साधनों की पहचान की जाती है । इसके अतिरिक्त व्यावहारिक प्रविधियों की पहचान की जाती है। उपयुक्त अध्ययन सामग्री का निर्माण किया जाता है। यह मुद्रित, दृश्य-श्रव्य, कम्प्यूटर समर्थित तथा क्षतिपूरक सामग्री आदि के प्रकार की हो सकती है। प्रशिक्षणार्थियों की सतत् प्रगति जानने के लिए विभिन्न प्रकार के मूल्यांकन उपकरण जैसे उपलब्धि परख, अवलोकन सूची, प्रतिक्रिया मापनी आदि का भी निर्माण किया जाता है।

अष्टम चरण- एक बार व्यूह रचना निर्मित हो जाने के बाद प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रतिनिधि न्यादर्श पर जाँच किया जाता है।

नवम चरण- अष्टम चरण मे निर्मित विभिन्न उपकरणों का उपयोग करते हुए मूल्यांकन किया जाता है। कार्यक्रम के प्रारम्भ में निर्धारित विभिन्न मानदण्डों के सन्दर्भ में प्रशिक्षण कार्यक्रम कीं वैधता की जांच की जाती है। मूल्यांकन के आधार पर यह पता लगाया जाता है कि प्रशिक्षण कार्यक्रम का अपेक्षित उत्पादन प्राप्त हुआ या नहीं? वास्तविक उत्पादन एवं अपेक्षित उत्पादन में कितना अन्तर है? समस्या एवं संचालन में आने वाली बाधाओं को ध्यान में रखते हुए कुछ उद्देश्यों को बदला जा सकता है। प्रशिक्षणार्थी के आर्थिक आधार, भौतिक सुविधाएं, पाठ्यक्रम आदि की दृष्टि से क्या इनपुट पर्याप्त है? क्या विधि, साधन, पाठ-पाठन गतिविधियों से सम्बन्धित प्रक्रिया उपयुक्त है? इन प्रश्नों के उत्तरों से हमें विभिन्न घटकों (उद्देश्य, इनपुट, प्रक्रिया) के बारे में फीडबेक मिलता है। फीडबेक के अनुसार आवश्यक परिवर्तन किये जा सकते है। प्रणाली के पुर्नचक्रण के लिए व्यूह रचना बनाई जा सकती है। विभिन्न अनुदेशन कार्यक्रमों की योजना, पठन-पाठन प्रविधि, पाठ्यक्रम एवं कार्यक्रम की मूल्यांकन प्रविधि आदि को निर्मित करते समय उक्त चरणों को ध्यान में रखा जाता है।

4.6 भारत के सन्दर्भ में प्रणाली उपागम में अनुसंधानों के अनुभव (Research Experiences of System Approach in Indian)

भारत में अनुदेशन स्थितियों में प्रणाली उपागम का उपयोग करने के बारे में 3० से अधिक डॉक्ट्रेट स्तर के अध्ययन हो चुके हैं। शिक्षा में विभिन्न स्तरों पर अत्यन्त सुनियोजित तरीके से बहु माध्यमों अनुदेशन सामग्री का निर्माण हुआ है। रविन्द्र नाथ (1982) एवं वर्धिनी (1980) विद्यालय स्तर पर विज्ञान पढ़ाने के लिये बहु माध्यमी व्यूह रचना निर्मित करने के लिए प्रणाली उपागम का उपयोग किया गया है। उन्होंने अध्यापक द्वारा प्रस्तावना, पी.एल.एम., व्याख्यान, समूह अध्यापन, प्रश्नोत्तरी प्रविधि, शिक्षार्थी प्रक्रिया, शिक्षा द्वारा प्रदर्शन, विचार-विमर्श, दृश्य-श्रव्य प्रदर्शन, सारांश, मानदण्ड सन्दर्भित जांच आधारित फीडबेक, अभ्यास एवं मूल्यांकन कार्य आदि 12 तरीकों का उपयोग किया। उक्त घटकों को अनुदेशन प्रणाली का प्रारुप बनाते समय सम्मिलित किया गया।

इसी प्रकार महाविद्यालय एवं विश्वविधालय स्तर पर भी प्रणाली उपागम पर कुछ अध्ययन हुए हैं। अंकलेश्वरेया (1982), मैनन (1984) सनसनवाल (1978), कृष्णन (1983) एवं मल्होत्रा (1982) आदि। उदाहरण के तौर पर मैमन (1964) ने अधिस्नातक स्तर पर शैक्षिक प्रोद्यौगिकी पाठ्यक्रम पढ़ाने में बहु माध्यमी प्रविधि की वैधता का अध्ययन किया। अनुदेशन प्रणाली के निर्माण एवं क्रियान्विति में प्रणाली उपागम के सभी चरणों को सम्मिलित किया गया। सामग्री का उपयोग रेखीय आधार पर किया गया। प्रतिवर्ष प्राप्त हुए फीडबेक से अनुदेशन प्रणाली में सुधार हुआ है। बहु माध्यमी सामग्री मे पीएल.एम. नियोजित व्याख्या, समूह अध्यापन, कमेन्ट्री युक्त स्लाइड प्रदर्शन, सेमीनार, अभ्यास पुस्तिका का उपयोग, विचार-विमर्श, पुस्तकालय कार्य आदि घटक सम्मिलित है। अनुदेशन सामग्री में शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरुप पर्याप्त लचीलापन था। किसानों के लिए शिक्षा प्रसार स्तर के कार्यक्रमों हेतु अनुदेशन में प्रणाली उपागम पर कुछ प्रयास किये गये। उदाहरण के तौर पर चौहान एवं सिन्हा (1979) ने दूरदर्शन कार्यक्रम, समूह चर्चा तथा अध्ययन सामग्री को सफल पाया गया। अनुदेशन के वैकल्पिक साधनों की प्रभावशीलता की तुलना करने के लिए प्रणाली उपागम अध्ययन किये गये है। उदाहरण के तौर पर मंगत व हंसारा (1986) ने निष्कर्ष निकाला कि स्लाइड प्रदर्शन एवं विचार-विमर्श की अपेक्षा प्रदर्शन, विचार-विमर्श, फिल्म शो तथा विमर्श आधारित अध्ययन सामग्री अधिक उपयोगी है।

यह उचित होगा कि आप चरणबद्ध प्रणाली उपागम का उपयोग करते हुए अनुदेशन गतिविधियों के प्रारुप निर्माण हेतु सुनियोजित प्रयास करें।

4.7 सारांश
(Summary)

इस इकाई में आपको प्रणाली एवं प्रणाली उपागम की अवधारणा से अवगत कराया गया। आप समझ गये होंगे, कि किस प्रकार शिक्षा प्रकृति में एक खुली प्रणाली है तथा शिक्षा प्रणाली से सम्बन्धित जटिल समस्याओं का प्रणाली उपागम द्वारा कैसे समाधान किया जा सकता है? इसका उपयोग पाठ्यक्रम निर्माण, अनुदेशन सामग्री का निर्माण तथा प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों के निर्माण एवं मूल्यांकन कार्यक्रमों में किस प्रकार किया जा सकता है? कृपया आप द्वारा अनुभव की गई शैक्षणिक समस्याओं के समाधान हेतु प्रणाली उपागम का उपयोग करें।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. प्रणाली की परिभाषा लिखिए ।
   Write the definition of System?
2. प्रणाली उपागम के घटक कौन-कौन से है?
   What are the Components of System Approach?
3. शिक्षा को एक खुला तंत्र क्यों माना गया है?
   Why education is considered as an open system?
4. प्रणाली उपागम के विभिन्न चरणों को समझाइये?
   Elucidate the different steps of system approach?

4.8 सन्दर्भ गन्थ सूची
(Bibliography)

– बोगस ला आर- सिस्टम कन्सेप्ट इन सोशल सिस्टम: इन माइल्स आर. एफ. (एडिटेड) 1973, सिस्टमकन्सेप्ट विले न्यूयार्क 1973
– रामो एस. - द सिस्टम एप्रोच इन माइल्स आर.एफ. (एडिटेड) 1973, सिस्टम कन्सेप्ट विले न्यूयार्क 1973
– वैंकअऐया एन., एज्यूकेशन टेक्नोलोजी, एपी.एच. पब्लिशिंग कार्पोशन नई दिल्ली 1976

इकाई-5

भारत में शैक्षिक तकनीकी में शोध की प्रवृत्ति Research Trends in Educational Technology in India

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

5.1 प्रस्तावना
(Introduction)

5.2 शैक्षिक तकनीक में अनुसंधान का विकास तथा भारतीय परिपेक्ष्य में इसका वर्गीकरण
(Development of Research in Education Technology and its classification in Indian Contact)

5.3 पी.एल.एम. पर अनुसंधान
(Research on P.L.M.)
5.3.1 अध्ययनों का प्रमुख केन्द्रीकरण
5.3.2 प्रमुख अध्ययन परिणाम

5.4 प्रशिक्षण तकनीक में अनुसंधान, सूक्ष्म शिक्षण तथा अन्य विधियाँ
(Research in training Technology, Microteaching and other methods)
5.4.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.4.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम

5.5 दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री एवं मास मीडिया पर अनुसंधान
(Research and Audio Visual Aid and Mass Media)
5.5.1 अध्ययनों का प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.5.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम

5.6 मल्टी मीडिया विधि पर अनुसंधान कार्य
(Research on Multimedia Method)
5.8.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.8.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम

5.7 शिक्षण प्रतिमान पर अनुसंधान कार्य
(Research of Model of teaching)
5.6.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.6.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम

5.8 कम्प्यूटरीकृत शिक्षण अनुदेशन पर अनुसंधान कार्य
(Research on Computer Aided Instruction)
5.8.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.8.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम
5.9 दूरस्थ शिक्षा पर अनुसंधान कार्य
(Research on Distance Education)
5.9.1 दूरस्थ शिक्षा पर अनुसंधान कार्यो के प्रमुख केन्द्र बिन्दु
5.9.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम
5.10 अध्ययनों द्वारा जिन क्षेत्रों को समाहित किया गया उनका अवलोकन
5.11 शैक्षिक तकनीक में विधि के पहलुओं पर अनुसन्धान कार्यो का अवलोकन
5.12 सारांश
(Summary)
5.1 3संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

5.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विद्यार्थी -

1. शैक्षिक तकनीक (ET) के विभिन्न क्षेत्रों में हुए अनुसंधान कार्यो का वर्गीकरण कर सकेगें।
2. शैक्षिक तकनीक के विभिन्न क्षेत्रों में हुए अनुसंधानों के प्रमुख अध्ययन केन्द्र बिन्दुओं एवं प्राप्त अध्ययन परिणामों पर चर्चा कर सकेगें।
3. शैक्षिक तकनीक में कहां-कहां अध्ययन की आवश्यकता है तथा कमियाँ हैं, भविष्य में किन-किन क्षेत्रों में अनुसंधान अध्ययन की सम्भावना है। इस सम्बन्ध में आप अन्तर्दृष्टि विकसित कर पाएगें।

5.1 प्रस्तावना
(Introduction)

शैक्षिक तकनीक में अनुसंधान कार्य - शैक्षिक तकनीक की विभिन्न विमाओं (Dimension) से संयुक्त है। पी.एच.डी. या परियोजना स्तर पर तीन सौ से भी अधिक अनुसंधान कार्य शैक्षिक तकनीक में विभिन्न पहलुओं पर देखें जा सकते हैं। शैक्षिक तकनीकी के विकास एवं शिक्षा में इसके उचित उपयोग पर निरन्तर अनुसन्धान (शोध) कार्य किये जाये ताकि उनके परिणामों के आधार पर भविष्य में उन्हें ध्यान में रखते हुए शिक्षण कार्य किया जाये। साथ ही इन शोध कार्य से हमे, हमारे नवाचारों की सफलताओं-असफलताओं के बारे में भी जानकारी प्राप्त होती है जिससे उनमे आवश्यक सुधार किया जा सके। इस खण्ड में विभिन्न क्षेत्रों में आयोजित अध्ययनों के संदर्भ में आपको बतलाया जा रहा है।

साथ ही इन अध्ययनों के क्षेत्र प्रमुख केन्द्र बिन्दु प्रमुख पात्र परिणामों, लक्षणों आदि के सम्बन्ध में भी चर्चा की जा रही है।

5.2 शैक्षिक तकनीक में अनुसंधान का विकास तथा भारतीय परिप्रेक्ष्य में इनका वर्गीकरण (Development of Research in Education Technology and its classification in Indian Contact)

यह तो आप जानते ही हैं कि शैक्षिक तकनीक की भारतीय परिवेश में पृष्ठभूमि नई है। भारत के विभिन्न प्रशिक्षण संस्थानों एवं अनुसंधानों में शैक्षिक तकनीक का प्रवेश साठ के दशक के प्रारम्भ में प्रोग्राम लर्निंग के रुप में हुआ। NCERT की संरचना ने इसे 1964 में सारे देश में लोकप्रिय बना दिया, विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं शिक्षा अध्ययन शालाओं विश्वविद्यालय शिक्षा विभागों ने ET को अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में सम्मिलित किया इस सम्बन्ध में कुछ नाम उल्लेखनीय हैं। जैसे बड़ौदा, वाराणसी, देहली, मेरठ, हिमाचल प्रदेश, सूरत, चण्डीगढ कुरुक्षेत्र, इन्दौर आदि विभिन्न व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों जैसे तकनीकी शिक्षण प्रशिक्षण संस्थान (TTIS) राष्ट्रीय बैंक प्रशिक्षण संस्थान; (NIBM) राष्ट्रीय प्रतिरक्षा अकादमी एवं स्टाफ कॉलेजों आदि शैक्षिक तकनीक का अपने प्रशिक्षण गतिविधियों में उपयोग करना। इसके अतिरिक्त दृश्य श्रव्य अनुसंधान केन्द्रों AVRC और MRC की विश्वविधालय स्तर पर स्थापना ने तथा दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों के विकास में शैक्षिक तकनीकी सामग्री के उपयोग को प्रोत्साहित किया है।

शैक्षिक तकनीक में अनुसंधान का प्रारम्भ इस अवधारणा के साथ हुआ है। शिक्षा तकनीकी के विभिन्न पहलुओं का विकास होना तथा इसका विभिन्न स्तरों पर उपयोग किया जाना चाहिए। उदाहरण स्वरुप प्रोग्राम लर्निंग सामग्री का उपयोग साठ के दशक के प्रारम्भ में शुरु हुआ। PLM पर प्रथम पी. एच.डी. स्तर का कार्य 1964 में पूर्ण हुआ। शैक्षिक तकनीकी पर समस्त अनुसंधान अध्ययन इसके विभिन्न अवधारणाओं एवं विकास के प्रति सहमति प्रकट करते हैं तथा इसके मूल्यांकन एवं उपयोग से सम्बन्ध रखते हैं। भारत मे तीन दशकों में शैक्षिक तकनीक के विभिन्न घटकों का सम्मिलन हुआ है, इस संदर्भ में आप Ph.D स्तर के तथा संस्थागत परियोजना स्तर के तीन सौ से भी अधिक अनुसंधान कार्यो का अवलोकन कर सकते है।

'प्रथम सर्वेक्षण शैक्षिक अनुसंधान' प्रो.एम.वी. बुच द्वारा सम्पादित हुआ इसमें वर्ष 1972 के दौरान हुए केवल उन्हीं अध्ययनों को सम्मिलित किया गया था जो PLM के क्षेत्र में आयोजित हुए थे (इसका ET नामकरण बाद के सर्वेक्षणों में किया गया) इसमें उन चार अध्ययनों का भी उल्लेख किया गया जो कि प्रशिक्षण तकनीक के व्यवहार परिवर्तन पद्धतियों के क्षेत्र से सम्बन्धित थे। यदि आप द्वितीय, तृतीय, एवं चतुर्थ सर्वेक्षण, पंचम एवं षष्टम सर्वेक्षणों का अवलोकन करें एवं अनुसंधान पत्र-पत्रिकाओं को देखें तो आप पाएंगे: कि शैक्षिक तकनीक के क्षेत्र में 600 से भी अधिक अनुसंधान अध्ययन सम्पन्न हुए हैं। साथ ही शैक्षिक

तकनीक का क्षेत्र भी विस्तृत हुआ है। शैक्षिक तकनीक में अनुसंधान अध्ययनों का वर्गीकरण सात प्रमुख पत्रिकाओं के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा रहा है:

1. अभिक्रमित अनुदेशन (Programme Learning Material)
2. प्रशिक्षण तकनीक - माइक्रोटीचिंग तथा व्यवहार रुपांतरण अध्ययन
3. दृश्य श्रव्य सामग्री और मॉस मीडिया
4. मल्टी मीडिया पैकेज
5. शिक्षण प्रतिमान
6. कम्प्यूटरीकृत अनुदेशन
7. दूरस्थ शिक्षा

5.3 पी.एल.एम. पर अनुसंधान कार्य (Research on P.L.M)

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है PLM पर प्रथम अध्ययन जो कि Ph.D स्तर पर था वर्ष 1964 में सम्पन्न हुआ। तत्पश्चात् लगभग 7० अनुसंधान अध्ययन इस क्षेत्र में आयोजित हुए इनमें से कुछ अध्ययनों का उल्लेख निम्नानुसार है। शाह(1964) देसाई (1966), शर्मा (1968) कुलकर्णी (1969) शाह (1969), हुसैन (1971) शाह (1971) जोशी (1972) कृष्णमूर्ति (1972) कापडिया (1972) शाह एव कापडिया (1972) भूषण (1973) गुप्ता (1973) मेहता (1973) चौहान (1973) दीवान (1974) शर्मा (1975) गोविन्दा (1976) सेठी (1976) गोसाई (1977) कुरुविला (1977) वर्मा (1977) आहुजा (1978) भूषण एवं गोस्वामी (1978) गौतम (1978) सनसनवाल (1978) शर्मा एवं अहिया (1978) भारतीय (1979) मलिक (1979) पार्लिकर (1979) पाण्डेय (1980) जयचन्द्र (1980) शेशाद्री (1980) शाह (1980) त्रिवेदी (1980) इनामदान (1981) कुमार (1981) मान (1981) भावी (1981) शाह (1981) सुहार (1981) दावीस (1982) कागथला (1982) शर्मा (1982) जोसेफ (1983) कौर (1983) भदवाल (1984), रविन्द्रदास (1984) चौधरी (1985) देसाई (1985), जयलक्ष्मी (1985) तथा कोठारी (1985) इन अनुसंधान अध्ययनों का विस्तृत विवरण प्रो.एम.वी. बुच द्वारा सम्पादित 'चतुर्थ सर्वेक्षण शासक अनुसंधान' में देखा जा सकता है।

पष्टम सर्वेक्षण में सर्मा (1997), सुन्दर एवं एकडोटे (1994), ठाकर (1994), त्रेहन (1994) के अध्ययनों का उल्लेख है। अभिक्रमित अनुदेशन पर पिछले वर्षो में अनुसन्धान कार्यो में कमी हुई है। प्रथम एवं द्वितीय सर्वेक्षण में अभिक्रमित अनुदेशन पर बल था। जबकि तृतीय चतुर्थ, पंचम सर्वेक्षण एवं षष्टम सर्वेक्षण में निरन्तर संख्या कम होती चली गई है। अभिक्रमित अनुदेशन, टेप स्लाईड कार्यक्रम व समूह कार्यक्रम समावेशित हैं, जो कि विविधता को सांकेतिक कर रहे हैं।

5.3.1 पी.एल.एम. पर आयोजित अध्ययनों के प्रमुख केन्द्र बिन्दु (Main Points)

1. इन अनुसंधान अध्ययनों के प्रमुख अध्ययन केन्द्र बिन्दु निम्नानुसार हैं -
2. प्रोग्राम लर्निग एप्रोच बनाम परम्परागत शिक्षण विधियां तथा पी.एल.एम. की वैधता
3. पी.एल.एम. के विभिन्न स्वरुप एवं उनकी प्रभावशीलता
4. पी.एल.एम. के विभिन्न उपयोग
5. विभिन्न विषयों एवं क्षेत्रों के लिये पी.एल.एम
6. पी.एल.एम. एवं निर्देशन मीडिया
7. पी.एल.एम. एवं व्यक्तिगत विभेद

5.3.2 प्रमुख प्राप्त परिणाम (Result)

पी.एल.एम. की (Validity) वैधता के लिए विभिन्न दृष्टिकोण थे जैसे कि अपेक्षित परिणाम, परम्परागत विधियों से तुलना आदि।

उपलब्धि - विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया आदि दृष्टिकोणों से अध्ययन किये गये तथा इस सम्बन्ध में पी.एल.एम. के परिणाम संतोषजनक पाए गए। ज्ञान, बोध, और ज्ञान के प्रयोग स्तर पर उद्देश्यों की प्राप्ति में पी.एल.एम. प्रभावी पाया गया इसके अतिरिक्त तत्काल उपलब्धि साथ ही उसका बने रहना इन स्तरों पर भी पी.एल.एम. अपेक्षानुसार पाया गया। कुछ अध्ययनों में पी.एल.एम. परम्परागत शिक्षण विधियों की तुलना में अधिक प्रभावी पाया गया जबकि कुछ अध्ययनों में यह परम्परागत विषयों के समान ही पाया गया ।

पी.एल.एम. के वैकल्पिक रुप एवं शैलियों के सम्बन्ध में जो अध्ययन हुए उनमें यह पाया गया कि लघु चरण वाले पी.एल.एम. प्रकट व्यवहार प्रतिउत्तर तरीकों के अन्तर्गत ज्ञान के वर्ग में अधिक प्रभावी पाए गए जबकि दीर्घ चरण वाले पी.एल.एम. प्रकट प्रतिउत्तर तरीकों बोध तथा प्रयुक्तता वर्ग के संदर्भ में प्रभावशाली पाए गए। दीर्घचरण वाले पी.एल.एम. के सम्बन्ध में यह पाया गया है कि वे शिक्षार्थियों में ज्ञान की स्थिरता के सन्दर्भ में उच्च स्तर पर प्रभावी है।

लीनियर एवं मेथेटिक शैली के पी.एल.एम. में शिक्षण जानकारी कौशल, जानकारी एवं कौशल के संदर्भ में कोई अन्तर नहीं पाया गया।

पी.एल.एम. विश्वविधालय स्तर एवं उच्च शिक्षा स्तर के विषयों के संदर्भ में प्रभावशाली पाए गए। पी.एल.एम. के द्वारा विद्यालय स्तर पर विभिन्न विषय क्षेत्रों पर सफलतापूर्वक पढ़ाया गया जैसे भाषा, समाजविज्ञान, गणित, विज्ञान आदि। जबकि उच्च शिक्षा स्तर पर अंग्रेजी, शिक्षा मनोविज्ञान, गृहविज्ञान शैक्षिक मूल्यांकन, शैक्षिक अनुसंधान, शैक्षिक तकनीक आदि विषय पढ़ाए गए। बैंक कर्मचारियों के प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी पी.एल.एम. पैकेज उपर्युक्त पाए गए।

कम्प्यूटरीकृत अनुदेशों, श्रव्य अनुदेशों, टेलीवाइज्ड अनुदेशों के संदर्भ में पी.एल.एम. के सिद्धांत ही उपयोग किये जाते रहे हैं तथा वे अपेक्षित परिणामों एवं उपलब्धि के संदर्भ में

प्रभावी पाए गए। पी.एल.एम. के उपयोग के संदर्भ में शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों की प्रतिक्रिया सकारात्मक पाई गई। विभिन्न चरों, जैसे शिक्षार्थी की पूर्व उपलब्धि बुद्धिमत्ता, प्रेरणा के सम्बन्ध में विभिन्न अध्ययन सम्पन्न हुए। उनमें पाया गया कि पी.एल.एम. द्वारा प्राप्त उपलब्धि में ये चर रुकावट या कारण नहीं बनते हालांकि पी.एल.एम. में लिखित सम्प्रेषण होता है। यह पाया गया है कि भाषा ज्ञान उनके कार्य प्रस्तुतीकरण में कारण बनता है। लीनियर एवं शाखीय पी.एल.एम. के सम्बन्ध में व्यक्तिगत वेरिएबल जैसे चिन्ता, आत्मनिर्भरता, अन्तर्मुखता, उपलब्धि के संदर्भ में सार्थक सम्बन्ध नहीं रखते। विद्यार्थियों द्वारा पी.एल.एम. के अध्ययन में जो समय लगाया जाता है वह उनकी उपलब्धि से नकारात्मक रुप से सम्बन्धित होता है अर्थात जो शिक्षार्थी सीखने में अधिक समय व्यय करते हैं वे कम उपलब्धि पाते हैं तथा जो कम समय व्यय करते हैं वे अधिक उपलब्धि पाते हैं। यह भी देखा गया है कि जिन शिक्षार्थियों का प्रवेश सुस्पष्ट नहीं होता वे सार्थक रुप से पुन अभ्यास के बाद परिणाम देते हैं यदि वे पी.एल.एम. को पुन अभ्यास हेतु उपयोग कर रहे होते है।

5.4 प्रशिक्षण तकनीक में अनुसंधान सूक्षमशिक्षण तथा शिक्षक व्यवहार रुपान्तरण विधियाँ (Research in training Technology, Microteaching and other methods)

इस क्षेत्र में अनुसंधानों में गति सत्तर के दशक में आई। यह माना गया कि प्रशिक्षण तकनीक का उन्नत स्वरुप शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में दक्षता विकसित करेगा। शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में कौशल विकास हेतु माइक्रोटीचिंग का उपयोग किया गया। तत्पश्चात् विभिन्न विधियॉ जैसे कक्षा निरीक्षण, फीडबेक प्रणाली कौशलों का समन्वय आदि विधियाँ प्रयुक्त की गई। 1972 से 1987 के दौरान इस क्षेत्र में लगभग चार दर्जन अनुसंधान अध्ययन सम्पन्न हुए। उन्हें क्रमानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है।

राय (1970), मुकरे (1972) पनगोत्र (1972) सिंह (1974) भट्टाचार्य (1975) दोसज (1975) कथूरिया (1976) ललिता (1976) शर्मा एवं पासी (1976) वजे (1976) गोपी (1977) जोशी (1977) दाय (1977) राय (1977) शर्मा (1977) पटेल (1978) राय (1978) कवल (1979) पेंटल (1979-80) जांगीर (1980) कौर (1980) मैथ्यू (1980) शर्मा (1980) योगेन्द्र कुमार (1980) जांगीर और ढोंडियाल (1981) ललिता (1981) पेकर्थ (1981) मुखोपाध्याय (1981) रजमणि (1981) एवं मातु (1981) दास (1982) प्रताप (1982) शर्मा (1982) गुप्ता (1983) भालवन्कर (1984) भाटिया (1984) चतले (1984) जोशी (1984) नायक (1984) प्रभुने (1984) खान (1985) मिश्रा (1985) शुक्ला (1985) ठक्कर (1985) डोगरा (1986) कल्याणपुरकर (1986) दवे (1987) एवं इकोटे (1987)।

5.4.1 अध्ययन के केन्द्र बिन्दु (Main Points)

इस क्षेत्र मे अध्ययनों का प्रमुख केन्द्र निम्नांकित तथ्यों पर था-

1. शिक्षण कौशल की पहचान
2. माइक्रोटीचिंग की व्यूह रचना एवं वैकल्पिक विधियाँ
3. शिक्षण व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध मे निम्नांकित संदर्भों में माइक्रोटीचिंग एवं अन्य विधियों की प्रभावशीलता जैसे अध्यापन योग्यता प्राप्त करना । परम्परागत शिक्षक प्रशिक्षण विधि से तुलना, फ्लेन्डर की अन्तःविश्लेषण वर्गीकरण प्रणाली आदि परिवर्तनशील शिक्षक व्यवहार के सम्बन्ध में फ्लेन्डर की अन्तःक्रिया प्रणाली को उपकरण के रुप में प्रयुक्त किया जाना।
4. विभिन्न प्रकार के कक्षा अवलोकन उपकरणों को विकसित करना तथा इन उपकरणों से छात्र शिक्षकों को प्रशिक्षित करना।
5. विभिन्न वैकल्पिक साधनों द्वारा माइक्रोटीचिंग की संरचना करना जैसे वास्तविक परिस्थिति में प्रशिक्षण बदली हुई परिस्थिति की तुलना में, क्लोज सर्किट टीवी दर्शकों द्वारा, स्वयं फीडबेक प्राप्त करना। फीडबेक सह प्रशिक्षणार्थियों के अवलोकन द्वारा तथा निरीक्षक के अवलोकन द्वारा। श्रव्य कैसेट रिकार्डर द्वारा फीडबेक पाना तथा वैकल्पिक साधनों की प्रभावशीलता का अध्ययन करना।
6. दृश्य श्रव्य प्रोग्राम प्रशिक्षण के पैकेज माइक्रोटीचिंग पर विकसित करना। जैसे स्लाईड-कोमेंट्री के साथ, फीचर फिल्म, वीडियो फिल्म, श्रव्य कैसेट, तथा इन कार्यक्रमों की प्रभावशीलता का अध्ययन। शिक्षक नियंत्रित प्रशिक्षण की तुलना में किया जाना।
7. विभिन्न कौशलों के एकीकरण की विधियों

5.4.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम (Result)

FLACS के उपयोग के संदर्भ में किए गए अध्ययन दर्शाते हैं कि FLACS का उपयोग फीडबैक प्राप्ति के साधन की तरह किये जाने पर शिक्षक प्रशिक्षणार्थी अनुमानित मौखिक व्यवहार के सम्बन्ध में सार्थक फीडबैक प्राप्त करते हैं। यह पाया गया है कि विभिन्न साधनों जैसे कक्षा अवलोकन, अध्यापन व्यवहार वीडियो टेप द्वारा प्रदत्त फीडबैक, अध्यापन कौशल विकसित करने में उपयोगी पाया गया। विभिन्न प्रकार के फीडबैक जैसे स्वयं फीडबैक प्राप्त करना। सहप्रशिक्षण द्वारा फीडबैक, निरीक्षक द्वारा दिया गया फीडबैक FIACS पर आधारित फीडबैक, तथा विभिन्न अवलोकन उपकरण ये सभी अध्यापन व्यवहार के स्तर को उन्नत बनाने में सहायक होते है।

माइक्रोटीचिंग पर हुए अध्ययनों में इसकी प्रभावशीलता सिद्ध की है। माइक्रोटीचिंग प्रशिक्षण विधि के रुप में परम्परागत विधियों की तुलना में उच्चतर पाई गई हैं। साथ ही FIACS द्वारा अध्यापन दक्षता विकसित करने के लिये दिए जाने वाले प्रशिक्षण की तुलना मे भी माइक्रोटीचिंग श्रेष्ठ पाया गया। जो शिक्षक प्रशिक्षार्थी माइक्रोटीचिंग द्वारा प्रशिक्षित किये गये उनके मौखिक व्यवहार में सार्थक परिवर्तन पाया गया। सामान्य अध्यापन दक्षता के सम्बन्ध में, माइक्रोटीचिंग परिवर्तित परिस्थितियाँ वास्तविक परिस्थितियों में समान प्रभाव उत्पन्न कर सकीं। माइक्रोटीचिंग पाठ अध्यापन कौशल विकसित करने में सहयोगी पाए गए।

शिक्षक में विभिन्न मॉडलिंग व्यवहार का अध्ययन यह दर्शाता है कि प्रतीकात्मक मॉडलिंग ऑडियो मॉडलिंग से सार्थक रूप से पृथक नहीं थी। प्रश्न पूछने के सम्बन्ध में माइक्रोटीचिंग सार्थक साबित हुई है।

विभिन्न कौशलों के समन्वय हेतु विभिन्न व्यूह रचनाएं विकसित करने के उदाहरण पाए गए और उनकी सार्थकता अध्ययन की गई। विभिन्न कौशलों के समन्वय के लिये दो प्रशिक्षण मॉडल विकसित किये गए। समेटिव मॉडल तथा एडिटिव मॉडल कौशलों के समन्वय के लिए दोनों ही मॉडल प्रभावी पाए गए। समन्वय मॉडल के नाम से जाना जाने वाला मॉडल भी अध्ययन किया गया। इस मॉडल की तुलना समेटिव मॉडल से की जाने पर यह तथ्य प्रकाश में आया कि दोनों ही मॉडल अध्यापन दक्षता विकसित करने में तथा अध्यापन कौशलों के समन्वय में समान रुप से प्रभावशील है।

परिवर्तित कक्षा परिस्थिति में कौशल समन्वय करने का प्रतिशत दिया जाने पर यह शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में अध्यापन दक्षता उन्नत नहीं कर सका।

विभिन्न मॉडलों के अध्ययनों से यह पाया गया कि एडिटिव मॉडल कौशल एकीकरण मे प्रभावी था। एकीकरण आधारित निर्देशन के द्वारा यह पाया गया कि यह शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न अध्यापन कौशल का एकीकरण विकसित करने में सहायक होता है। एकीकरण का मिनी अध्यापन मॉडल एकीकरण के समेटिव मॉडल से अधिक प्रभावी पाया गया। समग्र रुप से यह पाया जाता है कि एकीकरण व्यूह रचना शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को वास्तविक कक्षा परिस्थितियों में सफल कार्य निर्वाह में सहायक होती है।

विभिन्न क्लस्टर्ड प्रशिक्षण व्यूह रचना जोकि विभिन्न कौशलों के एकीकरण के सम्बन्ध में है यह दर्शाती है कि चार संकुल (Tetra Clustered) एवं छः संकुल (Hexa Clustered) व्यूह रचनाऐं भौतिक विज्ञान के प्रशिक्षणार्थियों के लिये अधिक प्रभावशील है दो संकुल (Bi Clustered) और छः संकुल (Hexa Clustered) व्यूह रचनाएं समान विज्ञान के संदर्भ में अधिक प्रभावशाली है। तथा इन तीनों व्यूह रचनाओं का एकीकरण भाषा शिक्षकों के लिये प्रभावी पाया गया।

माइक्रोटीचिंग तथा माडयूलर विधि की तुलनात्मक प्रभावशीलता का अध्ययन दोनों ही विधियों में सकारात्मक परिणाम देता है। मल्टीमीडिया स्वनिर्देशन प्रशिक्षण पैकेज माइक्रोटीचिंगयुक्त शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों में अध्यापन कौशल विकसित-करने में अपेक्षिक परिणाम दर्शाते हैं। माइक्रोटीचिंग तकनीक विभिन्न माध्यमों की मदद से लागू हो पाई है। उनमें क्लोज सर्किट- टीवी. वीडियो कैसेट ऑडियो कैसेट, फिल्म स्लाइड, कामेन्ट्री आदि प्रमुख है। मीडिया युक्त प्रोग्राम भारतीय परिस्थितियों में प्रभावी सिद्ध हुए हैं। यह भी सिद्ध हुआ है कि माइक्रोटीचिंग तकनीक मीडिया की सहायता की कमी की स्थिति में भी लागू की जा सकती है। माइक्रोटीचिंग आधारित प्रशिक्षण तकनीकी शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान साथ ही प्राथमिक एवं उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिये लोकप्रिय साबित हुए हैं।

5.5 दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री तथा मास मीडिया पर अनुसंधान (Research on Audio Visual Aid and Mass Media)

दृश्य श्रव्य सहायता शैक्षिक तकनीक का एक अंग निर्मित करती है। शैक्षिक तकनीक में माँस मीडिया की लोकप्रियता और शिक्षा में इसकी क्षमता को अध्ययन का प्रमुख केन्द्र बनाया गया है।

दृश्य श्रव्य सहायता एवं मीडिया पर विभिन्न प्रकार के अध्ययन 70 के दशक के अंत से आयोजित हुए हैं। अधिकांश अध्ययन 80 के दशक के दौरान तथा उसके पश्चात् आयोजित हुए हैं जैसे बसु (1991), बेहरा (1991), भट्ट एवं पाण्डेय 1991 बिसवाल 1982, CET (083) चक्रवर्ति (1982),CIET(1984) CIET(b)(1984) दानी रवेल (1991) धामेजा 1985, ETCEIL उड़ीसा 1990 ETCELL उडीसा 1977, गोयल 1982 गोयन 1984, गुप्ता एवं सरोहा 1990 जायसवाल 1991 जेम्स 1988 जोशी 1982 जोशी 1987 जोशी 1991 रानाडे (1992) कौर 1981 मलिक (1991) मिश्रा 1988 मिश्रा (1989) मोदी (1978) मोहंती 1976, मोहंती 1984 मोहंती एवं गिरी (1984) मोहंती एवं मोहंती (1987), मोहंती एवं बेहरा (1965) नागराज (1982) नागराज एवं रामकुमार (1982) ओबेराय (1985) पेगोनकर (978) पासी (1980) पासी (1992) फुतेला (1980) रहमारी (1977) साहू (1991) सामंत (1983) सेल्ताम (1982) से. (1983) शाह (1973) सिंह एवं शुक्ला (1980) सिंह एवं सिंह (1974) सिंह 1985 सिंह (1991) सिंह एवं उमरे (1991) सूद 1982, श्रीवास्तव (1974) श्रीवास्तव 1991, सुदाम बिसवाल एवं साहू (1982) सुदाम एवं गोयल (1988) विमराजू एवं जायसवाल (1991) वाद (1984) और यादव (1988)।

5.5.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु (Main Points)

इस क्षेत्र में अध्ययन निम्नांकित बिन्दुओं के अन्तर्गत हुए हैं जैसे

1. दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री का उपयोग, टीवी. एवं रेडियो, विद्यालय एवं कॉलेज तथा विश्वविधालय स्तर पर, शिक्षक प्रशिक्षण विभिन्न चरण तथा समाज, शिक्षा कार्यक्रम।
2. दृश्य श्रव्य सामग्री विभिन्न घटकों के साथ शिक्षण निर्देशन पैकेज की प्रभावशीलता का अध्ययन।
3. शैक्षिक रेडियो कार्यक्रमों प्रसारण की प्रभावशीलता का अध्ययन रेडियोविजन वीडियो कैसेट प्रोग्राम, शैक्षिक टीवी. कार्यक्रमों की प्रभावशीलता।
4. रेडियो टीवी. कार्यक्रमों में अन्तःक्रिया के लिए, निर्मित व्यूह रचना की प्रभावशीलता।
5. मीडिया आधारित शिक्षण निर्देशन के विभिन्न पहलू समस्या खोज, इसकी उपयोगिता, जैसा कि इसे सहभागियों श्रोता, शिक्षकों, शैक्षिक प्रशासकों पालकों समुदाय के सदस्यों द्वारा समझा जाता है।

5.5.2. मुख्य परिणाम (Result)

अभी तक दृश्य श्रव्य सहायक सामग्री की उपयोगिता के सम्बन्ध में विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों और अन्य विशेषज्ञ संस्थानों में जो अध्ययन सम्पन्न हुए हैं वे बहुत ज्यादा कारगर या विश्वसनीय नहीं है। यह दर्शाया गया है कि महाविद्याल स्तर पर जो दृश्य श्रव्य सामग्री उपयोग होती है उसका उपयोग एवं मूल्यांकन प्रारम्भिक विज्ञान तथा मानविकी विज्ञानों के सम्बन्ध में न्यून रहा है। तथा कृषि महाविद्यालयों, पशुचिकित्सा महाविद्यालय तथा मत्स्यपालन महाविद्यालयों में उच्च स्तरीय रहा है। दृश्य श्रव्य सामग्री तथा शिक्षकों की योग्यता, अनुभव तथा प्रशिक्षण स्तर में सम्बन्ध सार्थक पाया गया। दृश्य श्रव्य सामग्री का ज्ञान उसे विकसित करने के लिये सामग्री की उपलब्धता प्रशासनिक प्रोत्साहन तथा अनुसरण आदि सभी बिन्दु सकारात्मक रुप से दृश्य श्रव्य सामग्री के उपयोग से संबंधित पाए गए। दृश्य श्रव्य मल्टी मीडिया पैकेज के उपयोग से सम्बन्धी विकासात्मक अध्ययन शिक्षण लक्ष्यों को प्राप्त करने के सम्बन्ध में सकारात्मक परिणाम दर्शाते हैं। स्वनिर्देशित श्रव्य कैसेट (सेल्फ इंस्ट्रकशनल ऑडियो कैसेट), शिक्षण कौशल विकास में उदाहरण की व्याख्या करने तथा समझाने में प्रभावी पाए गए। विभिन्न वीडियो कैसेट विकसित किये गये ताकि उनसे शिक्षक प्रशिक्षक को प्रशिक्षित किया जा सके इस सम्बन्ध मे शिक्षण प्रतिमान अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन में प्रभावी पाया गया। प्रोग्राम स्लाईडस का एकीकरण, प्रोग्राम निर्देशन सामग्री, दृश्य सहायक सामग्री आदि विद्यार्थियों के लिये व्यावसायिक शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रमों में सहायक सिद्ध हुए।

विद्यालय हेतु रेडियो प्रसारण कार्यक्रमों पर अध्ययन आयोजित हुए उनसे यह लक्ष्य प्रकट हुआ कि इन कार्यक्रमों के उपयोग के सम्बन्ध में विद्यालय स्तर पर अपनी सीमाऐं हैं। इन कार्यक्रमों के उपयोग के मार्ग में निम्न तथ्य बाधक पाए गए जैसे शिक्षकों द्वारा इस सम्बन्ध में रुचि न लेना, कक्षा की परिस्थितियों में इन कार्यक्रमों के उपयोग के सम्बन्ध में शिक्षकों को पर्याप्त प्रशिक्षण न होना उत्पादन इकाई तथा प्रसारण इकाई मे समन्वय न होना आदि। दूरस्थ शिक्षण सस्थानों द्वारा रेडियो प्रसारण कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रयास किये गये। प्रसारण कार्यक्रम की उपयोगिता के सम्बन्ध में हुए अनुसंधान कार्य सकारात्मक परिणाम दर्शाते हैं। सहभागी विद्यालयी प्रसारण कार्यक्रम के संबन्ध में सकारात्मक दृष्टिकोण दर्शाते हैं। (रेडियो बेस्ड इंस्ट्रक्शन प्रोग्राम) पर हुए प्रयोगात्मक अनुसधान कार्य, उत्साहवर्धक परिणाम दर्शाते हैं। सभी अध्ययनों में यह पाया गया कि रेडियो प्रोग्राम के द्वारा दिये गये शिक्षण निर्देशों के परिणाम सार्थक रहे हैं। रेडियो विजवल एवं रेडियो कार्यक्रम परमपरागत शिक्षण विधियों की तुलना में अधिक प्रभावी रहे हैं। उपलब्धि के संदर्भ में भी ये कार्यक्रम प्रभावी पाए गए है।

शैक्षिक दूरदर्शन के उपयोग के सम्बन्ध में हुए अनुसधान कार्य दर्शाते हैं कि इनके विषय आधारित विद्यालय, महाविद्यालय स्तर के कार्यक्रम सकारात्मक परिणाम नहीं दर्शाते। इनके मार्ग में निम्न बिन्दु बाधक पाए गए विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तर पर शैक्षिक दूरदर्शन सुविधा का उपलब्ध न होना रख-रखाव सम्बन्धी समस्याएं शैक्षिक दूरदर्शन का समय चक्र ठीक न होना, शैक्षिक दूरदर्शन समझने की समस्या, बिजली की समस्या, अधिकांश कार्यक्रमों का पाठ्यक्रम आधारित न होना।

विद्यालय महाविद्यालय प्रशासन द्वारा पर्याप्त रुचि न ली जाना। विभिन्न रुकावटों के बाद भी अधिकांश दर्शकों द्वारा उसकी उपयोगिता आंकी गई है। इनकी विषय को स्पष्ट करने की क्षमता को आंका गया है। जो कार्यक्रम कक्षा शिक्षण की तरह होते हैं वे कम प्रभावशील पाए गए हैं। IGNOU द्वारा निर्मित शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम उच्च कोटि के पाए गए हैं। अधिकांश शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम जो शिक्षक प्रशिक्षण हेतु निर्मित किये गये हैं वे ज्ञान, सजगता तथा कौशल जैसे घटकों को समाहित किये रहते हैं। अधिकांश शिक्षकों द्वारा इन कार्यक्रमों को शिक्षण कौशल विकसित करने में सहायक माना गया है। जो कार्यक्रम समाज समुदाय, शिक्षण के दृष्टिकोण से बनाए गए हैं वे ज्ञान तथा सजगता के दृष्टिकोण से सार्थक साबित हुए है।

समस्त प्रयोगात्मक अध्ययन जो शैक्षिक दूरदर्शन पर केन्द्रित हैं विद्यालयी एवं महाविद्यालय स्तर पर सकारात्मक परिणाम दर्शाते हैं। उपलब्धि एवं शिक्षण निर्देशन की दृष्टि में वे सकारात्मक. निर्देशात्मक इनपुट जो कि अन्तःक्रिया मोड में समाहित है वह प्रभावी सिद्ध हुआ है। टॉकबेक टीवी. कार्यक्रम जो टॉकबेक रहित टीवी. कार्यक्रम के वनस्पति ज्यादा प्रभावी सिद्ध हुए है। राष्ट्रव्यापी प्रयोग टॉकबेक पर राष्ट्रीय स्तर के कक्षात्मक कार्यक्रम के द्वारा, उसके द्वारा सुधरे हुए परिणाम प्राप्त हुए है। अन्तःक्रिया के सम्बन्ध में दर्शक जोकि देश के विभिन्न हिस्सों में हैं। उनके एवं विषय के ज्ञाता विशेषज्ञों के मध्य जो कि दिल्ली के अर्थ स्टर्सान स्टूडियों में उपलब्ध हैं उनके बीच अन्तःक्रिया सम्बन्धी सुधरे हुए परिणाम प्राप्त हुए हैं। इस सम्बन्ध में CWCR के सम्पर्क में आए विद्यार्थियों ने स्वीकृति जाहिर की है तथा विद्यार्थियों एवं विशेषज्ञों के बीच टॉकबेक सुविधा उपलब्ध हुई है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. उन माध्यमों (मीडिया) के नाम लिखिये जिनके द्वारा सूक्षम शिक्षण को एकीकृत किया गया है?
2. भारत मे P.L.M. की प्रभावशीलता किस संदर्भ मे प्रभावशाली हुई है?
3. मीडिया हुए अनुसन्धान अध्ययनों मे प्रमुख अध्ययन केन्द्र बिन्दु क्या थे?

5.6 मल्टी मीडिया विधियों पर अनुसंधान कार्य और मास्ट्री लर्निंग (Mastry Learning and Research on Multi Media Methods)

सिस्टम एप्रोच को प्रयोग में पठन-पाठन स्थितियों के लिये विभिन्न विधियों के समन्वय की आशा होती है। भारत में इस क्षेत्र में जो अध्ययन हुए हैं उन्हें क्रमानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है।

सनसनवाल (1978) अंकलेश्वरिया (1980) शाह (1980) बसु (1981) सनसनवाल एवं जोशी (1981) मह (1982) मल्होत्रा (1982) रविन्द्रनाथ (1982) होडा (1983) कल्याण (1983) सिंग (1983) वर्धनी (1983) अजमेरी (1984) चन्द (1984) और यादव (1984)।

5.6.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु (Main Points)

मल्टीमीडिया पेकेज निर्देशन के लिये जिनमें निम्नांकित घटक सम्मिलित हैं जैसे PLM सुनियोजित व्याख्यान, टीम टीचिंग, सेमिनार्स, वर्कबुक प्रेजेन्टेशन, चर्चा, पुस्तकालय कार्य, एसाइनमेंट फीडबेक सेशन, प्रायोगिक कार्य, सामग्री का सारांश आदि। इनमें अधिकांश का उद्देश्य मास्टरी लर्निग है। अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु निम्नानुसार है.

1. शिक्षण अनुदेशन के साथ मल्टीमीडिया पेकेज विकसित करना।
2. निम्नांकित संदर्भ में मल्टी मीडिया पेकेज का अध्ययन करना। सीखने का उद्देश्य, क्राइटेरियन रेफरेन्स टेस्ट एवं मास्टरी लर्निग। इसकी किसी एक मीडिया या विधि से तुलना जोकि अपरिवर्तनीय पारम्परिक कक्षा शिक्षण, विद्यार्थियों एवं प्रशिक्षकों की प्रतिक्रिया दर्शाता है।
3. वैकल्पिक मल्टी मीडिया पेकेजों की प्रभावशीलता जिनमें विभिन्न विषयों का समन्वय निहित है। विशिष्ट शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये मल्टी मीडिया का उपयोग मास्टर लेवल पर।
4. आर्थिक दृष्टि से मल्टी मीडिया पेकेज का अध्ययन।
5. शिक्षार्थी के गुणों एवं विशेषताओं का अध्ययन करना। मल्टी पेकेज के उपयोग द्वारा प्राप्त उपलब्धियों का अध्ययन।

5.6.2 मुख्य प्राप्ति (Result)

समस्त अध्ययनों में मल्टीमीडिया विधि प्रभावशाली पाई गई इसकी प्रभावशीलता शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने के संदर्भ में देखी गई। मास्टर लेवल लर्निग का परिणाम 75 से 80% आधार पर देखा गया। सिस्टम डिजाईन लर्निग पेकेज अपेक्षाकृत ज्यादा प्रभावी पाए गए थे। आकस्मिक रुप से निर्मित लर्निग पेकेजों की तुलना में अधिक प्रभावी थे। अपेक्षित परिणाम को पाने के सन्दर्भ में विधि और मीडिया का समन्वय प्रभावशाली पाया गया विशिष्ट शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से विभिन्न मल्टीमीडिया पेकेज, विभिन्न स्तरों पर प्रभावशाली पाए गए। उदाहरण स्वरुप गृह विज्ञान शिक्षण की व्यूह रचना में PLM+ प्रयोगशाला प्रदर्शन चर्चा ज्यादा प्रभावशाली पाई गई। एक सुनियोजित व्याख्यान ब्लेकबोर्ड वर्क की तुलना में ज्यादा प्रभावशील पाया गया। इन समस्त अध्ययनों के संदर्भ मे मल्टीमीडिया पेकेज, परम्परागत विधियों किसी एक व्यक्ति की अपेक्षा, ज्यादा प्रभावशाली पाया गया मल्टीमीडिया पेकेज विद्यालय स्तर पर महाविद्यालय स्तर पर तथा शिक्षक प्रशिक्षण के विभिन्न चरणों में प्रभावशाली पाया गया। मल्टीमीडिया पेकेज के द्वारा उपलब्धि में बुद्धिमत्ता का प्रभाव, सार्थक नहीं पाया गया। इसका तात्पर्य यह है कि यह तथ्य स्थापित करता है कि मास्टर लर्निग सामान्य विद्यार्थियों में या विभिन्न बौद्धिक स्तर के ' विद्यार्थियों में मल्टीमीडिया पेकेज उपयोग कर लाई जा सकती है। मल्टीमीडिया पेकेज समय और आर्थिक दृष्टि से भी प्रभावी पाए गए।

5.7 शिक्षण प्रतिमान में अनुसंधान कार्य (Research on Model of Teaching)

80 के दशक में सम्पन्न हुए संस्थागत परियोजना स्तर पर आयोजित अध्ययनों को निम्नानुसार विचारबद्ध किया जा रहा है।

भारतीय परिवेश में पी.एच.डी. स्तर पर निम्नलिखित अध्ययन सम्पन्न हुए चित्रिव (1983) बुद्धिसागर (1986) घोस (1986) पाण्डे (1986) पासी, सिंग एवं सनसनवाल (1986,87,88) अवस्थी (1988) बावेरा (1988) पासी एवं सिंग (1988) मलिक (1989) मल्होत्रा (1989) मार्टिन (1989) मानोआ (1990) सिंग 991.

5.7.1 मुख्य केन्द्र बिन्दु (Main Point)

निम्नांकित बिन्दुओं पर केन्द्रित अध्ययन सम्पन्न हुए। विभिन्न शिक्षण प्रतिमानों की प्रभावशीलता का अध्ययन जैसे एडवांस आर्गेनाइजर मॉडल, कान्सेप्ट अटेन्मेंट मॉडल, कागनेटिव ग्रोथ मॉडल, जूरिस प्रुडेंसियल इन्कवायरी मॉडल अपरेन्ट कन्डिशनिंग मॉडल, सायनेटिक मॉडल एवं वेल्यू डिस्कशन मॉडल।लर्नर्स एचिवमेंट के सन्दर्भ में एवं शिक्षक एव शिक्षार्थी की प्रतिक्रिया के सन्दर्भ में -

शिक्षक प्रशिक्षणार्थियों को विभिन्न मॉडलस ऑफ टीचिंग से परिचित करवाने हेतु प्रशिक्षण व्यूह-रचना विकसित करना तथा प्रशिक्षणार्थियों में यह क्षमता विकसित करना कि वे विभिन्न मॉडल ऑफ टीचिंग का उपयोग कर सकें।

5.7.2 अध्ययन के मुख्य परिणाम (Result)

शिक्षण प्रशिक्षण कार्यक्रम के सन्दर्भ में उपयुक्त व्यूह रचना विकसित की गई जिससे कि सेवा पूर्व शिक्षकों को विभिन्न मॉडलस ऑफ टीचिंग के लिये प्रशिक्षित किया जा सके। विभिन्न मॉडलस ऑफ टीचिंग का अध्ययन किया गया जो निम्नानुसार है -

इनक्वायरी ट्रेनिंग, प्रीकान्सेप्ट अटेन्मेंट सिनेटिक्स, जूरिसप्रूडेन्स, इन्क्वायरी तथा वेल्यू डिस्कशन मॉडल।

अध्ययन से यह तथ्य प्रकट हुआ कि प्रशिक्षण कार्यक्रम का सकारात्मक प्रभाव हुआ तथा यह पाया गया कि इसके द्वारा प्रशिक्षणार्थियों ने संदर्भित मॉडल पर दक्षता प्राप्त की। साथ ही प्रशिक्षण में न सिर्फ संदर्भित मॉडल में दक्षता प्राप्त की बल्कि साथ ही विभिन्न स्तरों पर ज्ञान भी अर्जित किया, तथा इसकी मान्यताओं एवं लक्ष्यों को प्राप्त किया। तथा इस योग्यता को कक्षा शिक्षण के द्वारा हस्तांतरित कर सकने की शिक्षा दी।

विशिष्ट अधिगम परिणाम को विभिन्न मॉडल्स के साथ संयुक्त किया गया है - एडवांस आर्गेनाइजर मॉडल, तत्काल एवं विलम्बित अधिगम को सुलभ बनाता है। अधिगम सामग्री के संयोजन में मॉडल्स के सिद्धांत प्रयुक्त होते है। ये एडवांस आर्गेनाइजर उतने ही प्रभावशील

थे जितने कि पी. एल.एम., कान्सेप्ट अटेन्मेंट मॉडल, अपेक्षित अधिगम के सन्दर्भ में प्रभावशील पाये गये।

मॉडल का सलेक्शन तथा व्यूह रचना में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। यह तथ्य उपलब्धि स्कोर के सन्दर्भ में पाया गया। शिक्षण उद्देश्यों के सन्दर्भ मे इनक्वायरी ट्रेनिंग मॉडल प्रभावशील पाया गया। साथ ही विद्यार्थियों में मूल्य सजगता विकास के सन्दर्भ में भी यह प्रभावशाली पाया गया।

वेल्यू डिस्कशन मॉडल निम्नांकित संदर्भ में प्रभावी पाया गया जैसे मूल्य स्पष्टता और इसके विभिन्न आयाम, वेल्यू जजमेंट ऑफ लर्नर्स, डेवलपमेन्ट ऑफ सेल्फ कांसेप्ट, सामाजिक संयोजन और शैक्षिक संयोजन के संदर्भ में।

समस्त अध्ययन के संदर्भ में शिक्षार्थियों द्वारा मॉडल के संदर्भ में सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की गई। प्रशिक्षण एवं शिक्षार्थियों के द्वारा विभिन्न मॉडलों के द्वारा सीखने की इच्छा व्यक्त की गई। शिक्षण के परिणामों के संदर्भ में मॉडलस परम्परागत विधियों की तुलना में अधिक प्रभावी पाए गए वेल्यू डिस्कशन मॉडल के प्रयोग से परिस्थितियों को सकारात्मक रुप से प्रभावित किया जा सका। प्रशिक्षणार्थियों द्वारा कक्षा शिक्षण के दौरान मॉडल के द्वारा अध्ययन करने के संदर्भ में मिश्रित प्रतिक्रिया व्यक्त की गई।

5.8 कम्प्यूटर एडेड एज्यूकेशन में अनुसंधान (Research on Computer Aided Instruction)

इस दिशा में उभरते हुए क्षेत्र :

कम्प्यूटरीकृत शिक्षण निर्देशों के सन्दर्भ में अनुसंधान - CAI.

शैक्षिक तकनीक में यह उभरता हुआ अनुसंधान है। आज दिनांक तक कुछ मुठ्ठीभर अनुसंधान कार्य ही इस क्षेत्र में हुए हैं। ये अध्ययन पीएच.डी. स्तर पर हुए हैं। जैसे साई लाजा (1986) गुप्ता (1988) बेरयाह (1989) प्रभाकर (1989) महापत्र (1990) एवं महाजन (1992)

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन

गोयल, जोसफ एवं शिन्दे (1994),,,जोशी,एवं महापात्र (1995), महाजन (1994), शाह व अग्रवाल (1994), बिसवाल (1995), रंगराज (1997) ने अध्ययन किये हैं । इन अध्ययनों में इन्टरनेट (Internet), वीडियो कॉनफ्रैन्सिंग (Video Conferencing) व वर्चुअल टीचिंग (Virtual Teaching) प्रभाव पर अध्ययन नहीं किये गये हैं । शोध अध्ययनों में कम्प्यूटर के परम्परागत प्रयोग पर ही केन्द्रित रहे है।

5.8.1 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points)

आपको विदित ही है कि कम्प्यूटर परिचय विद्यालय स्तर पर क्लास प्रोजेक्ट के नाम से 1984 के दौरान सैकण्ड्री स्तर के विद्यालयों में एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा करवाया गया। NCERT द्वारा इस सम्बन्ध में शिक्षकों की प्रतिक्रिया जानने एवं फीडबेक प्राप्त करने के

उद्देश्य से प्रयास किये गये। इस सम्बन्ध में एक अनुसंधान कार्य हुआ जिसके अन्तर्गत क्लास प्रोजेक्ट का विद्यालय स्तर पर अध्ययन किया गया।

इस क्षेत्र में निम्नांकित अध्ययन बिन्दुओं के अन्तर्गत अध्ययन किये जा रहे हैं -

1. CAI सॉफ्टवेयर विकसित करना, ये सॉफ्टवेयर विभिन्न विषयों में विकसित किये जाने हैं। ये अध्ययन स्कूल व कॉलेज स्तर पर किये जा रहे हैं।
2. इस विकसित सामग्री की प्रभावशीलता को उपलब्धि शिक्षक एवं विद्यार्थियों की प्रतिक्रिया के संदर्भ में अध्ययन किया जाना है।
3. CAI का प्रचलित विधियों के साथ तुलनात्मक अध्ययन करना, कम्प्यूटर का विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग जैसे दैनिक अध्यापन, शैक्षिक प्रबन्ध, तथा निर्देशन गतिविधि।

5.8.2 अध्ययन के प्रमुख परिणाम (Result)

इस सम्बन्ध में जो भी अध्ययन हुए वे CAI की प्रभावशीलता उपलब्धि तथा शिक्षण उद्देश्य के दर्भ में स्थापित करते है, साथ ही CAI सामग्री परम्परागत शिक्षण विधियों के तुलना में श्रेष्ठ साबित हुई है। सभी मामलों में उच्च स्तरीय अधिगम पाया गया।

एक अध्ययन के संदर्भ में यह पाया गया कि कम्प्यूटर आधारित प्रवेश परीक्षा ज्यादा व्यावहारिक समय एव सुविधा के सम्बन्ध में पाई गई। इस परीक्षण के संदर्भ में शिक्षार्थियों की प्रतिक्रिया सकारात्मक पाई गई।

मूल्यांकन उद्देश्य से कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर उपयुक्त पाया गया। कम्प्यूटर शिक्षा में डिप्लोमा के लिये जो सॉफ्टवेयर पैकेज विकसित किया गया वह उपर्युक्त सुलभ तथा लागत एवं तकनीकी दृष्टि से उपयुक्त पाया गया।

अध्ययन ये दर्शाते हैं कि स्कूली विद्यार्थी कम्प्यूटर कक्षाओं में रुचि लेते हैं। शिक्षार्थियों में इसके द्वारा स्वयं सीखने की लगन, कम्प्यूटर का पूर्ण उपयोग करना तथा सीखने में रुझान प्रदर्शित करना आदि तथ्य प्रदर्शित किए गए हालांकि कम्प्यूटर कक्षाऐं संचालित करने के लिये प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध नहीं है। अधिकांश शिक्षक अपने कार्य के बारे में शिक्षा व्यूह रचना के संदर्भ में आत्मविश्वास पूर्ण नहीं है। सारांश में यह कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र में इतने कम अध्ययन हुए हैं कि किसी भी तथ्य का सामान्यीकरण नहीं किया जा सकता।

5.9 दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्रों में अनुसंधान (Research on distance Education)

इस क्षेत्र में 80 के दशक मे अनुसंधान कार्यो को गति मिली। अधिकांश अध्ययन परियोजना के रुप में आयोजित किए गए। 15 अध्ययन पी.एच.डी. स्तर पर किये गये। इन अध्ययनों को क्रमानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है।

मुलिक (1964) सशी (1972) दत्त (1978) आनन्द (1979) बिस्वाल (1979) माथुर (1979) सैनी (1979) सिंग (1979) पाण्डा (1989) पाण्डे (198०) राव (1980) सिंग (1980)

देवाल (1982) गोमथी (1982) खान (1982) कौल (1982)नागराज (1982) पिल्लई एवं मोहन (1983) सिंग (1983) दत्त (1984) वैदेही (1984) गुप्ता (1985) इन्द्रदेवी (1985) साहू (1985) (a) साहू (1985) b बाला सुरामनियम (1986) बहु गुना(1986) कुमार (1986) माण्डे एवं पाण्डा (1986) रेड्डी (1986) सुदमे एवं पुगाजन्थी (1988) यूजीसी (1986) दत्त (1987) साहू (1988) साहू एवं मह (1987) दत्त (1988) मिश्रा (1988) मुखोपाध्याय एवं सुजात (1988) साहू (1988) सिंग (1988) यादव एवं शर्मा (1988) मिश्रा (1989) पिल्लई (1ऊ989) समपथी (1989) पाण्डे (1990) त्यागी (1990) देवी (1991) मिश्रा (1991) श्रीवास्तव (1991) मुगाजने थी (1992).

5.9.1 अध्ययन के प्रमुख केन्द्र बिन्दु (Main Points)

उपरोक्त अध्ययनों के अन्तर्गत दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न पहलुओं को समाहित किया गया जैसे दूरस्थ शिक्षा प्रबंध शिक्षार्थी की विशेषताएँ, शिक्षक की विशेषताऐं पाठ्यक्रम सामग्री, मीडिया और स्वय अध्ययन गतिविधियाँ विद्यार्थी सहायक सेवाऐं, मूल्यांकन प्रतिक्रिया उपलब्धि, दूरस्थ शिक्षा में दीर्द्यकालीन, आर्थिक पहलुओं का अध्ययन आदि। इस क्षेत्र में विभिन्न प्रकार के अध्ययन आयोजित किए गए हैं। कुछ अध्ययन दूरस्थ शिक्षा के विभिन्न पहलुओं के क्षेत्र में किये गये हैं जबकि अधिकांश अधिकांश किसी एक अवधारणा या कुछ सीमित अध्ययनों उद्देश्यों को लेकर किये गए हैं।

समग्र प्रणाली की अध्ययन दूरस्थ शिक्षा की प्रभावशीलता जो इसमें सम्मिलित सहभागियों द्वारा समझी गई है। दूरस्थ शिक्षा की प्रभावशीलता अन्य विधियों की तुलना में, जैसे नियमित पाठ्यक्रमों की तुलना में उदाहरण स्वरुप परिणामों की तुलना, लागत की तुलना, तथा प्रभावशीलता के संदर्भ में तथा दूरस्थ शिक्षा का तात्कालिन तथा दीर्द्यकालिक प्रभाव।

5.9.2 प्रमुख परिणाम (Results)

दूरस्थ शिक्षा में विभिन्न पहलुओं के आधार पर हुए अध्ययन निम्नानुसार तथ्य प्रकट करते हैं। स्वशासी दूरस्थ शिक्षा संस्थानों का परिचय। जैसे ओपन विश्वविद्यालय, ओपन स्कूल, इसके अन्तर्गत यह पाया गया कि परम्परागत संस्थानों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा, दूरस्थ शिक्षा संस्थानों द्वारा दी जाने वाली शिक्षा को आच्छादित करती है। दूरस्थ शिक्षा के कार्यक्रम बाईमॉडल द्वारा संचालित होते हैं। यह भी पाया गया कि पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त न होने से दूरस्थ शिक्षा के कार्यक्रम भी परम्परागत शिक्षा संस्थानों की तरह होते हैं। यह अनुमानित है कि सन् 2001 तक दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों में विस्तार होगा तथा उच्च शिक्षा स्तर तक 10 से 35 लाख विद्यार्थी इसके दायरे में आ जाएंगे।

दूरस्थ शिक्षा में सम्मिलित होने वाले विद्यार्थियों में अपनी योग्यता को बढाना तथा अध्ययन को जारी रखने की इच्छा, प्रेरक का कार्य करती है। इसमें विद्यार्थी उम्र, व्यवसाय, अनुभव, भौगोलिक परिवेश की दृष्टि से भिन्नता लिये हुए होते हैं तथा दूरस्थ शिक्षा में उनके

सम्मिलित होने के उद्देश्य भी अलग-अलग होते हैं। इसमें बीच में शिक्षा छोड़ देने वालों की संख्या अधिक होती है। व्यक्तिगत कारणों से, शैक्षिक कारणों से अथवा संस्थागत समस्याओं के कारण भी ऐसी समस्याएँ पैदा होती है।

दूरस्थ शिक्षा के अधिकांश पाठ्यक्रम अनुदेश मुद्रण माध्यम पर निर्भर करते हैं अर्थात ये छपी हुए सामग्री होती है। दूरस्थ शिक्षा संस्थान सुनियोजित स्वयं अध्ययन सामग्री PLM मॉडल आदि का भी उपयोग करते हैं। अधिकांश शिक्षार्थी छपी हुई सामग्री का ही उपयोग करते हैं। इन पाठ्य सामग्रियों में विषय वस्तु की अधिकता, संदर्भ ग्रन्थों का उल्लेख पाठों का अंग्रेजी माध्यम में होना, पाठों के डाक प्रेषण में अनियमितता आदि कठिनाई देखी जाती है।

लिखित एसाइनमेन्ट द्विमार्गी सम्प्रेषण को सुलभ बनाता है यद्यपि इनके प्रस्तुतीकरण में अनियमितता हो जाती है। कई बार इनके मूल्यांकन पुन प्रेषण छात्रों द्वारा गम्भीरता से नहीं लेना आदि समस्यायें बनी रहती हैं। फिर भी शिक्षार्थी कार्य को पसन्द करते हैं ये उन्हें प्रेरित करते हैं तथा उनकी परीक्षा तैयारी में सहायक होते हैं। प्रबन्ध की दृष्टि से ये कार्य शिक्षकों को भी समुचित कार्यभारित करते है।

भारतीय परिवेश में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम दूरस्थ शिक्षा में विशिष्ट स्थान रखता है। ओपन विश्वविद्यालय अपने क्षेत्रीय स्थानीय अध्ययन केन्द्र अवकाशकालीन कक्षाऐं अभी भी संचालित करती है जो शिक्षार्थी सम्पर्क को सुलभ बनाते है। परम्परागत दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों में सम्पर्क कार्यक्रमों में शिक्षार्थियों की उपस्थिति 10 से 80% तक परिवर्तनशील होती है। विश्वविद्यालय स्तर पर व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम निम्न संदर्भों में उपयोगी पाए गए हैं। जैसे अपने संदेहों को दूर करने में, समूह अन्तःक्रिया में, परीक्षा की तैयारी एवं प्रेरणा हेतु दूरस्थ शिक्षा में व्यक्तिगत सम्पर्क कार्यक्रम जो विद्यालय स्तर पर आयोजित हुए हैं वे प्रभावी नहीं पाए गए हैं इन कार्यक्रमों के सम्बन्ध में सुधार सम्बन्धी निम्न सुझाव दिए गए है जैसे शिक्षार्थियों को समय पर सूचना एवं सम्प्रेषण, सही क्षेत्र एव स्थान का चयन किया जाना। विभिन्न संसाधनों मीडिया एवं विधियों का समुचित समन्वय किया जाना ताकि समूह अन्तःक्रिया (Interaction) विकसित हो सके। बहुत से विश्वविद्यालयों ने इस दिशा में प्रभावी कार्य किया भी है।

विभिन्न माध्यमों जैसे रेडियो टीवी. श्रव्य कैसेट आदि का दूरस्थ शिक्षा में अपना स्थान है हालांकि परम्परागत दूरस्थ शिक्षा संस्थान इनकी उपेक्षा कर देते है। फिर भी IGNOU के टेलीविजन कार्यक्रमों ने शिक्षार्थियों पर सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न किया है परन्तु मीडिया सुविधा उपलब्ध होने के बावजूद भी वे इसका पर्याप्त उपयोग नहीं कर सके हैं।

दूरस्थ शिक्षा का अपेक्षित परिणाम उत्तीर्ण शिक्षार्थियों की दृष्टि से व्यापक रहा है यद्यपि दूरस्थ शिक्षा की परीक्षाएँ नियमित पाठ्यक्रमों के परिणामों की तुलना में कमजोर रहे हैं। दोनों ही धाराओं के उत्कृष्ट उत्पादों को तुलना योग्य समझा जाना चाहिए। दूरस्थ शिक्षा के पाठ्यक्रमों की दीर्घकालिक सामाजिक उपयोगिता है। ये समाज की आवश्यकता की पूर्ति

करते है। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को इसके उत्पादों में व्यावसायिक उपलब्धि की दृष्टि से देखा गया है।

दूरस्थ शिक्षा में सलंग्न शिक्षकों की पृष्ठभूमि भी विविध पाई गई हैं। हालांकि पाठ्यक्रम निर्माण से लगाकर उसके मूल्यांकन तक की गतिविधियाँ प्राय: उन शिक्षकों पर निर्भर करती है जो नियमित पाठ्यक्रमों मे कार्यरत होते हैं। परन्तु प्रत्येक दूरस्थ शिक्षा मे इस हेतु विशिष्ट इकाई होती है।

इसमें जो समस्यायें आती हैं उनमे कुछ प्रमुख है जैसे शिक्षण गतिविधियों में व्यक्तित्व प्रभाव का अभाव, व्यवसाय के प्रति प्रेरणा का अभाव, पर्याप्त स्वतंत्रता का न होना, शैक्षिक एवं व्यावसायिक गतिविधियों के लिए अवसरों का कम होना, इस तरह के बिन्दुओं को इस दिशा में उभारा गया है।

यह पाया गया है कि जिन शिक्षार्थियों ने इस प्रणाली से अध्ययन जारी रखा है उन्होंने इसके पक्ष मे राय जाहिर की है। विभिन्न चर जैसे लिंग, रोजगार आदि दूरस्थ शिक्षा के प्रति, सार्थक प्रभाव रखते है। दूरस्थ शिक्षा में सलंग्न पूर्णकालीन शिक्षक इसके सम्बन्ध में सकारात्मक दृष्टिकोण हो रखते है। जबकि कुछ इस शर्त पर अपने कार्य को नियमित पाठ्यक्रमों के लिये बदलने को भी तैयार गए बशर्त उन्हें अवसर प्रदान किये जाऐ।

परम्परागत दूरस्थ शिक्षण संस्थानों मे व्यय की अपेक्षा आय आदि पायी गयी इनकी आय का प्रमुख स्त्रोत विद्यार्थियों की फीस तक ही सीमित। अधिकांश मामलों में नियमित पाठ्यक्रमों की तुलना में दूरस्थ शिक्षा की इकाई लागत कम पाई गई तथा शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत लागत निजी लागत भी कम पाई गई। अर्थात प्रभाव की दृष्टि से दूरस्थ शिक्षा पाठ्यक्रम प्रभावी पाए गए है।

5.10 अध्ययनों द्वारा जिन क्षेत्रों को समाहित किया गया उनका अवलोकन

इनका प्रयुक्त होना, कमियाँ और प्राथमिकता क्रम आपने देखा होगा कि प्रोग्राम लर्निग तथा प्रशिक्षण तकनीक के क्षेत्र में बहुत अनुसधान कार्य हुए हैंPLM पर हुए अनुसधान कार्य दर्शाते हैं कि PLM कक्षा परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न रुपों में सफल रहे हैं। हालांकि सेमी प्रोग्राम आधारित पाठ्य जो दूरस्थ शिक्षा मे उपयोग किए जाते हैं इन पर अनुसंधान कार्य नहीं हुए हैं। इस बात की आवश्यकता बनी हुई है कि प्रोग्राम एवं सेमी प्रोग्राम पाठ्य की प्रभावशीलता का स्कूल एवं कॉलेज स्तर पर बड़े पैमाने पर अध्ययन किया जावे।

शिक्षक व्यवहार परिवर्तन के सम्बन्ध में माइक्रोटीचिंग तथा अन्य विधियों की विश्वसनीयता स्थापित करने वाले अध्ययन हुए हैं। यह ज्ञात तथ्य हैं कि हर शिक्षक जन्मजात शिक्षक नहीं होता परन्तु हर शिक्षक को एक मानक स्तर तक दक्षता अर्जित करने की अनिवार्य आवश्यकता होती हैं। बेशक शिक्षण दक्षता, एक चर है जिसे समय-समय पर परिपुष्ट करना होता है इसे आधुनिक शैक्षिक तकनीक के योग से तथा अधिगम एवं शिक्षण परिवर्तन को

उन्नत बनाकर परिपुष्ट किया जाना होता है। यदि समस्त शिक्षकों को दक्षता विकास हेतु प्रशिक्षित किया जाना है तो इस दिशा में अनुसंधान बहुत ही महत्वपूर्ण होंगे अभी तक प्रशिक्षण के स्कंध में विद्यालय स्तर पर अधिक जोर दिया जाता रहा है या फिर प्रशिक्षण का जोर तकनीकी शिक्षण तक सीमित रहा है। उच्च शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा को शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में लाना अभी शेष है।

इस दिशा में और अधिक अनुसंधान हेतु सम्भावना बनी हुई हैं।

अनुसंधान के कई क्षेत्र हैं। जैसे मीडिया, मॉडल्स ऑफ टीचिंग, शिक्षा में कम्प्यूटर तथा दूरस्थ शिक्षा अनुसंधानों में मल्टीमीडिया के क्षेत्र में व्यापक बनाया जाना है। मल्टीमीडिया पर जो अनुसंधान कार्य हुए हैं उनका मुख्य केन्द्रीकरण शिक्षक प्रशिक्षण तथा स्कूली शिक्षा है। भविष्य में इसका केन्द्रीकरण शिक्षा में इलेक्ट्रॉनिक मॉडल पर होगा ऐसा अनुमान किया जाता है कम्यूनिकेशन तकनीक का शिक्षा में प्रवेश या समन्वय इस दिशा में होने वाले अनुसंधान कार्यो पर निर्भर करेगा। अग्रिम एवं उच्च स्तरीय मीडिया के लिए सॉफ्टवेयर निर्माण तथा उनकी प्रभावशीलता का अध्ययन तथा इनका कक्षाध्यापन में उपयोग दूरस्थ शिक्षा में उपयोगिता जैसे पहलू अनुसंधान के अंतर्गत आ सकेंगे।

शिक्षण एवं अधिगम परिस्थितियों में कम्प्यूटर की प्रभावशीलता ने शिक्षा तकनीशियनों को आकर्षित किया है। वे इसके उपयोग को निम्न हेतु प्रयुक्त कर रहे हैं। जैसे शिक्षण स्वअध्ययन, परीक्षा' प्रवेश चयन, पुस्तकालय कार्य, विद्यार्थी सम्बन्धी डाटा, अनुसंधान आदि। कम्प्यूटर शिक्षा कार्यक्रमों की प्रभावशीलता कुछ सीमित उद्देश्यों को लेकर अभी तक अध्ययन की गई है। इसके अन्य उपयोग का शिक्षा में लोकप्रिय होना आवश्यक है।

खुला विश्वविद्यालय की अवधारणा हाल में ही उभरी है तथा ओपन लर्निग गतिविधियाँ लोकप्रियता प्राप्त कर रही हैं। इसकी सामग्री का क्रमबद्ध विकास लिखित या अन्य रुपों में हुआ हैं| विद्यार्थी सहायता सेवा का विकास, इलेक्ट्रॉनिक आधारित शिक्षण निर्देशन अनुदेशन आदि को ओपन लर्निग के घटक के रुप में सम्मिलित किया जाना है। अत: इसके विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान आवश्यक हैं।

5.11 शैक्षिक तकनीकी में विधि के पहलुओं पर अनुसधान कार्यो का अवलोकन

व्यापक रुप से इस क्षेत्र में तीन प्रकार के अध्ययन हुए हैं (1) इस श्रेणी में अनुदेशन सामग्री प्रशिक्षण कार्यक्रम आदि के विकास सम्बन्धी कार्य आते हैं। जिनमें शैक्षिक तकनीक के सिद्धांतों की अनुसरण किया गया है। इसलिये इन अध्ययनों में विभिन्न प्रकार की प्रयोगात्मक अनुसंधान डिजाईन प्रयोग की गई है।

(1) इस वर्ग के अन्तर्गत ओपिनियन सर्वे प्रतिक्रिया अध्ययन, एटीटयूड आदि कार्यक्रमों की प्रभावशीलता की अध्ययन, शिक्षार्थियों की प्रतिक्रिया, प्रबन्ध में शामिल, व्यक्ति कर्मियों की प्रतिक्रिया आदि सम्मिलित की जा सकती है।

(2) इस तृतीय वर्ग के अन्तर्गत जो अनुसंधान विधियाँ अपनाई गई हैं उनमें अर्द्ध प्रयोगात्मक पूर्वगामी प्रकृति अध्ययन शामिल किये गये हैं जैसे शिक्षार्थी की विशेषता, संस्थान की विशेषता, विभिन्न प्रकार की अनुदेशन सामग्रियों की प्रभावशीलता, उनसे प्राप्त उपलब्धियों आदि का अध्ययन सम्मिलित किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त आप विभिन्न विधियों के अध्ययन, विभिन्न पैकेजों के उपयोग सम्बन्धी की एक लम्बी श्रंखला पाएंगे।

षष्टम सर्वेक्षण में शैक्षिक तकनीकी से जुड़े अनुसंधान कार्यो में प्रारूप एवं Thrust में विविधता दिखाई है। परंतु अधिकांश शोध का केन्द्र बिन्दु जनसंचार रहा है। तथापि एडवान्सड आरगेनाइजरस शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन, व सूचना तकनीकी का पुस्तकालय में प्रयोग जैसे क्षेत्रों में भी कार्य हुआ है। विभिन्न विधियों की तुलना पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया, परन्तु आज ये प्रासंगिक नहीं है। शोध के नये केन्द्र बिन्दु इन्टरनेट की प्रभावशीलता, वरचुअल क्लासरूम, वरचुअल टीचिंग व वीडियों कॉनफ्रैन्सिंग पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

शोध एवं ज्ञान के संचरण की कमी भी महसूस की जा सकती है। शोध में समन्वय के अभाव के साथ-साथ प्रायोजित शोध का भी अभाव है। इस समन्वय में वुच द्वारा की गई टिप्पणी की शिक्षा में शोध की क्रियायें आज भी बिना किसी समन्वय के सम्पादित की जा रही हैं। नेशनल काउन्सिल फॉर एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रैनिंग, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग स्टेट काउन्सिल एजुकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रैनिंग को समन्वय की भूमिका अदा करनी होगी।

5.12 निष्कर्ष (Summary)

सार रूप में यह कहा जा सकता है कि शैक्षिक तकनीक के विभिन्न पहलुओं के विकास के साथ,इसमें अनुसंधान कार्य सम्पन्न होते रहे हैं। इस इकाई में आपने देखा होगा कि शैक्षिक तकनीक के हर पहलू को अनुसंधान ने सशक्त बनाया है। PLM ट्रेनिंग टेक्नोलॉजी अनुसंधान के सहयोग से ही परिपक्व हुई है। इसके अतिरिक्त अन्य उभरते हुए क्षेत्र जैसे दूरस्थ शिक्षा, माँस मीडिया, कम्प्यूटरीकृत अनुदेशन आदि भी अनुसंधान के द्वारा ही सम्पन्न हुए है।

शैक्षिक तकनीक में अग्रगामी विकास अनुसंधान के नए आयाम खोलेंगे।

स्वमूल्यांकन(Summary)

1. भारत मेंP.L.M. की प्रभावशीलता किस सन्दर्भ में प्रभावशीलता हुई है?
2. मीडिया पर हुए अनुसन्धान अध्ययनों में प्रमुख अध्ययन केन्द्रबिन्दु क्या थे?
3. दूरस्थ शिक्षा में कौन से घटक भारत मे इसकी सफलता के लिए जिम्मेदार बताये गये है?

5.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. बूच.एम.बी. (एड.) सर्वे आफ रिसर्च इन इज्यूकेशन: एम. एम. युनिवर्सिटी, बड़ोदा, 1972 (देखें ट्रेन्ड रिपोर्ड तथा अनुसंधान सारांश प्रोग्राम लर्निग PP और "आचिंग एण्ड टीचर बिहेवीअर्स") PP.
2. बूच.एम.बी.(एड.)सैकण्ड सर्वे ऑव रिसर्च इन इज्यूकेशन: एस.इ.आर.डी., बड़ोदा, 1978 (देखें ट्रेन्ड रिपोर्टस एण्ड एब्सट्रेक्टस ऑन" एज्यूकेशनल टेक्नोलॉजी" PP.314 & 413 और टीचिंग और टीचर बिहेविअर्स) PP.453
3. बूच.एम.बी.(एड.); थर्ड सर्वे ऑफ रिसर्च इन इज्यूकेशन: एन.सी.ई.आर.टी. न्यूदेहली, 1992 (देखें थर्ड रिपोर्टस और एब्सट्रेक्टस) - ऑन इ.टी. PP टीचिंग एण्ड टीचर बिहेवियर एण्ड टीचर एज्यूकेशन PP.
4. बूच.एम.बी.(एड.); फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन इज्यूकेशन: एन.सी.ई.आर.टी. न्यूदेहली, 1992 (देखें ट्रेण्ड रिपोर्टस एण्ड, एब्सट्रेक्टस ऑन एज्यूकेशनल टेक्नोलॉजी, पी.पी. एण्ड टीचिंग एण्ड टीचर बिहेवियर एण्ड टीचर एज्यूकेशन
5. मुखोपाध्याय एम.; रिसर्च ऑन इज्यूकेशनल टेक्नोलॉजी प्लानिंग एण्ड मेनेजमेन्ट इम्पलीकेशनस, मुखोपाध्याय, एम. (एड.) एज्यूकेशनल टेक्नोलॉजी ईयर बुक 1988,AIAET न्यू देहली 1989 PP.21-34
6. निरवल आस.एस., मलिक आर.एस. और सिंह एस.पी.; मीडिया टेक्नोलॉजी, एण्ड डेवलेपमेन्ट इन रुरल एरिया; सम् कोन्सेप्च्यूअल एण्ड एम्पीरियल कन्सीडरेशनस् इन मुखोपाध्याय, एम. AIAET न्यू देहली 1980 PP.21-34
7. बुच. एम.बी एन.सी.ई.आर.टी., न्यू देहली, फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एज्यूकेशन।
8. साहू पी.के.रिसर्च इन डिस्टेंस एज्यूकेशन इन इन्डिया ए ट्रेन्ड रिपोर्ट इन मुखोपाध्याय एम. (एड) एज्यूकेशनल टेक्नोलॉजी ईयर बुक 1988, AIAET न्यू देहली 1989PP.456-490
9. सिक्सथ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एजुकेशन एन.सी.ई.आर.टी., देहली।

इकाई-6

ई-लर्निंग :अर्थ, रीतियाँ एवं कार्यविधि (E-Learning : Meaning,Madalities and Procedure)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

6.1 प्रस्तावना
(Introduction)

6.2 ई-लर्निंग का अर्थ एवं रीतियाँ
(Meaning and Modalities of E-Learning)

6.3 अधिगम में माध्यम की भूमिका
(The Role of Learning in Media)

6.4 ई-लर्निंग हेतु पूर्व दशायें
(Conditions for E-Learning)

6.5 ई-लर्निंग हेतु आवश्यक प्रशासनिक आवश्यकतायें
(Essentials Administrative Needs for E-Learning)

6.6 ई-लर्निंग क्रियान्वयन
(Implementation for E-Learning)

6.7 ई-लर्निंग के प्रभाव का मूल्यांकन
(Evaluation of the Impact for E-Learning)

6.8 सारांश
(Summary)

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

6.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर विद्यार्थी -

- ई-लर्निंग के अर्थ, प्रकार एवं विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- अधिगम मे माध्यम की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे।
- ई- लर्निंग व परम्परागत अधिगम में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।

- ई-लर्निंग को अनुकूलतम बनाने हेतु शिक्षण-रूपरेखाओं की विवेचना कर सकेंगे।
- ई-लर्निंग की क्रियाओं आवश्यक पूर्व दशाओं को खोज पायेंगे।
- ई-लर्निंग के लिये आवश्यक प्रशासनिक आवश्यकताओं को जान सकेंगे।
- ई-लर्निंग क्रियाओं हेतु क्रियान्वयन आवश्यकताओं की जाँच कर सकेंगे।
- ई-लर्निंग एवं शिक्षण के मूल्यांकन की योजना बना सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना (Introduction)

नव प्रवर्त्तक सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकों के आगमन ने वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था में अत्यधिक परिवर्तनों को गति दी है। अन्तक्रियात्मक तकनीकी ने तो शिक्षण एवं अधिगम के स्परूप को प्रभावित किया है। इस पाठ में उन अन्तःक्रियात्मक तकनीकों से परिचय कराया गया है। विभिन्न अन्तःक्रियात्मक सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकों को ई-लर्निंग का नाम दिया गया है।

6.2 ई- लर्निंग का अर्थ एवं रीतियाँ (Meaning and Modalities of E-Learning)

ई- लर्निंग का सामान्य अर्थ सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के जाल का शिक्षण एवं अधिगम मे साभिप्राय प्रयोग से लिया जाता है। ई-लर्निंग के लिए अन्य पदों का यथा ऑन लाईन लर्निंग वरचुअल-लर्निंग, वैब बेस्ट लर्निंग (Online Learning,virtual Learning,Distibuted,Network and Web-based learning) का प्रयोग किया जाता है। मूलभूत रूप से ये सभी शैक्षिक प्रक्रिया के लिए प्रयुक्त किये जाते हैं। इन शैक्षिक प्रक्रियाओं में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी का प्रयोग शिक्षण एवं अधिगम की क्रियाओं में एक समय में या अलग-अलग किया जाता है, परन्तु समीप से देखने पर पता चलता है कि ऊपर वर्णित सभी पद शैक्षिक प्रक्रियाओं में थोडा सा विभिन्न अर्थ रखते हैं। अत: ऑन लाईन लर्निंग, वरचुअल लर्निंग, डिस्ट्रब्यूटैड लर्निंग, नेटवर्क और वैबबेस्ड लर्निंग व ई-लर्निंग की समानार्थक प्रयोग में नहीं लिया जा सकता।

डिस्ट्रीब्यूटेड लर्निंग - इससे तात्पर्य, शैक्षिक व्यवस्थाओं में अधिगमकर्ता द्वारा की जाने वाली सभी व्यवस्थित अधिगम प्रक्रियाओं से है, जो अपने शैक्षिक संगठन से समय एवं स्थान की दृष्टि से अलग-अलग है।

ऑन लाइन लर्निंग - इससे तात्पर्य, उन सभी अधिगम क्रियाओं से है, जो इलैक्ट्रॉनिक जाल (Electronic Network) वातावरण में सम्पादित की जाती है।

वरचुअल लर्निंग - इससे तात्पर्य, उन सभी अधिगम क्रियाओं जो शैक्षिक ढाँचों से दूर रह कर सम्पन्न की जाती है। जहाँ विद्यार्थी और अध्यापक अस्थाई रूप में विलग रहते हैं।

विद्यार्थी किसी एक स्थान पर एकत्र होकर तकनीकी के माध्यम से नवीन ज्ञान अर्जित करते हैं।

वैबबेस्ड लर्निंग - इससे तात्पर्य, उन सभी अधिगम क्रियायें जो वर्ल्ड वाइड वेब (world Wide Web) के द्वारा संचालित की जाती है।

ई-लर्निंग शब्द ऑन लाईन लर्निंग, वरचुअल लर्निंग, डिस्ट्रीब्यूटैड लर्निंग, नेटवर्क और वैबबेस्ड लर्निंग से व्यापक है। ई-लर्निंग में "ई' शब्द इलैक्ट्रॉनिक का द्योतक है। ई-लर्निंग में व्यक्तियों एवं समूहों द्वारा की जाने वाली शैक्षिक गतिविधियों को समावेशित किया जाता है, जो ऑन लाईन या ऑफ लाईन एक समय में अथवा एक साथ या अलग-अलग कम्प्यूटर्स एवं अन्य इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों के द्वारा सम्पादित की जाती है।

रोमीजओवसकी (Romiszowski,2004) ने ई-लर्निंग से सम्बन्धित रीतियों को निम्न प्रकार से प्रदर्शित किया है :-

व्यैक्तिक स्व-गति (Individualized Self -paced) ई-लर्निंग ऑन लाईन	व्यैक्तिक स्व-गति (Individualized Self -paced) ई-लर्निंग ऑफ लाईन
समूह आधारित (Group-based) ई-लर्निंग संयोजित (E-Learning Synchronously)	समूह आधारित (Group-based) ई-लर्निंग असंयोजित (E-Learning Asynchronously)

तालिका-6.1

ई-लर्निंग रीतियाँ

1. **व्यैक्तिक स्व-गति ई-लर्निंग ऑन लाईन -** इससे तात्पर्य उन परिस्थितियों से है, जिसमें एक अधिगमकर्ता अधिगम संसाधनों यथा विषयवस्तु सूचना सामग्री-संग्रह को ऑन लाईन अपनी पहुँच में कर लेता है। इसका उदाहरण अधिगमकर्ता का अकेले अध्ययन करना या इन्टरनेट अथवा स्थानीय तंत्र के माध्यम से शोध करता है।
2. **वैयक्तिक स्वगति ई-लर्निंग ऑफ लाईन -** इससे तात्पर्य उन परिस्थितियों से है, जिसमें एक अधिगमकर्ता अधिगम संसाधनों यथा सूचना सामग्री-संग्रह अथवा कम्प्यूटर सहायतित अधिगम सामग्री को बिना इन्टरनेट सीखने के लिए अपनी पहुँच में कर लेता है। इसका उदाहरण अधिगमकर्ता को बिना किसी सी.डी., डी.वी.डी. और हार्ड ड्राइव (C.D.,D.V.D., Hard Drive)
3. **समूह आधारित संयोजित ई-लर्निंग (Synchronosuly) -** इससे तात्पर्य उन परिस्थितियों से है, जिसमें अधिगमकर्ता के समूह एक साथ इन्टरनेट और इन्ट्रानेट के माध्यम से कार्य करते हैं। इस ई-लर्निंग की रीति में पुस्तक आधारित कान्फ्रैसिंग (Text based conferencing) एक तरफा, एक मार्गीय, द्वि-मार्गीय, ऑडियो एवं वीडियो कान्फ्रैसिंग को शामिल किया जाता है।

4. **समूह आधारित असंयोजित ई-लर्निंग (Asynchronosuly) -** इससे तात्पर्य उन परिस्थितियों से है, जिसमें अधिगमकर्ता के समूह इन्टरनेट अथवा इन्ट्रानेट (Internet or Intranet) के माध्यम से प्रतिभागी एक समय में आपस में बातचीत न करके, अपनी समय सुविधानुसार बातचीत करते है

उदाहरण -

इलैक्ट्रॉनिक मेलिंग (पत्राचार) के माध्यम से ऑन लाईन चर्चा एवं पुस्तक आधारित कान्फ्रैसिंग को अधिगम प्रबन्ध तंत्र के द्वारा किया जाता है। इसके उदाहरण में अधिगमकर्ता का एक दूसरे के साथ ऑडियो-वीडियो कान्फ्रैसिंग करना शामिल है।

ई-लर्निंग एवं माध्यम (E-Learning and Media)- अधिगमकर्ता एवं अध्यापक / ट्यूटर के मध्य सम्प्रेषण के लिये विभिन्न माध्यमों का प्रयोग किया जाता है।

इसमें सम्मिलित हैं -

- परम्परागत लिखित सामग्री यथा-पुस्तक एवं मैनुअल
- टेलीविजन एवं रेडियो प्रसारण
- ऑडियो, टेप एवं सी.डी. रोम
- डिजिटल लर्निंग आब्जैक्ट्स
- ऑन लाइन सूचना
- ऑन लाइन समूह
- वीडियो कान्फ्रैसिंग
- ई-मेल समर्थन

ई-लर्निंग में ट्यूटर टेलीफोन ई-मेल, ऑन लाइन के द्वारा अधिगमकर्ता को समर्थन व सहायता प्रदान करते हे। अधिगमकर्ता अन्य सदस्यो के साथ ई-इलेक्ट्रॉनिक डाक (E-mail) वैबसाइट समूह चर्चा। (Website Group discussion) के द्वारा सीख सकते हैं। यह अधिगमकर्ता को अन्य सदस्यों से सीखने एवं एक दूसरे के कार्य पर टिप्पणी करने के अवसर प्रदान करता है।

ई-लर्निंग की मुख्य विशेषतायें (Attribute of E-Learning):

ई-लर्निंग की मुख्य विशेषतायें निम्न प्रकार से है:

1. **लचीलापन** - ई-लर्निंग तकनीकी की मुख्य विशेषता सूचना एव संसाधनों तक पहुंच में लचीलापन है। पहुंच में लचीलापन से तात्पर्य प्रत्येक अधिगमकर्ता को स्थान, समय एवं गति की सुविधा एवं उपयुक्तता के आधार पर संसाधनों एवं सूचनाओं के प्रयोग में पहुंच एवं प्रयोग से है।

दूरस्थ शिक्षा की अवधारणा भी नमनीयता एवं पहुंच के (Access & Flexibility) अधिनियम पर आधारित हैं। दूरस्थ शिक्षा ने विभिन्न व्यवसायों मे कार्यरत अधिगमकर्ताओं को कार्यरत रहते हु ये समय, स्थान और गति की दृष्टि से सुविधा प्रदान की। परम्परागत शैक्षिक व्यवस्था के बन्धनों से मुक्त किया। अधिगमकर्ताओं को मुद्रित शैक्षिक सामग्री का स्वय अध्ययन कर, प्रदत्त कार्यो को नियत समय पर पूर्ण कर, परीक्षाओं में एक निर्धारित समय

अवधि बैठना होता है| लेकिन अमुद्रित विषय-वस्तु एवं अनुरूपण (Simulation) को मुद्रित रूप में नही प्रदान किया जा सकता।

सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के क्रांतिकारी परिवर्तनों ने सभी प्रकार की विषयवस्तु की प्रस्तुतीकरण एवं पकड़ की अपार सम्भावनाएं खोल दी हैं। सभी प्रकार के शैक्षिक ढाँचों में विषयवस्तु को अध्यापकों एवं विद्यार्थियों तक पहुंचाने की सम्भावनायें खुल गई हैं। डेड (Dede 2000) के अनुसार सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकियों ने विषयवस्तु एवं अधिगम संसाधनों की पहुंच को विभिन्न प्रकार के ढांचों यथा-परम्परागत कक्षा, कार्यस्थान घर एव विभिन्न प्रकार के सामुदायिक केन्द्रों पर सम्भव बनाया है। परम्परागत शैक्षणिक संस्थायें जिसमें दूरस्थ शिक्षा भी शामिल हैं, प्राय: गर्व से यह कहते हैं कि वे अपने विद्यार्थियों एवं स्टाफ की अधिगम आवश्यकताओं को उनकी सुविधानुसार प्रदान करते हैं। ई-लर्निंग में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के माध्यम से विद्यार्थी आवश्यकतानुसार नवीनतम सूचनाओं की प्राप्ति कर पाते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के एप्लीकेशन एवं कम्प्यूटर कान्फ्रैसिंग (Software application and Computer conferencing) से अधिगमकर्ताओं के मध्य सहयोगात्मक अन्वेषण को विकसित किया जाता है।

ये माध्यम अध्यापकों एवं अधिगमकर्ताओं को एक समय पर साथ-साथ एवं अलग-अलग विभिन्न समयों पर (Synchronosuly and Asynchronously) संलग्न करते हैं।

2. बहुमाध्यमों एवं असाधारण माध्यम आधारित संसाधनों की इलैक्ट्रॉनिक पहुंच - सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के द्वारा विभिन्न प्रकार की मुद्रित, ऑडियो, वीडियो सूचनाओं का संग्रहण किया जा सकता है। परम्परागत शैक्षिक व्यवस्थाओं में निहित स्थान एवं समय के प्रतिबन्धों से परे हटकर विषयवस्तु इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों से उपलब्ध हो जाती है, जो कि सम्भवत: कक्षा-कक्ष में उपलब्ध नहीं हो पाती। प्रत्येक अधिगमकर्ता को जिस रूप में अधिगम संसाधन चाहिये होते हैं, उसी रूप में उपलब्ध हो जाते हैं। उदाहरणार्थ-पाठ्यवस्तु तस्वीरों, चित्रों, चित्रीय जीवन्तता, वीडियो. अनुरूपण (Simulators) एवं इलेक्ट्रॉनिक सूचना संग्रहण, सर्च इन्जिन (Search-engines) एवं ऑन-लाईन पुस्तकों से भी अधिगमकर्ता को जोडते है।

स्वमूल्यांकन(Self-Evaluation)

प्र.1 दूरस्थ-अधिगम,खुला-अधिगम व आन -लाइन अधिगम से आप क्या समझते है? What do you understand by distance-Learning ,open -learning and on-line learning?

6.3 अधिगम में माध्यम की भूमिका (The Role of Learning in Media)

यह हम भली भाँति जानते हैं कि सूचना एव सम्प्रेषण तकनीकी विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को अधिग्रहण, संग्रहण, संचरण एवं सम्प्रेषण (Capture,store,dissiminate&

communicate) के अवसर उपलब्ध कराती है। लेकिन प्रश्न यह है कि क्या तकनीकी एवं माध्यम अधिगम को प्रभावित करते हैं? रेडियो एवं टेलीविजन के आविष्कार के साथ ही इस प्रश्न का प्रारम्भ हो गया था। कैमरा एवं चलचित्र के आविष्कार से तो एडीसन ने सोचा कि सम्पूर्ण शिक्षा में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जायेंगे एवं विद्यालयी शिक्षा और अधिक आकर्षक, रूचिकर एवं अभिप्रेरणादायी हो जायेगी। उस समय कुछ लोगों ने यह भी टिप्पणी की कि विद्यार्थी अब घर पर नही रुकेंगे व विद्यालय में आयेंगे। यद्यपि ऐसा नहीं हुआ। एडीसन के आविष्कार के कई दशकों उपरान्त मार्शल मैक्लुहान (Marshall Mcluhan, 1964) ने कहा था, "Medium is the message" अर्थात् माध्यम ही संदेश है। मार्शल का अभिप्राय था कि प्रत्येक माध्यम (Medium) अपनी विशेषताओं व योग्यताओं के द्वारा हमारी योग्यताओं को आकार, दिशा एवं वृद्धि करने की क्षमता प्रदान करता है।

1960 एवं 1970 के दशक में शिक्षा में कम्प्यूटर के कुछ उत्साही प्रयोग देखने को मिले। जिसके पश्चात् शोधकर्त्ताओं ने कम्प्यूटर के अधिगम पर प्रभाव का अध्ययन किया। लुम्सडेन 1983, माइकल, 1968 (Lumsdanc,1963:Mirlke,968) अध्ययनों के निष्कर्ष रूप में पाया कि कम्प्यूटर के कुछ आर्थिक लाभ तो हो सकते है, परन्तु इनका लाभ अधिगम में नही हुआ। उस समय के कुछ शोधकर्त्ताओं ने तर्क दिया कि विषयवस्तु का अधिगम माध्यम से उतना प्रभावित नही होता, जितना कि उस माध्यम से विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण से प्रभावित होता है।

क्लार्क ने तो 1994 मे यह घोषित किया कि 'माध्यम कभी भी अधिगम को प्रभावित नहीं करेगा। उनके अनुसार माध्यम अनुदेशन को प्रस्तुत करने वाले वाहन हैं जो विद्यार्थियों की उपलब्धि प्रभावित नहीं करते। जैसे:-ट्रक दैनिक जीवन में आने वाली खाद्य सामग्री को हम तक पहुंचाते हैं और पोषण को प्रभावित करते हैं। क्लार्क ने स्वीकार किया कि माध्यम सीखने की लागत एवं गति को प्रभावित करते हैं, लेकिन अनुदेशन की विधि ही केवल अधिगम को प्रभावित कर सकती है। अनुदेशन विधि का अर्थ अधिगम के लिये आवश्यक संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं एवं व्यूह-रचनाओं से है, जिन्हें विद्यार्थी स्वयं के लिये उपलव्य नहीं कर सकते।

क्लार्क के अनुसार किसी भी शिक्षण विधि में विभिन्न माध्यमों के प्रयोग अथवा विभिन्न माध्यमों के संयोगों के द्वारा समान अधिगम परिणाम प्राप्त किये जा सकते हैं।

क्लार्क के विपरीत कोजमा (Kozma,1991) ने अधिगम पर उपलब्ध शोध अध्ययनों की समीक्षा में पाया कि "प्रत्येक विशिष्ट माध्यम, शिक्षण विधियों के साथ जुड़कर, माध्यम की सामर्थ्य का लाभ लेकर अधिगमकर्ताओं के सूचना प्रक्रमण को प्रभावित करता है। जब एक माध्यम की तुलना दूसरे माध्यम से विभिन्न कार्यो एवं अधिगमकर्ताओं के संदर्भ में की जाती है तब यह अन्तर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। जब अधिगमकर्ता (learner) उपलब्ध संज्ञानात्मक संसाधनों का प्रबन्धन नये ज्ञान की रचना में करता है। अधिगमकर्ता नये ज्ञान की रचना हेतु स्मृति में पूर्वधारित सूचनाओं को, वातावरण से प्राप्त सूचनाओं के साथ समाकलित कर लेते हैं।

इस प्रकार के शैक्षिक ढाँचे में माध्यम न तो निष्क्रिय हो सकता है और न ही अधिगम सन्दर्भ एवं विषयवस्तु से अलग होकर स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रख सकता है। जब माध्यम को सावधानी से अधिगम अनुभव के साथ समाकलित करते है तो माध्यम व अनुदेशन विधि परस्पर अन्तःक्रिया करते हुये अधिगम संदर्भ में इच्छित अधिगम परिणामों को जन्म देते हैं। शैक्षिक ढाँचे में माध्यम एवं अधिगम विधि के अपूर्व प्रभावों को अलग-अलग कर पाना संभव नही है। परन्तु निम्न शैक्षिक ढाँचों में अधिगम एवं शिक्षण में माध्यम ने प्रभावी भूमिका का निर्वहन किया है:-

(a) Jasper Woodbury series (Congition & Technology Group at Vanderbilt,1992,1993)

(b) Exploring the Nardoo (Hedberg & Harper,1995)

- उपरोक्त संदर्भों में विद्यार्थियों में इच्छित अधिगम परिणामों को प्राप्त करने में माध्यम की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।
- माध्यम, चित्रों, ध्वनियों एवं जीवन्तता के सही प्रयोग से विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करते हैं।
- माध्यम वास्तविक जगत से सन्दर्भो एवं परिस्थितियों को कक्षा में प्रदर्शन में उपयोगी होते हैं जिनका प्रदर्शन कक्षा में सजीव रूप में सम्भव नहीं होता।
- जब माध्यम का चयन एवं उपयोग अनुदेशनात्मक व्यूह रचनाओं के साथ अधिगम के विभिन्न क्षेत्रों (Domains) में विशिष्ट अधिगम आवश्यकताओं के संदर्भ में किया जाता है, तो शिक्षण एवं अधिगम अनुकूलतम स्तर पर होते हैं।

ई-लर्निग अनुकूलतम बनाने हेतु शिक्षण की रूपरेखायें (Pedagogical designs for optimizing E-Learning) - शिक्षण एवं अधिगम को अनुकूलतम/दृष्टतम बनाने में माध्यम की भूमिका एवं प्रभाव महत्वपूर्ण है, जब इसे कुशलतापूर्वक अधिगम अनुभव प्रदान करते समय समाकलित कर लिया जाता हैं। इसके लिये विषयवस्तु के प्रस्तुतीकरण अथवा तकनीकी की अपेक्षा अधिगम अनुभव पर ध्यान केन्द्रित करना होगा अर्थात् अधिगमकर्ता अधिगम वातावरण में सम्मिलित होकर क्या करेंगे? ई-लर्निग को अनुकूलतम स्तर पर लाने के लिये शिक्षण रूपरेखा (Pedagogical designs) में 'करके सीखने का सिद्धान्त (Learning by doing) केन्द्र में है। शिक्षण की मुख्य रूपरेखायें निम्न हैं :

- दृश्य आधारित अधिगम (Scenario based learning)
- लक्ष्य आधारित अधिगम (Goal based learning)
- समस्या-आधारित अधिगम (Problem based learning)
- भूमिका-निर्वहन आधारित अधिगम (Roleplay based learning)

ई-लर्निग की उपरोक्त शिक्षण रूपरेखाओं का मूल आधार कन्सट्रक्टिविजम (Constructivism) है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि अधिगम तब प्रभावशाली होता है जब वह संदर्भित होता है, जब ज्ञान वास्तविक संसार पर आधारित होता हैं

दृश्य आधारित अधिगम - दृश्य आधारित अधिगम में 'करके सीखना परिलक्षित होता है। एक या एक से अधिक अधिगम दृश्य शिक्षण एवं अधिगम की क्रियाओं को अधिगम-सन्दर्भ प्रदान करते हैं। शैक्षिक ढांचों में विभिन्न दृश्य प्राय: जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से लिये जाते हैं। ये परिकल्पित भी हो सकते हैं, परन्तु जहां तक सम्भव होता है, इन्हें प्रामाणिक बनाने का उद्देश्य होता है। वास्तविक जीवन की परिस्थितियों की विविधता एवं जटिलता को प्रतिबिम्बित किया जाता है। ये दृश्य अध्यापकों को सार्थक प्रसंग उपलब्ध कराते हैं, ताकि अमूर्त अवधारणाओं, अधिनियमों, एवं कार्यविधियों की सुगमतापूर्वक व्याख्या की जा सके। ये दृश्य अधिगमकर्ता के अधिगम को सार्थक, प्रासंगिक एवं उपयोगी बनाते हैं।

एक अच्छा अधिगम दृश्य कहानी अथवा सामान्य घटना का वर्णन प्रतीत होता है। जिसका संदर्भ, कथानक. पात्र एवं अन्य सम्बन्धित मानदण्ड होते हैं। प्राय: इसमें उद्वेलित करने वाली घटना होती है, जिसमें अधिगमकर्ता अथवा अधिगमकर्ता समूह को भूमिका दी जाती है। जिसमें कि वे घटना अथवा उस परिस्थिति से निबट सके। अधिगमकर्ताओं को उनकी भूमिका के साथ लक्ष्य भी दिये जाते हैं। उन्हें इन लक्ष्यों की प्राप्ति भी करनी होती है। लक्ष्य प्राप्ति हेतु विभिन्न गतिविधियों एवं कार्यो को सौंपा जाता है। ये कार्य उन्हें अपने समवयस्क साथियों एवं समूहों के साथ मिल कर करने होते हैं। ये क्रियायें अधिगम अभिवृद्धि में अभ्यास का काय करती है। इन क्रियाओं के सम्पादन के लिये सभी संगत संसाधनों की पहुँच (access) अधिगमकर्ता को उपलब्ध कराई जाती है। इन संसाधनों में पाठ्यपुस्तक, अन्य पठनीय सामग्री, मल्टीमीडिया सामग्री:, उस क्षेत्र के विशेषज्ञों के अनुभव, समान परिस्थितियाँ, समस्यायें एवं घटनायें शामिल किये जाते हैं।

अधिगम दृश्य-उनसे सम्बन्धित अधिगम क्रियायें, मापनीय प्रदत्त कार्य, सार्थक अधिगम क्रिया के लिये उच्चतर अधिगम दृश्य प्रदान करते हैं।

इसके अतिरिक्त अधिगम को संदर्भित करते है और अधिगमकर्ता को अभिप्रेरित करते है। जब विषयवस्तु में दक्षता पर बहुत बल दिया जाता है तो कुछ विद्यार्थी अधिगम से मुँह मोड़ लेते है।

दृश्य अधिगम का उदाहरण -

अध्यापक शिक्षा के प्राध्यापक एक शोधकर्त्ता (Teacher Educator as a Researcher) के रूप में उत्तर क्षेत्र के निदेशक से विद्यालयी व्यवस्था के क्षेत्र में भावी विकास की रूपरेखा से सम्बन्धित सुझाव मांगे गये। उत्तर क्षेत्र के निदेशक के लिये यह कार्य काफी कठिन था। उसे यह समझ नहीं आ रहा कि वह कहीं से प्रारम्भ करे तथा कही समाप्त करे। इस कार्य से सम्पूर्ण विद्यालयी व्यवस्था और अन्ततः देश का भविष्य प्रभावित होगा। उसने अन्य क्षेत्रों के निदेशकों से बातचीत की और विभिन्न विद्यालयों के प्रधानाचार्यों से सुझाव का विचार आया। तुरन्त प्रभाव से विभिन्न प्रकार के विद्यालयों के प्रधानाचार्यों को बातचीत के लिये बुलाया गया। विद्यालयी व्यवस्था से जुडे विभिन्न प्रधानाचार्यों ने विद्यालयी व्यवस्था से जुड़े विभिन्न मुद्दों पर चर्चा की। विभिन्न मुद्दों में अध्यापक विद्यार्थी अनुपात वित्तीय

संसाधनों का बंटवारा, अध्यापक प्रशिक्षण, अनुशासनहीनता आदि सम्मिलित किये गये। इसके बावजूद निदेशक को लगा कि अभी आदि और अन्त समझ नहीं आ रहा। पुन: सभी निदेशकों ने एक मीटिंग की और विश्वविद्यालय के अधिष्ठाता संकाय को कार्य सौंपा। शिक्षा-संकाय अधिष्ठाता ने अपने पांच वरिष्ठ संकाय सदस्यों को ऊपर वर्णित मुद्दों से अवगत कराया।

भूमिका - आप यह मान लें कि आप पांच सदस्यों में से एक हैं व ऊपर वर्णित मुद्दों में से किसी एक को चुनकर उनकी प्रकृति, महत्ता एवं अध्ययन के उपयुक्त उपागम का वर्णन करें।

इसके पश्चात् पाँचों सदस्यों को पूर्व शोध अध्ययनों की समीक्षा करने को कहा गया। जिससे यह पता चल सके कि अन्य देशों में इन मुद्दों से सम्बन्धित क्या-क्या कदम उठाये गये हैं? अगला कार्य शोध अध्ययन उपागम के क्रियान्वयन का था।

अधिगम क्रियायें -

- मुद्दे की पहचान।
- समस्या / मुद्दे की प्रकृति एवं महत्व
- अनुसंधानात्मक समस्या से सम्बन्धित उपागम
- उपागम चयन का औचित्य
- पूर्व शोध साहित्य पर संक्षिप्त रिपोर्ट
- अनुसंधान कार्य की विस्तृत योजना

इस प्रकार शोध कार्य के अन्तिम चरण तक अधिगम क्रियाओ व प्रदत्त कार्य का निर्धारण किया जाता है।

समस्या आधारित एवं लक्ष्य आधारित अधिगम - शिक्षण कला में एक शैक्षिक रूपरेखा (Pedogogical design) समस्या आधारित अधिगम है जो कि "करके सीखने के सिद्धान्त"पर आधारित है। समस्या आधारित अधिगम काफी सीमा तक दृश्य आधारित अधिगम से मिलता जुलता है। इस प्रकार के अधिगम में एक समस्या संदर्भ का कार्य करती है। विद्यार्थियों को समस्या से परिचित कराया जाता है। समस्या चित्र, वीडियो, पुस्तक, लेख के रूप में ही हो सकती है। समस्या से परिचित होने के पश्चात् विद्यार्थी विश्लेषण के पश्चात् तय करते हैं कि आगे क्या किया जाना चाहिये। इस अधिगम की सबसे बड़ी विशेषता छोटे-छोटे समूहों में अन्वेषण एवं समस्या समाधान है। इस सम्पूर्ण कार्य में इच्छित परिणामों की प्राप्ति है। समस्या आधारित अधिगम में समस्या समाधान अर्न्तनिहित है, परन्तु स्पष्ट रूप में यह नहीं बताया जाता कि उनसे क्या प्रत्याशा है या उन्हें क्या करना चाहिये।

जबकि लक्ष्य आधारित अधिगम में विद्यार्थियों को स्पष्ट रूप से बताया जाता है कि इस परिदृश्य में उनकी क्या भूमिका है। समस्या के समाधान हेतु उन्हें क्या करना चाहिये? समस्या के विश्लेषण एवं समाधान को विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति एवं सृजनशीलता पर छोड़ दिया जाता है। इस अधिगम का प्रयोग चिकित्सा, शिक्षा एवं वातावरणीय विज्ञानों में होता है।

व्यक्तिगत /केस आधारित अधिगम - केस आधारित अधिगम में केस /व्यक्तिगत संदर्भ प्रदान करता है एवं सभी शिक्षण एवं अधिगम की क्रियाएँ उसके आस-पास केन्द्रित होती है। वाणिज्य एवं विधि, अर्थशास्त्र एवं लेखा में इस प्रकार के अधिगम का प्रयोग किया जाता है। वे केस अधिगम एवं शिक्षण अवसरों को अनुकूलतम करते हैं, जिनमें विविधता, जटिलता, स्पष्टता एवं समृद्धता हो। इनके साथ ही ये जीवन की वास्तविक परिस्थितियों में गहराई से जुडे हुये हों। अत यह महत्वपूर्ण है कि शिक्षण एवं अधिगम के लिये केस का चयन सावधानीपूर्वक किया जाये ताकि वांछित अधिगम परिणामों को प्राप्त किया जा सके।

भूमिका निर्वहन आधारित अधिगम - इस अधिगम में भूमिका निर्वहन शिक्षण-अधिगम की क्रियाओं को अस्थायी एवं स्थायी आधार प्रदान करता है। सामाजिक विज्ञान विषयों एवं मानविकी विषयों में जहां जटिल प्रक्रियाओं का समावेश है, भूमिका निर्वहन का व्यापक प्रयोग किया जाता है। शैक्षिक रूपरेखा में अधिगमकर्ताओं का सुनिश्चित भूमिकाओं का निर्वहन शामिल होता है। भूमिका निर्वहन के पश्चात् गतिविधियों एवं विश्लेषण पर चिन्तन किया जाता है, ताकि प्रत्याशित अधिगम परिणामों पर ध्यान केन्द्रित किया जा सके।

6.4 ई-लर्निग हेतु पूर्व दशायें (Conditions for E-Learning)

ई-लर्निग अन्य संगठित शैक्षिक गतिविधियों की भाँति एक जटिल कार्य है। परम्परागत शैक्षिक व्यवस्थाओं की भांति ई-लर्निग की योजना, प्रबन्धन एवं क्रियान्वयन में परिश्रम की आवश्यकता होती है। ई-लर्निग में तकनीकी संस्थागत ढ़ाँचा अतिरिक्त तत्व है, जिस पर अधिक एवं अलग से ध्यान देने की आवश्यकता होती है|

ई-लर्निग कोई सुलभ एवं सरल शैक्षिक विकल्प नही है जो गिरते नामांकन, दूरस्थ-शिक्षा, खराब शिक्षण एवं गुणवत्तापूर्ण अधिगम का तुरन्त समाधान प्रदान कर देता है। ई-लर्निग की योजना एवं क्रियान्वयन मे जरा सी असावधानी शिक्षण-अधिगम के स्तर में गिरावट, संसाधनों का अपव्यय, आय में हानि एवं मनोबल को कम कर सकती है।

6.5 ई-लर्निग हेतु आवश्यक प्रशासनिक आवश्यकतायें (Essentials Administrative Needs for E-Learning)

शैक्षिक संगठनों को शिक्षण एवं अधिगम में परम्परागत व्यवस्था से हर विकल्पात्मक उपागम को उपलब्ध कराने से पहले संगठन के लक्ष्य एवं उद्देश्य पर विचार करना होगा। जिससे कि वे ई-लर्निग को अंगीकर कर सकें। ई-लर्निग के लिय निम्न दशायें आवश्यक है -

तकनीकी-ई-लर्निग के लिये आवश्यक प्रशासनिक आवश्यकतायें में तकनीकी, शिक्षण एवं अधिगम का एक आवश्यक उपकरण है। यह ई-लर्निग की सफलता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक है। यह ई-लर्निग की पहल करने वाला चालक नहीं है। यह शैक्षिक प्रकार्य को सम्पादित करने का आवश्यक उपकरण है। जिस प्रकार परम्परागत कक्षा में कक्षा कक्ष का होना अनिवार्य

है। कक्षा कक्ष भी ऐसा जो आरामदायक हो, जिसमें कुर्सी, मेज एवं श्याम पट्ट हो ताकि शिक्षण एवं अधिगम की क्रियायें सम्पन्न हो सके। यदि कक्षा में कम्प्यूटर, प्रोजेक्टर, पंखे या बत्तियाँ कार्य नही करते तो स्टाफ एवं विद्यार्थी दोनों आक्रोशित हो जाते है। इसी प्रकार ई-लर्निग तकनीकी के कार्य में धाराप्रवाहिता एवं पारदर्शिता की आवश्यकता होती है, ताकि अध्यापक व विद्यार्थी शिक्षण एवं अधिगम पर ध्यानकेन्द्रित कर सके। कई बार तो अध्यापकों एव विद्यार्थियों को तकनीकी के प्रयोग का प्रशिक्षण भी नियमित रूप से देना पडता है।

पाठ्यक्रम संरचना एवं विकास - अन्य शैक्षिक गतिविधियों की भाँति, ई-लर्निग भी दलीय कार्य (Team work) है। जिसमें कई प्रकार की विशेषज्ञों की आवश्यकता होती है। परम्परागत शैक्षिक. व्यवस्था में पाठ्यक्रम संरचना व विकास का कार्य विषयवस्तु या विषय विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है जो कि स्वयं अध्यापक भी होता है। ई-लर्निग में विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण अन्य विकल्पों यथा ऑन लाइन अथवा सी.डी.रोम के द्वारा किया जाता है। कुछ अध्यापक तो विषय वस्तु की रचना स्वयं कर लेते हैं। परन्तु ई-लर्निग में पाठ्यक्रम की रचना विषयवस्तु विशेषज्ञों एवं अधिगम सामग्री का विकास तकनीकी द्वारा करने की आवश्यकता होती है। इसके लिये सभी विशेषज्ञों को एक दल के रूप में साथ-साथ काम करना होता है।

विषयवस्तु एवं सामग्री प्रबन्धन - परम्परागत शैक्षिक व्यवस्था में शिक्षक विषय-वस्तु एवं सामग्री को उत्पन्न (generate) एवं प्रस्तुतीकरण का कार्य करता है। ई-लर्निग में भी यह दायित्व शिक्षक का ही है। परन्तु अधिगमकर्ता तक इसको पहुंचाने के लिये इसकी वृद्धि, संशोधन एवं प्रस्तुतीकरण को संशोधित करना पड़ता है।

इसे तकनीकी के अनुरूप संशोधित किया जाता है। समय-समय पर विषयवस्तु में आधुनिकतम प्रवृत्तियों को जोडना पड़ता है। विषय-वस्तु विशेषज्ञों को इसके लिये अनुदेशन रूपरेखा क्रियाओं में सिद्धस्त व्यक्तियों से सहायता लेनी पड़ती है। विकल्पात्मक माध्यमों से प्रस्तुति हेतु अनुमति एवं कॉपीराईट लेने पड़ते हैं। बड़े शैक्षिक ढाँचों में पर्याप्त प्रशिक्षित स्टाफ, उपयुक्त प्रक्रियाओं एवं प्रविधियों के चयन के लिए कार्यभार बढ़ जाता है।

6.6 ई-लर्निग क्रियान्वयन (Implementation for E-Learning)

परम्परागत कक्षा-कक्ष शिक्षण में अध्यापक अपना अधिकांश समय विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण में लगा देते हैं। यह कार्य भाषण के द्वारा किया जाता हैं। विद्यार्थी अध्यापक के भाषण को सुनने के साथ भाषण को अपनी नोटबुक में लिखते रहते हैं। विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण अन्य विकल्पों द्वारा किया जाता है जिससे भाषण के अमल का उपयोग अधिगम क्रिया को सहायता व सुगम बनाने में किया जाता हैं। तथापि ई-लर्निग इस बात की गारन्टी नहीं देता कि अब प्रभावशाली शिक्षण व अधिगम होगा। शिक्षण-अधिगम को प्रभावी बनाने

के लिये ई-लर्निंग के क्रियान्वयन पक्ष को मजबूत बनाना पडता है। इसके लिये निम्न पक्षों पर ध्यान देना आवश्यक है:

- विद्यार्थियों का रजिस्ट्रेशन
- अधिगम सहायता/बल प्रदान
- अधिगम का मापन एवं पृष्ठपोषण
- ई-लर्निंग के प्रभाव का मूल्यांकन

विद्यार्थी पंजीकरण (Student Registration) - विद्यार्थियों को पंजीकरण की ऑन लाईन व्यवस्था में प्रशासनिक व्यवस्था को अपने स्थान पर पुख्ता करना पड़ता है व स्टॉफ को भी उपयुक्त प्रशिक्षण देना पड़ता है।

अधिगमकर्ता को बल प्रदान (Learner Support) - ई-लर्निंग के संदर्भ में अधिगमकर्ता को बल प्रदान करना और भी महत्वपूर्ण है। क्योंकि ई-लर्निंग की व्यवस्था में अधिगमकर्ता अध्यापक एवं शैक्षिक संगठन से समय एवं स्थान की दृष्टि से दूर-दूर होते हैं। इसका यह अर्थ भी नहीं लेना चाहिये कि ई-लर्निंग में अधिगमकर्ता को बल प्रदान करने की अधिक आवश्यकता होती है। यहां पर महत्वपूर्ण है कि अधिगमकर्ता को अधिगम बल कैसे व कौन प्रदान करे। ऑन लाइन पाठ्यक्रम को विकसित करने वालों को इसे बल एवं सुगमीकृत (Support& facilitate) करने को कार्य प्राय: नही दिया जाता है।

अधिगम मापन एवं पृष्ठपोषण (Assessment and Feedback) - जिस प्रकार अन्य शैक्षिक व्यवस्थाओं में मापन के निर्देशात्मक सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाता है। उसी प्रकार ई-लर्निंग में भी अधिगम परिणामों का मापन किया जाता है। ई-लर्निंग में कुछ अधिगम परिणामों का मापन किस प्रकार किया जा सकता है और पृष्ठपोषण दिया जा सकता है। इसके साथ ही अधिगमकर्ता के द्वारा अन्य व्यक्तियों के विचारों को चुराकर अपना मौलिक कार्य बताना, जैसी समस्यायें ई-लर्निंग में आती है। ई-लर्निंग के समय एव स्थान को लोचशीलता के फलस्वरूप अधिगमकर्ता अनुचित रूप से अधिगम मापन प्रथाओं को अपना लेता है। इस प्रकार के अवसरों को सही प्रकार से प्रबन्धन की आवश्यकता होती है|

6.7 ई-लर्निंग के प्रभाव का मूल्यांकन (Evaluation of the Impact for E-Learning)

जिस कार्य की पहल की जाती है, वह कार्य किस प्रकार हो रहा है, को जानना भी आवश्यक है। ई-लर्निंग में स्टाफ व विद्यार्थी की संलग्नता को जानना आवश्यक है। बिना इस जानकारी के ई-लर्निंग में आवश्यक संशोधन नहीं हो पायेगें। अधिकांश शैक्षिक संस्थानों में प्रभावों के मूल्यांकन पक्ष को महत्व नही दिया जाता है। ई-लर्निंग की योजना एवं क्रियान्वयन में इसके प्रभाव के मूल्यांकन को भी समाहित किया जाना चाहिये।

मूल्यांकन क्रिया का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के निर्णयन को प्रभावित करना है। प्रत्येक संगठन शिक्षण, अधिगम एवं अनुसन्धान सम्बन्धी गतिविधियों के प्रभाव को जानने के लिये

व्यापक मूल्यांकन व्यूह रचना को बनाता है, ताकि अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सके । इसके लिये विभिन्न स्त्रोतों एवं विभिन्न उपकरणों की सहायता से विभिन्न प्रदत्तों का संकलन किया जाता है। शिक्षण एवं अधिगम में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के प्रभावी उपयोग एवं गुणवत्तापूर्ण सेवा देने हेतु प्रदत्त संकलन आवश्यक है।

यही मूल्यांकन से तात्पर्य इच्छित परिणाम हेतु ई-लर्निंग के प्रयोग से सम्बन्धित पृष्ठपोषण, उपयोगिता एवं प्रभाव को व्यवस्थित रूप में जानना है।

सभी पर्णधारियों (Stake holders) अर्थात् विद्यार्थियों, अध्यापकों नियमित रूप से संकलित किये जाने चाहिए। मूल्यांकन उपकरणों द्वारा प्रदत्त/तथ्य जिससे अग्र अन्तिम छोर विश्लेषण, रूपदेय, मूल्यांकन, योगदेय मूल्यांकन (Front end analysis, formative, summative & integrative evaluation)हो सके।

अग्र अन्तिम छोर विश्लेषण (Front end analysis) - में ऐसे तरीकों का समावेश होता है, जिनके द्वारा विद्यार्थियों, अध्यापकों एवं कर्मचारियों से ऑन लाइन (On line) शिक्षण एवं अधिगम तत्परता के सम्बन्ध में पसंदगियो को जाना जाता है। समय-समय पर एवं विशेष रूप से ई-लर्निंग से पूर्व इस प्रकार की जानकारी, किसी भी संस्था या संगठन को भावी प्रयोगकर्त्ता की आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होती है। संगठन को बस जानकारी से प्रयोगकर्त्ताओं की आवश्यकताओं, प्रत्यक्षीकरण एवं प्रत्याशायों का पता चलता है।

रूपदेय मूल्यांकन (Formative Evaluation) - रूपदेय मूल्यांकन से तात्पर्य प्रयोगकर्त्ता एवं अन्य सम्बद्ध समूहों से क्रियान्वयन के दौरान पृष्ठपोषण प्राप्त करना है। इसका उद्देश्य उन समस्याओं को पहचानना है। ताकि क्रियान्वयन के विभिन्न चरणों में आवश्यक समायोजन एवं संशोधन किये जा सके। नियमित साधारण रूप में मूल्यांकन करते समय संगत उपकरणों यथा सर्वेक्षण एवं प्रयोगकर्त्ताओं का साक्षात्कार भी किया जाना चाहिए।

योगदेय मूल्यांकन (Summative Evaluation) - किसी भी संस्था में शिक्षण एवं अधिगम के परिणामों को जानने के लिए योगदेय मूल्यांकन का प्रयोग किया जाता है। इस मूल्यांकन का उद्देश्य ई-लर्निंग के शिक्षण एवं अधिगम क्रियाओ पर समग्र प्रभाव को समय-समय पर जानना है। इसके साथ ही किस सीमा तक बैन्चमार्क (Bench mark) एवं अन्तिम परिणामों (Milestones) को प्राप्त कर पाये हैं, जानना भी है।

प्रबोधन अथवा समाकलित मूल्यांकन (integrative evaluation) - प्रबोधन मूल्यांकन का उद्देश्य ई-लर्निंग के प्रयोग अथवा ऑन लाइन लर्निंग का नियमित शिक्षण एवं अधिगम क्रियाओं में समाकलन का पता लगाना है। इस प्रक्रिया में तथ्य संकलन के द्वारा ई-लर्निंग द्वारा शिक्षण एवं अधिगम किरन सीमा तक प्रभावित हुये हैं का पता चलता है।

6.8 सारांश
(Summary)

ई-लर्निग चार प्रकार के प्रतिबिम्बित होते हैं :-

1. वैयक्तिक स्व-गतिक ई-लर्निग ऑन लाइन
2. वैयक्तिक स्व-गतिक ई-लर्निग ऑफ लाइन
3. समूह आधारित ई-लर्निग संयोजित (Synchronosuly)
4. समूह आधारित ई-लर्निग अ-संयोजित (Asynchronosuly)

- ई-लर्निग उपरोक्त अधिगम की विभिन्न रीतियों के संयोग द्वारा भी हो सकती है।
- ई-लर्निग की विशेषता अध्ययन में समय, गति व स्थान की लोचशीलता से है।
- ई-लर्निग में विभिन्न माध्यमों यथा ट्यूटर व डिजिटल लर्निग, आब्जैक्ट्स (Digital learning objects)का प्रयोग किया जाता हैं।
- माध्यम (Media) व शिक्षण विधियों के कुशल समाकलन से अनुकूलतम अधिगम किया जा सकता है।
- यह समाकलन शिक्षण रूपरेखा यथा दृश्य आधारित अधिगम, समस्या आधारित अधिगम, वैयक्तिक अध्ययन आधारित अधिगम एवं भूमिका निर्वहन आधारित अधिगम के द्वारा किया जा सकता है।
- ई-लर्निग के लिये पाठ्यक्रम संरचना एवं विकास, तकनीकी विषयवस्तु एवं सामग्री प्रबन्धन आदि प्रशासनिक व्यवस्थायें आवश्यक हैं।
- ई-लर्निग के क्रियान्वयन हेतु पंजीकरण, अधिगम बल, मापन एवं पृष्ठपोषण एवं प्रभाव का मूल्यांकन भी महत्वपूर्ण है।
- मूल्यांकन से तात्पर्य किसी प्रोग्राम, प्रक्रिया या क्रिया के फलस्वरूप अर्थात् प्रयोग, मूल्य उपयोगिता, प्रभाव से सम्बन्धित पृष्ठपोषण प्राप्त करना है।
- किसी भी मूल्यांकन व्यूहरचना में अग्र-अन्तिम छोर विश्लेषण, रूपदेय मूल्यांकन, योगदेय मूल्यांकन एवं समाकलित मूल्यांकन क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।
- ई-लर्निग का मूल्यांकन अलग नही है। इसका उद्देश्य सभी पर्णधारियों से तथ्य संकलन होना चाहिये।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. ई-लर्निग की अवधारणा एवं रीतियों को स्पष्ट करें।
   Clarify,the concept & modalities of E-Learning.
2. दृश्य-आधारित अधिगम की एक उदाहरण द्वारा व्याख्या करें।
   Explain Scenerio-based learning with an example.
3. ई-लर्निग को प्रभावी बनाने हेतु क्रियान्वयन से पूर्व क्या चुनौतियाँ आती हैं।
   What are challenges in the implementation of effective E-Learning?

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Mujibul Hasan Siddiqui(2004)Encyclopedia of Educational Technology.Vol-I Challenges of Edu.Technology. APH Publishing corporation,Delhi.
2. 2.S.Naidu.(2003)E-Learning: AGuide Book Of Principles,Procedures and Practices.New Delhi,India:Common Wealth Educational Media Center for Asia and the Common Wealth of Learning.

इकाई -7

ज्ञान-रचनावाद अधिगम (Constructivist Learning)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

7.1 प्रस्तावना
(Introduction)

7.2 ज्ञानरचनावाद का अर्थ
(Meaning of Constructivism)

7.3 अधिगम की ज्ञानरचनावाद धारणा
(Constructivist view of Learning)

7.4 ज्ञानरचनावाद अधिगम के अधिनियम
(Principles of Constructivist Learning)

7.5 ज्ञानरचनावाद अधिगम के प्रकार
(Types of Constructivist Learning)

7.6 ज्ञानरचनावाद उपागम एवं अधिगम व्यूह रचना
(Constructivist Approach &Learning Strategy)

7.7 ज्ञानरचनावाद की शैक्षिक उपयोगिता
(Educational Implication of Constructivist Class)

7.8 सारांश
(Summary)

7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

7.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर आप -

- ज्ञानरचनावाद पद की व्याख्या कर सकेंगे।
- ज्ञानरचनावाद में निहित अधिगम के अधिनियमों को समझ सकेगे।
- ज्ञानरचनावाद के विभिन्न प्रकारों को जान सकेंगे
- ज्ञानरचनावाद अधिगम कक्षा का निर्माण कर सकेंगे।
- अधिगम की परम्परागत धारणा एवं ज्ञानरचनावाद अधिगम के बीच भेद कर सकेंगे।

– ज्ञानरचनावाद अधिगम हेतु विभिन्न व्यूह रचनाओं ये अपना सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

अध्यापक अधिकांशत: व्याख्यान विधि के द्वारा शिक्षण करते हैं व कभी-कभी पाठ्यपुस्तकों में वर्णित विषयवस्तु का सत्यापन अन्य विधियों व क्रियाओं के द्वारा करते हैं। अध्यापकों द्वारा व्याख्यान विधि का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि वे यह मानते हैं कि उनकी भूमिका निष्क्रिय विद्यार्थियों तक ज्ञान का संचरण करना है।

शिक्षण एवं अधिगम की परम्परागत विधियाँ ज्ञान की वस्तुनिष्ठ धारणा पर (Objectivist view of Knowledge) पर आधारित है। वस्तुनिष्ठ धारणा की मान्यता है कि ज्ञान वस्तुनिष्ठ, सार्वभौमिक एवं पूर्ण है। जिन के पास ज्ञान है, वे ज्ञान को नहीं जानते वालों को देते है। कन्सट्रक्टिविजम, इसके विपरीत ज्ञान को विषयपरक, संदर्भित व अन्तर्भूत में आशिक मानता है। वस्तुनिष्ठ विचारधारा में ज्ञान निश्चित एवं अधिनायकवादी है। जबकि ज्ञानरचनावाद अधिगमकर्ता के मत-परिवर्तन एवं वास्तविकता की सामाजिक रचना पर ध्यान केन्द्रित करता है।

हाकिन्स (Hawkins, 1994) के अनुसार ज्ञानरचनावाद (Constructivism) का एक दर्शन के नाते लम्बा इतिहास है और प्याजे, डीवी, मौन्टेसरी एवं व्यगोरसकी मूल रूप में इस दर्शन के सिद्धान्तवेत्ता हैं। तथापि ये सिद्धान्तवेत्ता शिक्षा में प्रभावपूर्ण सुधारों को समर्थन नहीं दे पाये क्योंकि शैक्षिक व्यवहार में ज्ञानरचनावाद परिप्रेक्ष्य को प्रयोग में नहीं लिया गया।

1978 में ड्रीवर एंव इसले (Driver & Easley) ने अपने लेख में कहा कि कक्षा-कक्ष में हस्तक्षेप बालकों को स्वयं प्रत्यय संरचना में सहायता करते हैं। उनके अनुसार अधिगमकर्ता अपने पूर्व ज्ञान एवं वैयक्तिक अनुभवों के आधार पर ज्ञान की संरचना करता है। ड्रीवर एवं इसले के लेख से ज्ञानरचनावाद आन्दोलन का प्रारम्भ शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को बेहतर बनाने के लिये हुआ।

7.2 ज्ञानरचनावाद का अर्थ (Meaning of Constructivism)

बालक के अधिगम को देख कर आश्चर्य होता है कि वह किस प्रकार अपने आस-पास के निरन्तर व्यापक होते वातावरण को समझ लेता है। जीवन के प्रारम्भिक वर्ष भाषागत योग्यता, शारीरिक दक्षता (Physicaldexterity), सामाजिक समझ एवं भावात्मक विकास के लिये आधार प्रदान करते हैं। जिसका प्रयोग बालक जीवन पर्यन्त करते हैं। विद्यालयी जीवन में प्रवेश के लिये भी इस ज्ञान की आवश्यकता होती है। बालक अपने चारों ओर के वातावरण से अनुभव प्राप्त करते हुये व सूचना प्राप्त कर स्वयं को शिक्षित करता है। यह ज्ञानरचनावाद का एक उदाहरण हैं। ज्ञानरचनावाद व्यक्ति के द्वारा अधिगम अनुभव में ज्ञान, कौशल

धारणाओं एवं विश्वास की महत्ता को बल प्रदान करता है। यह नवीन ज्ञान की रचना को पूर्व अधिगम, नवीन सूचनाओं एवं अधिगम की तत्परता का संयोजन मानता है। व्यक्ति किन नवीन विचारों को स्वीकार करें व संसार के विषय में स्थापित विचारों में उन्हें किस प्रकार समायोजित करे, से सम्बन्धित विकल्पों का चयन ही ज्ञानरचनावाद है।

ज्ञानरचनावाद को अधिगम के दर्शन से सम्बोधित किया जाता है। यह दर्शन अधिगमकर्ता द्वारा नवीन विचारों की समझ के द्वारा स्वयं विकसित करने को प्रस्तावित करता है।

यह नवीन ज्ञान को ग्रहण करना अथवा परिचित तथ्यों व सूचनाओं को गहनता पूर्व अध्ययन की रेखीय प्रक्रिया नही है।

शैक्षिक दायरों में आद्यतन शब्द ज्ञानरचनावाद है। इस पद व दर्शन की व्याख्या सर्वप्रथम जॉन डयूवी व जीन प्याजे ने की है। ज्ञानरचनावाद ज्ञान एवं अधिगम का एक सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त जानना क्या है और व्यक्ति किस प्रकार जानकारी करता है, का वर्णन करता है। ग्रीन एवं ग्रेडलर, 2002 (Green &ग्रेडलेर,2002) के अनुसार बालक जब अपने अधिगम को स्व नियन्त्रित करते हैं, तब वे सीखते है। बालक इस को जानते है कि वे ज्ञान अधिगम स्वयं नियन्त्रित कर रहे हैं।

7.3 अधिगम की ज्ञानरचनावाद धारणा (Constructivist view of Learning)

ज्ञान संरचना प्रक्रिया के कुछ पक्षों को लेकर प्याजे (Piaget), व्योगोटस्की (Vygotsky), नोवाक (Novak), पोसनर (Posner) में मतभेद दिखाई देता है। परन्तु ज्ञानरचनावाद अधिगम उपागम के समर्थक निम्न विशेषताओं पर एकमत हैं :-

- अधिगम ग्रहण (Passive receptive) करने की निष्क्रिय न होकर सक्रिय रह अर्थग्रहण करने की प्रक्रिया है। यह समस्यायों के समाधान हेतु आवश्यक भी है।
- नवीन अधिगम विद्यार्थी के पूर्व ज्ञान पर निर्भर करता है। कभी-कभी यह ज्ञान नवीन सूचनाओं के अर्थग्रहण में बाधा डालता है।
- अधिगम पूर्व अर्जित अवधारणात्मक योजनाओं का पुनर्संगठन है।
- अधिगम की प्रक्रिया को सामाजिक अन्तःक्रिया सरल व सुगम करती है।
- प्रामाणिक अधिगम कार्यो (Learning tasks) में सार्थक अधिगम होता है।

7.4 ज्ञानरचनावाद अधिगम के अधिनियम (Principles of Constructivist Learning)

ज्ञानरचनावाद अधिगम से सम्बन्धित एक सिद्धान्त है, न कि शिक्षण का वर्णन। प्रत्येक अधिगमकर्ता व्यक्तिगत रूप से अधिगमित विषय वस्तु के अर्थ की रचना करता है। अधिगम के निम्न नौ अधिनियम ज्ञानरचनावाद से उद्भव हुये है :-

1. अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है। अधिगमकर्ता ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करते हुये अर्थ की संरचना करता है। अधिगम निष्क्रिय रहकर एक बार ज्ञान को स्वीकारने की प्रक्रिया नहीं हैं। अधिगम विद्यार्थी की बाह्य संसार के साथ संलग्न होने की प्रक्रिया है।
2. अधिगम कैसे किया जाता है, इसे व्यक्ति अधिगम करते समय सीखते हैं (People learn to learn as they learn)। अधिगम में अर्थ की सरंचना के साथ-साथ अर्थ की सरंचना प्रणाली (Constructing systems of meaning) भी सम्मिलित है।
3. अर्थपूर्ण अधिगम की महत्वपूर्ण प्रक्रिया मानसिक है। यह मस्तिष्क में घटित होती है। बालकों के लिये विशेष रूप से शारीरिक क्रियायें एवं स्व अनुभव आवश्यक हो सकते हैं, परन्तु वे पर्याप्त नहीं है। अधिगम के लिये हाथों एवं शारीरिक क्रियाओं के साथ-साथ मस्तिष्क को भी संलग्न करने की आवश्यकता है। डीवी (Dewey) ने इसे चिन्तनयुक्त प्रक्रिया (reflective activity) कहा है।
4. अधिगम में भाषा संलग्न हैं जो भाषा हम प्रयोग करते हैं, वह हमारे द्वारा अर्जित ज्ञान को प्रभावित करती है। लेव व्योगोटस्की (Lev Vygotsky) नामक मनोवैज्ञानिक का मानना है कि भाषा एवं अधिगम एक-दूसरे से पेचीदा रूप से जुड़े हुये हैं अर्थात् भाषा एवं अधिगम को अलग नहीं किया जा सकता है।
5. अधिगम एक सामाजिक प्रक्रिया है। अधिगम अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क के साथ घनिष्ठ रूप में जुडा हुआ है। अधिगम का सम्बन्ध समवयस्क समूह परिवार, अध्यापक एवं परिचितों से जुडा हुआ है। परम्परागत अधिगम प्रक्रिया में विद्यार्थी का सामाजिक अन्तःक्रिया से पृथकत्व निर्देशित है। डीवी ने इसकी ओर ध्यान आकर्षित करते हुये कहा है कि शिक्षा की व्याख्या अधिगमकर्ता एवं विषयवस्तु से सम्बन्धित है। डीवी ने 'प्रोग्रैसिव एजुकेशन' (Progressive Education) में अधिगम के सामाजिक पक्ष पर बल देते हुये वार्तालाप, दूसरों के साथ अतःक्रिया एवं ज्ञान के व्यवहारिक प्रयोग को अधिगम का अभिन्न अंग माना है।
6. अधिगम सदैव संदर्भित होता है। तथ्यों एवं सूचनाओं के अर्थ को संदर्भों में सीखा जाता है। हम सिद्धान्तों एवं तथ्यों को अपने जीवन से अलग कर मस्तिष्क के किसी कोने में नही संजो सकते। जो कुछ हम जानते हैं - वह हमारी पूर्व जानकारी, पूर्व विश्वास, पूर्वाग्रहों एवं आशंकाओं से सम्बन्धित कर सीखा हुआ हैं। अधिगम एक सामाजिक एवं सक्रिय प्रक्रिया है, इस विचार की प्रतिज्ञाप्ति है, जिसके प्रमाण की आवश्यकता नही है।
7. प्रत्येक व्यक्ति को अधिगम के लिये ज्ञान की आवश्यकता होती है। नवीन ज्ञान का आत्मीकरण पूर्व संरचित ज्ञान पर आधारित होता है। जितना अधिक हम जानते हैं, उतना ही अधिक हम सीख पाते हैं। प्याजे ने भी आत्मीकरण में विगत अनुभवों का प्रयोग करते हुये अनुभवों का परिचित परिस्थितियों में रूपान्तरित करने को कहा है।
8. अधिगम तुरन्त नहीं हो जाता। अधिगम में समय लगता है। सार्थक अधिगम के लिये हमें अपने विचारों को पुनः स्मरण कर व विचार कर प्रयोग करना होता है। यह पाँच या पन्द्रह मिनट की गतिविधि नहीं है।

यदि हम पूर्व में सीखी हुई विषयवस्तु पर चिन्तन करें तो यह अनुभव करते है कि यह निरन्तर विचार व उद्घाटन का परिणाम है।

9. अभिप्रेरणा अधिगम का मुख्य घटक है। अभिप्रेरणा न केवल अधिगम में सहायक होती है बल्कि यह अधिगम के लिये आवश्यक भी है। "शिक्षा ज्ञान को प्रयोग में लाना है न कि अर्जित करना

ज्ञानरचनावाद एक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है जिसमे अधिगम को व्याख्यात्मक, पुर्न विचारात्मक एवं निर्माणात्मक प्रक्रिया कहा गया है जिसमें अधिगमकर्ता सक्रिय होकर भौतिक एवं सामाजिक संसार के साथ अन्तक्रिया करते हैं।

7.5 ज्ञानरचनावाद अधिगम के प्रकार (Types of Constructivist Learning)

ज्ञानरचनावाद के मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त के प्रणेता जीन प्याजे एवं लेव व्योगोटस्की है। इस सिद्धान्त के समर्थकों में विवाद का विषय रहा है कि व्यक्तिगत संज्ञानात्मक संरचना की प्रक्रिया अधिक महत्वपूर्ण है अथवा अधिगम के परिणाम। इन धारणाओं को :-

(1) संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद (Cognitive Constructivism)

(2) सामाजिक ज्ञानरचनावाद (Social Constructivism)

नाम दिया गया है।

7.5.1 संज्ञानात्मक सरंचना (Cognitive Constructivism)

संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद व्यक्ति के द्वारा अर्जित ज्ञान, विश्वास, मूल्य, धारणाओं, आत्म प्रत्यय पर ध्यान केन्द्रित करता है। सार्थक अधिगम व ज्ञान की रचना व्यक्ति द्वारा की जाती है।

संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद विकासात्मक मनोवैज्ञानिक जीन प्याजे के कार्य पर आधारित है। प्याजे के सिद्धान्त के दो मुख्य भाग आयु एवं चरण/ अवस्था (ages & stages) हैं। यह सिद्धान्त बालक विभिन्न आयु की अवस्थाओं में क्या सीख सकता है व क्या नहीं सीख सकता, का वर्णन करता है। इसके अतिरिक्त बालक की संज्ञानात्मक योग्यताओं के विकास क्रम का वर्णन भी करता है। शिक्षण एवं अधिगम मे संज्ञानात्मक में रचना उपागम का मुख्य आधार विकास का सिद्धान्त है।

प्याजे का विकासात्मक सिद्धान्त सुझाव देता है कि मनुष्य को सूचना नहीं दी जा सकती, जिसे वह समझ कर प्रयोग में ला सके। उन्हें तो स्वयं ज्ञान का निर्माण अनुभव के आधार पर करना होता है। अनुभव के आधार पर व्यक्ति अपने मस्तिष्क में मानसिक प्रतिमाओं की रचना करता है। संज्ञानात्मक परिपेक्ष्य सिद्धान्त विद्यार्थी क्या सीखता है व कैसे सीखता है, पर केन्द्रित है|

प्याजे के सिद्धान्त में अध्यापक की भूमिका एवं कक्षा का वातावरण भी महत्वपूर्ण है। अध्यापक कक्षा के वातावरण को रूचिकर बनाता है ताकि विद्यार्थी स्वयं ज्ञान के निर्माण हेतु प्रोत्साहित हो। विद्यार्थियों में अन्वेषण की प्रवृत्ति विकसित हो। विशिष्ट कौशलों के सीधे

शिक्षण की अपेक्षा अधिगम को सार्थक संदर्भों में करने पर बल है। प्याजे के अनुसार "बोध ही खोज है, पुन: खोज के द्वारा पुननिर्माण होता है। यदि भविष्य में व्यक्तियों को उत्पादन एवं सृजनात्मक बनाना है, तो उनके लिये ऐसी दशायें उत्पन्न करनी होगी। सूचनाओं के दोहराव से ऊपर वर्णित योग्यतायें विकसित नही हो सकती। सक्रिय संलग्नता के द्वारा बोध एवं समझ चरण-चरण दर विकसित होती है। व्यक्ति में तार्किक योग्यता व चिन्तन का विकास विभिन्न पुनर्रचनाओं के फलस्वरूप होता है।

7.5.2 सामाजिक ज्ञानरचनावाद (Social Constructivism)

शिक्षण में ज्ञानरचनावाद के सिद्धान्त के अन्तर्गत सामाजिक ज्ञानरचनावाद (Social Constructivism) एक सम्प्रदाय /विचारधारा है। इस सिद्धान्त को विकसित करने का श्रेय कैनथ गैरगन (Kenneth Gergen) एवं जान डीवी (John Dewey) को जाता है। 19वीं शताब्दी में वरलिंगटन वरमान्ट मे जॉन डीवी का जन्म हुआ। वरलिंगटन जैसे छोटे शहर के मूल्यों (ethos) व प्राकृतिक विशेषताओं ने डीवी के शैक्षिक विचारों को प्रभावित किया। प्रारम्भ से ही डीवी ने माना कि परम्परागत औपचारिक मेज कुर्सी पर बैठकर प्राप्त की जाने वाली शिक्षा बेकार है। विकास की ओर अग्रसर अमेरिका के लिये इस प्रकार की विद्यालयी शिक्षा अपर्याप्त है।

तत्कालीन शिक्षा विषयवस्तु की दृष्टि से स्थैतिक, शिक्षण विधियों की दृष्टि से सत्तावादी, मुख्यत: निष्क्रिय व विद्यार्थी की दृष्टि से केवल ग्राह्य है। शिक्षा देने वाली की दृष्टि स्थिर, कठोर विषयवस्तु से परे कल्पना नहीं कर पाती। इसके साथ ही विद्यार्थी के अनुभवों से कोसों दूर है।

दूसरी तरफ डीवी ने समुदायिक जीवन के सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक सम्पर्कों को वास्तविक एवं सार्थक अधिगम परिस्थितियों के रूप में प्रत्यक्षीकृत किया। डीवी के लिये राजनीति केवल राष्ट्रीय महत्व की वस्तु नहीं थी बल्कि समुदाय के लिये महत्वपूर्ण तात्कालिक रूचि का विषय था। उनका मानना था कि विद्यालय बालक को सामुदायिक जीवन में सक्रिय भागीदारी के लिये तैयार करें। ऐसी शिक्षा व्यवस्था को समाप्त किया जाने चाहिये जो विद्यालयी अनुभव एवं सहभागीत्वपूर्ण प्रजातंत्र के बीच की दूरी को पुनर्बलित करती है। विद्यालय एक सामाजिक संस्था है। शिक्षा के सामाजिक प्रक्रिया होने के नाते विद्यालयी सामुदायिक जीवन का वह रूप है जिसमें अभिकरण सम्मिलित हैं। बालक विद्यालय के द्वारा प्रजातिगत संसाधनों को व अपनी शक्तियों का उपयोग करते हुये सामाजिक साध्यों को प्राप्त करता है। अत: शिक्षा एक जीवन जीने की प्रक्रिया है, भावी जीवन की तैयारी नहीं है।

इसी विचार के साथ डीवी ने 'लैबोरेटरी स्कूल' की स्थापना की।

'लैबोरेटरी स्कूल' के निम्न उद्देश्य है :-

1. नवीन विधियों एवं अधिनियमों पर शोध एवं प्रयोग का सुगमीकरण।
2. विद्यार्थियों को स्वयं अधिगम के लिये प्रयोगात्मक उपागम के लिये अनुमति देना।

डीवी के अनुसार शिक्षा क्रिया पर निर्भर करती है। मस्तिष्क स्वीकृत अर्थों, मूल्यों को पूर्नसंरचना, संशोधन, पुन: आकार देने का साधन है। यह जीवन की जीने वाली परिस्थितियों को दर्ज करने का भी साधन (The lived situations of life) है। मस्तिष्क सक्रिय है। यह संज्ञा नहीं है इसे क्रिया समझें डीवी ने विद्यार्थी के द्वारा अनुभव से प्राप्त ज्ञान को बल दिया। ज्ञान एवं विचार परिस्थिति से आते हैं, जिन्हें विद्यार्थी सार्थक अनुभव से प्राप्त करता है। ये परिस्थितियां सामाजिक वातावरण में जन्म लें व विद्यार्थी साथ मिलकर विषय सामग्री का विश्लेषण करते हुये ज्ञान का निर्माण करें।

'लैबोरेटरी स्कूल' में डीवी ने विद्यार्थियों को स्वयं अनुभव की रचना करने, प्रयोग करने अन्वेषण करने का अवसर दिया है। डीवी ने अपने शैक्षिक दर्शन को ज्ञानरचनावाद के स्थान पर 'प्रोग्रैसिव नाम दिया। परन्तु डीवी ने अपनी पुस्तक "Experience & Education"में उन मुद्दों पर विचार किया गया जो ज्ञानरचनावाद का आधार है। डीवी के सिद्धान्त का केन्द्र भूत विचार व्यक्तिगत अनुभव की भूमिका है। व्यक्तिगत अनुभव सामाजिक तत्वों से जुडे हुये हैं।

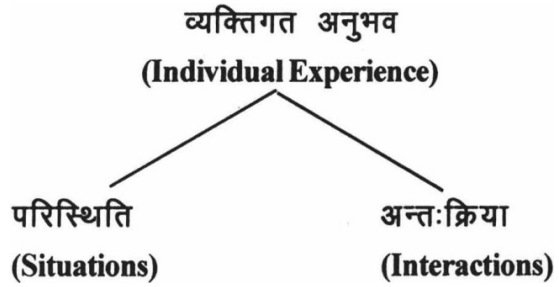

सामाजिक तत्वों में परिस्थितियों या आसपास का वातावरण व अन्तःक्रिया शामिल हैं। परिस्थितियों या वातावरण में अनुभव प्राप्त किया जाता है। अन्तःक्रिया से तात्पर्य पूर्ण शैक्षिक तैयारी से किसी अनुभव की विवेचना व व्याख्या करना है। डीवी के अनुसार अन्तःक्रिया शिक्षा की भूमिका का निर्वहन (Interactions a chief principle for interpreting an experience in it educational force) करती है। इस धारणाओं को स्पष्ट करने के लिये डीवी ने इस उदाहरण को दिया है।

"बालक एक दूसरे को नवीन खेल खेलना सिखाते है।

डीवी ने बताया कि एक दूसरे के साथ अन्तःक्रिया करते हुये उन्होंने किस प्रकार नवीन ज्ञान अर्जित किया। उसी 'प्रगतिशील शिक्षा' का उद्देश्य ऐसी विधियों का प्रयोग करना था जिससे बालकों को प्रभावशाली ढंग से शिक्षित किया जा सके।

लेव वयगोटस्की का मानना है कि बालक दैनिक जीवन में प्रत्ययों व अवधारणाओं तथा वयस्कों की अवधारणाओं से भी सीखते हैं। विद्यार्थी अपने समवयस्क समूह, अध्यापक एवं संदर्भित ढाँचे (contextual setting) से सीखते हैं। जब एक बालक के सम्मुख वयस्कों द्वारा पूर्व स्थापित अवधारणा को प्रस्तुत किया जाता है तो वे उसे अपनी स्मृति में धारण कर लेते हैं। इसके पश्चात् वह उस सामान्यीकरण पर स्वयं विचार करता है। वयगोटस्की ने

महसूस किया कि विद्यार्थियों को वयस्कों के निर्देशन की आवश्यकता है। लेकिन बालकों को अपने समवयस्क साथियों से प्रभावित भी होना चाहिये और स्वय अन्वेषण करना चाहिये।

जैरोम ब्रूनर ने माना कि अधिगम एक सक्रिय सामाजिक प्रक्रिया है, जिसमें विद्यार्थी नये विचारों व अवधारणों को वर्तमान ज्ञान के आधार पर निर्मित करते हैं। अनुदेशक को विद्यार्थियों को अधिनियमों व सिद्धान्तों के अन्वेषण के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये। विद्यार्थी स्वयं निर्णय ले कि उसे क्या, कब व कैसे सीखना है। पाठ्यक्रम को स्पाइरल (Spiral) की भांति व्यवस्थित करना चाहिये ताकि पूर्वज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान को विद्यार्थी निर्मित कर सके।

7.6 ज्ञानरचनावाद उपागम एवं अधिगम व्यूह रचना (Constructivist Approach &Learning Strategy)

ज्ञानरचनावाद उपागम में केन्द्र बिन्दु विद्यार्थी हैं। अत: विद्यार्थी केन्द्रित कक्षा में अधिगम की निम्न व्यूह रचनाओं के द्वारा ज्ञाननिर्मित किया जाता है -

- आनुभविक अधिगम (Experiential Learning)
- समस्या समाधान (Problem Solving)
- अन्वेषण (Exploration)
- सामाजिक अन्वेषण (Social Inquiry)
- प्रत्यय चित्रण (Concept mapping)

अनुभव आधारित अधिगम (Experiential Learning) :

1980 के दशक में ज्ञानरचनावाद ने अधिगम की अवधारणा को गढ़ रूप (profound) से प्रभावित किया। इस क्षेत्र में मेजीरो (Mezirow), फ्रे (Freire) व अन्य ने इस बात पर महत्त्व दिया कि अधिगम की अवधारणा में अनुभव प्रमुख है। आनुभविक अधिगम केवल 'क्षेत्रीय कार्य' (Field Work) अथवा ज्ञान को व्यवहार में प्रयुक्त करना (Praxis) नहीं है, इसका अर्थ जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के साथ जुडना है। यह एक सिद्धान्त है जिसमें अधिगम की संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं को परिभाषित किया गया है। आनुभविक अधिगम में समीक्षात्मक चिन्तन मनन पर आग्रह है।

डेविड कोलब (David Kolb) ओर उनके सहयोगी रोजर फ्राई (Roger Fry) आनुभविक अधिगम के प्रणेता हैं। आनुभविक अधिगम से आशय एक तरफ तो विद्यार्थी के द्वारा अर्जित ज्ञान, कौशलों एवं भावनाओं को संगत परिस्थिति में प्रयुक्त करता है। इसमें दृश्यमान परिस्थिति तत्व अथवा वस्तु के साथ प्रत्यक्ष सामना करके विद्यार्थी सीखते हैं अपेक्षाकृत परिस्थिति के बारे में विचार करने के।

आनुभविक अधिगम से दूसरा आशय जीवन की घटनाओं में सहभार्गिव करके सीखना ही शिक्षा है। इस संदर्भ में अधिगम किसी औपचारिक शिक्षण अवस्था के द्वारा शिक्षा नहीं है।

दैनिक जीवन के अनुभवों पर चिन्तन करके सीखने को आनुभविक अधिगम कहा जाता है। इसी भाँति हम सभी अधिगम करते हैं। डेविड कोलब (David Kolb) ओर उनके सहयोगी रोजर फ्राई (Roger Fry) आनुभविक अधिगम के प्रणेता हैं। कोलब ने आनुभविक अधिगम का निम्न मॉडल विकसित किया:-

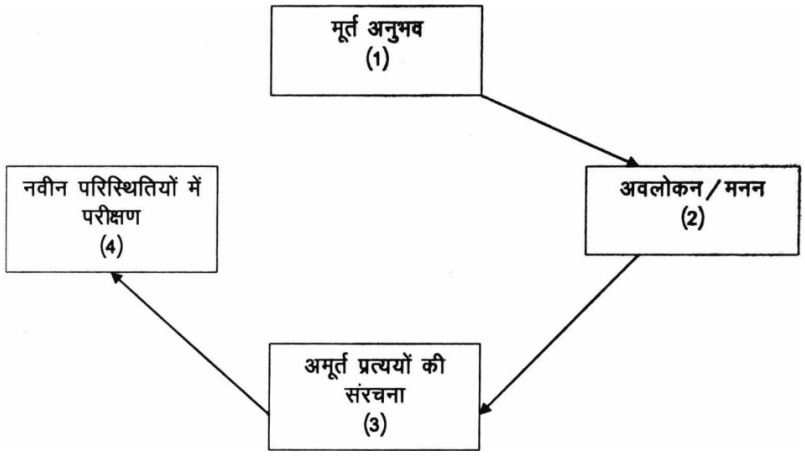

समस्या समाधान (Problem Solving)

अनुदेशनात्मक व्यूह रचना के रूप में समस्या-समाधान प्रत्ययों के बोध एवं बोध का नवीन परिस्थितियों में प्रयोग करने की योग्यता को विकसित करता है। इस युक्ति के द्वारा विचार विमर्शों, चिनतन की योग्यता विकसित होती है। जॉन डीवी ने अपनी पुस्तक 'How we think' में चिन्तन प्रक्रिया के पीच सोपान बतायें हैं, जो कि समस्या समाधान विधि के सोपान हैं -

1. समस्या को महसूस करना।
2. समस्या के बारे में सोचना, उसकी सरल एवं स्पष्ट विवेचना करना, उसके कारणों को ढूंढना।
3. समस्या समाधान के लिये सम्भावित हलों अथवा उपकल्पनाओं को एक-एक करके जांचना।
4. तर्क द्वारा अर्थात् लक्ष्यों, मूल्यों और सीमाओं को ध्यान में रखते हु ये सबसे अच्छा हल कौनसा है, का पता लगाना।
5. इस स्वीकार्य परिकल्पना का सत्यापन करना।

सामाजिक अन्वेषण उपागम

(Social Inquiry Approach)

ज्ञानरचनावाद धारणा के अनुसार सामाजिक अन्वेषण का उद्देश्य जीवन जीने के अनुभवों के आधार पर जटिल समाज को समझना है। सामाजिक अन्वेषण का उद्देश्य मात्र इस बने बनाये संसार से सम्पर्क मात्र नहीं था।

अन्वेषण की क्रिया में व्यक्ति मुद्दों से सम्बन्धित तार्किक, विश्लेषण, समीक्षा, पुनर्विश्लेषण करते हु ये मिलकर ज्ञान की संरचना करते हैं। सामाजिक अन्वेषण सामाजिक मुद्दों को पहचानने एवं उनसे प्रभावशाली ढंग से निपटने में सहायक होता है| यह उपागम सामाजिक समस्याओं को ढंग से निपटने में सहायक होता है। यह उपागम सामाजिक समस्याओं एवं

मुद्दों से सम्बन्धित सन्दर्भ में मनन एवं खोज से व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन की गुणवत्ता को बेहत्तर बनाया जा सकता है। फील्ड सर्व एवं शोध सामाजिक अन्वेषण उपागम पर आधारित है। ज्ञान एवं सत्य का निर्माण किया जाता है, ये मस्तिष्क के द्वारा की गई खोज नहीं है। ज्ञानरचनावाद के अनुसार वास्तविकता (reality) की प्रकृति बहुलवादी एवं नम्यवादी है। वास्तविकता को विभिन्न संकेतों, प्रतीकों एवं भाषाओं मे अभिव्यक्त किया जा सकता है। नम्यवादी से तात्पर्य मनुष्य के द्वारा वास्तविकता को उद्देश्य एवं संकल्प के अनुसार अनुकूल बना लिया जाता है। अपने अनुभवों को अर्थ प्रदान करने हेतु नित नवीन प्रत्ययों, मॉडलों एवं योजनाओं की रचना करते हैं। फिर नवीन अनुभवों को प्राप्त कर इनका परीक्षण एवं संशोधन करते हैं।

हरबर्ट थेलन (Herbart Thelan), डोनाल आलिवर एवं जेम्स पी. शेवर (Donal Oliver & james P.Shaver) एवं बायरन मासीआलास एवं बैन्जामिन कॉक्स (Byron Massialas & Benjamin Cox) ने शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के विभिन्न चरण बताये हैं। उदाहरणार्थ :-

1.	अभिमुखीकरण	Orientation
2.	उपकल्पना	Hypothesis
3.	अन्वेषण	Exploration
4.	साक्ष्य उपलब्ध कराना	Evidencing
5.	सामान्यीकरण	Generalization

किसी समस्या की व्याख्या, सहसम्बन्ध, समाधान अथवा नीति से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर की खोज सामाजिक अन्वेषण आरम्भिक बिन्दु है। सामाजिक पक्ष से जुड़ी समस्या से विद्यार्थियों एवं अध्यापकों का सुग्राहीकरण करना होता है। इसके पश्चात् उपकल्पना निर्माण किया जाता है।

अधिगम की प्रक्रिया कार्य (action) से प्रारम्भ होती है और फिर उस कार्य के प्रभाव का विश्लेषण किया जाता है। इसके पश्चात् अधिगमकर्ता उस पर मनन करके व्याख्या करता है।

प्रत्यय चित्रण (Concept mapping)

प्रत्यय मानचित्र को एक शिक्षण युक्ति के रूप में जे.डी.नोवाक ने अस्सी के दशक के प्रारम्भ में विकसित किया था। ऑसुबल के अधिगम सिद्धान्त से प्रत्यय चित्रण का उद्भव हुआ, जिसमें विद्यार्थी के पूर्व ज्ञान के आधार पर आगामी सार्थक अधिगम को महत्त्व दिया गया।

ऑसुबल के अनुसार सार्थक अधिगम के फलस्वरूप अधिगमकर्ता के संज्ञानात्मक संरचना में श्रृंखलाबद्ध परिवर्तन होते हैं। पूर्व स्थापित प्रत्ययों में संशोधन व विभिन्न प्रत्ययों

के मध्य कड़ी स्थापित होती है। इस प्रकार अर्थपूर्ण अधिगम स्थायी व प्रभावी होता है जबकि रटन्त अधिगम आसानी से विस्मृत हो जाता है और समस्यात्मक परिस्थितियों व नवीन अधिगम में प्रयुक्त नहीं हो पाता।

प्रत्यय मानचित्रण युक्ति के माध्यम से किसी भी विषय की अवधारणात्मक संरचना को प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्यय मानचित्रण एक प्रकार से सड़क के मानचित्र के समरूप है। नोवाक के अनुसार घटनाओं अथवा वस्तुओं की नियमितता को विशिष्ट नाम प्रदान करना ही प्रत्यय /अवधारणा है।

प्रत्यय मानचित्र चित्रात्मक प्रदर्शन है जिसमें विभिन्न प्रत्ययों / अवधारणाओं के मध्य सम्बन्ध को तर्कपूर्ण कथन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। विभिन्न प्रत्ययों को वृत्त / गोले के द्वारा चिन्हित करके रेखाओं के द्वारा जोडा जाता है। रेखाओं पर शब्द लिखे जाते है, जो दो या दो से अधिक प्रत्ययों के मध्य सम्बन्ध को स्पष्ट करते हैं| विभिन्न प्रत्यय पदानुक्रमिक रूप में व्यवस्थित किये जाते हैं। अत्यधिक सामान्य प्रत्यय (Superordinate) मानचित्र में ऊपर एवं निम्न स्तरीय (Sub-ordinate) प्रत्यय नीचे चित्रित किये जाते हैं। तर्कपूर्ण कथनों में कड़ी अथवा रेखांकित कड़ी (Cross links) प्रत्ययों की पदानुक्रमिक व्यवस्था के विभिन्न खण्डों को दर्शाती है।

प्रत्यय-चित्रण के माध्य से विद्यार्थी ज्ञान की संरचना एवं ज्ञान-विकसित करने की प्रक्रिया को सीखते हैं। ज्ञान की प्रकृत्ति एवं ज्ञान की संरचना का विद्यार्थी द्वारा अधिगम कैसे किया जाता है, की समझ विकसित करता है। प्रत्यय चित्रण में तीन प्रकार के ज्ञान का प्रयोग किया जाता है:-

1. तथ्य
2. प्रत्यय
3. सामान्यीकरण।

यह एक अधिगम व्यूह रचना है, जिसका प्रयोग प्रारम्भ में शोध के उपकरण के रूप में विद्यार्थी के संगत सार्थक ज्ञान को जानने के लिये व तत्पश्चात् अर्थपूर्ण अधिगम के लिये किया गया। उपरोक्त चित्रण का प्रत्यय-चित्रण निम्न प्रकार से किया जा सकता है:-

प्रत्यय मानचित्र का उदाहरण

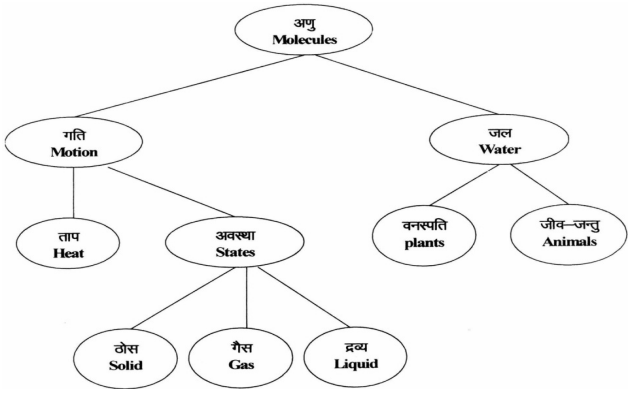

प्रत्यय-मानचित्रण का प्रयोग अध्यापक निम्न उद्देश्यों के लिये कर सकते हैं :-

(अ) विचारों के उद्भव हेतु (Brain Storming)

(ब) जटिल संरचनाओं के चित्र हेतु (Long texts,Web sites)

(स) जटिल विचारों के सम्प्रेषण हेतु (Communicate Complex Ideas)

(द) नवीन एवं पूर्व अधिगम के एकीकरण हेतु (Integration of new & old learning)

(घ) प्रत्ययों के बोध के मापन हेतु (Assessment of understanding of concepts)

7.7 ज्ञानरचनावाद की शैक्षिक उपयोगिता (Educational Implication of Constructivist Class)

ज्ञानरचनावाद कक्षा की स्थापना के लिये :

- कक्षा मे अध्यापक के प्रभाव के साथ-साथ विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने हेतु।
- अध्यापक समस्यात्मक परिस्थियों के निर्माण का उत्तरदायित्व ले।
- पूर्व में प्राप्त ज्ञान को विद्यार्थी में पुन: प्राप्ति की स्थिति में लाना व ज्ञान ग्रहण के लिये तैयार करने हेतु।
- कक्षा में सामाजिक वातावरण का निर्माण ताकि विद्यार्थियों में सीखने की अभिवृत्ति हेतु।
- अधिगम की प्रक्रिया अधिगम के परिणाम से महत्वपूर्ण है।

वास्तविक अधिगम के सुगमीरण हेतु अध्यापकों को पाठ्यक्रम एवं कक्षा की व्यवस्था इस प्रकार करनी होगी कि विद्यार्थी अपने साथियों व अध्यापकों के सम्मुख प्रश्न रखें, सहयोग करें व अन्तःक्रिया करें ।

कक्षा में विद्यार्थी अध्यापक का सम्मान करते है, परन्तु ज्ञानरचनावादी कक्षा में अध्यापक विद्यार्थियों का व विद्यार्थी अध्यापक का सम्मान करना है। अध्यापक विद्यार्थियों की भावनाओं, विचारों व मतों को अभिव्यक्ति की अनुमति देता है व उनको अनुचित शक्ति प्रयोग से रोकता भी है। सभी लोग मिल कर निर्णयन का उत्तरदायित्व लेते हैं।

एक ज्ञानरचनावादी अध्यापक विद्यार्थियों के समक्ष समस्याओं को प्रस्तुत कर विद्यार्थियों के अन्वेषण का प्रबोधन (Monitor) करता है। विद्यार्थियों को दिशा-निर्देश देते हुये चिन्तन के नये प्रतिमानों को प्रोन्नत करता है।

हम सभी ऐसी कक्षाओं में अध्ययन कर चुके 'है जब अध्यापक प्रश्न पूछता था तो उत्साह से विद्यार्थी हाथ खड़ा करते थे कि वे प्रश्नों के उत्तर जानते हैं। तब अध्यापक दूसरे विद्यार्थी से प्रश्न पूछ कर कहता था कि, नहीं। दूसरे विद्यार्थी के उत्तर पर कहता था काफी हद तक सही है परन्तु पूर्ण तथा सही नहीं है। तब अन्य विद्यार्थी से सही उत्तर प्राप्त कर कहता था कि हाँ, यह सही उत्तर है। विद्यार्थी जानता है कि अध्यापक के प्रश्न का एक ही सही उत्तर है और उन्हें वह सही उत्तर ढूंढना है। यदि वे इस उत्तर के बारे में निश्चित रूप से नही जानते, तो हाथ खड़ा करके जोखिम न लेवे। अध्यापक को चाहिये कि वे अन्य

अनुक्रियाओं को व उत्तरी को प्राप्त करने पर कहे कि उसने तो इस दृष्टि से विचार ही नहीं किया यह एक सकारात्मक सोच होगी।

अध्यापक के 'ना कहने पर विद्यार्थी सोचता है कि वह मूर्खता कर रहा है। अध्यापक को विद्यार्थियों को प्रोत्साहित व समर्थन प्रदान करना होगा। ज्ञानरचनावादी अध्यापक को तो विद्यार्थियों को चिन्तन के लिये तैयार करना होगा। विद्यार्थियों को अध्यापक के द्वारा 'क्या सोचे' बताने के लिये प्रतीक्षा नही करनी होगी। परम्परागत कक्षा में अध्यापक को सही उत्तर को अथवा विद्यार्थियों के अधिगम को प्रमाणित (Validate) करना होता है। जबकि ज्ञानरचनावादी कक्षा में अध्यापक विद्यार्थियों के मतो व विचारों को उत्पन्न करने मे सहायता करता है। विद्यार्थी अध्यापक से कम दिशा-निर्देशन व ध्यान प्राप्त करते हुये अग्रसर होते हैं। अपने विचारों को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करते हैं।

7.8 सारांश (Summary)

ज्ञानरचनावाद का मूल दर्शन, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र और शिक्षा में है। ज्ञानरचनावाद की बोध / समझ विकसित करने के साथ ही अध्यापक एवं अध्यापकों के वृत्तिक / व्यावसायिक विकास के लिये शैक्षिक उपादेयता को जानने के लिये भी आवश्यक है।

ज्ञानरचनावाद का केन्द्रीय विचार है कि मानव अधिगम को संरचित किया जाता है। अधिगम पूर्व अधिगम की बुनियाद पर नये ज्ञान को निर्मित करता है। यह उपागम पूर्व के अधिगम उपागमों से अलग है। परम्परागत अधिगम उपागम में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को ज्ञान का संचरण होता है। जिसमें अधिगमकर्ता ज्ञान को स्वीकारता / ग्रहण करता है, ज्ञान का निर्माता नहीं होता।

ज्ञान का निर्माण दो विचारों के चारों ओर घूमता है।

(1) पूर्व ज्ञान के आधार पर नवीन ज्ञान की' समझ - अधिगमकर्ता कोरी स्लेट नही है, जिस पर जो चाहे अंकित कर दिया जाये। वह अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर ज्ञान की रचना करता है। इस प्रक्रिया में पूर्व ज्ञान नवीन ज्ञान को प्रभावित करता है।

(2) अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है।

ज्ञानरचनावाद के प्रवर्तक प्याजे, डीवी, लेव वयगोटसकी व स्तर ने संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद व सामाजिक ज्ञानरचनावाद की विचारधारा को विकसित किया।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. ज्ञानरचनावाद की अवधारणा को स्पष्ट करें|
   Clarify The concept of Constructivist learning.
2. ज्ञानरचनवाद उपागम के प्रकारों का वर्णन करो|
   Describe, the types of constructivist learning.
3. ब्रूनर, प्याज़े व डीवी के ज्ञानरचनावादी सिद्धान्त में क्या अन्तर है?

What is the difference between the approach of bruner,piaget & Dewey?

4. ज्ञानरचनावाद की शैक्षिक उपयोगिता क्या है?
What is the educational implication of Constructivism?

7.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. जॉन डीवी, डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन : फ्रीप्रैस न्यूयार्क, 1966
2. जीन प्याजे, दू अन्डरस्टैन्ड इज दू इन्वैन्ट, ग्रास मैन, न्यूयार्क, 1973
3. लेव एस. वयोगोवस्की, माईन्ड इन सोसायटी दी डवलपमेन्ट ऑफ साइकोलोजीकल प्रोसेज, हार्वर्ड यूनिवरसटी प्रैस, कैमब्रिज, 1978
4. मॉरीन एपस्टीन वं ट्रीसिया रयॉन, यूजिंग इनफॉरमेशन इफैक्टीवली इन एजुकेशन, 2002
5. सन्तोष शर्मा (सम्पादक), कन्सट्रक्टविस्ट एप्रौचेज दू टीचिंग एवं लर्निग, एन.सी.ई.आर.टी., दिल्ली-2006

इकाई-8

अधिगम का प्रबन्ध Management of Learning

इकाई का संरचना

(Structure of Unit)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

8.1 प्रस्तावना
(Introduction)

8.2 प्रबन्ध की अवधारणा
(Concept of Management)

8.3 प्रबन्ध पर विभिन्न दृष्टिकोण
(Different view / opinion about management)

8.4 शैक्षिक प्रबन्ध के कार्य
(Functions of Education about management)

8.5 पठन-पाठन की व्यवस्था
(Organization teaching-learning)

8.6 पठन-पाठन के विभिन्न घटकों का अन्तर्सम्बन्ध
(Interrelation of factors of teaching-learning)

8.7 शिक्षक एक प्रबन्धक के रुप में
(Teacher as a manger)

8.8 सारांश
(Summary)

8.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

8.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई को पढ्ने के बाद विद्यार्थी -

1. प्रबन्ध की अवधारणा एवं पठन-पाठन प्रक्रिया में इसकी उपयोगिता समझ सकेंगे।
2. पठन-पाठन प्रक्रिया में शिक्षक द्वारा किए जाने वाले प्रबन्धकीय कार्य समझ सकेंगे - विभिन्न प्रबन्धकीय कार्यो (आयोजना, निर्णय प्रक्रिया, प्रबन्ध, निर्देशन एव मूल्यांकन) में निहित चरणों का विश्लेषण कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना (Introduction)

आपने शिक्षा में कई सिद्धान्तों एवं प्रोद्यौगिकी (जैसे व्यवहारिक विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, संचार सिद्धान्त आदि) का प्रभाव देखा होगा। कालान्तर में शिक्षा का क्षेत्र प्रबन्धकीय सिद्धान्तों तथा अभ्यासों से प्रभावित हुआ है। शैक्षिक प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत पठन-पाठन स्थितियों में प्रबन्धकीय सिद्धान्तों का प्रभाव भी आ जाता है। शिक्षा प्रणाली में अध्यापक की भूमिका पठन-पाठन कार्यो के लिए प्रबन्धक के रुप में जानी जाती है। इस इकाई में आप प्रबन्ध की मुख्य अवधारणा, पठन-पाठन गतिविधियों में प्रबन्धकीय सिद्धान्तों का प्रभाव तथा प्रबन्धकीय गतिविधियों में शिक्षक की भूमिका के बारे में जानेगें।

8.2 प्रबन्ध की अवधारणा (Concept of Management)

आप एक प्रबन्धक के कार्यो से भली-भाँति परिचित है। प्रबन्धक समस्त उपलब्ध स्त्रोतों का परिणाम प्राप्त करने की दृष्टि से वैज्ञानिक तरीके से उपयोग करता है। प्रबन्ध को इस प्रकार परिभाषित किया गया है।

"वह प्रक्रिया जिसके द्वारा सहकारी समूह समान लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए क्रियाओं का निर्देशन करता है|

यह कार्यों एवं उनको निष्पादित करने वाले व्यक्तियों की ओर इंगित करता है। क्रियात्मक रुप से इसका तात्पर्य है, लक्ष्य प्राप्ति के उद्देश्य से स्त्रोतों का प्रभावशाली एवं प्रवीणतापूर्वक उपयोग करना व्यक्ति के दृष्टिकोण से प्रबन्धक व्यवस्था सम्बन्धी कार्यो का सम्पादन करता है। प्लस तथा ओ डॉनेल कहते है, प्रबन्ध का अर्थ व्यक्तियों द्वारा कार्य करवाना है। इस अवधारणा के अनुसार हम शैक्षिक प्रबन्ध को इस प्रकार समझ सकते हैं, लक्ष्य प्राप्ति के लिए उपलब्ध स्त्रोतों का प्रभावशाली एवं प्रवीणता पूर्वक कार्य करना। शैक्षिक प्रबन्धक शिक्षा प्रणाली के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए व्यक्तियों द्वारा कार्य निष्पादित करता है|

8.3 प्रबन्ध पर विभिन्न दृष्टिकोण (Different view / opinion about management)

प्रबन्ध पर विभिन्न दृष्टिकोण निम्नानुसार है -

8.3.1 वैज्ञानिक प्रबन्ध -

प्रारम्भिक स्थिति में प्रबन्ध को उद्देश्यनिष्ठ कार्य कराने की प्रक्रिया माना जाता था। इसमें नीति निर्माता एवं कार्यकर्ता दोनों की पृथक -पृथक भूमिका होती थी। इसमें कार्य विभाजन पर जोर दिया जाता था। प्रत्येक का कार्य उल्लेखित होता था तथा उसका सम्बन्ध विशिष्ट उद्देश्यों से होता था। कार्यकर्ता /मजदूर की योग्यता उल्लेखित होती थी। प्रत्येक वर्ग को विशिष्ट

कार्य करने के लिए विशेष प्रशिक्षण दिया जाता था। प्रत्येक संवर्ग रहे लिए कार्य के स्तर निर्धारित होते थे। पर्यवीक्षकीय कर्मचारियों को प्रबोधन एवं मूल्यांकन का कार्य करना होता था। विभिन्न प्रकार के मजदूरों के लिए श्रम की दरें निर्धारित होती थी। उत्पादन की शर्तों पर खण्डित मजदूरी भुगतान तय किया जाता प्रबन्धन के विभिन्न सिद्धान्त बनाए गए, जैसे अधिकार एवं उत्तरदायित्व के बीच सहसम्बन्ध,

उच्चाधिकारियों द्वारा नियंत्रण, उच्चाधिकारियों एवं अधीनस्थों के मध्य सम्बन्ध का उल्लेख, सामूहिक हितों के लिए व्यक्तिगत हितों की अनदेखी करना, नीति निर्धारण में केन्द्रीकरण, व्यक्तियों के साथ समानता का व्यवहार आदि।

यदि पठन-पाठन प्रक्रिया में प्रबन्धन के इन सिद्धान्तों / विचारों को काम में लिया जाता है, तो आप पाठ्यक्रम की विषयवस्तु विधियों, कक्षा-कक्ष गतिविधियों आदि को जान सकते है। प्रक्रिया के पहलुओं को नीति बनाने वाले निर्धारित करते हैं। कार्य सम्पादन की स्थिति में निर्णय करने हेतु अध्यापक की सीमित भूमिका होती है। कार्य विशिष्टीकृत होते है। समय सारणी तय होती है। प्रत्येक शिक्षण कार्य के उद्देश्य के अपने उद्देश्य होते है। अध्यापक की पहल सीमित होती है। उनका कार्य निष्पादन पूर्व निर्धारित स्तर के अनुरुप मूल्यांकित किया जाता है।

कक्षा-कक्ष के सन्दर्भ में अध्यापक का अधिकार ही अन्तिम होता है। छात्रों की पहल भी सीमित होती है। प्रत्येक कार्य नियमबद्ध होता है। प्राध्यापक पठन-पाठन गतिविधियों का नियंत्रण करता है। कक्षा में पठन-पाठन के उद्देश्य पूर्व निर्धारित होते है। गतिविधियॉ उत्पादन केन्द्रित होती है जैसे परीक्षा परिणाम आधारित। पाठ्यक्रम पाठ्यपुस्तक तथा कलैण्डर के अनुसार पूर्व निर्धारित सहपाठ्य गतिविधियों पर जोर दिया जाता है। छात्रों की रुचि, अभिप्रेरण सृजनात्मकता, पहल आदि परिणाम केन्द्रित परीक्षा के अधीन होता है। पाठ्यक्रम के अन्तर्गत यांत्रिक रुप से छात्रों की गतिविधियों होती है।

छात्रों की रुचियों तथा स्वपहल आधारित गतिविधियों के स्थान पर उत्पादन की गुणवत्ता को अधिक महत्व दिया जाता है| समग्र रुप से वैज्ञानिक प्रबन्ध के सिद्धान्त लक्ष्य आधारित कक्षा-कक्ष प्रबन्ध, विषयवस्तु के मानदण्डों के व्यवस्थित एवं ग्रेडेड पाठ्यक्रम, उद्देश्य आधारित अध्यापकीय गतिविधियों, उत्पादन के मूल्यांकन के लिए उपयुक्त मूल्यांकन मानदण्ड, मानकित पाठ्यपुस्तकें एवं पठन-पाठन सामग्री आदि में सहयोग करते है। यह अवधारणा औपचारिक शिक्षा को दृढ़ करने का आधार सृजित करती है।

8.3.2 मानवीय प्रबन्ध

उद्देश्य आधारित यांत्रिक प्रबन्ध के विपरीत समाज वैज्ञानिकों विशेषत: मनोवैज्ञानिकों ने प्रबन्ध की अवधारणा को अधिक प्रभावित किया जाता है। मानवीय व्यवहारों को अधिक महत्व दिया गया है। समाज वैज्ञानिकों के अनुसार प्रबन्ध से सम्बन्धित मामलों में मानव के व्यवहार का अध्ययन ज्यादा महत्वपूर्ण है। प्रबन्धन के सभी स्तरों पर कार्य करने वालों

मे आपसी सम्बंध विकसित करने तथा सदस्यों के मध्य सहयोगात्मक रवैया विकसित करने की क्षमता पर एक अच्छा प्रबंध निर्भर करता है।

मानवीय सम्बन्धों, औपचारिक समूहों, संचार, कर्मचारियों का आत्म प्रेरण एवं नेतृत्व शैली आदि पर विशेष बल दिया जाता है। मानवीयता आधारित प्रबन्ध, सामाजिक मनोवैज्ञानिक घटनाएं, प्रबन्धकीय व्यवहारों का गति विज्ञान, सामूहिक गत्यात्मकता, प्रबन्धकीय बाधाएँ, परिवर्तन एवं प्रबन्धकीय विकास की तकनीक भी महत्वपूर्ण बिन्दु हैं।

पठन-पाठन प्रणाली में व्यवहार केन्द्रित प्रबन्ध का उपयोग, शिक्षार्थी का व्यवहार, रुचियों, अभिप्रेरण, पहल, रुझान, आपसी संवाद, -कक्षा में गत्यात्मकता, कक्षा-कक्ष वातावरण, निर्णय प्रक्रिया में विकेन्द्रीकरण आदि पर निर्भर करता है। यह शिक्षार्थी केन्द्रित पाठ्यक्रम एवं कक्षा-कक्ष गतिविधियों पर बल देता है। अध्यापक की भूमिका एक सुविधा दाता के रुप में रहती है। शिक्षार्थी का उत्तरदायित्व विकेन्द्रीकृत हो जाता है। कक्षा-कक्ष गतिविधियों को प्रारूपित करते समय शिक्षार्थी की कठिनाईयों एवं समस्याओं का ध्यान रखा जाता है। उनके अभिप्रेरण को प्रमुखता दी जाती है। व्यक्तिगत निर्देशन तथा स्व अध्ययन को प्रोत्साहित किया जाता है। कक्षा-कक्ष में सामूहिक गत्यात्मकता का अध्ययन किया जाता है। शिक्षार्थी की सामाजिक-मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए पठन्पाठन गतिविधियों के वैकल्पिक साधन तलाशे जाते है। पाठ्यक्रम, अधिगम उद्देश्य, विषयवस्तु सहपाठ्य गतिविधियाँ आदि का निर्धारण निर्णय लेने की प्रक्रिया में शिक्षार्थी के सहभागित्व द्वारा किया जाता है। सहपाठ्य गतिविधियों को विद्यालयी गतिविधियों के रुप में समाहित किया जाता है। समग्र रुप में शिक्षार्थी को प्रबन्ध का केन्द्र बिन्दु माना जाता है।

8.3.3 प्रबन्ध में प्रणाली उपागम

वैज्ञानिक विचारधारा एवं व्यवहारिक विचारधारा के मध्य विरोधाभास को प्रबन्ध में एकीकृत उपागम द्वारा पूर्ण किया जाता है। प्रणाली उपागम प्रबन्ध सम्पूर्णता की अवधारणा पर आधारित है। इसमें जटिल समस्याओं के समाधान की दृष्टि से मानवीय तत्व आधारित वैज्ञानिक कार्यो को सम्मिलित किया जाता है। आप प्रणाली उपागम के सिद्धान्तों में पढ़ चुके है। प्रणाली उपागम प्रबन्ध को उपतंत्र के विभिन्न भागों के परस्पर अन्तर्सम्बन्धित घटकों से बने हुए तथा पर्यावरण से अन्तक्रिया करने वाले जटिल एवं समग्र स्वरुप के रुप में समझाता है। इस उपागम में प्रबन्ध की आयोजन, निर्णय करना, संचार एव मूल्यांकन की प्रक्रिया मे लगे अन्तर्सम्बन्धों की प्रणाली माना जाता है। प्रबन्ध एक खुली प्रणाली है। प्रबन्ध प्रणाली पर्यावरण एव प्रणाली के आन्तरिक घटकों की अन्तःक्रिया के रुप में कार्य करती है। प्रबन्ध एक गत्यात्मक प्रक्रिया है। पठन-पाठन प्रणाली भी प्रकृति में एक खुली प्रणाली है। पठन्पाठन प्रणाली का स्वरुप प्रणाली के विभिन्न घटकों एवं सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक एवं तकनीकी के मध्य अन्तः क्रिया से निर्मित होता है। पठन-पाठन से सम्बन्धित निर्णय लेने की प्रक्रिया समग्ररुप से होनी चाहिए। जटिल समस्याओं का समाधान वैज्ञानिक तरीकों से होना चाहिए।

इसमें समस्याओं, आवश्यकताओं एवं उद्देश्यों का बारीकी से विश्लेषण सम्मिलित है। इसके प्रारुप निर्माण में उद्देश्यों, उत्पादन एवं बाधाओं को ध्यान में रखते हुए वैकल्पिक साधनों, विधियों एवं माध्यमों की खोज भी सम्मिलित है। प्रणाली उपागम में इसके सुधार के लिए फीड बैंक का तरीका भी सम्मिलित है।

पठन-पाठन समस्याओं को प्रणाली उपागम से हल करने के अन्तर्गत अधिगम आवश्यकताओं का विश्लेषण तथा निर्देशन लक्ष्यों का विशिष्टीकरण तथा उद्देश्यों से सम्बन्धित जटिल समस्याओं का विश्लेषण सम्मिलित है। इसमें शिक्षार्थी की अभिरुचि, क्षमता, अभिप्रेरण, अभिवृति भावी आकांक्षाएं एवं स्वयं की पहल के सन्दर्भ में मानवीय व्यवहार पर बल दिया जाता है| पठन-पाठन प्रणाली की मुख्य लागत (Input) के रुप में शिक्षक के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। विषयवस्तु साधन, विधियाँ माध्यम तथा प्रौद्योगिकी आदि का दिया गया वातावरण, अधिगम उद्देश्य, शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि, शिक्षक की दक्षता तथा भौतिक सुविधाओं के सन्दर्भ में विश्लेषण किया जाता है। इसके अन्तर्गत प्रणाली को अनके आयामों से देखा जाता है। शिक्षक को वैकल्पिक बहुआयामी की सुविधा प्रदान कर प्रेरित करते हुए खुलेपन को प्रोत्साहित किया जाता है। निरन्तर फीडबेक के माध्यम से उपयुक्त मूल्यांकन प्रविधियाँ काम में लेते हुए प्रणाली में सुधार किया जाता है।

8.4 शैक्षिक प्रबन्ध के कार्य (Functions of Education about management)

प्रबन्ध विशेषज्ञों ने प्रबन्ध के कार्यो को पाँच भागों में विभाजित किया है -

- आयोजन (Planning)
- प्रबन्धन (Organizing)
- कर्मचारियों का पदस्थापन (Staffing)
- निर्देशन (Directing)
- नियंत्रण (Controlling)

उक्त सभी कार्य आपस में अन्तर्सम्बन्धित है। इन कारणों का चक्रीय प्रवाह निम्न प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है -

पठन-पाठन में उक्त कार्यो का उद्देश्य पठन-पाठन प्रणाली के उद्देश्यों को प्राप्त करना होता है।

8.4.1 आयोजन -

आयोजन का सम्बंध निर्णय लेने की प्रक्रिया से सम्बन्धित है। इसके अन्तर्गत अग्रिम रुप से निर्णय लिए जाते है। उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए क्या करना है? कब और कैसे करना है? यह भविष्य की अवधारणा होती है। यह प्रबन्ध के लिए भविष्य के बीच का मार्ग प्रशस्त करता है। यह कार्यो की तैयारी का चरण है, जो वर्तमान व भविष्य के बीच की खाई को पाटता है। योजना में कुछ विकल्प भी सुझाए जाते है। अत: आयोजक को सर्वोत्तम विकल्प चुनने के बारे में सही विकल्प चुनने का अवसर प्राप्त होता है। निर्णय लेना आयोजन का महत्वपूर्ण घटक है।

प्रक्रियात्मक दृष्टिकोण से जटिल समस्याओं के समाधान का यह तर्कसंगत तरीका है। चाहे दीर्घ अवधि वाली योजना हो अथवा लघु अवधि योजना, आयोजक को भविष्य की संभावनाओं को ध्यान में रखना पडता है। इसमें आवश्यकताओं, समस्याओं, दिखाई देने वाले उद्देश्य, विकल्पों की खोज, साधन एवं संसाधन, संसाधनों को काम में लेने वाली समस्याओं तथा मूल्यांकन प्रक्रिया का विश्लेषण भी सम्मिलित है| प्रायोजना का उद्देश्य सर्वश्रेष्ठ एवं प्राकृतिक रुप से प्रभावी एवं प्रवीण वैकल्पिक साधनों की तलाश है। किसी प्रविधि की प्रभावशीलता उद्देश्य प्राप्ति के सन्दर्भ में देखी जाती है, जबकि प्रवीणता का मूल्यांकन समय, धन, संभाव्यता तथा साधनों की क्षमता के सन्दर्भ में किया जाता है। योजनाकार के योजना बनाने के विभिन्न चरणों में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए, क्योंकि इससे प्रबन्ध के अन्य सभी कार्य प्रभावित होते है।

पठन-पाठन प्रणाली मे लक्ष्य प्राप्ति के सन्दर्भ में आयोजन को प्रक्रिया का महत्वपूर्ण चरण माना जाता है। हम पठन-पाठन प्रक्रिया को समग्र रुप से देखें, अथवा प्रणाली के एक घटक के रुप में, हमें समस्याओं से सम्बन्धित गतिविधियों के बारे में गम्भीरता से विचार करना होगा। व्यापक अर्थों में पाठ्यक्रम आयोजन संस्था के लिए अतिव्यापक कार्यक्रम है। पाठ्यक्रम के संचालन पक्ष में भी हमें वर्ष भर के लिए पाठ्यक्रम सम्बन्धी तथा सह पाठ्य गतिविधियों की योजना बनानी होगी। हमें कक्षा में विषय पढ़ाने की वार्षिक अथवा सेमेस्टर आधारित योजना बनानी होगी। सतत् एवं सत्रान्त मूल्यांकन की योजना भी पठन-पाठन प्रणाली में अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है।

8.4.2 प्रबन्धन -

प्रबन्धन के दो उद्देश्य है एक भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का क्रमपूर्वक व्यवस्थित करना तथा दूसरा औपचारिक रुप से ज्ञात कार्यो तथा भूमिकाओं की संरचना का विकास करना। यह कार्य एवं भूमिकाएं विभिन्न सदस्यों में वितरित की जा सकती है, ताकि वे एक समूह में प्रभावपूर्ण तरीके से कार्य कर सके। प्रबन्धन में निम्न चरण सम्मिलित है -

1. उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रणाली की गतिविधियों का निर्धारण करना।
2. इस प्रकार की गतिविधियों का समूहों में वर्गीकरण।

3. विभिन्न समूह की गतिविधियों का उत्तरदायित्व सदस्य विशेष को सौपना।
4. शक्तियाँ (अधिकार) प्रदत्त करना एवं कार्य करने का उत्तरदायित्व सौपना।
5. इन गतिविधियों का विभिन्न स्तरों पर समन्वयन।

इस प्रकार लोगों के मध्य कार्य का विभाजन एवं विशिष्ट उद्देश्यों को प्राप्त करने के उनके प्रयासों का समन्वय करना ही प्रबन्ध का मूल आधार है। जब व्यक्तियों के समूह द्वारा कई गतिविधियॉ संचालित की जा रही हो, तब प्रबन्धन जटिल हो जाता है। गतिविधियों की प्रकृति जटिल प्रकृति की हो सकती है। ऐसी गतिविधियों का विश्लेषण कर उनको उत्तरदायित्व योग्य व्यक्तियों को देना प्रबन्धक के लिए एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। लक्ष्य की दिशा में की जा रही गतिविधियों का समन्वय भी महत्वपूर्ण कार्य है। पठन-पाठन प्रणाली में हमें अधिगम के विभिन्न स्त्रोतों की पहचान, विभिन्न साधनों का उपयोग, विधियॉ तथा सम्बन्धित गतिविधियों के बारे में निर्णय लेना होता है। विशिष्ट गतिविधियाँ विभिन्न विधियों तथा प्रणालियों में सम्बद्ध है, जिनमें से कुछ शिक्षकों द्वारा कुछ विशेषज्ञों द्वारा तो कुछ विद्यार्थियों द्वारा की जाती है। विभिन्न साधनों, विधियों तथा माध्यमों को काम में लेते हुए हम प्रक्रिया के पक्षों जैसे शिक्षा के लक्ष्य एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में विभिन्न गतिविधियों के समन्वयन से सम्बद्ध रहते है।

8.4.3 कर्मचारियों का अनुस्थापन -

कोई भी संगठन अपने कर्मचारियों के द्वारा कार्य का सम्पादन करता है। संगठन में पर्याप्त संख्या में क्षमतावान एवं योग्य व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है। किसी संगठन में कर्मचारियों के चयन एवं उसकी व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि हेतु पर्याप्त सावधानी बरती जाती है। मानवीय शक्ति की अच्छी योजना बनाई जानी चाहिए। किसी स्थापित संस्था में प्रबन्ध को कर्मचारियों की नियुक्तियाँ, पदोन्नतियॉ त्यागपत्र, सेवानिवृतियॉ स्थानान्तरण, वेतन वृद्धियॉ आदि महत्वपूर्ण कार्य करने होते हैं।

विद्यालय जैसी शैक्षिक संस्थाओं में हमें विभिन्न संवर्गो में दो प्रकार के व्यक्तियों (शैक्षणिक तथा अशैक्षणिक) के बारे में विचार करना होता है। शैक्षिक प्रणाली में कर्मचारियों की नियुक्ति एक प्रमुख कार्य है। शैक्षणिक दृष्टि से मानवीय व्यवहार विशेषत: कर्मचारियों की व्यावसायिक वृद्धि एवं सुरक्षा का विशेष ध्यान रखा जाना चाहिए। सामान्यतया शिक्षण संस्थाओं में नियुक्तियाँ एवं व्यक्तित्व विकास का उत्तरदायित्व प्रशासन पर निहित है।

अत: शैक्षिक संस्थाओं में स्टाफ की नियुक्ति महत्वपूर्ण स्थिति में नहीं है। यह कार्य व्यापक रुप से विद्यालय प्रबन्ध द्वारा किया जाता है।

8.4.4 निर्देशन -

प्रबन्धन के अन्तर्गत अच्छी प्रकार से समन्वित योजनाएँ, नियम पूर्वक स्थापित कर्तव्य एवं अधिकार, कर्मचारी अधिकारी सम्बन्ध आदि आते है। निर्देशकीय कार्यो के कारण ही प्रबन्धक कर्मचारियों

द्वारा उनके कार्य करवाने में सफल होते हैं, ताकि उनके कार्य संगठन के उद्देश्यों की ओर अग्रसर हो सके। इसके अन्तर्गत नियमित रुप से कर्मचारियों का मार्गदर्शन, अभिप्रेरण एवं संचार आ जाता है। निर्देशन के विभिन्न घटकों मे निम्न गतिविधियॉ होती है -

1. आदेश निर्देश प्रसारित करना।
2. कर्मचारियों का मार्गदर्शन करना।
3. गतिविधियों का परिवीक्षण करना तथा फीडबेक प्रदान करना।
4. अधीनस्थों को प्रेरित करना।
5. अनुशासन बनाना एवं उत्तम कार्यो को पुरस्कृत करना।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. अधिगम के प्रबन्ध में कौन -कौन सम्मिलित है।
2. शैक्षिक प्रबन्ध के कार्य कौन -कौन से है।

पठन-पाठन प्रणाली में शिक्षक एक नेता का कार्य करता है। शिक्षार्थी को पर्याप्त निर्देश दिए जाते है। शिक्षार्थियों को अध्यापन में अभिप्रेरण करने तथा पढ़ाई में प्रेरण बनाए रखने हेतु कई तरीके काम में लिए जाते है। अध्यापक द्वारा अधिगम की गतिविधियों का परिवीक्षण किया जाता है। अधिगम की गतिविधियों का परिवीक्षण किया जाता है। अधिगम कार्यो में सुधार के लिए फीडबेक दिये जाते हैं तथा अधिगम प्रणाली की सीमाओं को हल करने के लिए उपाए किए जाते हैं। अध्यापक तथा शिक्षार्थी के मध्य विचारों के आदान-प्रदान को प्रोत्साहित करने के लिए उपयुक्त प्रविधियाँ काम में ली जाती है। पठन-पाठन संस्थितियो में अनुशासन बनाए रखने के लिए उपयुक्त तरीके अपनाए जाते है।

8.4.5 नियंत्रण -

किसी भी संगठन की वृद्धि उस संगठन के कार्यो के समय-समय पर मूल्यांकन के तरीकों में खुलेपन पर निर्भर करता है। संगठन के विभिन्न घटकों द्वारा वास्तव में सम्पादित कार्यो के अवलोकन से हमें प्रणाली को मजबूत बनाने के लिए रास्ता मिलता है। योजनाओं के विभिन्न चरणों के उचित क्रियान्वयन तथा संगठन को उचित कदम उठाने में मूल्यांकन सहायता करता है। नियंत्रण में निम्न चरण सम्मिलित है-

1. मानक तथा अभिलिखित विचलन के विरुद्ध वास्तविक सम्पादित कार्यो का मापन
2. ऐसे विचलन के कारणों की खोज एवं विश्लेषण करना।
3. नकारात्मक विचलनों के लिए उत्तरदायित्व निर्धारित करना।
4. संगठन के उद्देश्यों की प्राप्ति की दिशा में कर्मचारियों के कार्यो में सुधार करना|

पठन-पाठन के मामले में पठन सामग्री के मूल्यांकन, अधिगम प्रक्रिया के निरन्तर अवलोकन एवं शिक्षार्थी के कार्यो के मूल्यांकन हेतु उपयुक्त कदम उठाए जाते हैं। इससे प्रणाली की कमजोरियों एवं क्षमताओं का पता चलता है। पठन-पाठन प्रणाली में लागत (Input) के मूल्यांकन के लिए उपयुक्त तरीके काम में लिए जाने चाहिए।

8.5 पठन-पाठन की व्यवस्था (Organization teaching-learning)

ऊपर हम प्रबन्ध (विशेषत: शैक्षिक प्रबन्ध) के विभिन्न कार्यो के बारे में जान चुके हैं। पठन-पाठन संस्थितियो में मात्र चार चरणों का उपयोग होता है।

1. योजना
2. संगठन
3. निर्देशन
4. नियंत्रण एवं मूल्यांकन

8.5.1 योजना -

इसमें प्रणाली विश्लेषण के चरण काम में आते हैं। अधिगम आवश्यकताओं एवं समस्याओं के विश्लेषण से हमें उद्देश्यों की विशिष्टताओं की ओर बढ़ने हेतु निर्देशन प्राप्त होता है। शिक्षार्थी का प्रारम्भिक व्यवहार जाँचा जाता है। उद्देश्यों को वातावरण विशेष से जोड़ने के लिए तथा एक घटक का दूसरे घटक में अन्तर्सम्बन्ध स्थापित करने के लिए विषयवस्तु का विश्लेषण किया जाता है। विषयवस्तु के सन्दर्भ में उद्देश्यों का क्रम तथा मानदण्ड जाँच को निर्धारित करने के प्रयास किये जाते है। उद्देश्यों तक पहुँचने की उनकी सामर्थ्य, उपलब्धता, यांत्रिकी ज्ञान तथा भौतिक सहयोग को ध्यान में रखकर उपयुक्त साधन एवं विधियों की तलाश की जाती है। पढ़ने की योजना पूरे पाठ्यक्रम, एक मोड्यूल अथवा एक पाठ के लिए की जा सकती है।

8.5.2 संगठन -

इस चरण में अधिगम में काम आने वाले साधनों विधियों एवं स्त्रेतों को संगठित, किया जाता है। उपयुक्त विधियों एवं सामग्री की तलाश की जाती है। उनके संचालन के विभिन्न पक्षों पर कार्य किया जाता है। अधिगम सामग्री का विकास, वर्तमान में उपलब्ध अथवा विशेषज्ञ-शिक्षकों द्वारा दृश्य-श्रव्य सामग्री का विकास, विशिष्ट शिक्षण कौशलों के विकास हेतु तैयारी. शिक्षण मोड्यूल तैयार करना आदि कदम उठाए जाते हैं। शिक्षार्थी के व्यक्तिगत कार्य एवं समूह कार्यो की पहचान की जाती है। निर्धारित समयाविधि में की जाने वाली विशिष्ट गतिविधियों करते समय विभिन्न स्त्रोतों का उपयोग किया जाता है। यदि यह समूह अध्यापन कार्य है, तो शिक्षक कार्य का विभाजन कर उसी प्रकार की तैयारी करता है। शिक्षार्थियों की गतिविधि आधारित तरीके में कुछ गतिविधियों को संगठित किया जाता है, जैसे पुस्तकालय अध्ययन, सेमीनार, खेल, रोल, प्ले, क्विज आदि।

8.5.3 निर्देशन-

इस स्तर पर प्रक्रिया पक्ष जैसे प्रविधि को व्यवहार में लाने पर विशेष बल दिया जाता है। इसके अर्न्तगत संचार की उपयुक्त प्रविधियाँ अभिप्रेरण तथा पुनर्बलन के तरीके भी सम्मिलित है। अधिगम कार्यो के वर्गीकरण तथा सम्बन्धित गतिविधियों के संगठन के अनुसार

सम्भागियों (शिक्षार्थियों) को उनके विशिष्ट कार्यों के क्रियान्वयन हेतु निर्देशन प्रदान किए जाते है। यदि यह शिक्षक केन्द्रित गतिविधि है, तो अध्यापक शिक्षार्थियों को निर्देश देता है, जिसके अनुसार शिक्षार्थी कार्य करते हैं अध्यापक शर्तों को बताता है। यदि यह शिक्षार्थी केन्द्रित गतिविधि है, तो अध्यापक ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न करता है, जिसमें शिक्षार्थी विचार-विमर्श कर सके और स्वयं के निर्णय ले सके। अधिकांश परिस्थितियों में शिक्षार्थी स्व अधिगम गतिविधियों द्वारा अध्यापक द्वारा ज्यादा दखल करने पर स्वयं निर्णय लेता है। कार्य करने का कोई भी तरीका हो, शिक्षार्थी एवं शिक्षक के मध्य अध्यापक का निर्देशन आवश्यक है। उदाहरण के तौर पर आमने-सामने कक्षा आधारित शिक्षण की परिस्थितियों में शिक्षक व शिक्षार्थी के मध्य मौखिक संवाद पर अधिक बल दिया जाता है। कक्षा-कक्ष अन्तक्रिया पद्धति को एक प्रभावशाली शिक्षण का तरीका माना जाता है। दूरस्थ शिक्षण स्थितियों में शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य लिखित संवाद पर अधिक बल दिया जाता है। निश्चित तौर पर नवीनतम संवाद प्रविधियों के उपयोग से शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य दो तरफा लिखित एवं भौतिक संवाद भी होता है। अभिप्रेरण एवं पुर्नबलन शिक्षण निर्देशन के अन्य महत्वपूर्ण घटक हैं। अध्यापक को निम्न बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करना होगा।

1. छात्र के अभिप्रेरण को तीखा बनाना
2. अभिप्रेरण की उपयुक्त तकनीक का चयन करना

इस स्तर पर शिक्षार्थी का अभिप्रेरण मुख्य ध्यान देने योग्य बिन्दु है। शिक्षक को अभिप्रेरण के सिद्धांत का भली-भाँति ज्ञान होना चाहिए तथा यह भी ज्ञान होना चाहिए कि पठन-पाठन स्थितियों में उनका दक्षतापूर्वक उपयोग कैसे किया जा सकता है। आप शैक्षिक मनोविज्ञान के पाठ्यक्रम में अभिप्रेरण के तरीकों के बारे में जान चुके हैं। शिक्षण में निर्देशन करते समय अध्यापक को निम्न के माध्यम से उपयुक्त अभिप्रेरण तकनीक का उपयोग करना चाहिए।

- पुरस्कार एवं दण्ड (Reward and Punishment])
- प्रशंसा एवं निन्दा (Praise and Reproof)
- सफलता एवं असफलता (Success and Failure)
- पूर्णता एवं सहयोग (Completion and Co-ordination)
- ज्ञान एवं प्रगति (Knowledge and Progress)
- अनोखापन (Novelty)
- आकांक्षा स्तर (Level of Aspiration)

अधिगम संस्थितियो में कुछ बाधाओं एवं सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए अभिप्रेरण की विभिन्न तकनीकों को काम में लेने के लिए हमें उपयुक्त प्रविधियों को अपनाना चाहिए।

8.5.4 नियंत्रण एवं मूल्यांकन -

पठन-पाठन प्रणाली का मूल्यांकन अधिगम प्रबन्ध के इस कार्य का उद्देश्य समय-समय पर अधिगम की प्रगति का पता लगाना, अन्तिम उत्पाद का मापन, अन्तिम उत्पाद का अपेक्षित उत्पाद अथवा अधिगम उद्देश्य से तुलना करना तथा अधिगम प्रणाली के विभिन्न घटकों को फीडबेक प्रदान करना है। अधिगम मूल्यांकन द्वारा शिक्षार्थी को अपने अध्ययन में 'सुधार हेतु फीडबेक मिलता है। इसके द्वारा शिक्षक प्रणाली की कमियों को पहचान कर समस्याओं के हल के लिए उपचारात्मक कदम उठा सकता है। निम्न उपलब्धि वाले छात्रों के लिए उपचारात्मक शिक्षण का प्रबन्ध किया जा सकता है। उच्च बौद्धिक स्तर वाले छात्रों के लिए उनमें योग्यता वृद्धि हेतु विशेष सत्रों की व्यवस्था की जा सकती है। मूल्यांकन के आधार पर साधन एवं विधियों में रुपान्तरण किया जा सकता है। विभिन्न संवर्गो, उच्च उपलब्धि मध्यम व निम्न उपलब्धि वाले छात्रों के लिए विभिन्न प्रकार के फीडबेक दिए जा सकते हैं शिक्षण प्रविधियों में योजना व नीतियों में शिक्षक स्वयं परिवर्तन कर सकता है। अधिगम के मूल्यांकन के लिए मात्र उपलब्धि परख ही काम में नहीं आते, वरन् अन्य प्रकार के उपकरण जैसे अभिवति मापनी, रुचि परख, मूल्य जाँच, प्रतिक्रिया मापनी, अवलोकन अनुसूची, साक्षात्कार अनुसूची आदि जो भी मानदण्ड के अनुरुप होते हैं, काम में लिए जाते हैं।

शिक्षक मूल्यांकन गतिविधियों की योजना को योजना के एक घटक के रुप में बनाता है। मानदण्ड जाँच तथा अन्य जाँच तथा उपकरण का निर्माण मूल्यांकन प्रक्रिया से पूर्व कर लिया जाता है। उपकरण के चयन अथवा उपकरण निर्माण में पूर्ण सावधानी बरती जानी चाहिए। उनके उपयोग से पूर्व उनकी प्रभावशीलता, उपयुक्तता, विश्वसनीयता, उपयोगिता आदि की जाँच कर ली जाती है। पठन-पाठन गतिविधि तथा मूल्यांकन प्रक्रिया को एकीकृत करते समय पूर्ण सावधानी बरती जानी चाहिए। ताकि प्रणाली में मूल्यांकन द्वारा विकार उभर सके। सम्पूर्ण प्रणाली में प्रविधि के भाग के रुप में परिवर्तन अथवा सुधार करने के लिए उपयुक्त कदम उठाए जाने चाहिए।

8.6 पठन -पाठन के विभिन्न घटकों का अन्तर्सम्बन्ध (Interrelation of different components / factors of teaching learning)

ऊपर बताए गए चारो घटक आपस मे अन्तर्सम्बन्धित है। प्रबन्ध के समस्त कार्यो का उद्देश्य अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त करना है। योजना शेष तीन कार्यो के लिए आधार बनाती है, जबकि संसाधन संभाव्यता, प्रबन्ध की बाधाएँ, निर्देशन एवं मूल्यांकन आयोजन में लचीलापन को प्रभावित करती है। प्रबन्धन योजना से सम्बद्ध है। यह कार्य वितरण, निर्देशन तथा कार्य में समन्वयन से सम्बन्धित है। मूल्यांकन प्रबन्धन को मजबूत बनाने में सहायता करता है।

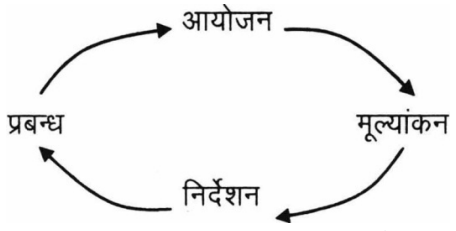

संवाद प्रविधि, निर्देशन, अभिप्रेरण आदि का निर्धारण प्रबन्ध तथा मूल्यांकन की योजना द्वारा किया जाता है। योजना प्रविधि का मूल्यांकन किया जाता है। प्रबन्ध का भी मूल्यांकन किया जाता है। संचार प्रणाली, अभिप्रेरण यांत्रिकी, अनुशासन आदि का भी मूल्यांकन किया जाता है। दूसरे शब्दों में मूल्यांकन पठन-पाठन प्रणाली में योजना, प्रबन्ध तथा निर्देशन की गतिविधियों को मजबूत करने में सहयोग करता है।

8.7 प्रबन्धक के रुप में शिक्षक (Teacher as a manger)

पठन - पाठन गतिविधियों में शिक्षक एक प्रबन्धक की भूमिका का निर्वहन करता है| जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कोई बिन्दु क्यों पढ़ाया जायेगा? कौन सा विषय पढ़ाया जायेगा? तथा कैसे पढ़ाया जायेगा? इन बातों की निर्णय प्रक्रिया में शिक्षक की अहं भूमिका होती है और शिक्षक ही इस बात का निष्कर्ष निकालते है, कि शिक्षण प्रभावशाली है या नहीं?

शिक्षक एक नियंत्रण कर्ता के रुप में अधिगम उद्देश्यों को पूरा करने वाली उपयुक्त गतिविधियों को निश्चित करता है। एक प्रबन्धक के रुप उन गतिविधियों का उपलब्ध साधनों से प्रबन्ध करता है एवं क्रियान्वयन के रुप में उनका सम्पादन करता है|

जैसा उपर कहा जा चुका है, शिक्षक इन चरणों में कार्य करता है -

1. पढाने की योजना बनाना
2. शिक्षण का प्रबन्ध
3. शिक्षण का निर्देशन
4. शिक्षण का नियंत्रण

8.7.1 निर्णयन प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका-

पठन-पाठन प्रविधि के सम्बन्ध में निर्णय लेने की प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका उतनी ही महत्वपूर्ण है, जितनी उस निर्णय के क्रियान्वयन में। निर्णयकर्ता के रुप में शिक्षक को कुछ सिद्धान्त अपनाने पडते हैं, जैसे - (1) परिभाषा का सिद्धान्त (2) साक्षी का सिद्धान्त (3) पहचान का सिद्धान्त आदि।

सर्वप्रथम समस्या स्पष्ट रुप से परिभाषित कर देने से आधी समस्या का तो स्वत: ही समाधान हो जाता है।

दूसरा समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त साक्ष्य एकत्रित किए जाने चाहिए। निर्णय जल्दबाजी में नहीं किए जाने चाहिए।

तीसरा निर्णयकर्ता को व्यक्तियों द्वारा प्रेषित विभिन्न दृष्टिकोणों पर विचार करना चाहिए। अन्तिम समाधान पर पहुँचने से पूर्व शिक्षक को साथी शिक्षकों एवं छात्रों की बात पर भी विचार करना चाहिए।

शिक्षक द्वारा निर्णय लेने की प्रक्रिया निम्न चरणों में होती है -

1. वास्तविक समस्या की पहचान तथा निदान पठन-पाठन संस्थितियो में शिक्षक को जटिल समस्याओं के बारे में सावधान रहना चाहिए। वास्तविक समस्या का पता करने में यह पता लगाया जाता है कि वर्तमान में उपलब्ध तथा अपेक्षित उपलब्धि में क्या अन्तर है? इस अन्तर का क्या कारण है? पठन-पाठन प्रणाली के उच्च उद्देश्यों के सन्दर्भ में समस्या को पहचाना जाता है। शिक्षक को इस चरण पर गम्भीरतापूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

2. विकल्पों की खोज निर्णयन प्रक्रिया का दूसरा चरण है, उपलब्ध विकल्प की खोज तथा सम्भावित परिणाम का अनुमान लगाना है। समस्या का मूल कारण खोजा जाना चाहिए।

3. उपलब्ध विकल्पों का विश्लेषण एक बार विकल्पों की पहचान हो जाने पर उनसे सम्बन्धित महत्व का व्यापक विश्लेषण होना आवश्यक है। प्रत्येक विकल्प में जोखिम का तत्व तथा संसाधन प्राप्ति की समस्याओं का पता लगाया जाना चाहिए। पठन-पाठन के सामान्य उद्देश्यों के सन्दर्भ में प्रत्येक विकल्प की क्षमताओं तथा कमियों का अध्ययन किया जाना चाहिए। विकल्पों के समय तथा कीमत पर भी विचार किया जाना आवश्यक है।

4. विकल्प का चयन अनुभव तथा परीक्षित साक्ष्य के आधार पर सर्वोत्तम विकल्प की पहचान की जानी चाहिए। सम्भावित समाधानों का प्रयोगात्मक रुप में ट्राईआउट किया जाना चाहिए। विभिन्न प्रविधि की प्रभावशीलता की जाँच करने के उद्देश्य से शिक्षक द्वारा क्रियात्मक अनुसंधान किए जाने चाहिए।

5. निर्णयों का संचार / प्रसारण एक बार निर्णय लेने के बाद इसका क्रियान्वयन किया जाता है। शिक्षक निर्णय का क्रियान्वयन व्यापक स्वरुप में कर सकता है, जहॉ यह संस्था के भौतिक लक्षणों का रुप ले लेती है। अन्य चरण जैसे प्रबन्ध, निर्देशन और मूल्यांकन आदि में भी पठन-पाठन में निर्णय प्रक्रिया चलती रहती है। जैसा हम पहले कह आए हैं, निर्णय मात्र शिक्षक द्वारा भी लिए जा सकते हैं और शिक्षार्थियों के सहयोग / सलाह से भी। यह प्रमुखत: शिक्षक की निर्देशन शैली, पठन-पाठन सन्दर्भ, अधिगम व विद्यालय का वातावरण आदि पर निर्भर करता है। समेकित रुप से पठन-पाठन प्रविधि हेतु निर्णय लेने तथा उनके क्रियान्वयन में अध्यापक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

8.8 सारांश

(Summary)

इस इकाई में आप प्रबन्ध की अवधारणा की जानकारी तथा पठन-पाठन प्रणाली में इसका उपयोग जान चुके हैं। प्रबन्ध के विभिन्न कार्यो जैसे योजना एवं निर्णय प्रक्रिया, प्रबन्धन, निर्देशन एवं नियंत्रण की जानकारी पठन-पाठन प्रणाली के सन्दर्भ में प्राप्त की जा चुकी है। पठन-पाठन के लक्ष्यों की दृष्टि से अध्यापक की एक प्रबन्धक के रुप में महत्वपूर्ण भूमिका है।

मुझे पूर्ण आशा है कि आप एक अध्यापक-प्रबन्धक के रुप में अपनी भूमिका का विश्लेषण कर चुकें होगें तथा पठन-पाठन प्रणाली में प्रबन्ध की विभिन्न अवधारणाओं का उपयोग कर सकेगें।

स्वमूल्यांकन प्रश्न (Self Evaluation)

प्रश्न 1. अधिगम के प्रबन्ध में मूल्यांकन क्यों आवश्यक है?

प्रश्न 2. अध्यापक के रुप में आप द्वारा कौन-कौन से निर्णय लिए जाते हैं -.

(1) अनुभव के आधार उनकी सूची बनाइए।

(2) आप सुव्यवस्थित तरीके से निर्णय किस प्रकार करेगें? आप द्वारा लिए गए चरणों का उल्लेख कीजिए।

(3) अधिगम के प्रबन्ध में कौन-कौन से कार्य सम्मिलित है ?

8.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. कुंज एण्ड डोनेल : मेनेजमेन्ट ए सिस्टम एण्ड कंटेंजेन्सी एनलाइसिस ऑफ मैनेजमेन्ट फंगशन
2. अरनेस्ट डेल: मैनेजमेन्ट थ्योरी एण्ड प्रेक्टिस -
3. जे.के. शर्मा एवं डी.के. शर्मा: स्कूल ऑर्गनाइजेशन एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन

इकाई - 9

साधिकारिता अधिगम (Mastery Learning)

इकाई का संरचना

(Structure of Unit)

9.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

9.1 प्रस्तावना
(Introduction)

9.2 साधिकार अधिगम: संकल्पना
(Concept of Mastery learning)

9.3 साधिकार अधिगम: परिभाषाएं
(Definitions of Mastery learning)

9.4 साधिकार अधिगम के उद्देश्य
(Objectives of Mastery learning)

9.5 साधिकार अधिगम की विशेषताएँ
(Characteristics of Mastery learning)

9.6 साधिकार अधिगम की योजना
(Planning of Mastery learning)

9.6.1 साधिकारिता को परिभाषित करना
(Defining Mastery learning)

9.6.2 साधिकारिता हेतु नियोजन
(Planning for Mastery)

9.6.3 साधिकारिता हेतु शिक्षण
(Teaching for Mastery)

9.6.4 साधिकारिता हेतु मूल्यांकन
(Grading for Mastery)

9.7 साधिकारिता अधिगम व्यूह रचना के उपागम
(Approach of Mastery learning)

9.8 साधिकारिता अधिगम के प्रकार
(Types of Mastery learning)

9.9 शोध की आवश्यकता
(Need of Mastery learning)

9.10 सारांश
(Summary)
9.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

9.0 लक्ष्य एव उद्देश्य
(Aims and Objective)

साधिकारिता अधिगम एक एसी विद्या है, जिसमे शिक्षण अधिगम का आयोजन इस प्रकार किया जाता है, जिससे कक्षा के समस्त छात्र वह सब कुछ सीख सकते है, जो शिक्षक उनसे सीखने की अपेक्षा करता है। आशा है कि इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् साधिकारिता अधिगम के सम्बन्ध में विद्यार्थी-

- साधिकार अधिगम की संकल्पना को समझ सकेंगे।
- साधिकार अधिगम के उद्देश्यों से परिचित हो सकेंगे।
- साधिकार अधिगम की विशेषताओं को समझ सकेंगे।
- साधिकार अधिगम की योजना का विश्लेषण कर सकेंगे।
- साधिकार अधिगम हेतु उपयोगी उपागमों को जान सकेगें तथा

साधिकार अधिगम में उन क्षेत्रों को ढूंढ सकेंगे, जिनमें विशेष रुप से शोध की आवश्यकता है।

9.1 प्रस्तावना
(Introduction)

पिछले कुछ वर्षों से बी.कैरोल और ब्लूम (1971) द्वारा प्रतिपादित साधिकार अधिगम (Mastery Learning) के विचार ने शिक्षा जगत में एक नई बहस छेड़ दी है। इस विचार धारा के अनुसार यह कहना उचित नहीं है कि अमुक छात्र, अमुक विषय का अधिगम नहीं कर सकता है। यदि शिक्षक अपने अनुदेशन सामग्री तथा शिक्षण विधियों का उचित ढंग से नियोजन व समन्वय करें तो कक्षा के अधिकतर विद्यार्थी (कमजोर विद्यार्थी सहित) वह सफलतापूर्वक सीखने में सफल होंगे, जो कि शिक्षक उन्हें सिखाना चाहता है। कैरोल तथा ब्लूम द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धांत का आधार कार्लटन वाशबर्न (Carlton Washburn) तथा हेनरी मारीसन (1920) द्वारा किया गया कार्य है। परन्तु समय के साथ नई अनुदेशन तकनीकी के विकास तथा ब्लूम और कैरोल के कार्य ने इस संकल्पना को नई ऊँचाइयों तक पहुंचाया।

9.2 साधिकार अधिगम संकल्पना (Concept of Mastery Learning)

साधिकार अधिगम की संकल्पना का मुख्य आधार जॉन कैरोल द्वारा अभिक्षमता (Aptitude) को नये ढंग व नई परिप्रेक्ष्य में परिभाषित करने में छुपा सामान्य दृष्टि में अभिक्षमता छात्रों की उपलब्धि को सीधे रुप से प्रभावित करती है, यानि अधिक अभिक्षमता वाले छात्र अधिक सीखेंगे, जबकि कम अभिक्षमता वाले उस क्षेत्र में कम सीखेंगे। परन्तु कैरोल ने इसकी व्याख्या दूसरे प्रकार से की है। उनका मानना है कि अभिक्षमता का सीधा सम्बन्ध समय (Time) से है। यदि किसी छात्र में किसी विषय वस्तु की सीखने की अभिक्षमता अधिक है तो वह उस कम समय (शीघ्र) में सीख लेगा, परन्तु यदि किसी छात्र ने किसी विषय को सीखने की अभिक्षमता कम है, तो ऐसा नहीं है कि वह उस विषय को सीख नहीं सकता, परन्तु हो सकता है कि उसे सीखने में समय अधिक लगे, बशर्ते उसके सिखाने की व्यवस्था, सीखने वाले की योग्यता के आधार पर की गई हो। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि लगभग सभी विद्यार्थी किसी निर्धारित किए गये उद्देश्यों का सफलतापूर्वक सीख सकते है - यदि उन्हें उनकी क्षमता के अनुसार उचित समय, उचित अनुदेशन तथा उचित अधिगम सामग्री प्रदान की जाए।

9.3 साधिकार अधिगम परिभाषाऐं (Definitions of Mastery Learning)

कैरोल (1963) ने साधिकार अधिगम को एक शिक्षण-अधिगम उपागम के रुप में परिभाषित किया है, जिसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि यदि उचित अनुदेशन संस्थितियो (Instructional Condition) की व्यवस्था हो तो लगभग हर विद्यार्थी, वह हर विषय-वस्तु सफलतापूर्वक सीख सकता हैं: जो कि विद्यालय में उसे पढ़ाया गया है। ब्लॉक (1980) ने साधिकार अधिगम की परिभाषा में दो तत्वों पर विशेष ध्यान खींचा हैं'-

(1) साधिकार अधिगम शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के बारे में एक आशावादी सिद्धांत () हैं तथा

(2) यह व्यक्तिगत अनुदेशन हेतु एक प्रभावशाली तंत्र (set) तैयार करता है जो कि विद्यार्थियों को सफलतापूर्वक अधिकतम सीखने में सहायता करता है। एज्यू (Ezewu-1982) ने साधिकार अधिगम को शिक्षण अधिगम की एक नई, दर्शन-मनोविज्ञान आधारित उपागम (Philo-Psychological Approach) माना है जो कि विश्व के शिक्षा-शास्त्रियों का ध्यान आकृष्ट भट कर रही है। स्लाविन (Slavin-1987) ने साधिकार अधिगम को समय और संसाधनों का ऐसा संगठन माना है, जिससे अधिकतर छात्र दिये गये अनुदेशन उद्देश्यों को सीखने के योग्य हो जीते हैं।

यदि दूसरे शब्दों में कहा जाए तो साधिकार अधिगम में अनुदेशन समय को स्थिर (Constant Instructional Time) तथा छात्रों की उपलब्धि में विचलन (Varyness in Achievement) के बजाय छात्रों की उपलब्धिता में स्थिरता तथा समय में विचलनशीलता पर जोर दिया जाता है।

9.4 साधिकार अधिगम के उद्देश्य (Objectives of Mastery)

साधिकार अधिगम के सीखने वाले दृष्टि से निम्न उद्देश्यों हो सकते हैं-

(1) छात्रों को स्वगति से कार्य करने के योग्य बनाना।

(2) प्रत्येक छात्र में प्रदर्शन योग्य साधिकार अधिगम की योग्यता विकसित करना (Demonstrable Degree of Mastery)

(3) अधिगम हेतु स्वनिर्देशन (Initiation) तथा स्व की भावना को विकसित करना।

(4) विभिन्न प्रक्रियाओं (Process) के माध्यम से समस्या समाधान की योग्यता का विकास करना।

(5) स्व मूल्यांकन तथा स्व अभिप्रेरणा हेतु प्रोत्साहित करना।

(6) विभिन्न स्तर के छात्रों की आवश्यकतानुसार उचित शिक्षण अधिगम का वातावरण विकसित करना।

9.5 साधिकार अधिगम की विशेषताएँ (Characteristics of Mastery Learning)

ब्लूम ने साधिकार अधिगम कि निम्न छः विशेषताएं बताई है (पैराडीज व पेरसर्न) (1973):

1. विषय वस्तु को विशिष्ट उद्देश्यों के रुप में परिभाषित किया जाता है। (Content is defined in terms of specific objectives)
2. उद्देश्यों को मूल्यांकन प्रक्रिया में बदला जाता है। (Objectives are translated into evaluation process)
3. सीखने के पद एक क्रम में व्यवस्थित किये जाते हैं। (Learning Tasks are ordered into a Hierarchy)
4. निदानात्मक-परीक्षणों का प्रयोग। (Use of Diagnostic Test)
5. साधिकार अधिगम के विशिष्ट स्तर (Specified levels of Mastery) ब्लॉक (1971) ने कहा है कि इन विशिष्ट स्तरों को तय करने हेतु सबको स्वीकार्य कोई विधि उपलब्ध नहीं है।
6. असफल छात्रों की उपलब्धि (NMA) हेतु अधिगम मार्ग तथा अतिरिक्त समय (Alternate learning Routes and additional Time for Non Mastery Attainment) मेयो (1970), मारीसन (1926), वाशवर्न (1922), ने इस विशेषता को महत्वपूर्ण माना, परन्तु कहा कि अतिरिक्त समय केवल उन्हीं को दिया जाए, जिसकी इसे जरुरत है।

9.6 साधिकार अधिगम की योजना (Planning of Mastery Learning)

विद्यालयों में साधिकार अधिगम के प्रोग्राम को लागू करने हेतु शिक्षाशास्त्रियों को निम्न चार मूल कार्यो (Basic Task) पर अवश्य ध्यान देना होगा।

- साधिकारिता को परिभाषित करना (Defining For Mastery)
- साधिकारिता हेतु नियोजन (Planning for Mastery)
- साधिकारिता हेतु शिक्षण (Teaching for Mastery)
- साधिकारिता हेतु मूल्यांकन (Grading for Mastery)

इन मूल कार्यो की विशद् विवेचना के पूर्व हमें यह समझ लेना चाहिए कि इन मूल कार्यो का कई उपकार्यों (Sub Tasks) में बाँटा जा सकता है तथा एक मूल कार्य को पूरा करने हेतु उसके समस्त उपकार्यों को पूरा करना होगा तथा साधिकार अधिगम की योजना/क्रियान्वयन की सफलता हेतु उसके चारों मूल कार्यो को सभी उपकार्यों सहित पूरा करना होगा। आइए इन मूल कार्यो (Basic Tasks) तथा उपकार्यों (Sub Tasks) की प्रकृति और कार्यो (Nature and Function) के बारे में समझने का प्रयास करें।

9.6.1 साधिकारिता को परिभाषित करना (Defining Mastery Learning) -

साधिकारिता को समझने (परिभाषित करने) के संदर्भ में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम लागू किये जाने वाले कार्यक्रम (Programme) के अल्पकालीन (Short Term) व दीर्घकालीन (Long Term) निर्गत (outcome) अमूर्त निर्गत (goals) तथा इस अमूर्त निर्गत (उद्देश्यों) के मापने वाले आधारों (Concrete Representation) परीक्षण आदि को जान सकें। साधिकारिता को परिभाषित उद्देश्य निर्धारण, परीक्षण तथा निष्पत्ति परीक्षण, लघु तथा अल्प कालिक निर्गत के सम्बन्ध में करने का मुख्य कार्य सीखने वाले की अपेक्षा के (Communication of Learner and Learning Expectation) सम्बन्ध में विद्यार्थियों शिक्षकों, प्रशासकों व अभिभावकों को परिचित कराना है।

साधिकारिता को परिभाषित करने का सबसे प्रमुख उपकार्यों (Sub Tasks) उद्देश्यों का निर्धारण है। उद्देश्यों में भी उन बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है, जिनके सम्बन्ध में विशिष्ट प्रवीणता (Excellent Learning of Highly Desirable Objectives) हासिल करनी होती है। वैसे उद्देश्यों के चयन में इस बात का विशेष ध्यान रखा जाता है कि भविष्य के अधिगम के सम्बन्ध में उनकी उपयोगिता तथा स्थनातरणशीलता हो।

एक बार जब उद्देश्य निर्धारित हो जाते हैं, तो मानिए कि समग्र मूल्यांकन (Summative Test) का परीक्षण तैयार है, जिसका मुख्य कार्य (1) समग्र पाठ्यक्रम के संदर्भ में विद्यार्थियों के अधिगम के स्तर को तय करना तथा (Assess the degree of student

learning over the entire course) (2) छात्रों के अधिगम को गुणवत्ता का मूल्यांकन (grade) करना है।

इस परीक्षण के माध्यम से यह पता लगाया जा सकता है कि इच्छित प्रकार तथा स्तर का अधिगम छात्रों को हुआ या नहीं। संक्षेप में इन परीक्षणों की सफलता को साधिकारिता के रुप में समझा जा सकता है।

इसके पश्चात् समस्त अधिगमित करने वाले पाठ्यक्रम को श्रृंखलाबद्ध छोटी-छोटी इकाईयों में बांट दिया जाता है तथा प्रत्येक छोटी-छोटी इकाई के लिये उद्देश्यों का निर्धारण कर दिया जाता है। इन छोटी-छोटी इकाईयों से सम्बन्धित तथ्यों संकल्पनाओं, सिद्धांतों को इस प्रकार समाहित व अधिगमित कराया जाता है, जिससे बाद में आगे आने वाली इकाईयों में भी इनका उपयोग किया जा सके। उप इकाईयों को श्रृंखलाबद्ध (Sequencing) करने का एक अन्य कार्य (लाभ) यह भी होता है कि उन इकाइयों के कठिनाई के स्तर (Difficult Level) में कम से अधिकता की ओर एक क्रम होता है।

साधिकारिता को परिभाषित करने का अंतिम उपकार्यों यह निश्चित करना होता है कि प्रत्येक इकाई के किन-किन पक्षों पर प्रवीणता हासिल करने सें उस इकाई पर साधिकार (Mastery) हो जाएगा। इस में सफलता का पता लगाने हेतु उद्देश्यों के संदर्भ में उचित निर्माणात्मक परीक्षणों (Formative Test) का प्रयोग किया जाता है,जिससे विद्यार्थियों की कमियों व गलतियों को समझने में शिक्षक को सहायता मिलती है, परन्तु इसे विद्यार्थियों के मूल्यांकन का आधार नहीं माना जाता है। मूल्यांकन हेतु प्रत्येक निर्माणात्मक परीक्षणों में निष्पत्ति मानक (Performance standard) तय किये जाते है, जिनके परिणामों के आधार पर शिक्षक यह तय करता है कि किन-किन छात्रों ने इकाई पर साधिकार (Mastery) कर लिया है तथा किन छात्रों को अभी और सहायता तथा समय की आवश्यकता है।

9.6.2 साधिकारिता हेतु नियोजन (Planning for Mastery) -

इसके अन्तर्गत उद्देश्यों की प्राप्ति में छात्रों को सहायता पहुंचाने हेतु उपयुक्त योजना बनाई जाती है। इस योजना में उन क्रियाओं व सामग्रियों (Activities) का पूरा ध्यान रखा जाता है जो कि सम्बन्धित इकाई के उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विशिष्ट सामान्य व धीमी गति से सीखने वाले छात्रों की दृष्टि से उपयोगी होते है।

इस नियोजन का प्रमुख कार्य शिक्षक को कक्षा में शिक्षण में अधिक कार्यशील (Pro-active) बनाना है। प्रो ऐक्टिव शिक्षक, समस्याओं पर अपनी अचानक प्रतिक्रिया देने के बजाए, समस्याओं को पहले से भांप लेता है तथा उनका उचित स्तर देने हेतु पहले से तैयारी कर लेता है।

इस नियोजन का प्रथम उपकार्यों (Sub Tasks) दी गई इकाई के उद्देश्यों पर सभी छात्रों के साधिकार करने में सहायता पहुंचाने हेतु एक सामान्य योजना तैयार करनी है। यह योजना मुख्यत: दो बिन्दुओं पर विशेष जोर देती है। प्रथम कि प्रत्येक उद्देश्य से सम्बन्धित

अधिगम सामग्री को इस तरह से प्रस्तुत किया जाए कि वह कक्षा के अधिकांश छात्रों के अनुकूल हो। दूसरा अधिगम से सम्बन्धित जो क्रियाएँ की जाए उनमें अधिकांश छात्रों की भागीदारी हो। इसीलिए ब्लॉक एण्ड एण्डरसन (1975) ने इस सामान्य योजना (General Plan) को वास्तविक अनुदेशन योजना (Original Instructional Plan) कहना अधिक उपयुक्त माना है।

नियोजन के द्वितीय उपकार्य के अन्तर्गत निर्माणात्मक मूल्यांकन (Formative Test) के द्वारा प्राप्त सूचनाओं के प्रयोग व व्याख्या हेतु विधियों (methods) की तैयारी की जाती है। इसके अन्तर्गत एक वैकल्पिक अनुदेशन सामग्री, जिसे सुधारात्मक सामग्री (Corrective measures/materials) भी कहते हैं, इकाई के उद्देश्यों को पुन: पढाने हेतु तैयार की जाती है। पर, इस सुधारात्मक व्यवस्था में ध्यान रखा जाता है कि वैकल्पिक सामग्री-मूल अनुदेशन की सामग्री से हटकर दूसरी विधि से तैयार की गई हो। लघु समूह, समवयस्क समूह (Peer group) श्रव्य दृश्य सामग्री, पाठ्यपुस्तक वर्क बुक आदि विधियों का इस सम्बन्ध में व्यापक प्रयोग किया जाता है।

यदि इस सुधारात्मक व्यवस्था (Corrective Measures) को नियमित कक्षा समय में प्रयोग करना है, तो उन विद्यार्थियों के लिए जिन्होंने संयुक्त मूल्यांकन (Formative Test) के आधार पर पहले साधिकारिता (Mastery) प्राप्त कर ली है, हेतु एक अलग से योजना बनानी होती है। एण्डरसर तथा जोन्स (1981) ने इसके लिए निम्न कई विकल्प सुझाए है।

(1) जिन छात्रों ने पहले साधिकार (Mastery) प्राप्त कर ली है, वे अधिकार प्राप्त करने वालों (Non- masters) हेतु ट्यूटर का कार्य करें।

(2) मास्टर छात्रों को दूसरे विषयों को पूरा करने या अशैक्षणिक कार्यो (मनोरंजनात्मक अध्ययन आदि) में व्यस्त रखा जाए।

(3) यह मास्टर छात्र, संरचित स्वतंत्र अध्ययन (Structured Independent) में व्यस्त हो। अब यह सोच सकते है कि (अ) उन्हें क्या सीखना है? (ब) उन्हें कैसे सिखाना है? (स) जो उन्होंने सीखा है - उसे कैसे प्रदर्शित करें?

(4) मास्टर छात्रों को और उर्ध्वाकर प्रगति (Vertical enrichment) के लिए अभिप्रेरित किया जाए।

इस प्रोग्राम की सफलता हेतु समय के नियोजन (Time Planning) की भी अति आवश्यकता है। छात्रों को वास्तविक अनुदेशन (Original Instruction) सुधारात्मक अनुदेशन तथा परीक्षण हेतु पर्याप्त समय अवश्य दिया जाना चाहिए। इस समय नियोजन से मुख्यत: तीन लाभ होते हैं (1) समय के अनुरुप पाठ्यक्रम मे समाहित हो जाने वाली सामग्री तथा उद्देश्यों की मात्रा कितनी हो (2) इससे छात्र सभी इकाई के उद्देश्यों पर साधिकारिता प्राप्त करने हेतु उचित समय दे लेते है (कैरोल मॉडल का सार यही है) (3) समय नियोजन से छात्र अधिगम पर खर्च किए जाने वाले समय की महत्ता (Increase the Quality of time) को बढ़ा लेता है।

9.6.3 साधिकारिता हेतु शिक्षण (Teaching for Mastery) -

इस बिन्दु का सार अधिगमकर्ता को व्यवस्थित करने के बजाए अधिगम को व्यवस्थित करना है। (Managing learning rather than learners) चूंकि प्रारम्भ में छात्र इस तथ्य से परिचित नहीं होते हैं कि साधिकारिता अधिगम कैसे किया जाए। अत: इस वर्ग में प्रथम उपकार्य (Sub Tasks) होता है - विद्यार्थियों का अभिनवन (Orientation) विद्यार्थियों को बताया जाता है कि उनसे सीखने के संदर्भ में क्या अपेक्षा है? वह किस प्रकार सीखेंगे? वह अपने अधिगम को किस प्रकार प्रदर्शित करेंगे तथा उनके अधिगम का मूल्यांकन किस प्रकार होगा? छात्रों को बताया जाता है कि उनका मूल्यांकन पूर्व निर्धारित निष्पत्ति मानकों के आधार पर किया जाएगा न कि उनके सहपाठियों के निष्पादन के आधार पर उन्हें यह भी बताया जाता है कि यदि प्रवीणता (Mastery) हासिल करने हेतु छात्रों को और समय तथा सहायता की आवश्यकता हुई तो वह प्रदान किया जाएगा।

इसके पश्चात् दूसरे उपकार्य (Subtask) के तहत, वास्तविक अनुदेशन योजना के अनुसार प्रत्येक अधिगम इकाई को श्रृंखलानुसार पढाया जाता है। एक इकाई पढने के पश्चात् छात्रों का निर्माणात्मक परीक्षण मूल्यांकन (Formative Test) किया जाता है। इस परीक्षण के आधार पर सफल (Master) तथा असफल (Non-Master) छात्रों की पहचान की जाती है। मास्टर छात्रों को आगे की उन्नयन क्रियाओं (Enrichment activities) में भाग लेने हेतु मौका दिया जाता है। जबकि असफल (Non-Master) छात्रों में अपेक्षित प्रवीणता लाने हेतु सुधारात्मक अनुदेशन योजना (Corrective Instruction Planning) का प्रयोग किया जाता है।

इस सुधारात्मक अनुदेशन के दो चरण (Phase) हो सकते हैं। प्रथम चरण में उन उद्देश्यों पर प्रवीणता/साधिकारिता हासिल करने हेतु सुधारात्मक अनुदेशन दिया जाता है जिन पर अधिकांश छात्र अपनी साधिकारिता नहीं कर पाये है। इतने बड़े समूह के लिये सुधारात्मक अनुदेशन हेतु अतिरिक्त कक्षा समय भी दिया जा सकता है।

दूसरे चरण में उन वैकल्पिक क्रियाओं (Activities) तथा सामग्रियों की व्यवस्था की जाती है, जो कि उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आवश्यक होती है तथा जिनका सुधारात्मक अनुदेशन में प्रयोग हो सकता है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक छात्रों को एक प्रपत्र (Paper Sheet) दिया जाता है। जिसमें उद्देश्यों, उपयुक्त परीक्षण मद तथा संस्तुति (Recommended) की गई क्रियाओं तथा सामग्रियों का स्पष्ट उल्लेख रहता है। यह प्रपत्र एक प भटपोषक/सुधारात्मक चक्र (Feedback Vehicle) के अनुसार शिक्षकों की सहायता से उचित वैकल्पिक विधियॉ/रास्तों का साधिकारिता अधिगम हेतु चुनाव कर सकें। वास्तविक अनुदेशन, निर्माणात्मक मूल्यांकन तथा संशोधन का यह चक्र तब तक चलता रहता है, जब तक कि छात्र सभी इकाइयों में प्रवीणता हासिल नहीं कर लेते है। इस चक्र में किस पक्ष पर कितना जोर व समय देना है, इसका निर्धारण शिक्षक करता है।

9.6.4 साधिकारिता हेतु मूल्यांकन (Grading for Mystery) -

साधिकारिता हेतु मूल्यांकन उद्देश्यों के संदर्भ में पूर्वनिर्धारित निष्पादन के मानदण्डों के आधार पर किया जाता है न कि कक्षा के अन्य छात्रों के निष्पादन के आधार पर ब्लॉक (1977) ने इस मूल्यांकन को अभिक्षमतात्मक अभिप्रेरणा (Competitive Motivation) कहा है। यदि आप कुछ विद्यार्थियों के विकास के बजाय कक्षा के समस्त विद्यार्थियों का विकास चाहते है, तो प्रतिस्पर्धात्मक अभिप्रेरणा (Competitive Motivation) से अभिक्षमतात्मक अभिप्रेरणा अधिक उपयुक्त है।

इस साधिकारिता कार्यक्रम में मूल्यांकन का प्रथम उपकार्य संयुक्त परीक्षण (Summative Test) का प्रशासन है। इसके परिणाम के आधार पर तय किया जाता है कि मास्टरी लर्निग हेतु कौन से छात्र सफल हो पाए हैं, कौन से नहीं। इन असफल छात्रों के दो वर्ग हो सकते हैं, पहला (ए वर्ग) कि उन्हें असफल घोषित कर दिया जाए, तथा उनमें निश्चित स्तर की सफलता लाने हेतु और समय तथा वैकल्पिक विधियों की व्यवस्था की जाए। दूसरा कि असफल छात्रों को उनके निष्पादन के आधार पर उन्हें बी, सी, डी, ई, एवं एफ वर्गो में बांट दिया जाए। "एफ" वर्ग के छात्र को भी असफल (Non-Master) कहना बहुत उचित नहीं होगा क्योंकि उसने भी कुछ न कुछ उद्देश्यों को भी सीखा ही है।

यहां पर मूल्यांकन के सम्बन्ध में एक अन्य पक्ष विचारणीय है क्योंकि मूल्यांकन हेतु कुछ शिक्षक कई संयुक्त परीक्षणों/मूल्यांकन (Summative Test) का प्रयोग करते है, जबकि कुछ निर्माणात्मक मूल्यांकन (Formative Test) का सहारा लेते हैं। निर्माणात्मक मूल्यांकन संशोधन हेतु काफी उपयोगी है, परन्तु ग्रेडिंग (grading) के लिये अधिकांश विद्वानों ने संयुक्त मूल्यांकन को ही उपयुक्त माना है और इसके लिये मल्टीपी संयुक्त परीक्षणों (Multiple summative Test) का निर्माण साधिकारिता को परिभाषित करते समय ही कर लेना चाहिए।

स्वमूल्यांकन (Self evaluation)

(1) साधिकार अधिगम की योजना के मूल कार्य (Basic Tasks) कौन-कौन से है?

(2) साधिकारिता को परिभाषित करने के उपकार्यों (Sub Task) को बताइए।

(3) कक्षा में ''मास्टर छात्र'' ''नान मास्टर'' छात्रों को किस प्रकार सहायता कर सकते हैं?

(4) साधिकार अधिगम में समय नियोजन (Time Management) किस प्रकार सहायक है?

(5) साधिकार अधिगम में निर्माणात्मक मूल्यांकन (Formative Test) की क्या उपयोगिता है?

9.7 साधिकारिता अधिगम व्यूह रचना के उपागम (Approaches Mastery Learning Strategies)

अधिगम के क्षेत्र में मुख्यत: दो प्रकार के उपागम दिखाई पड़ रहे हैं।

(1) समूह आधारित/शिक्षक नियंत्रित उपागम (Group based/Teacher paced Approach)

(2) वैयक्तिक आधारित/छात्र नियंत्रित उपागम (Individual based/student paced approach)

प्रथम उपागम ब्लूम के साधिकारिता अधिगम के विचारों से सम्बन्धित है, जिसमें विद्यार्थी अपने सहपाठियों के साथ सहयोग पूर्वक सीखते हैं तथा शिक्षक अनुदेशन के प्रवाह (Delivery and flow of Instruction) को नियंत्रित करता है। विद्यालय स्तर पर इस उपागम का काफी प्रयोग होता है। दूसरी वैयक्तिक आधारित उपागम में छात्र स्वतंत्र रुप से सीखते हैं, और विद्यार्थी ही अनुदेशन के प्रवाह को नियंत्रित करते हैं। कैलर (Keller) के अनुदेशन की वैयक्तिक व्यवस्था (Personalized) में तथा पोस्टलेथ्वाट् (Postlethwat) के ओडियो ट्योटिरियल अनुदेशन में इसी उपागम का प्रयोग होता है। इस उपागम का जन्म मनोविज्ञान से हुआ है तथा यह विश्वविद्यालय /महाविद्यालय स्तर पर काफी प्रभावी है।

साधिकारिता अधिगम में मुख्यत: दो प्रकार के व्यैक्तिकरण (Individualization) पर जोर दिया जाता है।

(1) किसी विशिष्ट उद्देश्य/लक्ष्य के सम्बन्ध में विभिन्न प्रकार की सामग्रियों तथा क्रियाओं (Activities) को उपलब्ध करवाना, और विद्यार्थियों से उनमें उपयुक्त का चुनाव करने हेतु कहना।

(2) निर्माणात्मक परीक्षणों के आधार पर पता लगाई छात्र की गलतियों को सुधारने हेतु वैकल्पिक पूरक अनुदेशन (Supplementary Alternative Instruction) की सुविधा उपलब्ध कराना।

समूह आधारित/शिक्षक नियंत्रित उपागम में आवश्यकतानुसार अनुदेशन का वैयक्तिक (Individualized) करने का भी प्रयास किया जाता है और जैसे ही इसकी आवश्यकता समाप्त होती है उसे पुन: समूह आधारित अभ्यास में समाहित कर लिया जाता है कि वह कक्षा व्यवस्था (Classroom) के अनुरुप हो तथा जहां पर शिक्षक एक निश्चित समय के अंदर पाठ्यक्रम को पूरा कर सकें। संक्षेप में कहा जाए तो उपर्युक्त दोनों उपागम यह मान कर चलते है कि यदि विद्यार्थियों को उचित ढंग से अनुदेशित किया जाए, कठिनाई के समय उचित सहायता व समय दिया जाए तो अधिकांश विद्यार्थी, विद्यालयों में पढ़ाई जाने वाली सामग्री को साधिकारिता पूर्वक सीख सकते हैं।

9.8 साधिकारिता अधिगम के प्रकार (Forms of Mystery Learning)

साधिकारिता अधिगम के मुख्यत: तीन रुप देखने को मिलते हैं।

(1) अनुदेशन की वैयक्तिक व्यवस्था (Personalized System of Instruction)

(2) अविरल उन्नति (Continuous Progress)

(3) समूह आधारित साधिकारिता अधिगम (Group based Mastery Learning)

अनुदेशन की वैयक्तिक व्यवस्था (कीलर योजना 1968) का प्रयोग मुख्यत: उच्च माध्यमिक स्तर पर होता है। इसमें सर्वप्रथम इकाई के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। प्रत्येक इकाई के उद्देश्य हेतु परीक्षण विकसित किए जाते है। छात्र बार-बार इन परीक्षणों का उपयोग कर सकते हैं, जब तक कि वह संतोषजनक स्तर की सफलता प्राप्त न कर लें। अविरल उन्नति (कोहेन 1997) के तहत छात्र वैयक्तिक इकाईयों (Individual Units) पर अपने ढंग व गति से कार्य करते हैं। अवरिल उन्नति में मूल्यांकन हेतु इकाई परीक्षण (Unit Test) के लिए साधिकार मानक (Mastery Criteria) तय किये जाते हैं तथा उन छात्रों के लिये सुधारात्मक अधिगम की भी व्यवस्था की जाती है, जो कि परीक्षण में तय किए गये मानकों को पूरा नहीं कर पाते हैं।

साधिकारिता अधिगम का तीसरा रुप समूह आधारित साधिकारिता अधिगम है। इसका प्रयोग मुख्यत: प्राथमिक व माध्यमिक विद्यालयों में होता है। इसके अन्तर्गत शिक्षक पूरी कक्षा को एक गति से अनुदेशित करता है। प्रत्येक इकाई के समाप्त होने पर एक निर्माणात्मक परीक्षण लिया जाता है। मूल्यांकन में सफलता हेतु 60 से 90 प्रतिशत सही उत्तरों का साधिकार मानक (Mastery Criteria) तय कर दिया जाता है। सफलता प्राप्त करने हेतु सभी छात्रों को इस साधिकारिता मानक तक पहुंचना होता है चाहे उन्हें कितने ही प्रयास करने पडे।

9.9 साधिकारिता अधिगम के क्षेत्र में शोध की आवश्यकता (Needed Research)

यद्यपि साधिकारिता अधिगम के क्षेत्र में काफी शोध कार्य हुआ है तथापि निम्न दो क्षेत्रों मै अभी विशेष रुप से शोध करने की आवश्यकता है -

(1) उन स्थितियों का पता लगाना जिनके अन्तर्गत साधिकारिता अधिगम कम या अधिक प्रभावी होता है।

(2) छात्रों की उन अधिगम सीमाओं (Limits of Student) का पता लगाना, जिनमें मास्टरी लर्निग के उपागमों का प्रयोग कर सुधार किया जा सकता है।

यह दो प्रश्न मास्टरी लर्निग में शोध हेतु मुख्य आधार प्रदान करते हैं। इसके अलावा साधिकारिता अधिगम कार्यक्रम के क्रियान्वयन हेतु प्रशासकीय सहयोग, सेवा पूर्व तथा सेवारत प्रशिक्षण मे इस विधि का प्रयोग कक्षा व्यवस्था (खुली या परम्परागत कक्षा) छात्रों का सम व विषय समूह तथा कक्षा का आकार आदि अन्य क्षेत्र अग्रिम शोध हेतु काफी आवश्यक है।

ब्लूम ने (1968-76) अपने अध्ययनों के आधार पर बताया है कि साधिकारिता अधिगम द्वारा कक्षा के लगभग 95 प्रतिशत छात्र साधिकार पूर्वक अधिगम कर सकते हैं। पर ब्लूम के ये अध्ययन बहुत छोटे न्यादर्श, क्षेत्र व नियंत्रित परिस्थितियों पर किये गये हैं। लेकिन

अन्य लोगों द्वारा किये गये अध्ययनों मे इस तथ्य को पूर्ण रुप से सही नहीं माना गया है। अत: इस क्षेत्र में भी शोध की महती आवश्यकता है।

9.10 सारांश
(Summary)

साधिकारिता अधिगम के द्वारा अधिकांश छात्रों को वह सब कुछ सिखाया जा सकता है जो कि शिक्षक उन्हें सिखाना चाहता है। परन्तु इस विद्या के विकास हेतु दो बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक है।

(1) मास्टरी लर्निग मॉडल के मुख्य तत्वों (key elements) को पाठ्यक्रम सामग्री में समाहित किया जाए। जैसे उद्देश्यों का सार्थक रुप (Meaningful Terms) में स्प टत: लिखा जाए (जरुरी नहीं है कि उन्हें व्यावहारात्मक रुप में ही लिखा जाए), प्रत्येक उद्देश्य से सम्बन्धित परीक्षण उपलब्ध होने चाहिए तथा निष्पादन मानकों का भी पूर्व निर्धारण होना चाहिए। शिक्षण अधिगम की क्रियाओं व वैकल्पिक सम्बन्धित सामग्रियों के विभिन्न प्रकार के सेट उपलब्ध होने चाहिए तथा पाठ्यक्रम का संगठन किताब-प्रकरण (Book Chapters) के रुप में न होकर अधिगम इकाईयों के रुप में हो आदि।

(2) मास्टरी लर्निग विद्या से पढ़ाने हेतु शिक्षकों को उचित प्रशिक्षण मिले ताकि वे प्रस्तुतीकरण में उचित विधियों का प्रयोग कर सकें। शिक्षण में विद्यार्थियों का सहयोग ले सकें, छात्रों का मूल्यांकन कर उनका स्तर निर्धारण कर सकें, संशोधित अनुदेशन का यथास्थान प्रयोग कर सकें आदि।

संक्षेप में इन दोनों बिन्दुओं को पाठ्यक्रम / पाठ्यसामग्री उपागम (Curriculum / Material Approach) तथा संकाय विकास उपागम (Staff Development Approach) के रुप में भी वर्णित किया जा सकता है। मास्टरी लर्निग विद्या को सफल बनाने हेतु इन दोनों उपागमों का उचित प्रयोग व क्रियान्वयन आवश्यक है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. साधिकार अधिगम से क्या तात्पर्य है?
   What is the mastery learning?
2. साधिकार अधिगम के मुख्य उद्देश्य कौन-कौन से है?
   What are the main objectives of mastery learning?
3. साधिकार अधिगम योजना में मूल कार्य कौन-कौन से है?
   What are the basic task of mastery learning plan?
4. साधिकार अधिगम की प्रमुख उपागमों का वर्णन कीजिये।
   Explain the main approaches of Mastery learning

9.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Abraham J.D. (1981)-Precise Teaching is more effective teaching-Educational. Leadership 39:138:39
2. Anderson L.W. & Anderson J.C. (1982)-A Functional approach to the definition of mastery learning paper presented in AREA-New York
3. Block J.H. (1970)- Introduction to Mastery Learning : Theory and Practice-Halt Rinehart & Wintton-New York.
4. Block J.H. (1972)- Student learning and the setting of mastery performance standards-Educ.Horizones 50-183-91
5. Block J.H. (1977) - Individualized instruction: A mastery learning perspective. Educ. Leadership Horizones 34:337-41
6. Block J.H. (1979)-Mastery Learning: The current state of the craft: Educational. Leadership 37:114:17.

इकाई-10

अभिक्रमित अनुदेशन-संकल्पना, सिद्धांत, प्रकार, प्रक्रिया अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक तथा इसके विकास में प्रेसी, स्किनर, क्राउडर, गिलबर्ट का योगदान (Programmed Instruction, Concept, Type Principles, Process, Programmed Text and Contribution of Pressey, Skinner, Crowder and Guilburt)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

10.1 प्रस्तावना
(Introduction)

10.2 अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Programmed Instruction)

10.3 अभिक्रमित अनुदेशन के विकास में प्रमुख विद्वानों का योगदान
(contribution of Person in Development of Programmed Instruction)

10.4 अभिक्रमित अनुदेशन के आधारभूत सिद्धांत
(Basic Principles of Programmed Instruction)

10.5 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रमुख प्रत्यय
(Main Concept of Programmed Instruction)

10.6 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार
(Type of Programmed Instruction)

10.7 अभिक्रमित अनुदेशन प्रोग्राम की रचना
(Construction of Programmed Instruction)

10.8 अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक
(Programmed Text)

10.9 अभिक्रमित अनुदेशन की उपयोगिता व सीमाऐं
(Use and limitations of Programmed Instruction)

10.10 सारांश

(Summary)
10.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

10.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी

- अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ समझ सकेंगें।
- अभिक्रमित अनुदेशन के विकास में प्रेसी, स्किनर क्राउडर तथा गिलबर्ट के योगदान से परिचित हो सकें।
- अभिक्रमित अनुदेशन के आधारभूत सिद्धांतों, प्रमुख प्रत्ययों व प्रकारों का विश्लेषण कर सकेगें।
- अभिक्रमित अनुदेशन प्रोग्राम की रचना व अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक के स्वरुप से परिचित हो सकेगें।
- अभिक्रमित अनुदेशन की उपयोगिता एवं सीमाओं को जान सकेगें।

10.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक व विद्यार्थी के बीच अन्तःक्रिया का एक महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि अन्तक्रिया न होने पर शिक्षक अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल नहीं होता है। समुचित अन्तःक्रिया हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षक अपने छात्रों पर भली-भाँति ध्यान दें। लेकिन आज के युग में जनसंख्या वृद्धि तथा ज्ञान के विविध क्षेत्रों में तीव्र गति से हुए विकास के कारण प्रत्येक छात्र पर अध्यापक ध्यान देने में स्वयं को असमर्थ महसूस कर रहा है। ऐसी दशा में शिक्षण की ऐसी नवीनतम विधियों की खोज की ओर शिक्षाविदों ध्यान आकर्षित हुआ है जिनके द्वारा विद्यार्थी स्वयं ज्ञान प्राप्त कर सके तथा उसे अध्यापक की प्रतिक्रिया भी प्राप्त हो सके। इसी से सम्बन्धित अनेक नवीनतम पद्धतियों का प्रादुर्भाव हुआ, उन्हीं नवीनतम शिक्षण पद्धतियों में एक महत्वपूर्ण पद्धति है - "अभिक्रमित अनुदेशन"।

10.2 अभिक्रमित अनुदेशन का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Programmed Instruction)

आमतौर पर “अभिक्रमित अनुदेशन" तथा "अभिक्रमित अधिगम" को एक ही अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि अधिगम की सफलता अनुदेशन पर भी आधारित होती है। शिक्षण की दृष्टि से जब तक अनुदेशनों पर ध्यान दिया जाता है तब तक यह “अभिक्रमित अनुदेशन” का रुप होता है और जब इन अनुदेशों के आधार पर छात्र कुछ सीखने का प्रयत्न करता है, तब यह “अभिक्रमित अधिगम” या "अभिक्रमित अध्ययन” कहलाता है।

“अभिक्रमित” शब्द का अर्थ है, क्रमबद्ध या योजनाबद्ध। इस प्रकार "योजनाबद्ध अधिगम अथवा “अभिक्रमित अनुदेशन” में छात्रों के समक्ष विषयवस्तु को अनेक छोटे-छोटे एवं नियोजित

किये गए खण्डों एवं सोपानों में पुस्तुत किया जाता है। इनकी संरचना में "शिक्षण सूत्र" का अनुसरण दिया जाता है। इसके माध्यम विद्यार्थी स्वयं ज्ञान अर्जित करता हुआ ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ता है। इस प्रयास से छात्र को उसके द्वारा किये गये कार्य की तुरन्त पुष्टि भी करा दी जाती है। प्रत्येक पद पर उसे सफलता की अनुभूति करायी जाती है। इससे उसके प्रयास को पुनर्बलन मिलता है। छात्र की इस स्वाध्याय प्रक्रिया से आत्म विश्वास पैदा होता है तथा मनोबल कायम रहता है।

अभिक्रमित अध्ययन के अर्थ को और अधिक स्पष्ट करने हेतु विद्वानों द्वारा दी गई कुछ प्रमुख परिभाषाऐं प्रस्तुत की जा रही हैं।

अभिक्रमित अधिगम को निम्नानुसार परिभाषित किया जा सकता है -

बी.एफ. स्किनर -"अभिक्रमित अनुदेशन शिक्षण की कला तथा सीखने का विज्ञान है।"

सूसन मार्कले -"अभिक्रमित अध्यापन शिक्षण की प्रक्रियाओं को पुन: प्रस्तुत करने के लिए तारतम्य युक्त संरचना बनाने की एक प्रणाली है, जिसकी सहायता से हर एक विद्यार्थी में एक वांछित व्यावहारिक परिवर्तन किया जा सकता है।"

फ्रेड स्टोफल -ज्ञान के छोटे-छोटे तार्किक क्रम में व्यवस्थित करने को अभिक्रमण तथा इसकी, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को अभिक्रमित अधिगम कहते है।"

एस.एम. कोरे -"अभिक्रमित अनुदेशन एक ऐसी शिक्षण प्रक्रिया है जिसमें बालक के वातावरण को सुव्यवस्थित कर पूर्वनिश्चित व्यवहारों को उसमें विकसित कर लिया जाता है।"

आर. एबिल -.अभिक्रमित अनुदेशन केवल मात्र स्वाध्याय हेतु निर्मित पाठ्यवस्तु ही नहीं है अपितु यह एक शिक्षण प्रविधि भी है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि यह एक प्रविधि है व एक तकनीक है जिसकी सहायता से विद्यार्थी स्वयं की सीखने की रफ्तार से सीखता है तथा इसमें अर्जित ज्ञान का पृष्ठपोषण भी किया जाता है।

10.3 अभिक्रमित अनुदेशन के विकास में विभिन्न विद्वानों का योगदान (Contribution of Person in Development of Programmed Instruction)

अभिक्रमित अनुदेश का विकास कोई एक दिन में नहीं हुआ है अपितु शताब्दियों का इतिहास निहित है। इस प्रविधि का मूल सिद्धांत सुकरात की प्रश्नोत्तर विधि पर आधारित है। परन्तु अभिक्रमित अनुदेशन के रुप में इसका अर्भियख बीसवीं शताब्दी में ही हुआ, जिसमें प्रेसे, स्किनर, क्राउडर तथा गिलबर्ट का महान योगदान रहा है। आइए, इन महान विभूतियों के बारे में संक्षेप में चर्चा करें।

(अ) प्रेसे का योगदान- अभिक्रमित अनुदेशन के प्रत्यय का आविर्भाव का श्रेय बीसवीं सदी के दूसरे दशक में अमेरिकन मनौविज्ञानिकों को दिया जाता है। अधिकांश व्यक्ति इसके विकास का श्रेय ओहियो स्टेट विश्वविद्यालय के मनौवैज्ञानिक सिडनी एल. प्रेसे को देते

है, जिन्होंने (1920) एक ऐसी शिक्षण मशीन का विकास किया, जिसका प्रयोग शिक्षण के साथ-साथ परीक्षण (Testing) के लिए भी किया जाता है।

प्रेसे की मशीन की सहायता से प्रश्नों को छात्रों के सम्मुख एक क्रम (Sequence) में प्रस्तुत किया जाता था, छात्रों ने इन प्रश्नों का उत्तर सही या गलत दिया है, इसकी जांच तुरन्त हो जाती थी। परन्तु प्रेसे ने अपनी मशीन की प्रक्रिया में पृष्ठपोषण (Feedback) का इतने व्यापक रुप में प्रयोग नहीं किया था, जितना कि स्किनर ने अपने बाद के प्रोग्राम में पुनर्बलन का किया।

यद्यपि प्रेसे को उस समय अपनी मशीन के संदर्भ में अपेक्षित सफलता नहीं मिली क्योंकि उस समय की सामाजिक परिस्थितियों में इसकी स्वीकार्यता कम रही, अत: 1982 में उन्होंने अपने इस कार्यक्रम को लगभग बन्द कर दिया था। परन्तु आगे आने वाले शिक्षा शास्त्रियों के लिए उन्होंने ऐसे बीज बो दिए थे, जिसके पेड को स्किनर, क्राउडर, मेगर तथा गिलर्बट आदि ने खूब पल्लवित किया।

(ब) स्किनर का योगदान- स्किनर ने 1943 में कबूतरों पर प्रयोग के आधार पर सक्रिय अनुबन्ध अनुक्रिया (Operant Conditioning Theory) सिद्धांत का प्रतिपादन किया था। सन् 1984 में जब वह अभिभावक दिवस के अवसर पर अपनी पुत्री के विद्यालय में गये, तो उन्होंने अनुभव किया कि तत्कालीन शिक्षण प्रणाली बिल्कुल प्रभावी नहीं है। उसी वर्ष उनका एक लेख अधिगम का विज्ञान तथा शिक्षण की कला (Science of Learning and Art of Teaching) प्रकाशित हुआ। इस लेख में स्किनर ने जोर देकर कहा कि लगातार पृष्ठपोषण तथा पुनर्बलन प्रकाशित हुआ। इस लेख में स्किनर ने जोर देकर क्हा कि लगातार पृष्ठपोषण तथा पुनर्बलन से अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन लाया जा सकता है, तथा उन्होंने सक्रिय व्यवहार (Operant Behaviour) को मानव अधिगम (Human Leaning) से अधिक महत्वपूर्ण माना।

स्किनर ने प्रयोगशाला के निष्कर्षो व अपने अधिगम के सिद्धांत के आधार पर अभिक्रमित अनुदेशन का विकास किया। प्रेसे के शिष्य नियमित रुप से गृहकार्य का अध्ययन करते रहे और शिक्षण मशीनों द्वारा उनकी निष्पत्ति की जाँच करते रहे, परन्तु स्किनर के शिष्यों ने ऐसा नहीं किया, अपितु उन्होंने ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की, जिससे बिना पूर्व ज्ञान के सरलता से नई अनुक्रिया की जाती थी तथा सीखी गई, सही अनुक्रिया को पुनर्बलन द्वारा प्रोत्साहित किया जाता था। स्किनर ने सीखने के लिए छोटे-छोटे पदों का प्रयोग किया इसीलिए इनके प्रोग्राम को श्रृंखला अनुदेशन (Linear Programme) कहा जाता है जबकि प्रेसे के अनुदेशन को मिश्रित अभिक्रित अनुदेशन (Adjective Programme) कहा जाता है, क्योंकि इसमें निर्वचन प्रश्नों (Multiple choice question) का पाठ को दोहराने के लिए प्रयोग किया जाता है। वास्तव में प्रेसे तथा स्किनर के प्रत्ययों में अधिक अंतर नहीं है। यदि कहा जाए कि प्रेसे ने हार्डवेयर उपागम तथा स्किनर ने सॉफ्टवेयर उपागम में अधिक योगदान दिया तो गलत नहीं होगा।

(स) क्राउडर का योगदान - नार्मन ए. क्राउडर अमेरिका की वायुसेना में कार्यरत थे। उन्होंने बम गिराने वाले जहाजों की मरम्मत करने हेतु तकनीशियनों का प्रशिक्षण दायित्व अपनें ऊपर लिया तथा इसी हेतु उन्होंने प्रेसे की शिक्षण मशीन में सुधार हेतु कुछ सुझाव देकर शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन (Branching orInstrinsic Programme) का विकास किया। इनके इस सिद्धांत का विकास मानव प्रशिक्षण से हुआ, जो कि निदान तथा उपचार के सिद्धांत पर आधारित था। प्रेसे ने प्रश्नों के उत्तरों के अभ्यास के द्वारा स्किनर ने पुनर्बलन के द्वारा अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाने का प्रयास किया, परन्तु क्राउडर ने अनुदेशन को प्रभावशाली बनाने हेतु निदान तथा उपचार पर अधिक बल दिया। स्किनर की धारणा थी कि छात्र की गलत अनुक्रियाऐं अधिगम में बाधक है, जबकि क्राउडर इन्हीं गलत अनुक्रियाओं के आधार पर निदान तथा उपचार करता है। परन्तु क्राउडर भी 15 प्रतिशत से अधिक गलत अनुक्रियाओं को स्वीकार नहीं करता है। स्किनर के श्रृंखला अनुदेशन को बाह्य अभिक्रमित अनुदेशन कहते हैं क्योंकि यह छात्रों के अनुक्रियाओं के रुप को अभिक्रमित नियंत्रित करता है जबकि शाखीय अनुदेशन को आन्तरिक अभिक्रमित अनुदेशन कहते हैं क्योंकि इसमें सही उत्तरों का चयन छात्र स्वयं करते है। क्राउडर ने स्किनर के सिद्धांत को मानव अधिगम के लिए अनुपयुक्त कहकर आलोचना की है।

(द) गिलबर्ट का योगदान - थामस एफ. गिलबर्ट ने 1962 में "मेथेटिक्स नामक एक नई अनुदेशन प्रविधि का विकास किया, जिसे "अवरोह अनुदेशन श्रृंखला" भी कहते हैं। गिलबर्ट ने इस प्रविधि के मूलभूत सिद्धांतों में स्वामित्व व्यवहार (Master Behaviour) को विशेष महत्त्व दिया है। अधिगम श्रृंखला में गिलर्बट के अनुसार स्वामित्व का पद कहीं भी आ सकता है। गिलबर्ट मुख्यत: स्वामित्व पद को आरम्भ में रखता है इसीलिए उसे अवरोह श्रृंखला (Restrogressive) कहते हैं। जबकि स्किनर स्वामित्व के पद को सदैव अंत में रखता है, अंत उसे आरोही श्रृंखला (Progressive Chain) कहते हैं। गिलबर्ट अपनी प्रविधि में प्रस्तुतीकरण व्यवहार परिवर्तन तथा अधिगम परिस्थितियों में समन्वय करता है तथा इसके निर्माण में कार्य विश्लेषण को अधिक महत्व देता है। जिसके आधार पर प्रस्तुतीकरण के लिए अधिगम पुर्जे का विकास किया जाता है। इस प्रकार के अनुदेशन में पुनर्बलन का प्रयोग किया जाता है। पेनिंग्टन (Pennington) तथा स्लेक (Slak) ने 1962 के पश्चात् मैथेटिक्स के सिद्धांतों के आधार पर अनुदेशन का निर्माण किया तथा परीक्षण के पश्चात् पाया कि मैथेटिक्स श्रृंखला शाखीय अनुदेशों से अधिक प्रभावशाली है।

10.4 अभिक्रमित अनुदेशन के आधारभूत सिद्धांत (Basic Principles of Programmed Instruction)

(1) छोटे-छोटे पदों का सिद्धांत (Principle of small steps) - सामान्य व्यक्ति शनै: शनै: निरन्तर अभ्यास करके किसी बात को सीखता है। सीखने की यह प्रक्रिया जब ज्ञात से अज्ञात तथा सरल से कठिन के सिद्धांतों का पालन करती हुई चलती रहती है, तो जो कुछ सीखा जाता है, वह स्थायी

होता रहता है। जिस प्रकार स्वाद "सहित व्यंजनों को धीरे-धीरे उदरस्थ करने में एक विशेष प्रकार का सुख मिलता है, ठीक उसी तरह नई विषय वस्तु को छोटे-छोटे पदों के सुपाच्य रुप में विद्यार्थी के सामने प्रस्तुत करने से वह सहज भाव से ग्रहण करता है। विषय वस्तु के पद कितने छोटे हो, यह शिक्षार्थी की क्षमता पर निर्भर करता है। अभिक्रमित अनुदेशन में विषय वस्तु को छोटे-छोटे पदों में बांट दिया जाता है। विषय-वस्तु के ये छोटे-छोटे पद एक दूसरे से इस प्रकार जुड़े रहते हैं, जिस प्रकार जंजीर की कड़िया परस्पर जुड़ी रहती हैं। एक कड़ी के जंजीर से अलग रहने पर जैसे उसका महत्त्व घट जाता है, उसी प्रकार अभिक्रमित अध्ययन-सामग्री का एक पद भी उसी भाँति सीखने की प्रक्रिया में अर्थहीन बन जाया करता है। इन छोटे-छोटे पदों को ऐसे क्रम में रखा जाता है कि सीखने वाला आसानी से एक पद से अलगे पद पर अग्रसर होता है। प्रश्न उठता है कि "पद" का आकार कितना हो? मनोवैज्ञानिक शोध-कार्यों के निष्कर्ष इस बात की पुष्टि करते है कि विषय-वस्तु को छोटे-छोटे पदों में सरलता से अध्ययन कर सीख लेते हैं। परन्तु यह इतने छोटे भी न हो कि छात्र तथ्य को समझ ही न सके।

(2) क्रियाशीलता का सिद्धांत- अभिक्रमित अध्ययन तकनीक की तुरन्त पुष्टि या पुनर्बलन का सिद्धान्त मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आपने एक कार्य किया और उसके परिणाम का ज्ञान कराने में जितना अधिक विलम्ब किया जायेगा, उस कार्य के प्रति आपका आकर्षण उतना ही क्षीण होता चला जायेगा। पुनर्बलन अनुक्रिया की सम्भावना में वृद्धि करता है। अभिक्रमित अनुदेशन में विद्यार्थी को प्रत्येक पद में प्रश्न के उत्तर देने पडते है, ये उत्तर शुद्ध है या अशुद्ध, इसकी जानकारी उसे तुरन्त प्राप्त हो जाती है। अपने उत्तर को सही पाकर उसका उत्साह बढता है तथा वह और अधिक पढ़ने को प्रेरित होता है। इस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन पुनर्बलन के सिद्धांत पर आधारित है।

(3) पुनर्बलन का सिद्धांत (Principle of Reinforcement) - अधिगम प्रक्रिया में यदि छात्र क्रियाशील रहता है तब वह शीघ्रता से सीखता है। अभिक्रमित अध्ययन सामग्री के प्रत्येक पद में उत्प्रेरक, रिक्त स्थान और युद्ध प्रत्युत्तर देना आदि की व्यवस्था की जाती है। इस व्यवस्था के फलस्वरुप ही शिक्षार्थी को सीखने की प्रक्रिया में निरन्तर क्रियाशील रखा जाता है। चूंकि वह स्वयं कार्य करके सीखता है। अत: इससे उसे प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त होता हैं तथा अर्जित ज्ञान स्थायी प्रवृति का होता है। शिक्षण की अनेक विधियों की अपेक्षा अभिक्रमित अनुदेशन में शिक्षार्थी का सक्रिय सहयोग के सिद्धांत का उपयोग अधिक होता है।

(4) स्वयं की गति से सीखने का सिद्धांत (Principle of Self Pacing) - एक ही कक्षा में विभिन्न योग्यता के विद्यार्थी होते हैं। कोई शीघ्रता से पाठ्यवस्तु को समझ लेता है तो कुछ ऐसे भी होते हैं जिन्हें समझने में समय अधिक लगता है। आदर्श शिक्षण-व्यवस्था वह है जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी अपनी सीखने की गति से सीखे। अभिक्रमित अनुदेशन हर विद्यार्थी को अपनी गति से सीखने का अवसर प्रदान करता हैं समस्त विद्यार्थियों के पास अपनी-अपनी अभिक्रमित अनुदेशन पुस्तिका होती है। शीघ्रता से समझने वाले इसे शीघ्र समाप्त कर अन्य कार्य जैसे कक्षा कार्य, पुस्तकालय में पढ़ना आदि करने को स्वतंत्र होते हैं, जबकि धीमी गति से पढ़ने वाले विद्यार्थी भी अपनी रफ्तार से पढ़ सकते हैं। इस प्रकार अभिक्रमित अनुदेशन में स्वयं की गति से सीखने की व्यवस्था है।

(5) तार्किक क्रम का सिद्धांत (Principle of logical sequence) - अभिक्रमित अनुदेशन स्वाध्याय पर आधारित है अर्थात् इसमें विद्यार्थी स्वयं अध्ययन करता है, अध्यापक केवल मार्गदर्शक होता है। अत: विषय-वस्तु को शिक्षार्थी के सम्मुख किस क्रम मे प्रस्तुत किया जाए इस सम्बन्ध में

पूर्व निर्णय ले लिया जाता है जिससे कि यह छात्र को आसानी से समझ में आ जाये। इसके लिये विषय-वस्तु को छोटी-छोटी इकाइयों में बांट कर एक विशेष क्रम में व्यवस्थित किया जाता हैं तत्पश्चात् इसी कार्यक्रम में अभिक्रमित अनुदेशन के फ्रेम तैयार किये जाते हैं। इस प्रकार यह पद्धति तार्किक क्रम के सिद्धांत पर आधारित है।

10.5 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रमुख प्रत्यय (Main concept of Programmed Instruction)

अभिक्रमित-अनुदेशन में कुछ प्रत्यय एवं शब्दों का प्रयोग बारम्बार होता है। अत: इनको समझना भी अति आवश्यक है। ये निम्नलिखित है-

(1) पद या फ्रेम (Frame) - यह अभिक्रमित अनुदेशन में सर्वाधिक प्रचलित शब्द है। इसके सामान्यत: तीन भाग अर्थात् सूचना प्रदान करने वाला भाग जिसे विद्यार्थी पढ़कर सूचनायें ग्रहण करता है। इसे उद्दीपक वाला भाग भी कहते हैं। दूसरा भाग प्रश्न के पूछे जाने या रिक्त स्थान की पूर्ति करने से सम्बन्धित है - जिसे अनुक्रिया वाला भाग कहते है। तीसरा भाग सही उत्तर वाला भाग है, जिससे बालक को अपने उत्तर को सही या गलत होने का ज्ञान होता है। फ्रेम तथा साधारण गद्यांश दोनों ही एक न होकर इन दोनों में अन्तर है। गद्यांश में बहुत सी सूचनाऐं एक साथ दी जाती हैं, जबकि फ्रेम में एक सूचना एक बार में दी जाती है। गद्यांश में छात्र से अनुक्रिया हेतु प्रश्न नहीं पूछे जाते जबकि फ्रेम में अधिगम को क्रियाशील बनाये रखने के लिये प्रश्न पूछे जाते हैं तथा छात्र के उत्तरों की जाँच भी तत्काल की जाती है।

फ्रेम का एक उदाहरण प्रस्तुत है-

0.1 आपने स्पंज देखा होगा। इसमें सैकड़ों छिद्र होते हैं यदि यह सूखा हो तो ऐसी स्थिति में इन छोटे-छोटे छिद्रों में क्या भरा होगा?

हवा यदि इस स्पंज के टुकडे को आप हाथ से दबा दे तो दबाने पर:

0.2 (क) वह आकार में बढ़ जायेगा (ख) आकार में कोई परिवर्तन नहीं होगा (स) आकार में छोटा हो जायेगा।

उपर्युक्त दो उदाहरण फ्रेम को स्पष्ट करने के लिये पर्याप्त है। यही फ्रेम संख्या-01 में सर्वप्रथम स्पंज के गुण के बारे में सूचना दी गई है। उसके बाद छोटे-छोटे छिद्रों में क्या भरा होगा? प्रश्न पूछा गया। जिससे कि छात्र अपनी कापी में इसका उत्तर लिख कर सही उत्तर जो कि फ्रेम संख्या-01 के नीचे "हवा" लिखा से मिलान करता है। इस प्रकार फ्रेम के तीनों भाग अपने आप में स्पष्ट हैं। एक प्रमुख बात यह है कि अगला फ्रेम संख्या-02 अलग से न होकर पिछले फ्रेम संख्या-01 में दिये गये ज्ञान से सम्बन्धित है।

फ्रेम के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों ने निम्न प्रकार से विचार व्यक्त किये हैं-

टेबर -"फ्रेम विषय-वस्तु का वह लघु अंश है जो कि विद्यार्थी से किसी विशिष्ट उत्तर प्राप्त करने के प्रयोजन से निर्मित किया जाता है"

क्लारा -"फ्रेम में उद्दीपन, अनुबोधक अनुक्रिया तथा ज्ञान वृद्धि हेतु विष्य-वस्तु होती ह।" उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि फ्रेम के तीन भाग निम्नानुसार होते है -

(1) उद्दीपक-भाग या सूचना प्रदान करने वाला भाग

(2) अनुक्रिया-भाग जिसमें सूचना के आधार पर उत्तर देना है।

(3) पृष्ठपोषण भाग-उत्तर के सही या गलत होने का आभास कराता है।

ये समस्त भाग मिलकर एक फ्रेम या पद का निर्माण करते हैं। अभिक्रमित अनुदेशन में छात्रों की सही अनुक्रियायें सहायता प्रदान करने हेतु इस प्रविधि का भी प्रयोग किया जाता है। यह सबसे महत्वपूर्ण होती है।

अनुबोधन (Prompt) -कई बार ऐसी स्थिति आती है कि विद्यार्थी किसी पद को पढ़कर सही उत्तर देने में आने आपको असमर्थ पाता है। उससे सही उत्तर निकलवाने के लिए कई बार उसे अन्य उद्दीपकों से मदद दी जाती है, उसे अनुबोधक कहते है। यह ठीक उसी प्रकार है जैसे किसी नाटक में कोई पात्र यदि अपने संवाद भूल जाता है तो पर्दे के पीछे बैठा व्यक्ति संवाद का एक शब्द बोलता है और पात्र को पूरा संवाद याद आ जाता है। उदाहरण के लिए-

0.1 मिश्रित शब्द दो अक्षरों से बना होता हैं स्वागत दो अक्षर अर्थात् स+आगत से बना है यह कैसा शब्द है?

मिश्रित शब्द है

0.2 देवालय शब्द .....शब्द है।

मिश्रित

ऊपर दो फ्रेम क्रम संख्या 01 व 02 दर्शाये गये हैं। फ्रेम संख्या 02 में विद्यार्थी उत्तर देने में असमर्थ है। फ्रेम संख्या 01 में मिश्रित शब्द के अर्थ को रेखांकित किया गया है जो कि अनुबोधक का कार्य कर रहा है। इसे रेखांकित भाग को ध्यान पढ़ने पर उत्तर प्राप्त करने में मदद मिल रही है।

उद्दीपक (Stimulus) - उद्दीपक से यहां अभिप्राय है वातावरण या परिस्थितिजन्य घटना जो व्यक्ति के व्यवहार कर नियंत्रित कर उसे मार्गदर्शन प्रदान करती है। फ्रेम में दी गई सूचनाएं तथा पूछे गये प्रश्न उद्दीपन का कार्य करते हैं अर्थात् बालक क्या व्यवहार करे, इस संदर्भ में मार्ग दर्शन देते हैं।

अनुक्रिया (Response) - विद्यार्थी प्रश्न को समझकर जो उत्तर अपनी उत्तर-पुस्तिका में लिखता है उसे अनुक्रिया कहते है अभिक्रमित अनुदेशन में केवल वे ही अनुक्रियाएं कराई जाती है जो कि बालक के व्यवहारगत परिवर्तन से सम्बन्धित हैं।

10.6 अभिक्रमित अनुदेशन के प्रकार (Types of Programmed Instruction)

मुख्य रुप से अभिक्रमित अनुदेशन तीन प्रकार के होते हैं -

(क) रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन (Linear Programmed Instruction)

(ख) शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन (Branching Programmed Instruction)

(ग) अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन (Mathetics Programmed Instruction)

(क) रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन - रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के रचयिता हार्वर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बी.एफ. स्किनर हैं। इन्होंने सर्वप्रथम हालैण्ड की सहायता से पहल अभिक्रमित अनुदेशन तैयार किया।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में विद्यार्थी को प्रत्येक पद को पढ़ना पड़ता है और इस प्रकार वह धीरे-धीरे अपेक्षित व्यवहार अर्जित कर लेता है। उदाहरण चित्र में दिया गया है-

फ्रेम-1 फ्रेम-2 फ्रेम-3 फ्रेम-4 फ्रेम-5

उपरोक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि यहां विद्यार्थी सर्वप्रथम पहले, फिर दूसरे, बाद में तीसरे तथा इसी क्रम में एक के बाद एक फ्रेम को पढ़ता जाता है तथा अन्त तक सभी फ्रेमों को एक के बाद पढ़ता है। चूंकि यह प्रक्रिया एक सीधी रेखा द्वारा प्रदर्शित की जाती है। इसलिए इसे रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन के नाम से पुकारते हैं। यहां पर विद्यार्थी को पढ्ने का मार्ग बाह्य रुप से अभिक्रमित अनुदेशन लिखने वाले द्वारा निर्धारित किया जाता है।

रेखीय अनुदेशन में विषय-वस्तु को छोटे-छोटे फ्रेमों में प्रस्तुत किया जाता है। छात्र प्रत्येक पद को पढ़ता है, पद में लिखे अनुसार वह अनुक्रिया करता है, फिर अपनी अनुक्रिया के उत्तर का मिलान सही उत्तर से कर सही या गलत होने की जांच करता है। अनुक्रिया से सही होने पर ही वह अगले पद को पड़ता है। इस प्रकार वह प्रत्येक पद में सही अनुक्रिया करता हुआ अन्तिम पद तक पहुंच जाता है।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की अवधारणायें (Concept)

यह अभिक्रम निम्नलिखित धारणाओं पर आधारित है -

(1) यह त्रुटियों को महत्व नहीं देता है, इसकी यह मान्यता है कि बालक कम त्रुटिया करने से अधिक सीखता है।

(2) पाठ्यवस्तु को बोधगम्य बनाने के लिये इसे विद्यार्थी के सम्मुख छोटे-छोटे पदों में प्रस्तुत किया जाता है।

(3) छात्र स्वयं की सीखने की गति से अधिक सीखता है।

(4) बालक यदि सक्रिय रहे तो उसका अधिगम प्रभावी रुप से होता है।

(5) अनुक्रिया उत्पन्न होते ही यदि उसको सही बताकर उसकी प्रतिपुष्टि की जाए तो अधिगम अधिक स्थायी बनेगा।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का रुप (Format) :

(1) ऐसे पद इसमें प्रारम्भ में होते हैं तथा ये बालक के पूर्व ज्ञान तथा सीखे जाने वाले पाठ के नीचे के बीच एक कड़ी का कार्य करते हैं। ये प्रमुख रुप से पाठ की प्रस्तावना से सम्बन्धित होते हैं।

(2) शिक्षण पद

जो पढ़ाई जाने वाली विषय-वस्तु है उनसे सम्बन्धित होते हैं। इनसे छात्रों को नया ज्ञान दिया जाता है जो कि इस क्रम में व्यवस्थित होता है कि धीरे-धीरे वह पूरा पाठ समझ लेता है। ऐसे पदों की संख्या अधिक होती है।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएँ (Limitations) :

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन अपने आप में एक आदर्श अनुदेशन नहीं कहा जा सकता है। इसकी निम्नलिखित सीमाएँ हैं

(1) इस प्रकार के अनुदेशन में सबसे बड़ी कमी यह है कि यह छात्र द्वारा त्रुटि करने पर यह बताने में समर्थ नहीं है कि यह गलत क्यों है? त्रुटि करने पर उसे वह फ्रेम पुन: पढ़ना पड़ता है।

(2) प्रत्येक विद्यार्थी को चाहे उसे बीच की बातें आती ही हो प्रत्येक फ्रेम में से गुजरना पड़ता है। इस प्रकार एक ही क्रम में पढने से बालकों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं का ध्यान नहीं रखा गया है।

(3) इसमें सृजनात्मक तथा तार्किक चिन्तन की क्षमता विकसित किया जाना संभव नहीं है।

(4) प्रतिभाशाली विद्यार्थी छोटे-छोटे पदों को पढ़ने में रुचि नहीं दिखाते हैं क्योंकि ये पद उनके लिए बहुत ही सरल सिद्ध होते है।

(5) सभी विषयों में इसका निर्माण किया जाना संभव नहीं है।

रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में उपरोक्त सीमाओं के होने के बावजूद भी इसका उपयोग बहुत अधिक किया गया है। शोध कार्यो ने भी इसकी प्रभावशीलता को प्रमाणित किया है। स्टालुरो लिखते है कि अभिक्रमित अनुदेशन पर हुए शोधकार्य इस सम्बन्ध में कोई भ्रम पैदा नहीं करते कि विद्यार्थी जो इसकी सहायता से पढ़ता है, प्रभावी रुप से सीखता है। रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन का प्रयोग पत्रचार द्वारा शिक्षण में भी किया जाता है।

(ख) शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन - पूर्व में हमने यह देखा कि रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन में विद्यार्थी को प्रत्येक फ्रेम को पढ़ना पडता था, चाहे वह उसके लिए आवश्यक हो या नहीं। लेकिन शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में ऐसा नहीं है। इस प्रकार के अनुदेशन में विद्यार्थी को एक फ्रेम पढ़ने को कहा जाता है। फिर प्रश्न पूछा जाता है जिसमें बालक अपना उत्तर चुनकर देता है। इसमें केवल एक उत्तर ही सही उत्तर होता है। विद्यार्थी यदि गलत उत्तर चुनता है तब उसका निदानात्मक शिक्षण करने के लिये अन्य फ्रेम पढ़ने पड़ते हैं। सही उत्तर चुनने पर वह अगले फ्रेम पर पहुंच जाता है निम्नलिखित उदाहरण से स्पष्ट होगा-

चित्र फ्रेम -

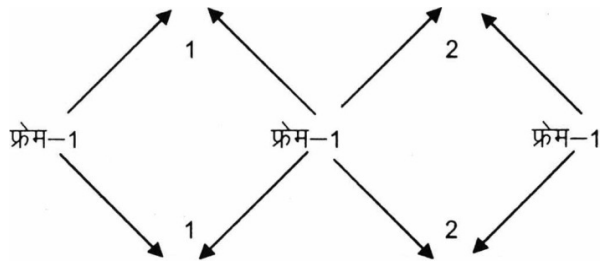

उपरोक्त चित्र से यह स्पष्ट होता है कि फ्रेम संख्या-01 पूछे गये प्रश्न के तीन उत्तर क्रमश: ए, बी व सी हैं। इनमें से ए और बी विकल्प गलत है। यदि छात्र इनमें से कोई एक चुनता है तो वह ए के लिए एक (ए) फ्रेम तथा बी के लिए (बी) को पढेगा तथा वह यह समझेगा कि उसका उत्तर ठीक क्यों नहीं है। वह पुन: फ्रेम- 1 को पढ सही उत्तर ढूँढेगा। यदि वह सी अर्थात् सही उत्तर को चुनता है तो उसे शाखाओं में जाने की आवश्यकता नहीं है। वह सीधे

ही फ्रेम संख्या-02 पर आ जाता है। इस प्रकार वह त्रुटि करने पर बार-बार उपचारात्मक शिक्षण के लिए शाखाओं के फ्रेम को पढ़ता है। चूंकि इसमें शाखाओं की व्यवस्था है, इसलिए इसे शाखीय. अभिक्रमित अनुदेशन कहते है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के प्रतिपादक नार्मन ए. क्राउडर ने (1954 ई) में संयुक्त राज्य अमेरिका में इसका विकास किया है। इस कारण इसे कभी-कभी क्राउडेरियन अनुदेशन भी कहते हैं। यहां पर विद्यार्थी अपने पढ़ने की दिशा स्वयं निर्धारण करता है अर्थात् त्रुटि करने पर शाखाओं में तथा न करने पर अगले फ्रेम का अध्ययन करता है। चूंकि यह निर्णय आन्तरिक है। अत: इसे आन्तरिक अनुदेशन भी कहते है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की मान्यताएँ (Assumptions)

यह चार मान्यताओं पर आधारित हैं:

(1) जो फ्रेम बालक को पढ़ने के लिए प्रस्तुत किया जाता है उसको पढ़ने से छात्र उसे समझ लेगा।

(2) त्रुटियॉ सीखने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। बालक द्वारा की जाने वाली त्रुटियों को ढूंढने तथा उसका निवारण करने से अधिगम अधिक प्रभावी रुप से होगा।

(3) शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन पद्धति लचीली होने के कारण सभी स्तर के छात्र इससे लाभान्वित हो सकते है।

(4) इसमें बालक तुलना करना व विभेद करना सीखता है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन के व्यावहारिक अधिनियम

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की अवधारणा तथा मूल सिद्धांतों के आधार पर तीन व्यावहारिक अधिनियम दिये जा सकते हैं :

(1) व्याख्यात्मक अधिनियम (Principle of Exposition) - इसके अनुसार पहले प्रत्यय या इकाई के स्वरुप की व्याख्या की जाती है जिसे छात्र समग्र रुप से पढ़ता है। जिसे पृष्ठ पर व्याख्या दी जाती है, वह गृह पृष्ठ कहलाता है। व्याख्या के अन्त में बहु निर्वचन प्रश्न दिए जाते हैं।

(2) निदानात्मक अधिनियम (Principle of Exposition) -इसका तात्पर्य निदान करने से है। यदि विद्यार्थी सही अनुक्रिया का चयन कर लेता है जब अगले प्रत्यय पर अग्रसर होता है। परन्तु गलत अनुक्रिया करने पर उसे त्रुटि पृष्ठ पर जाना होता है।

(3) उपचारात्मक अधिनियम- इसका कार्य उपचार प्रदान करना है। उपचारात्मक अनुदेशन प्रत्येक गलत अनुक्रिया के लिए अलग-अलग पृष्ठ पर दिया जाता है, जिन्हें त्रुटि पृष्ठ कहते हैं।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ (Characteristics) :

(1) इसमें लिये गये फ्रेम का आकार अपेक्षाकृत बड़ा होता है।

(2) शाखीय कल्पों में से चुनना पडता है अर्थात् चुनने में उसे सरलता रहती है।

(3) इससे विद्यार्थी की तार्किक शक्ति का विकास होता है क्योंकि कई विकल्पों में से उसे सही विकल्पों को चुनना होता है।

(4) इसमें यह बताया जाता है कि विद्यार्थी गलत क्यों है? उसको स्पष्टीकरण प्राप्त होने से उसकी भूल का उसे आभास भी होता है।

(5) प्रतिभाशाली छात्रों के लिये यह समय की बचत कराता है।

(6) इसमें विद्यार्थी की क्षमताओं को अधिक महत्व प्रदान किया गया हैं

(7) इसका प्रयोग उच्च अभिक्रमित अनुदेशन में विद्यार्थी को प्रश्न का उत्तर स्वयं निर्मित नही करना पड़ता है। अपितु दिये गये वि शिक्षा उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है।

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएँ (Limitations)

शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन की कई विशेषताएँ होते हुए भी इसमें निम्नांकित दोष हैं:

(1) विद्यार्थी कभी-कभी बिना पढ़े ही सही उत्तर को छांट सकता है।

(2) इस प्रकार के अनुदेशन का निर्माण करना बहुत कठिन कार्य है।

(3) इसमें पृष्ठों की संख्या अधिक होने से यह खर्चीला हो जाता है।

(4) यह बड़ी कक्षाओं के लिये ही उपयोगी है।

(5) इस प्रकार के अभिक्रम से पूरी पुस्तक पढ़ाया जाना असंभव है।

(6) यह मंद बुद्धि छात्रों के लिये उपयोगी नहीं है।

(7) इसमें बार-बार पन्ने पलटने से विद्यार्थी शीघ्र ऊब जाता है।

(ग) अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन (मेथेटिक्स)- इस अभिक्रम को मेथेटिक्स अभिक्रमित अनुदेशन कहते हैं। इसकी प्रकृति के कारण इसे अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन कहा जाता है जिसका प्रमुख लक्ष्य पाठ्य-वस्तु का स्वामित्व प्रदान करना है। इस प्रकार के अनुदेशन मे स्वामित्व इकाई को छोटे-छोटे पदों में विभाजित किया जाता है और उन्हें सीखने के क्रम मे व्यवस्थित किया जाता है। पहले पद में प्रत्यय की व्याख्या की जाती है। विद्यार्थी से कोई अनुक्रिया नहीं कराई जाती है। इसके बाद सभी तत्वों का प्रदर्शन किया जाता है परन्तु स्वामित्व तत्व के लिए विद्यार्थी अनुक्रिया करते है। तीसरे पद में सभी तत्वों का प्रदर्शन किया जाता है और अन्तिम दो तत्वों के लिए छात्र अनुक्रियाऐं करते हैं। इसी प्रकार पहले तत्व के लिये छात्र अनुक्रिया अंत में करते है। इसलिए इसको अवरोही श्रृंखला भी कहते है। एक स्वामित्व इकाई के सभी पदों को एक पुंज कहा जाता है।

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन का मौलिक प्रत्यय थॉमस एफ. गिलबर्ट (1962) ने दिया है इस अभिक्रमित अनुदेशन में विषय के स्वामित्व पर अधिक बल दिया जाता है। मेथेटिक्स अथवा अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन के प्रतिमान में शिक्षार्थी सभी प्रकार की निष्पत्तियों को क्रियाओं द्वारा सीखता हैं इसके अंतर्गत व्यवहार में विभेदीकरण, सामान्यीकरण तथा श्रृंखला को महत्व दिया जाता है। अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन की अवधारणायें -

इस अभिक्रम की निम्नांकित अवधारणायें हैं :

(1) अधिक प्रेरणादायी क्रियाओं के लिये यह अनुदेशन अधिक प्रभावशाली होता है।

(2) पाठ्य-वस्तु के स्वामित्व के लिए अवरोह श्रृंखला अधिक उपयोगी होती है।

(3) अन्तिम पद को पहले प्रस्तुत करने से पाठ्य-वस्तु के स्वामित्व में अधिक सहायता मिलती है।

(4) उद्दीपन तथा अनुक्रिया ही पाठ्य-वस्तु के स्वरुप को निर्धारित करते है।

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन के अधिनियम- इस अनुदेशन का मुख्य लक्ष्य पाठ्य-वस्तु का स्वामित्व प्रदान करना है। जिसके लिये प्रस्तुतीकरण को विशेष महत्त्व दिया जाता है। प्रस्तुतीकरण में निम्नांकित नियमों को विशेष रुप से ध्यान में रखा जाता है:

(अ) श्रृंखला का नियम- इसका प्रयोग उन क्रियाओं में किया जाता है जहां स्वामित्व देने वाली क्रियाओं की व्यवस्था एक फ्रेम में की जाती है। पाठ्य-वस्तु का विश्लेषण करके तत्वों का उद्दीपन अनुक्रिया के रुप में प्रस्तुत किया जा सकता है। प्रत्येक अनुक्रिया अपने से अगले पद के लिये उद्दीपन का कार्य करती है।

(ब) विभेदीकरण का नियम- इसका प्रयोग उन परिस्थितियों में किया जाता है, जहां उद्दीपन तथा अनुक्रियायें विविध प्रकार की होती है। विभेदीकरण को संकेतों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है।

(स) सामान्यीकरण नियम- सामान्यीकरण का प्रयोग उन स्थितियों में किया जाता है जहां कई उद्दीपनों के लिये एक ही अनुक्रिया की जा सके। कई उद्दीपनों में समान तत्व होने पर एक अनुक्रिया पर्याप्त होती है। इसे सामान्यीकरण कहा जाता है।

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ :

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन की निम्नांकित विशेषताएँ है

(1) यह अनुदेशन की एक ऐसी व्यूह रचना है, जो पाठ्य-वस्तु के स्वामित्व को महत्व देती है।
(2) अधिगम में श्रृंखला, विभेदीकरण तथा सामान्यीकरण का प्रयोग किया जाता है।
(3) इससे छात्र अध्ययन के समय तत्पर रहते हैं।
(4) स्वामित्व पद अधिगम की श्रृंखला में कहीं भी आ सकता है। इसलिये यह व्यूह रचना अधिक लचीली है।
(5) इस अनुदेशन की पाठ्य-सामग्री में नियम-उदाहरण तथा उदाहरण-नियम दोनो, प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है।
(6) पाठ्य-वस्तु को छोटे-छोटे पदों में प्रयुक्त किया जाता है जिन्हें छात्र सरलता से बोधगम्य कर लेते है।
(7) इस अनुदेशन से छात्र बिना शिक्षक की उपस्थिति के पाठ्य-वस्तु का स्वामित्व कर लेते है।

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन की सीमायें -

अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन की कई विशेषतायें होते हुए भी इसमें निम्नलिखित दोष है-

(1) इसका प्रयोग सीमित पाठ्य-वस्तुओं के लिये ही किया जा सकता है।
(2) इसमें छात्रों की अनुक्रिया के लिये स्वतंत्रता नहीं होती। अन्तिम क्रिया पहले करने में छात्रों को कठिनाई होती है।
(3) इस प्रकार के अनुदेशन का निर्माण करना कठिन होता है।
(4) इस अभिक्रम में छात्रों की कठिनाइयों व कमजोरियों के लिये उपचारात्मक अनुदेशन की कोई व्यवस्था नहीं की जाती है।
(5) इस प्रकार के अभिक्रम का उपयोग उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये नहीं किया जा सकता है।

(6) इसमें केवल मनोवैज्ञानिक अभिप्रेरणा ही दी जाती है तथा सामाजिक अभिप्रेरणा को महत्व नहीं दिया जाता है।

10.7 अभिक्रमित अनुदेशन प्रोग्राम की रचना (Construction of Programmed of Instruction)

अभिक्रमित अनुदेशन की रचना के निम्नांकित पद हैं -

1. अनुदेशन के लिए प्रकरण का चयन करना।
2. उद्देश्यों का प्रतिपादन करना (पूर्व तथा अन्तिम व्यवहार)
3. पाठ्य-वस्तु विश्लेषण
4. मानदण्ड परीक्षा का निर्माण करना।
5. समुचित अनुदेशन के प्रारुप का निर्धारण करना।
6. पदों की रचना तथा व्यक्तिगत जांच।
7. समूह पर जांच के बाद दोहराना, सम्पादन करना तथा अन्तिम रुप तैयार करना।
8. मूल्यांकन
9. अनुसूची तैयार करना।

(1) अनुदेशन के लिए प्रकरण का चुनाव करना (Selection of a Topic) - अभिक्रमित अनुदेशन का प्रकरण छोटा होना चाहिये। प्रकरण में लिये गये प्रत्यय अपने आप में स्पष्ट हो तथा उन पर फ्रेम बनाया जाना संभव हो। प्रकरण इस प्रकार का हो कि वह 40 से 50 मिनट की अवधि में पूरा किया जा सके। जिन छात्रों के लिये यह प्रकरण चुना जा रहा है वे इसमें रुचि रखते हों। प्रकरण का स्वरुप स्थायी व निश्चित हो। अभिक्रमित अनुदेशन जिस प्रकरण के लिये निर्मित किया जाए वह मितव्ययी हो। इन सब बातों को ध्यान में रखकर प्रकरण का चुनाव किया जाना चाहिए।

(2) उद्देश्यों का प्रतिपादन करना (Formulation of Objectives) - अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण का दूसरा सोपान उद्देश्यों का प्रतिपादन करना तथा उन्हें व्यावहारिक रुप में लिखना है। उद्देश्यों के निर्धारण में "बलूम" के शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण की सहायता ली जाती है। अभिक्रमित अनुदेशन से ज्ञानात्मक उद्देश्यों की सरलता से प्राप्ति की जाती है। इसलिए इसमें ब्लूम में ज्ञानात्मक शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण का अनुसरण किया जाता है। इसके पश्चात् उन्हें व्यावहारिक रुप में लिखा जाता है। इस संबंध में रॉबर्ट मेगर ने उद्देश्यों को व्यावहारिक रुप में लिखने की प्रभावशाली विधि का प्रतिपादन किया है।

अभिक्रमित अनुदेशन के निर्माण के लिए दो प्रकार के व्यावहारिक उद्देश्यों का प्रतिपादन किया जाता है।

(क) पूर्व-व्यवहार (Entering Behaviour) - पूर्व-व्यवहार में छात्रों के उन गुणों को शामिल किया जाता है जिनकी अभिक्रमित अनुदेशन के लिये पूर्व-आवश्यकता होती है। इस अभिक्रम को प्रारम्भ करने के लिये जिस ज्ञान तथा कौशल की आवश्यकता होती है उनकी स्पष्ट रुप में व्याख्या करनी चाहिये। पूर्व-आवश्यक योग्यताओं को परीक्षण के रुप में स्पष्ट करना चाहिए। छात्र के संबंध में पूर्व सूचनायें जैसे आयु स्तर, भाषा की बोधगम्यता का स्तर आदि को एकत्रित कर लेना चाहिए।

पूर्व व्यवहारों को ज्ञात करने के लिये पूर्व-पूर्व परीक्षण का निर्माण किया जाता है। इसके अलावा छात्रों की निदानात्मक परीक्षा, संचयी आलेख, व्यक्तिगत अनुभव आदि पूर्व-व्यवहार के स्त्रेत माने जाते है।

(ब) अन्तिम व्यवहार (Terminal Behaviour) - इसमें छात्रों की उन सभी अनुक्रियाओं को शामिल किया जाता है जो उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है। अंतिम व्यवहार के लिये ज्ञानात्मक उद्देश्यों को ही महत्व दिया जाता हैं। इन्हें अभिक्रमित अनुदेशन का प्रदा पक्ष माना जाता है तथा पूर्व-व्यवहार के लिए अदा का कार्य करते हैं। अंतिम व्यवहारों को उद्देश्यों पाठ्य-वस्तु तथा कार्यसूचक क्रियाओं की सहायता से लिखा जाता है।

(3) पाठ्य-वस्तु विश्लेषण तथा अनुदेशन क्रम का निर्धारण करना (Content analysis and Developing in sequence) - विषय-वस्तु के विश्लेषण से अर्थ उसे तर्क पूर्ण क्रम में व्यवस्थित करना है। इसके लिए विषय-वस्तु को ज्ञान, अवबोध, अनुपयोग, विश्लेषण, संश्लेषण आदि की दृष्टि से व्यवस्थित किया जाता है। विषय-वस्तु के विश्लेषण हेतु विशेषज्ञों से परामर्श किया जाता है, जिससे पाठ्यवस्तु के तार्किक क्रम को आधार पूर्वक सही माना जा सके।

(4) मानदण्ड परीक्षा का निर्माण करना (Construction of Criterion Test) - उद्देश्यों के विशिष्टीकरण तथा पाठ्यवस्तु के अन्तिम व्यवहारों के मापन के लिए मानदण्ड परीक्षा का निर्माण किया जाता है। इस परीक्षा की सहायता से उद्देश्यों के मापन हेतु प्रश्नों की रचना की जाती है जबकि निष्पति परीक्षा में पाठ्यवस्तु पर प्रश्नों का निर्माण किया जाता है। इसमें वस्तुनिष्ठ परीक्षा के प्रश्नों को शामिल किया जाता है। प्रत्येक प्रश्न किसी विशिष्ट उद्देश्यों का मापन करता है। प्रश्नों के निर्माण के बाद उनकी जांच करके पद-विश्लेषण किया जाता है।

मानदण्ड परीक्षा में जिन व्यवहारों के मापने के लिए प्रश्नों की रचना की जाती है उन सभी व्यवहारों को मानदण्ड व्यवहार कहते है। अभिक्रमित अनुदेशन जिन व्यवहार परिवर्तन के लिये पदों का निर्माण किया जाता है, उन सभी व्यवहारों को अन्तिम व्यवहार कहते हैं।

(5) समुचित अनुदेशन के प्रारुप का निर्धारण करना (To decide Appropriate paradign or strategy of Programme - मानदण्ड परीक्षा का निर्माण करने के पश्चात् अनुदेशन के प्रारुप के संबंध में निर्णय लिया जाता है। अनुदेशक के प्रारुप के निर्धारण में निम्नांकित पक्षों को निश्चित किया जाता है -

1. पदों का आकार
2. अनुक्रिया का रूप
3. अनुबोधक का रुप
4. नियम उदाहरण प्रणाली
5. सही अनुक्रिया के लिए स्थान

अनुदेशन के पदों की रचना में इन बातों के संबंध में निर्णय लेने से अधिक सुगमता व सरलता हो जाती है।

(6) अभिक्रमित अनुदेशन के पदों की रचना (Writing Programme Frames) -

पदों की रचना- पद या फ्रेम अभिक्रमित अनुदेशन का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है। इसकी सहायता से बालक पढ़ता है तथा विषयवस्तु को सीखता है। ये पद जितने स्तर के होंगे, अभिक्रमित अनुदेशन उतना ही अधिक प्रभावशाली होगा। पदों को लिखते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि वे आपस में एक दूसरे से संबंध रखते हो तथा वे अधिगम उद्देश्यों से भी जुड़े हों।

इसको लिखते समय निम्नांकित अवयवों को अवश्य समावेशित किया जाना चाहिये-

1. तथ्य एवं सूचनाएं जो कि एक बार पढ़ने से समझ में आ सके, की सीमा तक प्रत्येक पद के प्रारम्भ में रखनी चाहिए।
2. सूचना तथा तथ्य देने के बाद अनुक्रिया कराने के लिये प्रश्न पूछना चाहिये। इस प्रश्न का उत्तर संक्षिप्त व वस्तुनिष्ठ हों।
3. सही उत्तर या त्रुटियों के संबंध में उचित व्याख्या (शाखीय अनुदेशन) दी जानी चाहिये। उक्त प्रश्नों को शामिल करने में फ्रेम अच्छे स्तर का होगा।

पदों के प्रकार -

पदों के प्रकार निम्न प्रकार से लिये जाते हैं।

प्रस्तावना पद - 10 से 15 प्रतिशत

शिक्षण पद - 50 से 60 प्रतिशत

मूल्यांकन पद - 10 से 15 प्रतिशत

यह एक प्रस्तावित रुपरेखा है। विषयवस्तु की प्रकृति एवं कठिनता स्तर के अनुसार उक्त प्रतिशतों में परिवर्तन किया जा सकता है।

पदों का सम्पादन-

सम्पादन कार्य करते समय निम्नांकित बातों का विशेष ध्यान रखा जाता है।

1. भाषा सम्बन्धी अशुद्धियों को दूर करना।
2. वाक्यों को अर्थपूर्ण बनाना।
3. पाठ्यवस्तु की दृष्टि से फ्रेम का आकार कम या ज्यादा करना, जिससे कि यह संग्राह्राय बन सकें।
4. विचारों में स्पष्टता लाना।
5. पदों में दी गई विषयवस्तु को रोचक एवं क्रियाशील बनाना।

(7) समूह पर जाँच करना, दुहराना व सम्पादन करके अनुदेशन का अन्तिम रूप तैयार करना (Group Tryout, Revising, Editing and Preparing Final Draft of Programme) - विशेषज्ञों द्वारा सम्पादन का कार्य समाप्त होने के पश्चात् इसका परीक्षण व्यक्तिगत रुप में किया जाता है। इस हेतु प्रत्येक फ्रेम को एक कार्ड पर लिखा जाता है। जितने फ्रेम होते है, उतने ही कार्ड तैयार किए जाते है। यह परीक्षण सामान्य तथा कमजोर स्तर के 4 या 5 छात्रों के साथ किया जाता है। छात्र एक कार्ड उठाकर पढ़ता है तथा उत्तर गलत देने पर वह अपनी कठिनाई को बताता है। इससे फ्रेम में संशोधन किया जाता है। प्रत्येक फ्रेम को पढ़ने तथा अनुक्रिया करने का समय नोट किया जाता है।

परीक्षण के लिये चुने गये छात्रों द्वारा बताये अनुसार अभिक्रमित अनुदेशन में परिवर्तन किये जाते है। व्यक्तिगत परीक्षण के बाद अभिक्रमित अनुदेशन को अभिक्रमित करा कर एक समूह पर उसका परीक्षण किया जाता है। छात्रों द्वारा की गई त्रुटि का लेखा फ्रेम के हिसाब से रखा जाता है। ऐसा माना जाता है कि एक अच्छे अभिक्रमित अनुदेशन की त्रुटि दर 5 से 10 प्रतिशत की सीमा से अधिक नहीं होनी चाहिये। जिनमें त्रुटि दर 10 प्रतिशत से अधिक पाई जाती है, उसमें सुधार किया जाता है। इस प्रकार अभिक्रम का अन्तिम रुप तैयार किया जाता है।

(8) अभिक्रमित अनुदेशन का मूल्यांकन करना (Evaluating Programmed Instruction) - इस सोपान में अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताओं का मूल्यांकन किया जाता है। इसके लिये जनसंख्या में से एक बड़े न्यादर्श का चयन पूर्व-व्यवहारों के आधार पर किया जाता है। इसके पश्चात् अभिक्रमित पुस्तकें पढ़ने के निर्देश दिये जाते है और मानदण्ड परीक्षा को पूर्व-परीक्षा के रुप में इन छात्रों पर प्रशासन किया जाता है। इसके बाद छात्रों को अभिक्रमित पुस्तक व उत्तर-पत्रक पर अनु-क्रियाओं को लिखने के लिए कहा जाता है। पुस्तक पढ़ने के बाद मानदण्ड परीक्षा को पुन: दिया जाता है, जिससे छात्रों की निष्पत्तियों का बोध होता है और उद्देश्यों की प्राप्ति के संबंध में निर्णय लिया जाता है।

(9) अनुसूची तैयार करना (Preparing a manual of a programmed instruction) - इस अनुसूची में अभिक्रमित अनुदेशन के सम्बन्ध में सभी प्रकार की सूचनाओं का आलेख किया जाता है। किसी भी अभिक्रमित पुस्तक की उपयोगिता उसकी अनुसूची पर निर्भर होती हैं। इसमें अभिक्रम की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उद्देश्यों का विशिष्टीकरण मानदण्ड परीक्षा का विवरण, पदों का विवरण, मूल्यांकन का विवरण तथा निर्देश इत्यादि समस्त सूचनाओं का आलेख प्रस्तुत किया जाता है।

10.8 अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक (Programmed Text)

अभिक्रमित पाठ्यपुस्तक, अधिगम के सिद्धांतों तथा अधिनियमों के आधार पर रचित एक विशेष प्रकार की पुस्तक होती है। श्रृंखला पाठ्यपुस्तक (Chain Text) में पाठ्यवस्तु को छोटे-छोटे पदों में प्रस्तुत किया जाता है तथा प्रत्येक पद के लिये छात्र को अनुक्रिया करनी होती है। शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन में पाठ्यवस्तु की व्यवस्था मे पृष्ठों के क्रम का अनुसरण नहीं किया जाता है। इसमें दो प्रकार के पृष्ठ होते हैं - गृह पृष्ठ (Home Page) तथा त्रुटि पृष्ठ (Wrong page) इस प्रकार की पुस्तक को उत्कृष्ट पाठ्यपुस्तक (Scrambled Text) भी कहते हैं। मैथेटिक्स में अवरोह श्रृंखला का अनुसरण किया जाता है, इसलिए इसे अवरोह पाठ्यवस्तु (Mathetics Text) भी कहते हैं।

10.9 अभिक्रमित अनुदेशन की उपयोगिताएँ (Utility of Programmed Instruction)

(क) अभिक्रमित अनुदेशन की निम्नांकित उपयोगिताएँ -

1. इससे विद्यार्थियों में स्वाध्याय की प्रवृति का विकास किया जा सकता है।
2. चूंकि इसमें प्रत्येक विद्यार्थी को उसकी गति, क्षमता व योग्यता के अनुसार पढ़ने के अवसर मिलने के कारण व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखा जा सकता है।
3. इस प्रविधि के द्वारा विद्यार्थी का मूल्यांकन सरलता के साथ किया जा सकता है।
4. अध्यापक को कक्षा का बहुमूल्य समय छात्रों की त्रुटियों का पता लगाने में नष्ट नहीं करना पड़ता।
5. इसके द्वारा विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास में सहायता मिलती है।
6. इसका उपयोग पत्रचार-शिक्षण व व्यक्तिगत शिक्षण दोनों में उपयोगी है।
7. इसमें विद्यार्थी उत्तीर्ण या अनुत्तीर्ण नहीं होते, अपितु वे स्वयं आत्म-मूल्यांकन कर अपना विकास करते हैं

(ख) अभिक्रमित अनुदेशन की सीमाएँ (Limitation of Programmed Instruction)

इसमें कई विशेषताएँ होते हुए भी निम्नलिखित दोष हैं

1. इसकी सामग्री को तैयार करने को सुविधाएं अधिकांश विद्यालयों मे उपलब्ध नहीं है।
2. इसकी सामग्री तैयार करना श्रम साध्य है तथा इसमें निपुणता की आवश्यकता है जो सामान्य शिक्षक से अपेक्षित नहीं है।
3. इससे सामाजिक प्रेरणा नहीं मिलती है।
4. इसका प्रयोग केवल व्याख्यात्मक पाठ्यवस्तु के लिए किया जाता है जबकि तथ्यात्मक पाठ्यवस्तु के लिए संभव नहीं है।
5. इसमें छात्रों को अनुक्रिया की स्वतंत्रता नहीं मिलती क्योंकि विद्यार्थी व्यक्तिगत रुप से अध्ययन करता है।

10.10 सारांश (Summary)

आधुनिक युग में शिक्षा केक्षेत्र में अनेक नवाचार विकसित हो रहे है, ताकि प्रभावशाली होवे। शैक्षिक तकनीकी के विकास के साथ ही अनेक उपयोगी नवाचार उभर कर सामने आये है।

अभिक्रमित अधिगम यानि क्रमबद्ध / व्यवस्थित का से सीखना। विद्यार्थियों के समक्ष विषय वस्तु को छोटे-छोटे पदों में प्रस्तुत करना ताकि वो स्वयं की गति से सीख सके तथा उन्हें उनकी प्रगति उस का ज्ञान तुरन्त करा देना अभिक्रमित अनुदेशन कहते है।

ये मुख्यत: तीन प्रकार का होता है -

1. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन

2. शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन
3. अवरोह अभिक्रमित अनुदेशन

इनको विकसित करने में अनेक शिक्षा शास्त्रियों / मनोवैज्ञानिकों का योगदान रहा है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. अभिक्रमित अनुदेशन किसे कहते है? इसके कितने प्रकार है? विवरण दीजिये।
2. शाखीय अभिक्रमित अनुदेशन किसे कहते है? इसकी सीमाएँ लिखिए।
3. रेखीय अभिक्रमित अनुदेशन की विशेषताएँ बताईये।
4. अभिक्रमित अनुदेशन की निर्माण प्रक्रिया समझाइये।

10.11. संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

0.1 Allen Dwight & Rayan,K.A. 'Micro Teaching' Reading (Mass, USA) Addison - Wesley 1969.

0.2 Benjamin S. Bloom Krathwohl, R. David, Masia,B. Bertram, 'Taxonomy of Educational Objectives' The classification of Educational Goals David Mckay Co. Inc. New York, 1965.

0.3 Bhai Yogendra Jeet : "शिक्षा में नवाचार और नवीन प्रवृतियाँ, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा 1992

0.4 Chauhan, S.S. : Innovations in Teaching - Learning Process, Vikas Publishing House Pvt Ltd. Ansari Road, New Delhi, 1979.

0.5 Kathuria, R.P. : Micro Teaching 'Training for effective teaching' Vinod , 1988-89.

0.6 Mohanty Jagannath : 'Educational Technology' Deep & Deep Publications, F-154, Rajouri Garden, New Delhi, 1992.

0.7 Oad, L.K. : "शिक्षा के नूतन आयाम" राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर व 1990

0.8 Passi, B.K. & Singh, M.M.: 'Micro Teaching in Teacher Education' CASE, Baroda, 1974.

0.9 Purohit, J.N. Vyas, H. & Sharma, M.M.: "भावी शिक्षकों के लिये आधारभूत" राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर 1989

10. Rao, Usha: 'Educational technology' Himalaya Publishing House, Bombay, Delhi, Nagpur, 1991.

11. Saxena & Obroy : "शिक्षण तकनीकी" इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ 1990

12. Sharma, R.A.: "शिक्षा तकनीकी" इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ 1987

13. Singh, L.C. & Sharma, R.D.: ‘Micro Teaching’ Theory & Practices, National Psychological Corporation, Agra, 1987.
14. Skinner, B.F.: ‘Technology of Teaching Educational Division Mereditt Crop. New York.
15. William Clark Trow :’Teachers & Technology’. New Designs for Learning. Appletion Centray Crafts. New Yorks, 1963.

इकाई- 11

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन : अवधारणा एवं क्षेत्र, शोध, कार्यालय प्रबन्ध तथा पुस्तकालय में कम्प्यूटरों का प्रयोग

Computer Assisted Instruction: Concept and Scope, Use of Computers in Research, Office Management and Libraries

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

11.1 परिचय
(Introduction)

11.2 हार्डवेयर
(Hardware)

11.3 सॉफ्टवेयर
(Software)

11.4 अनुदेशन कार्यक्रमों के प्रकार
(Types of Instructional Programme)

11.4.1 ड्रिल कार्यक्रम
(Drill Programme)

11.4.2 शिक्षकीय कार्यक्रम (ट्यूटोरियल प्रोग्राम)
(Tutorial Programme)

11.4.3 अनुरुपक कार्यक्रम (साइमूलेशन प्रोग्राम)
(Simulation Programme)

11.4.4 खेल कार्यक्रम
(Games)

11.5 कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का प्रयोग
(Use of Computer Assisted Instruction)

11.6 शोध में कम्प्यूटरों का प्रयोग
(Use of Computers in Research)

11.7 कार्यालय प्रबन्ध में कम्प्यूटरों का प्रयोग

(Use of Computer in Management of Office)
11.8 पुस्तकालय में कम्प्यूटरों का प्रयोग
(Use of Computer in Library)
11.9 भारतीय विद्यालयों में कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन की वर्तमान स्थिति
(Present Status of computer Assisted Instruction in India Schools)
11.10 विद्यालयों में कम्प्यूटरों के प्रयोग हेतु व्यवस्था
(Arrangement in Schools for Use of computer)
11.11 शिक्षकों के लिए कम्प्यूटर प्रशिक्षण
(Computer training for teacher)
11.12 महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों मे कम्प्यूटर प्रशिक्षण
(Computer training in colleges and Universities)
11.13 सारांश
(Summary)
11.14 संदर्भ ग्रंथ सूची
(Bibliography)

11.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी -

- कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के अर्थ एवं क्षेत्र को समझ सकेगें।
- अध्ययन अधिगम व्यवस्था, शोध प्रबन्ध तथा पुस्तकालय में कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के विभिन्न प्रकारों के प्रयोगों के संदर्भ में जान जायेंगे।

11.1 परिचय
(Introduction)

आज शिक्षण शास्त्र को प्रभावित करने वाला महत्वपूर्ण क्षेत्र, अनुदेशन में कम्प्यूटरों का प्रयोग है। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन वैयक्तिक अनुदेशन में सहायता करता है तथा अन्य किसी व्यवस्था की अपेक्षा अधिक प्रभावी होता है। इसमें आकड़ों का संग्रहण एवं भण्डारण अधिक प्रभावकारी एवं उपयुक्तता के साथ किया जाता है तथा इसका प्रयोग एक व्यक्ति की अपेक्षा अधिक विस्तार से किया जा सकता है। कम्प्यूटर के माध्यम द्वारा आकड़ों को विभिन्न तरीके से प्रदशित किया जा सकता है तथा विद्यार्थी अपने विशिष्ट अधिगम उद्देश्यों के संदर्भ में निष्कर्ष निकाल सकता है तथा बहुत तीव्र गति वाले विशिष्ट विद्यार्थी के अधिगम कार्यक्रम का अनुकरण किया जा सकता है।

कार्यक्रम अधिगम पद्धति के परिचित व्यक्तियों के द्वारा कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के साथ काफी काम किया गया है। संशोधित कार्यक्रम अधिगम क्रम के द्वारा बहुत से कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन कार्यक्रम प्रदान किये गये हैं। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के अंतर्गत कार्यक्रम अधिगम तकनीक से सम्बन्धित बहुत सी व्यवस्थाओं को लेकर चला जाता है। इस देश में संभवत: यह बहुत ही महत्वपूर्ण तकनीकी उपलब्धि हैं अगर सही तरीके से प्रयोग किया जाये तो कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन शिक्षा मे बहुत ही महत्वपूर्ण एव उल्लेखनीय सुधार प्रदान कर सकता है। साथ ही यह अधिगम प्रक्रिया में भी उल्लेखनीय योगदान प्रदान करेगा। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन बहुत सी संवाद तकनीकों का परिणाम हैं।

इस इकाई के अंतर्गत आप कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन की प्रकृति तथा इसके क्षेत्र के बारे में जान सकेंगे। साथ ही आप इसके प्रयोग के संदर्भ में भी जानकारी हासिल कर पायेंगे।

11.2 हार्डवेयर (Hardware)

परिभाषा के अनुसार कम्प्यूटर एक ऐसा इलैक्ट्रॉनिक यंत्र / युक्ति है जिसके द्वारा कि गणितीय गणना करने में सक्षम होते है। तार्किक निर्णय लिये जा सकते हैं, परिणाम अत्याधिक उपयुक्त दिये जा सकते हैं। लम्बे समय तक बहुत से आँकडों को संग्रहित किया जा सकता है। इसका माध्यम द्वारा बहुत सारी चीजो से आसानी से तथा अच्छाई से निपटाया जा सकता है। एक डिजीटल कम्प्यूटर (क्योंकि इसमें डिजिट्स के साथ काम किया जाता है) में निम्नलिखित हार्डवेयर इकाईयां होती हैं -

1. आगत युक्ति (Input Device)
2. निर्गत युक्ति (Output Device)
3. केन्द्रीय प्रक्रिया इकाई (Central Processing Unit)
4. द्वितीय संग्रहण युक्ति (Hard Disk)

1. आगत युक्ति - आगत युक्ति निर्देशन एवं आकड़ों को देने के लिये उत्तरदायी होती है। सामान्यत: एक स्तरीय टाइप राइटर "की-बोर्ड" आगत युक्ति के रुप में प्रयोग किया जाता है। कुछ अन्य आगत युक्तियाँ जैसे लाइट पेन, माऊस, पेपर, टेप रीडर, कैसेट आदि का भी प्रयोग में किया जाता हैं उपर्युक्त ऑडियो-वीडियो संग्रहित युक्ति द्वारा कम्प्यूटर आवाज संदेश एवं तस्वीरों को भी तेजी से नियंत्रित करता है।

2. निर्गत युक्ति - निर्गत युक्ति टेलीविजन प्रटल की भांति दिखाई देने वाली इकाई होती है। प्रिंटर, प्लोटर, कार्डपंच तथा टेपपंच आदि अन्य निर्गत युक्तियाँ होती है।

3. केन्द्रीय प्रक्रिया इकाई - कम्प्यूटर की केन्द्रीय प्रक्रिया इकाई, जिसे कि बुद्धि भी कहा जाता है का प्रयोग अनुदेशनों की व्याख्या एवं क्रियान्वयन को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। इसमें स्मृति इकाई, गणितीय तार्किक इकाई तथा नियंत्रित इकाई होती है।

4. द्वितीय संग्रहण युक्ति - द्वितीय संग्रहण युक्ति कम्प्यूटर की बाह्य संग्रहण युक्ति होती है जिसे की डिस्क के नाम से भी जाना जाता है यह कम्प्यूटर का महत्वपूर्ण अंग होता है। इसका प्रयोग कम्प्यूटर पर किये गये काम को फ्लॉपी पर रिकार्ड करने तथा उसे स्थायी रुप से सुरक्षित करना होता है।

11.3 सॉफ्टवेयर (Software)

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन व्यवस्था में सॉफ्टवेयर के दो प्रमुख चरणों के काम में लिया जाता है। प्रथम - कम्प्यूटर कार्यक्रम या क्रियात्मक व्यवस्था, जिससे कि हार्डवेयर बनता है तथा द्वितीय - अनुदेशन जो कि हार्डवेयर द्वारा प्रस्तुत किया जाता है।

प्रथम - कम्प्यूटर कार्यक्रम एक सॉफ्टवेयर के रुप में: कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन कर्मचारी जिनके पास कि कम्प्यूटर है, इस बात के लिये आश्वस्त रहें कि क्रियात्मक व्यवस्था की प्रभावशीलता के लिये पर्याप्त सहायता हेतु कम्प्यूटर हमेशा तैयार रहेंगे।

द्वितीय - अनुदेशन कार्यक्रम: अध्ययन मशीनों के प्रारम्भिक दिनों से ही लोग इससे परिचित थे कि अनुदेशन कार्यक्रम में अध्यापन आता है न कि हार्डवेयर, यह आज भी सही है। इस संदर्भ में हमें कार्यक्रम अधिगम के मुख्य कारणों पर भी सोचना चाहिये। किसी भी अच्छे अधिगम कम में निम्न मुख्य तत्व होते हैं -

(अ) विद्यार्थियों की सक्रिया सहभागिता

(ब) प्रत्येक अधिगम स्तर पर सकारात्मक सुदृढ़ीकरण

(स) अधिगम की वैयक्तिक गति का अनुकूलन करना

(द) अधिगम के वैयक्तिक तरीकों का अनुकूलन

11.4 अनुदेशन कार्यक्रमों के प्रकार (Types of Instruction Programme)

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के अंतर्गत अनुदेशन कार्यक्रम के निम्न प्रकारहोते हैं-

11.4.1 ड्रिल कार्यक्रम (Drill) -

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का सबसे सरल प्रयोग ड्रिल में होता है जिसका मुख्य गुण उसकी निश्चित सहनशीलता में होता है। अगर यह माना जाये कि विद्यार्थियों की आवश्यकताएं, कुछ मुख्य प्रक्रियाओं, गणितीय कौशल या तथ्यों की पूर्ण जानकारी के क्रम में बहुत अभ्यास की आवश्यकता पडती है तो ड्रिल को बहुत ही फैशन के रुप में प्रस्तुत किया जाता है। इसके अन्तर्गत साधारण सुधारों एवं संशोधनों को भी सम्मिलित किया जाता है। इसको ड्रिल या अभ्यास रीति भी कहा जाता हैं एक विशिष्ट स्थिति में एक विद्यार्थी को कक्षा के अन्दर गणित की अवधारणा के बारे में बताया जाता है तब वह अपने व्यक्तिगत कम्प्यूटर पद उस अवधारणा की उपयोगिता के लिए अपनी क्षमता का प्रयोग कर सकता है तथा कम्प्यूटर

पर अपनी प्रगति को देखकर के वह तत्काल ही अपने कौशल स्तर को भी जान सकता है और विद्यार्थी कठिनाई के विभिन्न स्तरों के द्वारा अपनी प्रगति पर निर्भर करते हुए आगे-पीछे भी बढ़ सकते है। शिक्षक भी विद्यार्थियों की ड्रिल एवं अभ्यास रीति के मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थियों के कौशल को तय कर सकता है।

11.4.2 शिक्षकीय कार्यक्रम (Tutorial) -

शिक्षकीय कार्यक्रम कुछ जटिल प्रकृति के होते हैं। ये विभिन्न प्रकार के प्रश्न उत्तर क्रम, विद्यार्थी-शिक्षक अंतःक्रियात्मक अनुकूलन का प्रयोग करते हैं। शिक्षकीय कार्यक्रम रीति ड्रिल एवं अभ्यास रीति से पूर्णत: भिन्न होती है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों को शाखा-व्यवस्था के बारे में बताया जाता है। जिसके तहत सूचना को इस तरह से प्रस्तुत किया जाता है कि वह विद्यार्थियों की उपलब्धि को भिन्न-भिन्न रुप से प्रदर्शित कर सके। उदाहरण के लिये अगर एक विशिष्ट विद्यार्थी विशिष्ट सामग्री पर प्रायोजित कार्य को करते हुये निरंतर रुप से गलती करता है तो कम्प्यूटर समस्या के अस्तित्व को पहचान सकता है तथा विद्यार्थियों को अतिरिक्त विवरणात्मक सूचनाएं दे सकता है जो कि उसको समझने एवं अगली गलती को सुधारने में मदद कर सकती है।

शिक्षकीय कार्यक्रम एक शाखीय प्रक्रिया है, जिसमें कि विद्यार्थी पाठ्यक्रम के दौरान विभिन्न एवं पृथक-पृथक मार्गो का अनुसरण कर सकता है, तथा कार्यक्रम की प्रत्येक अवस्था में विभिन्न तरह से अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकता है। इन विभिन्न मार्गो का अनुसरण, कार्यक्रम संचालक की प्रवीणता पर निर्भर करता है। किन्तु फिर भी संयुक्तीकरण एवं क्रम परिवर्तन की संख्या बहुत अधिक होती है। यद्यपि प्रश्नों के उत्तर देने के संदर्भ में विद्यार्थी के समूह उत्तरों का एक निश्चित समूह होता है और वह उसी समूह में से अपने उत्तर देने तक सीमित रहता है।

11.4.3 अनुरुपक कार्यक्रम (Simulation) -

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन की उपयोगिता रीति को अनुरुपक संवाद, मॉडलिंग आदि विभिन्न नामों से जाना जाता है। इस रीति के अन्तर्गत कम्प्यूटर विद्यार्थियों को सूचना प्रदान करता है एवं विद्यार्थियों के उत्तरों का मूल्यांकन भी करता है। किन्तु साथ ही इसमें विद्यार्थी भी कम्प्यूटर की सूचना एंव निर्देशन दे सकता है। अनुरुपक कार्यक्रमों के अन्तर्गत भौतिकीय, गणितीय या सामाजिक प्रक्रिया से जुड़े कम्प्यूटर मॉडल विद्यार्थियों के निर्णयों को प्रभावित करते है तथा विद्यार्थियों के निर्णय के फलस्वरुप जो अनुरुपक व्यवस्था प्रभावित होती है उसकी भी विद्यार्थी सूचना प्राप्त करता है। व्यवस्था के निरन्तर रुप से बदलते परिपेक्ष में जो अंतक्रिया होती है उसके फलस्वरुप यह सीख सकता है कि किस तरह से अपने वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु कैसे अपनी प्रतिक्रिया को मोड़ा जाये? इस तरह के अधिकांश कार्यक्रमों के अन्तर्गत कौशल एवं अवधारणाओं से सम्बन्धित पूर्व जानकारी को लेकर चला जाता है,

ताकि कम्प्यूटर द्वारा उत्पन्न जटिल स्थिति से विद्यार्थी निपट सकें। उदाहरण के लिये अगर एक विद्यार्थी उन्नत गणित का एक पाठ्यक्रम करना चाहता है तो यह आवश्यक नहीं कि वह समस्या के समाधान हेतु आवश्यक अंक गणितीय सूत्र को भी हल करें। विद्यार्थी इसके लिये कम्प्यूटर को सूचना दे सकता है कि क्या समीकरण होंगे तथा क्या आधार कसौटियां होंगी? साथ ही वह कम्प्यूटर से अंक गणितीय सूत्र को हल करने के लिये भी कह सकता है। इस संदर्भ में विद्यार्थी उपयुक्त समीकरणों एवं कसौटियों के चयन में अपने ज्ञान को प्रदर्शित कर सकता है तथा उसे जो पहले से अंक गणितीय प्रक्रियाओं का ज्ञान है उसके आधार पर आगे बढ़ सकता है।

11.4.4 खेल कार्यक्रम (Games) -

खेल कार्यक्रमों के अन्तर्गत विद्यार्थी आवश्यक समस्या केन्द्रित खेलों का अभिनय करते हैं। जो कि उन्हें जटिल समस्याओं के संदर्भ में निर्णय लेने में सक्षम बनाते हैं। खेलों के नियम विद्यार्थियों को प्रदान कर दिये जाते हैं।

11.5 कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का प्रयोग (Use of Computer Assisted Instruction)

कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का महत्वपूर्ण प्रयोग अनुदेशन सामग्री के निर्माण एवं विकास में किया जाता है। इसका प्रयोग एक अधिगम प्रयोगशाला के रुप में किया जा सकता है। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन व्यवस्था एक ऐसा तरीका प्रदान करती है जिसके द्वारा पाठ्यक्रम संशोधन हेतु अधिगम रिकार्डस का तीव्र एवं विस्तृत विश्लेषण कर सकते हैं। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का प्रयोग गणित, भाषा कला, भौतिक शास्त्र एवं जीव विज्ञान जैसे विषयों तथा विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में किया जा सकता है। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन की भूमिका उस समय बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती है जबकि कार्यक्रमों के साथ निजी कम्प्यूटर उपलब्ध हों। इनका प्रयोग अवधारणात्मक एवं सामग्री प्रक्रियात्मक कार्य में ही किया जा सकता है। दूरस्थ शिक्षा के संदर्भ में कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का विद्यार्थियों को स्व-अधिगम सुविधा प्रदान करने में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। भविष्य में दूरस्थ शिक्षा संस्थाएं विद्यार्थियों को अपनी अध्ययन सामग्री के महत्वपूर्ण भाग के रुप में कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन पैकेज प्रदान करेगी। यह विद्यार्थियों को अपने आप अध्ययन करने हेतु सुविधा प्रदान करेंगी जिसमें विद्यार्थी इन पैकेजों के द्वारा उपयुक्त निर्देशन ग्रहण कर सकेगा।

11.6 शोध में कम्प्यूटर का प्रयोग
(Use of Computer in Research)

विगत में जो गणना मुश्किल होती थी वे आज कम्प्यूटरों के आगमन से काफी सरल हो गयी हैं। भौतिक विज्ञानों एवं समाज विज्ञानों के शोध कार्य में कम्प्यूटरों का काफी तेजी से व्यापक प्रयोग होने लगा हैं तार्किक निर्णय लिये जा सकते है, उपयुक्त एव प्रभावी परिणाम दिये जा सकते है तथा एक लम्बे समय तक बहुत बड़े आँकडों का भण्डारण किया जा सकता है। इस तरह की क्षमताएँ किसी भी शोध परियोजना के लिये आवश्यक होती है। कम्प्यूटर के माध्यम से शोधकर्ता शोध के विभिन्न पक्षों का तेजी से, आसानी से एवं अच्छाई से विवेचन कर सकता है। यह सूचना भण्डारण का एक ऐसा शक्तिशाली उपकरण होता है जिसके माध्यम से बहुत सारे आकड़ों का मूल्यांकन किया जा सकता है।

11.7 कार्यालय प्रबन्ध में कम्प्यूटरों का प्रयोग
(Use of Computer in Management of Office)

कार्यालय प्रबन्ध में कुछ निम्न क्षेत्र हो सकते है जहां कि कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा सकता है -

1. कर्मचारियों जैसे शिक्षक, विद्यार्थी एवं प्रशासकीय स्टाफ के रिकार्ड का डेटा बैंक।
2. बजट एवं वित्त लेखों की स्थिति, हर माह के उपरान्त एक बैलेन्स शीट तैयार करना।
3. इन्वैन्ट्री नियंत्रण - उपकरण एवं पुस्तकें।
4. वेतन पत्रक लेखा कार्य।
5. वर्ड प्रोसेसिंग।
6. विद्यार्थियों का शैक्षणिक रिकार्ड।
7. जीवन वृति के निर्देशन हेतु आंतरिक एव बाह्य सूचनाओं की उपलब्धता।

11.8 पुस्तकालय में कम्प्यूटरों का प्रयोग
(Use of Computer in Library)

पुस्तकालय संगठन मे आज तेजी से कम्प्यूटर का प्रयोग होने लगा है। पुस्तकों, पत्रिकाओं, अभिलेखों की सूची तैयार करना तथा उनकी वापसी हेतु कम्प्यूटर में वांछित व्यवस्था करना। कम्प्यूटर कार्यक्रमों के माध्यम द्वारा कैटलाँग (सूचीकरण व्यवस्था) को आसान बनाया जा सकता है। उधार दी गयी पुस्तकों की सूची कम्प्यूटर द्वारा बनायी जा सकती है तथा उन्होंने समय पर पुस्तकें नहीं लौटायी उन व्यक्तियों के लिए याददास्त पत्र तैयार किये जा सकते है। एक समय में कितनी पुस्तकें पुस्तकालय से बाहर हैं इसकी सूची तैयार की जा सकती है। पुस्तकालय मे उपलब्ध संदर्भ सामग्री को कम्प्यूटर के माध्यम द्वारा अध्ययनकर्ताओं को आसानी से उपलब्ध कराया जा सकता है। पुस्तकों एवं अभिलेखों को विषय

अनुसार वर्गीकृत किया जा सकता है। विशिष्ट विषयों पर पायी जाने वाली सूचना के पृष्ठों एवं पैराग्राफों के बारे में कम्प्यूटर द्वारा जानकारी प्राप्त की जा सकती है। बाहर जाने वाली पुस्तकों की स्वजॉच की पद्धति एवं सूचीकरण खोज प्रक्रिया इन दोनों का सम्मिश्रण भी कम्प्यूटर के माध्यम द्वारा किया जा सकता है। नयी आने वाली पत्र-पत्रिकाओं की सूची बनायी जा सकती है। इस तरह के कम्प्यूटर के प्रयोग के द्वारा पुस्तकालय के प्रभावी सेवाएँ उपलब्ध हो सकती है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन से आप क्या समझते है?
2. केन्द्रीय प्रक्रिया इकाई क्या है ?
3. शिक्षा मे कम्प्यूटर अनुदेशन के मुख्य प्रयोग क्या-क्या है?

11.9 भारतीय विद्यालयों में कम्प्यूटरों सहायतित अनुदेशन की वर्तमान स्थिति (Present Status of Computer Assisted Instruction in Indian Schools)

इस देश में बहुत वर्ष पहले से ही डेटा-प्रोसेसिंग उपकरण लगाये जा चुके हैं एवं उनका प्रयोग भी हो रहा है। किन्तु हाल ही के कुछ वर्षो पूर्व भारत सरकार के शिक्षा मंत्रालय तथा एन.सी.ई.आर.टी. ने शैक्षणिक प्रक्रिया में सुधार हेतु कम्प्यूटरों के प्रयोग के बारे में गम्भीरता से सोचा है। विद्यालयों में कम्प्यूटर साक्षरता एवं अध्ययन (Class) परियोजना 1984-85 में प्रारम्भ की गयी थी। इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों को कम्प्यूटर की व्यापक जानकारियां उपलब्ध करवाना था। इस परियोजना में सहभागी सीनियर सैकण्ड्री विद्यालयों का चयन, राज्य सरकार की अनुशंसा पर भारत सरकार के मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय द्वारा किया गया। सी.एम.सी. लिमिटेड, इलैक्ट्रॉनिक विभाग, मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय एवं एन.सी.ई.आर.टी. क्रियान्वयन करने वाली इकाईयाँ थी चयनित प्रत्येक विद्यालय को 5 SCL UNICORN माइक्रो कम्प्यूटर प्रदान किये गये। साथ ही विद्यालय पाठ्यक्रम के अनुरुप 25 सॉफ्टवेयर पैकेज भी दिये गये। 1984-85 से 1989-90 तक लगभग 1950 सीनियर सैकण्ड्री विद्यालयों में कम्प्यूटर स्थापित किये गये तथा इस परियोजना के अन्तर्गत 5800 शिक्षकों को प्रशिक्षण दिया गया। सी.एम.सी. लि. द्वारा भी विद्यालयों में लगभग 6000 कम्प्यूटर स्थापित किये गये।

11.10 विद्यालयों में कम्प्यूटरों के प्रयोग हेतु व्यवस्था (Arrangements in Schools for use of Computer)

बहुत से पब्लिक एवं राजकीय विद्यालयों ने अपने सीनियर सैकण्ड्री कक्षाओं में कम्प्यूटर पाठ्यक्रम लागू किये। अपने विद्यार्थियों की पाठ्यक्रम आवश्यकताओं के अनुरुप

उन्होंने कम्प्यूटर एवं सॉफ्टवेयर उपकरण उपलब्ध करवाये। नवोदय विद्यालय समिति ने अपने विद्यार्थियों के कम्प्यूटर पाठ्यक्रमों के संचालन हेतु हार्डवेयर एवं सॉफ्टवेयर की आपूर्ति तथा शिक्षकों को प्रशिक्षित करने के काम के लिये आई.सी.एन नाम फर्म के साथ समझौता किया। इसी तरह से केन्द्रीय विद्यालय संगठन ने अपने विद्यालयों के सम्पूर्ण कम्प्यूटर कार्यक्रम के लिए ET&T को अनुबंधित किया। बहुत से अन्य विद्यालयों ने भी इस व्यवस्था को अपनाया।

11.11 शिक्षकों के लिये कम्प्यूटर प्रशिक्षण (Computer training for Teachers)

ऊपर उल्लेखनीय परियोजना के अंतर्गत शिक्षकों के प्रशिक्षण कार्यक्रम को भी उचित महत्त्व दिया गया। एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा विद्यालयों में शिक्षकों को कम्प्यूटर प्रशिक्षण प्रदान करने के लिये कार्यक्रम संचालित किये गये। इन कार्यक्रमों के संचालन का मुख्य उद्देश्य सहायता, परामर्श सहायता, प्रशिक्षण तथा विद्यालय में कम्प्यूटर की देखरेख एवं पाठ्यक्रम विकास तथा अध्ययन रणनीतियों के बारे में जानकारी देना था।

11.12 महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में कम्प्यूटर प्रशिक्षण (Computer training in Colleges and University)

बहुत सी शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा कम्प्यूटर विज्ञान एवं अभियांत्रिकी में चार वर्षीय स्नातक उपाधि पाठ्यक्रम प्रारम्भ किये गये। कुछ संस्थाओं ने कम्प्यूटर विज्ञान में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम भी संचालित किये। शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में बहुत से विश्वविद्यालयों के अध्ययन विभागो ने भी बी.एड. एवं एम.एड. पाठ्यक्रमों में एक पृथक प्रश्न-पत्र के रुप में कम्प्यूटर शिक्षा को लागू किया। देवी अहिल्या बाई विश्वविद्यालय, इन्दौर ने कम्प्यूटर शिक्षा में स्नातक तथा कम्प्यूटर शिक्षा कार्यक्रम में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम संचालित किये। आज बहुत सी निजी संस्थाएं भी कम्प्यूटर पाठ्यक्रमों को संचालित कर रही हैं जिसके फलस्वरुप कम्प्यूटर के क्षेत्र में बढ़ती हुई मानव शक्ति की मांग के कारण प्रशिक्षित करने का कार्य किया जा रहा है। यह प्रशिक्षित मानव शक्ति विद्यालय स्तर पर भी कम्प्यूटर शिक्षा के क्रियान्वयन में सकारात्मक योगदान दे सकती है।

11.13 सारांश (Summary

इस इकाई के अन्तर्गत आप कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन तथा स्व अधिगम प्रक्रिया में इसके प्रयोग के बारे में जान पाये हैं। आज कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन का प्रयोग शोध, संस्थाओं के प्रबन्धन पुस्तकालयों आदि में तीव्रता से हो रहा है हम आश्वस्त हैं कि आप इसके

संदर्भ में अधिक जानकारी प्राप्त करने में रुचि लेंगे तथा अपने विद्यालय स्तर पर इसका प्रयोग करेंगे।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन से आप क्या समझते है।
2. शोध में कम्प्यूटर का प्रयोग किस प्रकार से किया जा सकता है?
3. अनुदेशन कार्यक्रम के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें।

11.14 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

1. लौधारी, जॉन डब्ल्यू: मैन मशीन सिस्टम्स इन एज्यूकेशन, हार्पर एण्ड रॉ, न्यूयार्क 196.
2. दी, विलियम क्लार्क : टीचर एण्ड टैक्नोलॉजी, एपेल्ट्न सैन्चूरी क्रॉफ्ट्स, न्यूयार्क 1963.
3. विलियम्स, एफ. विलियम्स : प्रिसीपल्स ऑफ ऑटोमेटेड इन्फॉरमेशन रिट्रीवल, द विजजिस प्रेस, 1965.
4. वेल्ट रिचार्ड, एच. : एन ओवर व्यू ऑफ कम्प्यूटर असिसटेड इन्स्ट्रक्शन, कैंब्रिज माँस, 1966
5. वैजी, जे., कम्प्यूटर्स : ए प्रोग्राम ऑफ एक्शन, पेपर नम्बर 2, नेशनल कॉउन्सिल फॉर एज्यूकेशनल टैक्नोलोजी, लंदन, 1969
6. अल्पर्ट, डभ बिजर डी, एल. : एडवान्सेज इन कम्प्यूटर बेस्ट एज्यूकेशन, साइंस, 1970
7. न्यू ट्रेन्डस इन यूटीलाईजेशन ऑफ एज्यूकेशन टैक्नोलोजी फॉर साइंस एज्यूकेशन, दी यूनेस्को प्रेस, पेरिस 1974.
8. अटकिन्सन, आर, सी. एण्ड विल्सन, कम्प्यूटर असिसटेड इन्सट्रेक्शनल : ए बुक ऑफ टीर्डिग्स, एकेडेमिक प्रेस, 1970.
9. बिग, आर, एल., सिमुलेश गेम्स इन लर्निग, न्यूयॉर्क : 1968.
10. विजिट वॉल्ट एण्ड चार्ल्स सचुलर, इन्सट्रक्शनल टैक्नोलॉजी, इट्स नेचर एण्ड यूज, न्यूयॉर्क : हार्पर एण्ड रॉ, न्यूयार्क 1973
11. चैपमैन कथेरियन सीमुलेशन / गैम्स इन सोशियल साइंस स्टडीज, एरिफ डी.आर.एस., 1974.
12. कलास - कम्प्यूटर लिट्रेसी एण्ड स्टेडीज इन स्कूल्स, नई दिल्ली, एन.सी. ई.आर.टी.
13. भट्टाचार्य जी एण्ड मित्तल ए. के. : लर्निग विथ कम्प्यूटर्स, इलाहाबाद, व्हीलर एण्ड कम्पनी, 1987.
14. मार्कर डब्ल्यू रॉबर्ट (सं.), कम्प्यूटर कॉन्सैप्टस एण्ड एज्यूकेशनल एडमिनिस्ट्रेशन, हाँको: दी हॉको एज्यूकेशनल इनफॉरमेशन सेन्टर, 1966.

इकाई-12

व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति (Personalized System of Instruction)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)
12.1 व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति की संकल्पना
(Concept of Personalized System of Instruction)
12.2 केलर योजना के पांच तत्व / सोपान एवं संगठन
(Five elements to Keller's Plan, its steps and organization)
12.4 व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति के लिये सुझाव
(Suggestion for Personalized System of Instruction)
12.5 सारांश
(Summary)
12.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

12.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

प्रस्तुत इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी -

- व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति को परिभाषित कर सकेंगे।
- केलर योजना के तत्वों / सोपानों की सूची बना सकेंगे।
- कैलर योजना के सोपानों की व्याख्या कर सकेंगे।
- व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति का संगठन बता सकेंगे।
- व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति की तैयारी का वर्णन कर सकेंगे।
- व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति के बारे में सुझाव दे सकेंगे।

12.1 व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति की संकल्पना (Concept of Personalized System of Instruction)

यह एक अनुदेशन पद्धति अथवा पाठ्यक्रम संरचना होती है जिसे उच्च गया है। प्रस्तुत पद्धति में अनुशिक्षकीय पद्धति एवं अनुदेशन के अभिक्रमण एवं विद्यार्थी की स्वगति पर बल दिया जाता है।

फ्रेड.एस. कैलर एक अमेरिकी मनोविज्ञानिक एवं शिक्षा शास्त्री थे। जिन्होंने अपने सहयोगी शेर्मन एवं अन्य के साथ मार्च 1963 में अनुदेशन पद्धति का विकास किया जो कैलर योजना के नाम से जानी जाती है। आज व्यक्तिपरक पद्धति एवं कैलर योजना का उपयोग पर्याय के रुप में किया जाता है।

12.2 कैलर योजना के पांच तत्व / सोपान एवं संगठन (Five elements of Keller Plan its Steps and Organisation)

1. **पारं गतता अधिगम**
2. **स्वगति (Self Pace)**
3. **लिखित शब्द पर बल (Stress on Written Words)**
4. **अभिकर्ता (Proctor)**
5. **व्याख्यान (Lecture)**

(1) पारंगतता अधिगम - सर्वप्रथम छात्रों को पारंगतता अधिगम के द्वारा अध्यापन किया जाता है।

(2) स्वगति (Self Pace) - प्रशिक्षणार्थी अपने स्वयं की गति के अनुसार इकाई को सीखता है परीक्षण तभी किए जाते हैं जबकि प्रशिक्षणार्थी उसके लिये तैयार होता है परीक्षण सफलता प्राप्त होने तक दोहराये जाते हैं। स्व गति से सीखने में अनेक समस्याएँ भी आ सकती है। उनमें से प्रमुख हैं प्रशिक्षणार्थी द्वारा टालमटोल अथवा विलम्बन प्राय: ऐसा होता है कि जो प्रशिक्षणार्थी पाठ्यक्रम की इकाई पूर्ण करने में असमर्थ होते है तब उसे अपूर्व चिन्ह प्रदान किया जाता है यदि अधिकतर प्रशिक्षणार्थी सभी इकाईयों को पूर्ण रखने में असमर्थ होते हैं तब यह प्रशिक्षण की असफलता को दर्शाता है। हांलाकि केलर योजना में पारंगतता अधिगम में संशोधन का प्रावधान नहीं होता है किन्तु व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति में ऐसा प्रावधान होता है। इस हेतु प्रारंभिक इकाईयों की लम्बाई कम कर दी जाती है ताकि प्रशिक्षणार्थी उन्हें सफलतापूर्वक पूर्ण कर लेते है।

यह जांच कीजिए कि इकाई की विषय-वस्तु अधिक जटिल तो नहीं हैं। यदि ऐसा है तब आपको सतत् असफलता ही प्राप्त होती है। इसमें प्रारंभिक सरल इकाईयां सहायता करती है।

प्रशिक्षणार्थियों को विकल्पात्मक सामग्रियों दीजिए जो कि पाठ्यक्रम की कठिन इकाईयों अथवा विषय-वस्तु को स्पष्ट कर सके एवं उनकी रुचि जागृत कर सके।

प्राय: व्यक्तिगत अनुदेशन पद्धति में परम्परागत पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु का तीन चौथाई अंश ही उसी समय में पूर्ण किया जाता है। यदि आप इस पद्धति द्वारा संपूर्ण पाठ्यक्रम पूर्ण करना चाहते हैं तब तीन चौथाई को ही अनिवार्य रखिए शेष योग्य प्रशिक्षार्थी स्वयं पूर्ण कर लेंगे।

सभी इकाईयों को समाप्त करने के अंक प्रदान कीजिए। यदि आप 80 प्रतिशत अंक पाठ्यक्रम के अन्तिम मूल्यांकन के लिए देते हैं तब 20 प्रतिशत अंक सभी इकाईयों को पूर्ण

रखने के लिये दीजिए जो विद्यार्थी सभी इकाई पूर्ण नहीं करेंगे उन्हें 20 प्रतिशत अंक प्राप्त नहीं होंगे।

सभी प्रशिक्षणार्थियों द्वारा सफलतापूर्वक पूर्ण की गई इकाईयों का कक्षा में एक चार्ट लगाइये, जिसमें विद्यार्थियों को उनकी प्रगति का पता चलता है। सभी सत्रे में विद्यार्थियों की उपस्थिति को अनिवार्य कीजिए।

(3) लिखित शब्दों पर बल (Stress on Written Words) - केलर ने पाठ्यपुस्तकों, हस्ततुस्तिकाओं, अभिक्रमित सामग्रियों, प्रदत्त कार्यो एवं अध्ययन निर्देशिकाओं के रुप में लिखित शब्दों के उपयोग पर जोर दिया है। अध्ययन निर्देशिका प्रशिक्षणार्थियों को महत्वपूर्ण सहायता प्रदान करती है। केलर योजना के लिखित अभ्यास के लिये कार्यशाला की आवश्यकता होगी। साथ ही साथ कमजोर शाब्दिक कौशल वाले प्रशिक्षणार्थियों के लिये उपचारात्मक सहायता की आवश्यकता होगी। लिखित इकाईयों का यह फायदा भी होता है कि उन्हें अन्य प्रशिक्षणार्थियों को भी उपलब्ध कराया जा सकता है। हालांकि आधुनिक व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति अत्याधुनिक उपकरणों जैसे वीडियो, श्रवण कैसेट एवं कम्प्यूटर आश्रित होती है।

(4) अभिकर्त्ता (Proctor) - अभिकर्ता वे प्रशिक्षणार्थी हैं जिन्होंने पूर्व में सम्पूर्ण पाठ्यक्रम अथवा आंशिक पाठ्यक्रम पूर्ण कर लिया है तथा जो वर्तमान प्रशिक्षणार्थियों को उनके प्रशिक्षण मे सहायता पहुंचा सकते है।

मूल केलर योजना में अभिकर्ता प्रशिक्षणार्थियों के परीक्षण को प्रशासित करते है, उन्हें अंक प्रदान करते हैं तथा उनके उत्तरों पर चर्चा करते हैं। अभिकर्ता प्रशिक्षणार्थियों को पद्धति की कार्य प्रणाली के बारे में प्रतिपोषक देते हैं तथा प्रशिक्षणार्थियों के पद्धति के साथ सम्पर्क को बढ़ाते हैं। कभी-कभी उसी समूह के प्रगत सदस्यों का उपयोग अभिकर्ता के रुप में किया जाता है।

अधिकांश प्रशिक्षणार्थियों को अभिकर्ताओं द्वारा अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। ये कठिनाईयाँ निम्न हैं

(अ) कुशल अभिकर्ताओं की कमी।

(ब) अभिकर्ताओं की समय सारणी की समस्या।

(स) अभिकर्ताओं को पुरस्कृत कैसे किया जावे?

(द) कुछ प्रशिक्षणार्थी अभिकर्ताओं के प्रति नाराजगी व्यक्त करते हैं।

(इ) अभिकर्ताओं को उनके कार्य में प्रशिक्षित करने की समस्या।

(5) व्याख्यान (Lecture) - व्याख्यानों को पद्धति के एक आवश्यक अंग के रुप में उपयोग किया जाता है। व्याख्यानों का उपयोग निम्न कारणों से किया जाता है :

(अ) ज्ञान एवं कौशलों के संवर्धन के लिये।

(ब) व्याख्यानों के द्वारा प्रशिक्षक दृश्य-श्रव्य साधनों, कम्प्यूटरों के बारे में बताता है तथा विशेषज्ञों द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं। इनके द्वारा पूरक सूचनाएं प्रदान की जाती है।

(स) व्याख्यानों के द्वारा प्रशिक्षणार्थियों को अभिप्रेरित किया जाता है तथा केलर विधि द्वारा अध्ययन करते-करते यदि वे अब बोर हो गए हों तब व्याख्यान द्वारा उन्हें परिवर्तन मिलता है।

12.3 व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति की तैयारी एंव संगठन (Preparing and Organizing PSI)

व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति 10 अवस्थाओं में पूर्ण की जाती हैं।

1. **प्रथम अवस्था :** चयन कर उद्देश्य लिखिए।
2. **द्वितीय अवस्था :** पाठ्यक्रम की विषयवस्तु का चयन कीजिए जिसमें सभी उद्देश्य पूर्ण होते हो।
3. प्रकरण का कार्य विश्लेषण कीजिए।
4. **तृतीय अवस्था :** उद्देश्यों एवं विषयवस्तु को पारंगतता अधिगम इकाईयों में विभाजित कीजिए। निम्न बातें ध्यान में रखिए -

(अ) प्रारम्भ एवं अंत में लघु इकाईयों को रखिए ताकि विद्यार्थियों को प्रोत्साहन मिले।

(ब) सरल इकाई से प्रारंभ कीजिए।

(स) इकाईयों का आकार छोटा रखिए।

(द) प्रत्येक 4-5 इकाईयों के पश्चात् एक इकाई दोहराने के लिए रखिए।

4. **चतुर्थ अवस्था** : स्व मूल्यांकन एवं अन्तिम परीक्षण तैयार कीजिए।
5. **पंचम अवस्था:** प्रशिक्षणार्थियों के लिये अध्ययन मार्गदर्शिका तैयार कीजिए-

पाठ्यक्रम की नीति एवं परिचय।

पाठ्यक्रम के एवं प्रत्येक इकाई के उद्देश्य।

इकाई पूर्ण करने की प्रक्रिया।

अध्ययन प्रश्न।

पठन आवंटित कीजिए, संभावित कठिनाइयां बताइये हल किए उदाहरण दीजिए इकाईयों में उपयोग लायी पहेलियों के उदाहरण।

इकाई परीक्षण के कुछ उदाहरण (बहु विकल्प एवं लघु उत्तरीय) मूल्यांकन प्रक्रियाएं।

समय सारिणी एवं कक्षों की उपलब्धता।

अभिकर्ता पद्धति।

सामग्रियों एव उपकरणों के स्रोत।

6. **षष्ठम अवस्था**: अभिकर्ताओं का चयन साथियों एवं शोध सहायकों से कर प्रशिक्षित कीजिए।
7. **सप्तम अवस्था:** प्रशिक्षण मार्ग दर्शिका लिखिए।
8. **अष्टम अवस्था:** उपलब्ध आवास की जांच कीजिए एवं पता लगाइये कि वह पूर्णत: सज्जित है अथवा नहीं।
9. **नवम अवस्था:** प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी की प्रगति का अभिलेख रखने के लिये एक पद्धति का संगठन कीजिए।

10. दशम अवस्था: एक तिहाई अधिगम इकाई विस्तार से तैयार कीजिए।

12.4 व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति के लिए सुझाव (Suggestions for Personalized System of Instruction)

उक्त सोपानों के अलावा निम्न पर ध्यान दीजिए।

1. प्रारंभ मे विद्यार्थियों को पद्धति की उपयोगिता बताइये।
2. पाठ्यक्रम के प्रारंभ में प्रत्येक विद्यार्थी को योजना की जानकारी लिखित रुप में दीजिए।
3. व्यवहारिक उद्देश्यों का उपयोग कीजिए।
4. सभी उद्देश्यों की पूर्ति करने वाली पाठ्यपुस्तक का चयन कर सभी विद्यार्थियों को रखने की कहिए।
5. पाठ्यक्रम को लघु इकाईयों में विभाजित कीजिए।
6. विस्तार व्याख्यान एवं क्षेत्र भ्रमण का नियोजन कीजिए।
7. अनुदेशकों एव अभिकर्ताओं की मासिक बैठकें समस्या समाधान हेतु आयोजित कीजिए।
8. विद्यार्थियों से प्रतिपोष कीजिए।
9. अनुदेशक विद्यार्थियों से प्रगति प्राप्त करें।

12.5 सारांश (Summary)

फ्रेड एस कैलर एक अमेरिकी मनोवैज्ञानिक एवं शिक्षाशास्त्री थे। जिन्होंने अपने सहयोगी के साथ मिलकर व्यक्तिपरक अनुदेशन पद्धति का विकास किया। जो कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में काम में ली जाती है। इसमें विद्यार्थी स्वयं की गति से सीखता है। इस पद्धति के अन्तर्गत दस अवस्था होती है जिनमे से होकर गुजरने पर प्रशिक्षणार्थी अधिगम कर लेता है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्रश्न 1. व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति को परिभाषित कीजिए।

प्रश्न 2. कैलर योजना के 5 तत्व बताइये।

प्रश्न 3. कैलर योजना के सोपानों की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 4. व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति की तैयारी कैसे करेंगे?

प्रश्न 5. व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति के संगठन के सोपानों की सोदाहरण व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 6. व्यक्ति परक अनुदेशन पद्धति के सफल संचालन के बारे में सुझाव दीजिए।

12.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Aggarwal, J.C. Essential of Educational Technology: Teaching learning, Vikas Publishing House Pvt. Ltd., New Delhi 1995.
- Narang, M. & Arora V. Encyclopedia of Techniques of Teaching, Anmol Publications Pvt. Ltd., New Delhi 1996.
- Vednaygam, E.G. Teaching Technology for College Teachers, Sterling Publishers Pvt. Ltd., New Delhi 1988.

इकाई-13

सहयोगात्मक अधिगम (Co-Operative Learning)

इकाई की संरचना (Structure of Unit)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)
13.1 प्रस्तावना
(Introduction)
13.2 सहयोग की अवधारणा
(Concept of Co-operation)
13.3 सहयोगात्मक अधिगम का उद्भव
(Origin of Co-operative Learning)
13.4 सहयोगात्मक अधिगम के घटक
(Components of Co-operative Learning)
13.5 सहयोगात्मक अधिगम की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि
(Theoritical Background of Co-operative Learning)
13.6 सहयोगात्मक अधिगम की विधियाँ
(Methods of Co-operative Learning)
13.7 सहयोगात्मक अधिगम के परिणाम
(Outcomes of Co-operative Learning)
13.8 सारांश
(Summary)
13.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

13.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर विद्यार्थी -

- सहयोगात्मक अधिगम की अवधारणा से परिचित होंगे।
- सहयोगात्मक अधिगम के घटकों का बोध कर सकेंगे।
- सहयोगात्मक अधिगम की विधियों को जान सकेंगे।
- सहयोगात्मक अधिगम के परिणाम प्राप्त कर सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना
(Introduction)

समाज अपने सदस्यों के सहयोग के बिना जीवित नहीं रह सकता। मानव समाज के अस्तित्व को उसके सदस्यों के सहयोग ने संभव बनाया है। इससे लाभान्वित यहाँ-वहाँ कोई एक व्यक्ति नहीं बल्कि सम्पूर्ण समूह हुआ है।

विद्यार्थी किस प्रकार दूसरे को प्रत्यक्षीकृत करते हुये अन्तःक्रिया करते हैं, अनुदेशन का सर्वाधिक उपेक्षित भाग अध्यापक प्रशिक्षण में अधिकांश समय अध्यापकों को विद्यार्थियों एवं साधनों (पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें) के मध्य उपयुक्त अन्तःक्रिया के प्रशिक्षण पर व्यतीत किया जाता है। समय का कुछ भाग अध्यापकों एवं विद्यार्थियों के मध्य अन्तःक्रिया किस प्रकार की जाये, इस पर व्यतीत किया जाता है। परन्तु प्रशिक्षण में यह नहीं बताया जाता कि विद्यार्थी-विद्यार्थी के मध्य अन्तःक्रिया को किस प्रकार प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। अध्यापक विद्यार्थी-विद्यार्थी के मध्य अन्तःक्रिया को किस प्रकार संरचित करते हैं? इस अन्तःक्रिया संरचना का सीधा प्रभाव विद्यार्थियों के अधिगम, विद्यालय एवं अध्यापक के प्रति भावना और स्व-सम्मान पर पड़ता है। विद्यार्थियों के अधिगम वृद्धि, सम्प्रेषणात्मक कौशलों व सामाजिक कुशलता विकसित करने कि लिये सहयोगात्मक अधिगम एवं समाधान व व्यूह रचना है।

13.2 सहयोग की अवधारणा
(Concept of Co-operation)

'सहयोग' पद को विभिन्न अर्थों के कारण प्रयोगकर्ता एवं सुनने वाले के बीच विभ्रम की स्थिति उत्पन्न करता है। ओनस (Owens) ने इस पद के तीन अर्थों में प्रयोग बताये हैं:-

- सहयोग - संरचना के रूप में
- सहयोग - विशेषक के रूप में
- सहयोग - व्यवहार के रूप में

जबकि स्लेविन (Slavin) के अनुसार सहयोग निम्न अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है:-

- सहयोगात्मक व्यवहार
- सहयोगात्मक प्रोत्साहन संगठन
- सहयोगात्मक कार्य संगठन
- सहयोगात्मक प्रेरक

कभी कभी सहयोग (Co-Operation) एवं सहायता (Help) को एक ही अर्थ में प्रयुक्त कर लिया जाता है।

लक्ष्य की समान भागीदारी होती है और लक्ष्य के साथ समबद्धता के कारण समूह के सभी सदस्य एक दूसरे के साथ सहयोग करते हुये जुड़े रहते हैं। जबकि सहायता में लक्ष्य व्यक्ति का होता है। लक्ष्य के साथ जुड़ाव अन्य व्यक्तियों को इसलिये होता है, क्योंकि ये अन्य व्यक्ति

उस लक्ष्य तक व्यक्ति को पहुँचने मे सहायता करते हैं। सहयोग में सभी विद्यार्थी एक समान लक्ष्य की प्राप्ति हेतु मिलकर प्रयास करते है।

सहयोगात्मक कार्य संगठन से तात्पर्य उन स्थितियों से है, जिनमें सभी सदस्य इच्छा से अथवा बाध्यता से कार्य को पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। कार्य में निष्पादन पर समूह के सदस्यों को प्रोत्साहन मिले ही, यह आवश्यक नहीं हैं। कार्य की प्रकृति यह निर्धारित करती है कि समूह के सदस्य आपस में सहयोग करेंगे या नहीं। उदाहरणार्थ 'कत्थक' नृत्य के मंचन में विभिन्न व्यक्तियों का समन्वित प्रयास आवश्यक है। जबकि अध्ययन करना एक व्यक्तिगत कार्य है, परन्तु इसमें भी सहयोग लेना आवश्यक है। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया जा सकता है कि वे समूह के सदस्यों को सिखायें व समूह में सीखें।

सहयोगात्मक प्रोत्साहन संगठन वह स्थिति है, जिसमें समूह के सभी सदस्यों के निष्पादन के आधार पर दो या अधिक व्यक्तियों को पुरस्कृत किया जाता है। उदाहराणार्थ- क्रिकेट के खेल में विजय पूरे दल का संगठित प्रयास होता है। जबकि एक व्यक्ति को पुरस्कार तभी मिलता है, जब टीम विजय हासिल करती है।

अत: यह कहा जा सकता है कि सहयोग अधिगम के लिये व्यापक समूह संरचना है। व्यापक समूह संरचना में लक्ष्य की प्रकृति, लक्ष्य प्राप्ति से जुड़े विभिन्न कार्यो का महत्त्व, कार्य में सहभागिता देने वाले सदस्यों के मध्य अन्तःक्रिया, भाषा एवं प्रकृति और सदस्यों के मध्य अन्तःर्निभरता सम्मिलित हैं।

सहयोगात्मक लक्ष्य संरचना का अस्तित्व तब होता है जब विद्यार्थी यह प्रत्यक्षीकृत करते हैं कि लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। यह तभी होगा कि जबकि उनके समूह के अन्य सदस्य उस लक्ष्य को प्राप्त कर पायेंगे।

सहयोगात्मक व्यवहार से अभिप्राय दूसरों के साथ अथवा दूसरों के कार्य में सहायता करना है। स्लैविन (Slavin) के अनुसार अपने समूह के अन्य सदस्यों को कार्य निष्पादन के सुगमीकरण (Facilitate) या लक्ष्य प्राप्ति में योगदान देना, सहयोगात्मक व्यवहार है।

सहयोगात्मक प्रेरक से तात्पर्य किसी कार्य को करने के लिये पूर्वानुकूलता, किसी स्थिति में सहयोगात्मक अथवा निस्वार्थता के विभिन्न सदस्यों को सहयोग, प्रतियोगी अथवा वैयक्तिक व्यवहार का चयन है।

सहयोग एक व्यक्तित्व का विशेषक है। लक्ष्य संरचना में विद्यार्थी सहयोग विशेषक को अपनी अनुक्रिया में प्रदर्शित करते हैं।

सहयोगात्मक अधिगम एक प्रकार का अधिगम उपागम है, जिसमें छोटे समूहों में विद्यार्थी एक दूसरे को अधिगम में सहायता प्रदान करते हैं।

(जॉनसन एण्ड जॉनसन, 1991)

सहयोगात्मक अधिगम छोटे समूहों में प्रयोग मे लिये जाने वाली अनुदेशनात्मक तकनीक है, जिसमें विद्यार्थी एक साथ कार्य करते हुये अपनी एवं एक दूसरे के अधिगम को अधिकतम करते है।

(जॉनसन, जॉनसन एवं होलुबी (Johnson, Johnson and Holubee), 1986

13.3 सहयोगात्मक अधिगम का उद्भव (Origin of Co-operative Learning)

सम्पूर्ण विश्व में शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर नवप्रर्वत्तनों का केन्द्र बिन्दु कक्षा-कक्ष प्रक्रिया रही है। वर्तमान शैक्षिक पद्धति से 'शिक्षा सभी के लिये' नियोजन किया जा रहा हैं। परन्तु शैक्षिक ढाचें में कुछ विद्यार्थी जीत हासिल करते हैं व कुछ हारे हुये कहे जाते हैं। विद्यार्थी आपस में प्रतियोगिता करते हुये व्यवस्था में अपनी स्थिति को कक्षा में उच्चतर बनाने में लगे रहते हैं। पूर्व शोध अध्ययन अधिगम को प्रभावित करने वाले विद्यार्थी अध्ययन एवं संदर्भगत कारकों पर ही केन्द्रित रहे। परन्तु वासन, जॉनसन, स्लेविन ऑलसन व कागान ने उन अनुदेशनात्मक व्यूह रचनाओं से अवगत कराया, जिनसे शिक्षा की उपलब्धियाँ प्रभावित होती हैं।

सम्पूर्ण कक्षा अनुदेशन में प्रत्येक विद्यार्थी पर व्यक्तिगत ध्यान सम्भव नहीं है। सम्पूर्ण कक्षा अधिगम में व्यक्तिगत विभिन्नताओं की अनदेखी रह जाती है। व्यक्तिगत अनुदेशन यथा अभिक्रमित अनुदेशन, साधिकार अधिगम अध्यापक के कार्यभार में वृद्धि करते हैं। अधिक समय, साधन व शिक्षकों के अभाव के कारण व्यक्तिगत अनुदेशन कक्षा में सम्भव नहीं हो पाता। परिणाम स्वरूप परम्परागत सम्पूर्ण कक्षा अनुदेशन में परिवर्तन ने बल पकड़ा। प्रतियोगितात्मक अधिगम विद्यार्थियों के मध्य नकारात्मक अन्तर्निभरता का जन्म होता है। स्लैविन ने पाया कि प्रतियोगिता विद्यार्थियों को एक दूसरे को सहायता करने के लिये हतोत्साहित करती हैं प्रतियोगिता समाजीकरण के सिद्धान्त के भी विपरीत हैं।

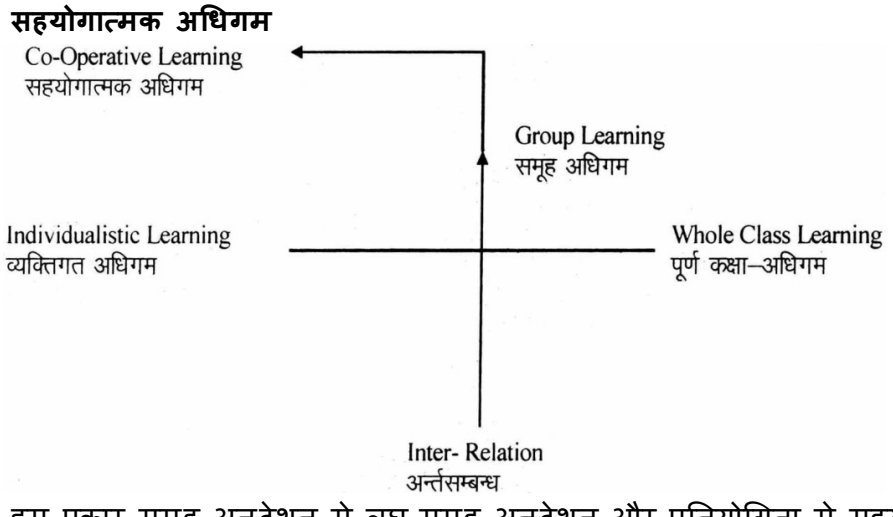

इस प्रकार समूह अनुदेशन से लघु समूह अनुदेशन और प्रतियोगिता से सहयोग की ओर परिवर्तन को स्वीकार करने के तर्क को बल मिला। अधिगम के दो छोर व्यक्तिगत अधिगम

और सम्पूर्ण समूह अधिगम दो अतिवादी विचार हैं। अतिवाद को त्याग कर मध्यम मार्ग समूह अधिगम है, जो सहयोगात्मक अधिगम की ओर ले जाता हैं।

13.4 सहयोगात्मक अधिगम की सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि (Theoritical Background of Co-Operative Learning)

सहयोगात्मक अधिगम को समर्थन एव बल विभिन्न सैद्धान्तिक पृष्ठभूमियों से मिला है। मुख्य सैद्धान्तिक परिप्रेक्ष्य-विकासात्मक, सामाजिक, समंजन, अभिप्रेरणात्मक, अधिगम सिद्धान्त इस प्रकार है:-

विकासात्मक परिपेक्ष्य :- प्याजे (Piaget) व एवं वगोटसकी (vygkotsky) के विचारों के आधार पर विकासात्मक सिद्धान्त का विकास हुआ। वगोटसकी, 1978 ने समीपता विकास का क्षेत्र (Zone of Proximate Development) की अवधारणा को जन्म दिया। इस अवधारणा से तात्पर्य वास्तविक विकास के स्तर एवं स्वयं द्वारा समस्या समाधान कर सम्भाव्य विकास के स्तर के बीच के दूरी से है। तथापि अधिगमकर्ता किसी व्यस्क व्यक्ति के निर्देशन में ही कार्य करता है। उनके समीपता विकास के क्षेत्र एक व्यक्ति द्वारा बिना किसी सहायता के स्वयं एवं ज्ञान युक्त व्यक्ति के सम्पर्क में रह कर कार्य के बीच के अन्तर को पहिचानना है।

"What a child can do today in co-operation tomorrow he will be able to do on his own."

एक बालक जो कार्य आज अन्य व्यक्तियों के सहयोग के द्वारा कर सकता है, कल वह उस कार्य को स्वयं कर पायेगा।

सहयोगात्मक गतिविधियाँ बालकों में अभिवृद्धि को जन्म देती हैं। समान आयु के बालक एक दूसरे के विकास के क्षेत्र (Proximate Zone of Development पर क्रियाशील होते है। अधिगम पर सहयोगात्मक क्रियाओं के प्रभाव को इस प्रकार वर्णित किया गया है:-

प्रकार्य पहले समूह रूप में तय किये जाते हैं, फिर वे बालकों के मध्य सम्बन्धों का रूप धारण कर लेते हैं। तत्पश्चात् वे व्यक्ति के लिये मानसिक प्रकार्य बन जाते हैं।

यदि प्याजे के सन्तुलनीकरण के विचार (Equilibrium) का अध्ययन करें तो स्वाभाविक रूप से मन में प्रश्न उठता है कि वह क्या है, जो असन्तुलन को जन्म देता है। बालक को संज्ञानात्मक विकास को उच्च अवस्था को प्राप्त करने के लिये कौन अभिप्रेरित करता है? बालक क्यों और कैसे सीखता है? अधिगम के लिये परिपक्वता एवं अनुभव के साथ सामाजिक अन्तःक्रिया महत्त्वपूर्ण है। सामाजिक मध्यस्थता, ज्ञान, भाषा, मूल्य, नियम, नैतिकता व प्रतीकात्मक व्यवस्था केवल अन्य व्यक्तियों के साथ अन्तःक्रिया द्वारा ही सीखे जा सकते हैं। एक बालक द्वारा परस्पर विरोधी कथनों एवं चुनौतीपूर्ण वक्तव्य परिवार अथवा विद्यालयों पर असन्तुलन की स्थिति पैदा हो जाती हैं। तब वह उत्तरों को खोजता है और एक नवीन एवं उच्चतर सन्तुलन को प्राप्त कर लेता है। सहयोगात्मक अधिगम बालकों अपने

समवयस्क समूह के बालकों से अन्तःक्रिया के अवसर प्रदान करता है। यह बालकों के संज्ञानात्मक संगठन को विकसित करने के लिये अभिप्रेरित करता है। अधिगम के लिये संज्ञानात्मक संगठन आधारभूत हैं। इस सिद्धान्त के आधार सलेविन ने कहा कि प्याजे के सिद्धान्त के अधिकांश समर्थक मुरे एवं वर्ड्सवर्थ (Murray & Wordsworth1984) विद्यालयों में सहयोग की अनुशंसा करते हैं। समूह के सदस्यों में आपसी चर्चा संज्ञानात्मक, बौद्धिक संघर्ष को जन्म दे सकती है, लेकिन इससे अधिगम कौशलों का विकास होता है, जिससे अन्ततः विषय वस्तु की बेहतर समझ विकसित होती है। विकासात्मक परिप्रेक्ष्य में सहयोगात्मक अधिगम अपने सहयोगात्मक कार्य संगठन के कारण प्रभावशाली है। सहयोगात्मक कार्य संगठन का एक आवश्यक तत्व सहयोगात्मक-अधिगम है, जो विद्यार्थियों को मिल जुल कर कार्य करवाता हैं।

सामाजिक संसजन परिप्रेक्ष्य:- इस विचारधारा के समर्थकों का मानना है कि सहयोगात्मक अधिगम विधियाँ समूह के संसजन के कारण उपलब्धि में उन्नयन होता है। समूह के सभी सदस्य एक दूसरे की ध्यान रखते हैं व सफलता चाहते हैं। सहयोगात्मक अधिगम के लिये तैयारी हेतु दल निर्माण क्रियाओं पर बल दिया जाना चाहिये। ये क्रियायें समूह के सदस्यों में एकत्व की भावना को जन्म देती है व अन्ततः अन्य व्यक्तियों की देखभाल करना सीखते हैं। जब बालक एक दूसरे का ध्यान रखना सीखते हैं तो ना केवल विभिन्न प्रत्ययों को सीखने में सहायता करते बल्कि एक दूसरे को सीखने एवं उपलब्धि के लिये प्रेरित करते है। अभिप्रेरणा सिद्धान्त के समर्थक अधिगम के लिये समूह पुरस्कार एवं वैयक्तिक उत्तरदायित्व को महत्वपूर्ण मानते हैं। इसके विपरीत सामाजिक संसजन सिद्धान्त में इनका कोई स्थान नहीं है। यदि कार्य रुचिकर एवं चुनौतीपूर्ण है और विद्यार्थी समूह में कार्य करने की प्रक्रिया को करते हु ये पुरस्कृत महसूस करते हैं। सहयोगात्मक अधिगम से समूह के सदस्यों में अन्तर्निभरता विकसित होती हैं।

स्लीवन के अनुसार सामाजिक संसजन पर आधारित विधियाँ यथा जिगसॉ, समूह-खोज (Sigsaw, Group Investigation) आदि दल विकास एवं समूह प्रक्रियाओं पर बल देते हैं। समूह के सदस्यों के योगदान पर पुरस्कार को अधिक प्रभावी नहीं मानते। इसके विपरीत परम्परागत अनुदेशन विधि में उपलब्धि में उन्नयन के लिये पुरस्कार को अधिक महत्व दिया जाता है। तथापि समूह पुरस्कार को जोड़ देने से ये शिक्षण विधियाँ अधिक प्रभावी हो सकती हैं। शरन एवं शरन द्वारा प्रतिपादित विधि- उसका अपवाद हैं, क्योंकि समूह के परिणाम अथवा उत्पाद के आधार पर उसका मूल्यांकन किया जाता है। अतः ग्रुप इन्वैस्टीनगेशन विधि में समूह के लक्ष्य एवं वैयक्तिक उत्तरदायित्व निर्वाह को अधिक महत्व दिया जाता है, जो अभिप्रेरणात्मक विचार धारा का मूल आधार है।

अभिप्रेरणात्मक परिप्रेक्ष्य:- अभिप्रेरणात्मक परिप्रेक्ष्य में मुख्य रूप से ध्यान केन्द्रण पुरस्कार एवं समूह संरचना, जिसमें समूह कार्य करता हैं पर दिया जाता है। समूह संरचना मुख्यतः तीन प्रकार की यथा प्रतियोगित्मक वैयक्तिक एवं सहयोगात्मक पायी जाती है।

कोलमैन के अनुसार परम्परागत कक्षा संरचना की पुरस्कार व्यवस्था समव्यस्कों के मानकों को इस प्रकार का गठित करती है, जो कि शैक्षिक प्रयासों के विरूद्ध होते हैं। ऐसी कक्षा में एक विद्यार्थी की सफलता के अवसर दूसरे विद्यार्थी के अवसरों को कम कर देती हैं। वैयक्तिक दशाओं में एक विद्यार्थी की सफलता का अन्य विद्यार्थियों के सफलता से कोई सम्बन्ध नहीं होता। सहयोगात्मक पुरस्कार संरचना में समूह के सदस्य को अपने वैयक्तिक लक्ष्यों तक पहुँचने के लिये समूह की सफलता आवश्यक है। अत सफलता के लिये आवश्यक है कि समूह के सदस्य न केवल अपने सदस्यों को सहायता करना सीखे, बल्कि अधिकतम प्रयास के लिये प्रोत्साहित करें। यह जागरूकता व्यवहार सम्पादित करने के लिये पर्याप्त है।

समूह के सभी सदस्यों के लक्ष्य-केन्द्रित व्यवहार समूह को पुरस्कार दिलाते हैं। सभी सहयोगात्मक अधिगम सिद्धान्तों में सहयोगात्मक कार्यो (Co-operative tasks) का प्रयोग किया जाता है। परन्तु भिन्नता पुरस्कार संगठनों में दिखाई देती है। विद्यार्थियों को समूह निष्पादन के प्रयासों के समग्र / योग के आधार पर दिया जाता है। विकासात्मक परिप्रेक्ष्य के समर्थकों के अनुसार सहयोगात्मक अधिगम की प्रभावशीलता सहयोगात्मक कार्य के प्रयोग पर निर्भर करती है, जबकि अभिप्रेरणात्मक परिप्रेक्ष्य के समर्थक सहयोगात्मक अधिगम की प्रभाव की प्रभावशीलता सहयोगात्मक पुरस्कार संगठन के संदर्भ में प्रत्यक्षीकृत करते हैं। अभिप्रेरणात्मक परिप्रेक्ष्य में पुरस्कार संगठन (Reward Structure) अत्यावश्यक है। सहयोगात्मक अधिगम विद्याथियों की उपलब्धि में वृद्धि करता है। सहयोगात्मक पुरस्कार संरचना समव्यस्कों के लिये मानकों (Peer norms) को बनाती है व व्यक्तिगत प्रयासों को संरक्षण प्रदान करती है।

अधिगम सिद्धान्त परिपेक्ष्य:-स्लेविन (1988) के अनुसार सहयोगात्मक अधिगम व्यूह रचना कक्षा संगठन से दो प्रकार से भिन्न है :

कार्य संरचना सहयोगात्मक कार्य संगठन में विद्याथियों को समूह में कार्य करते हुये एक दूसरे को प्रोत्साहित करना होता है। पुरस्कार व्यक्तिगत एवं साहसिक हो सकते हैं। जैसा कि पूर्व में भी कहा जा चुका है कि समूह पुरस्कार और वैयक्तिक जवाबदेही सहयोगात्मक अधिगम को प्रभावशाली बनाते हैं। सभी विद्यार्थियों के स्कोर का योग ही वैयक्तिक जवाबदेही को सुनिश्चित करता है। समूह पुरस्कार सभी सदस्यों के लिये प्रेरकों का कार्य करते हैं तो समूह पुरस्कार सभी सदस्यों के लिये प्रेरकों का कार्य करते हैं तो समूह के सभी सदस्यों की कार्य में सहभागिता व्यक्तिगत जवाबदेही के माध्यम से आती है। पुरस्कार (Rewards) विद्यार्थियों के अधिगम में उद्दीपन का कार्य करता है। इस प्रकार की व्यूह रचना स्किनर के विचार के अनुरूप है।

ज्ञानरचनावाद (Constructivist) विचारधारा के अनुसार अर्थ मनुष्य के द्वारा संरचित किये जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति विचारों को स्वयं संरचित करता है। अन्य व्यक्तियों द्वारा संरचित विचारों के अर्थ से प्रभावित होता है। तब इन विचारों व विचारों को ज्ञान के मुख्य भाग के रूप में संरचित किया जाता है। विचारों के अर्थ पर सामाजिक एवं भौतिक वातावरण का प्रभाव

पडता है। प्याजे (Piagat) ने इसे समंजन की प्रक्रिया कहा है। विचारों के अर्थों को सामाजिक व भौतिक वातावरण के दबाव के कारण संशोधित किया जाता है। प्याजे व संरचना विचारधारा के अन्य समर्थकों के अनुसार केवल मात्र तथ्यों का प्रस्तुतीकरण अधिगम के लिये पर्याप्त नहीं है। अधिगम को जोड़ने पर बल दिया जाये, ताकि विद्यार्थी ज्ञान की संरचना कर सकें। रेवनस (Ravens) के अनुसार अनुदेशन की रूपरेखा इस प्रकार की जाये ताकि विद्यार्थी तार्किक क्रियाओं को ठीक प्रकार से अर्जित कर सकें। नियमों व प्रत्ययों में अर्जित कर सकें। नियमों व प्रत्ययों में अर्जन में तार्किक सक्रियाओं का प्रयोग विद्यार्थियों द्वारा सहयोगात्मक अधिगम में किया जाता है।

वीटले (Wheatley 1991) के अनुसार सहयोगात्मक अधिगम दो अधिनियमों पर आधारित है:-

ज्ञान निष्क्रिय होकर नहीं ग्रहण किया जा सकता हैं। व्यक्ति द्वारा सक्रिय होकर निर्मित किया जाता है।

संज्ञान का कार्य अनुकूलन करना है। यह व्यक्ति को अनुभवात्मक संस्कार को संगठित करने में सहायता करता है।

प्याजे के अनुसार जानने के पश्चात् उस पर मानसिक एवं शारीरिक रूप से कार्य करना है। सामाजिक अन्तःक्रिया ज्ञान की संरचना में वृद्धि करती है। सहयोगात्मक अधिगम में कक्षा वह स्थान हैं जहाँ सक्रियात्मक चर्चायें होती हैं और अध्यापक अधिगम के सुगमकर्त्ता का कार्य करता है। अध्यापक केवल सूचनाओं का स्त्रोत ही नहीं होता।

13.5 सहयोगात्मक अधिगम के घटक (Components of Co-operative Learning)

जॉनसन एवं जॉनसन ने (1988) ने सहयोगात्मक अधिगम के निम्न पाँच घटकों को आवश्यक माना है:-

सकारात्मक अन्तर्निभरता :- जब एक समूह के लक्ष्यों में समानता एवं समूह के मध्य रहकर पहिचान की भावना होती है, तो सकारात्मक अन्तर्निभरता की भावना जन्म लेती है। सभी सदस्य उपलब्ध संसाधनों का मिलजुल कर प्रयोग करते हैं क्योंकि पुरस्कार व प्रोत्साहन सभी सदस्य एक साथ मिल कर प्राप्त करते हैं। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सभी सदस्य अपनी अपनी भूमिका निर्वहन करते हुये एक दूसरे को सहायता व प्रोत्साहन प्रदान करते हैं। इसके विपरीत नकारात्मक अन्तर्निभरता की स्थिति में समूह के सभी सदस्यों के लक्ष्य अलग अलग होते हैं। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें एक व्यक्ति की लक्ष्य प्राप्ति दूसरे व्यक्ति की लक्ष्य प्राप्ति न कर पाने पर निर्भर करती है। समूह के सभी सदस्यो की एक समान पहिचान उनके द्वारा परस्पर समान लक्ष्य प्राप्ति से जुड़ी होती है।

जब विद्यार्थी यह समान लेते हैं कि उन्हें एक साथ डूबना व तैरना है "Sink or swim together". यदि सकारात्मक अन्तर्निभरता की भावना विकसित हो जाती है, तो यह स्थापित हो जाता है कि:-

(1) समूह के प्रत्येक सदस्य के प्रयास समूह की सफलता के लिये अपरिहार्य एवं आवश्यक है।

(2) प्रत्येक सदस्य के संसाधन भूमिका व कार्य के प्रति उत्तरदायित्व का सामूहिक प्रयास में अभूतपूर्व योगदान है। अधिगम समूह में सकारात्मक अन्तनिर्भरता को निम्न प्रकार से विकसित किया जा सकता है:-

- **सकारात्मक उद्देश्य अन्तर्निभरता (Positive Goal Inter dependence) :-** विद्यार्थी इस बात को यदि समझ लें कि वे अपने अधिगम उद्देश्यों को तभी प्राप्त कर पायेंगे जब कि समूह के सभी सदस्य उन लक्ष्यों को प्राप्त करेंगे। अधिगम समूह केवल अधिगम उद्देश्य के कारण एक दूसरे से जुड़ा हुआ हैं। इसके लिये अध्यापक को एक समान उद्देश्य को सभी के लिये तय करना होगा। उदाहरणार्थ प्रदत्त कार्य को सभी सीख और ध्यान रखें कि समूह का प्रत्येक विद्यार्थी प्रदत्त कार्य को सीखेगा।

- **सकारात्मक पुरस्कार (Positive Reward) :-** समूह के लक्ष्यों के प्राप्ति की स्थिति में सभी सदस्यों को एक समान पुरस्कार दिया जायें, यदि सभी सदस्य 90 प्रतिशत अंक प्राप्त करते हैं, तो प्रत्येक सदस्य को 5 बोनस अंक दिये जायें।

(1) कभी कभी अध्यापक सम्पूर्ण समूह को ग्रेड दे देते हैं।

(2) परीक्षणों के आधार पर प्रत्येक सदस्य को अलग अलग ग्रेड देना।

(3) समूह के सभी सदस्य को यदि परीक्षणों में मानदण्ड को सम्पादित करते हैं, तो समूह प्रयासों एवं सफलता को नियमित रूप से मनाया जाता है।

- **सकारात्मक संसाधन अन्तर्निभरता (Positive Resource Interdependence) :-** किसी कार्य को पूरा करने के लिये समूह के प्रत्येक के पास किसी कार्य को पूरा करने के लिये संसाधनों व सामग्री का कुछ ही भाग होता है। समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सभी के संसाधनो, सूचनाओं व सामग्री को मिल कर प्रयोग करना होता है। अध्यापक विद्याथियों को सीमित संसाधनो को देकर सहयोगात्मक सम्बन्धों को स्थापित करने को बता सकता है। सीमित संसाधन जब प्रत्येक विद्यार्थी के पास होंगे, तो स्वयं में ही उन संसाधनो को एक दूसरे के साथ बाँटेंगे।

- **सकारात्मक भूमिका अन्तर्निभरता (Positive Role Independence):-** प्रत्येक विद्यार्थी को पूरक एवं अन्तभूमिकाओं (Interconnected) को प्रदान किया जाता है। ये भूमिकायें प्रत्येक व्यक्ति का उत्तरदायित्व का परिचायक है, जो कार्य को पूर्ण करने में आवश्यक होती है। अध्यापक विद्यार्थियों में अन्तर्निभरता हेतु भूमिकाओं का सृजन करता है जैसे कि वाचनकर्त्ता (Reader), रिकॉर्डर (Recorder), बोध का जांचकर्ता (Checker of understanding), सहभागित्व को प्रोत्साहन देने वाला (Encourager of participation) और ज्ञान का विस्तारकर्त्ता (Elaborator of Knowledge) ऐसी भूमिकायें उच्च गुणवत्ता युक्त अधिगम के लिये आवश्यक हैं। उदाहरणार्थ जाँचकर्त्ता का कार्य समय समय पर समूह के प्रत्येक सदस्य से अधिगमित सामग्री की व्याख्या करवाना है।

- **सकारात्मक कार्यनिर्भरता (Positive task Interdependence):-** सदस्य कार्य का विभाजन इस प्रकार किया जाता है कि जब तक पहले सदस्य की क्रियाएँ पूर्ण नहीं हो जाती, तब तक दूसरा सदस्य कार्य प्रारम्भ नहीं कर सकता है।
- **व्यक्तिगत जवाबदेही (Individual Accountability):-** "व्यक्तिगत जवाबदेही से अभिप्राय समूह के प्रत्येक सदस्य द्वारा परस्पर निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति में योगदान देना है। इसके लिये आवश्यक है कि प्रत्येक सदस्य विद्यार्थी परस्पर तय किये लक्ष्यों के मूल्य को जाने। जब तक सभी सदस्य लक्ष्यों के प्रति प्रतिबद्ध नहीं होंगे, तब तक सभी सदस्य एक दूसरे के हित में कार्य नहीं करेंगे। जवाबदेही के लिये पारदर्शिता का होना आवश्यक हैं। जब सभी व्यक्ति अपने निर्धारित कार्य को सम्पादन करेंगे, तो पारदर्शिता स्वयमेव ही आ जायेगी। यदि कोई सदस्य अपना कार्य नहीं करता है तो लक्ष्यों की प्राप्ति न होने की स्थिति में उसे जिम्मेदार ठहराया जाता है व अन्य सदस्य ऐसे व्यक्तियों को कार्य करने में सहायता व प्रोत्साहन प्रदान करते हैं।

समूह के लक्ष्य एवं व्यक्तिगत जवाबदेही इस अर्थ में महत्वपूर्ण हैं कि प्रत्येक सदस्य एक दूसरे को अधिकतम प्रयास के लिये प्रोत्साहित करता है।

- व्यक्तिगत जवाबदेही को अध्यापक निम्न प्रकार से निर्मित कर सकता है:-
- लघु समूह के गठन द्वारा। समूह का आकार लघु होने सदस्यों की जवाबदेही अधिक होती है।
- प्रत्येक विद्यार्थी को व्यक्तिगत परीक्षण देकर,
- समूह के किसी एक सदस्य का यादृच्छिक (random) चयन कर, समूह के समक्ष कार्य की प्रगति के प्रस्तुतीकरण द्वारा।
- **अन्तर्वैयक्तिक कौशल:-** किसी भी समूह को सहयोगात्मक समूह बनाने के लिये नेतृत्व, निर्णयन, विश्वास, सम्प्रेषण एवं प्रबन्धात्मक कौशलों को विकसित करना आवश्यक होता है। कुशलताओं एवं योग्यताओं के विजातीय समूह में सभी विद्याथियों को समान लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रयासों में समन्वय के लिये आवश्यक है कि:

(1) सभी विद्यार्थी एक दूसरे को अच्छी तरह जाने व एक दूसरे पर विश्वास रखें।
(2) सही प्रकार से सम्प्रेषण करें।
(3) एक दूसरे को स्वीकृति एवं समर्थन प्रदान करें।
(4) संघर्षों को रचनात्मक रुप से सुलझायें।

जो विद्यार्थी समाजिक कौशलों को नहीं जानते, उन्हें कक्षा समूह में सहयोग करने को कहा जाये, तो इस बात की प्रदर्शित कर पायेंगे। प्रभावशाली रूप से सम्प्रेषण करने की कला मूल प्रवृत्तात्मक व्यवहार नहीं है। अन्तर्वैयक्तिक कौशल एक लघु समूह में आवश्यकता पड़ने पर जादुई रूप से अवतरित नहीं होते। यदि सहयोगात्मक अधिगम के परिणाम चाहिये तो विद्यार्थियों को सामाजिक कौशलों से युक्त करना होगा एवं आवश्यकता पड़ने पर उनके प्रयोग के लिये प्रोत्साहित करना होगा।

- **समूह प्रक्रमण (Group Processing) :-**

सहयोगात्मक अधिगम का पाँचवा प्रमुख घटक समूह प्रक्रमण है। प्रभावशाली समूह कार्य में समूह के सभी सदस्य समय समय पर अपनी प्रकार्यात्मक (Functioning पर चिन्तन करते हैं। समूह प्रक्रमण में समूह के सभी सदस्यो के क्रियाओं (सहायक एवं अ-सहायक) पर विचार किया जाता है। कार्यो / क्रियाओं को जारी रखा जाये व परिवर्तन पर निर्णय लिया जाता है।

समूह प्रक्रमण का उद्देश्य लक्ष्यों की प्राप्ति में व्यक्तियों के सहयोगात्मक प्रयासों को स्पष्ट एवं प्रभावी बनाना है। अध्यापक सहयोगात्मक अधिगम समूहों का व्यवस्थित रूप से अवलोकन करता है। विद्यार्थी जब एक दूसरे को प्रदत्त कार्य को किस प्रकार किये जायें, का वर्णन व व्याख्या करते हैं। विद्याथियों की वर्णन व्याख्या अध्यापक के लिये मूल्यवान जानकारी होती है। इस संदर्भ में कि विद्यार्थियों ने निर्देशों व अवधारणाओ को कितना समझा है।

- **आमने सामने की अन्तःक्रिया :-** सकारात्मक अन्तर्निभरता का परिणाम उत्साहित अन्त: क्रिया है। उत्साहित अन्तक्रिया (Promotive Interaction) से तात्पर्य सदस्यों का एक दूसरे को प्रयत्नों प्रोत्साहित व सुगमीकृत करते हुये कार्यो को पूर्ण करते हुये लक्ष्य तक पहुँचना है। सदस्यों के मध्य आमने सामने की उत्साहित अन्तःक्रिया सकारात्मक अन्तर्निभरता सामाजिक कुशलता एवं मनोवैज्ञानिक समायोजन से उपजती है। उत्साहित अन्तःक्रिया निम्न रूप में दिखाई देती है:-

(1) समूह के सदस्यों द्वारा एक दूसरे को प्रभावी सहायता प्रदान करना।
(2) आवश्यक संसाधनों का आपस में आदान प्रदान करना।
(3) सूचनाओं का प्रक्रमण प्रभावशाली व कुशलतापूर्वक करना।
(4) पृष्ठपोषण देना ताकि अग्रिम निष्पादन को बेहतर बनाया जा सके।
(5) उच्च स्तरीय गुणवत्ता युक्त निर्णयन हेतु एक दूसरे के निष्कर्षो को चुनौती देना व तर्क करना।
(6) समूह के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये और अधिक प्रयासों की वकालत करना।
(7) समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु एक दूसरे के प्रयासों को प्रभावित करना।
(8) एक दूसरे के हित में कार्य करना
(9) चिन्ता एवं तनाव को निम्न स्तरीय बनाये रखना।

13.6 सहयोगात्मक अधिगम की विधियाँ (Method of Co-operative Learning)

- **Learning Together & Alone:-** विधि का विकास जॉनसन-डेविड एवं रोजर (1987) ने किया है। इस विधि में विजातीय समूहों के पाँच से छ: सदस्यों का कार्य करने को कहा जाता है। दल के सदस्य एक कार्य को मिल कर करते हैं। दल जितनी अच्छी प्रकार से कार्य को पूर्ण करते हैं, उस आधार पर प्रशंसा व पुरस्कार दिया जाता है। इससे पहले कि विद्यार्थी वर्कशीट (Work-Sheet) पर कार्य करें, दल को एक साथ मिल कर कार्य करने की गतिविधियों पर बल दिया जाता है। इस विधि में नियमित रूप से समूह मे कितनी अच्छी प्रकार रो किया जाता है, पर बल दिया जाता है।

- **स्टूडेंट टीम-एचीवमैन्ट डिवीजन (STAD) :-** STAD सहयोगात्मक अधिगम की तकनीक को स्लेविन ने 1978 मे व्यापक शोध कर विकसित किया। इस विधि में पाँच या छ: विद्यार्थियों के

समूह बनाये जाते हैं। जहाँ तक सम्भव होता है, समूह निर्माण में विभिन्नता (Heterogenity) को महत्व दिया जाता है। प्रत्येक दल अपनी कक्षा का प्रतिनिधित्व लिंग, उपलब्धि प्रजाति, जाति के सन्दर्भ में करता है। सहयोगात्मक अधिगम की क्रिया में अध्यापक नवीन सामग्री को व्याख्यान अथवा वाद विवाद विधि के द्वारा विद्यार्थियों को परिचित कराता है व निपुणता हेतु कार्य अभ्यास (Work-Sheet) प्रदान करता है। कार्य अभ्यास में विभिन्न प्रश्न व समस्याएं होती हैं, जिसकी विद्यार्थी समीक्षा करते हैं और व्याख्यान के मुख्य बिन्दुओं को ग्रहण करते हैं और व्याख्यान के मुख्य बिन्दुओं को ग्रहण करते हैं। दल के सदस्य कार्य अभ्यास पुस्तिका का अध्ययन करते हैं। वे समूह में या जोडों मे कार्य करते हैं। इस अवस्था मे वे विषयवस्तु व कठिन बिन्दुओं पर स्पष्टीकरण करते हैं, ताकि विषय वस्तु पर अधिकार किया जा सके। विद्यार्थियों को यह स्पष्ट कर दिया जाता है कि उनका कार्य केवल कार्य पुस्तिका को पूरा करना नहीं है, बल्कि विषय वस्तु पर अधिकार प्राप्त करना है। किसी एक सदस्य को उत्तर पुस्तिका दे दी जाती हैं, ताकि अन्य सदस्यों की कार्य पुस्तिकाओं की जाँच कर सके। विद्यार्थियों को पर्याप्त समय कार्य पुस्तिकाओं को करने के लिये दिया जाता है। सभी विद्यार्थियों को स्पष्ट रूप से बताया जाता हैं कि जब तक कि वे विषयवस्तु को हासिल न कर लें, अध्ययन जारी रखें। कार्य पुस्तिका (WorkSheet) पर पर्याप्त अभ्यास के पश्चात्, प्रत्येक विद्यार्थी को उसी विषय वस्तु पर पहेली (quizzes) दी जाती हैं। इस दौरान विद्यार्थी अपने दल के सदस्य की सहायता नहीं करते हैं। प्रत्येक विद्यार्थी की स्कोर की गणना कर के पूरे दल को स्कोर दिया जाता है। पूरे दल समूह के स्कोर प्राप्त कर लेते हैं। पूरे दल / समूह के स्कोर मात्र विद्यार्थियों के स्कोर का योग नहीं होता है बल्कि प्रत्येक सदस्य के टीम में योगदान को उसके पिछले निष्पादन से अधिक स्कोर के आधार पर गणना की जाती है। इसके लिये बेस स्कोर (Base Score) प्रत्येक विद्यार्थी के औसत स्कोर से पाँच बिन्दु नीचे निर्धारित किया जाता है। एक विद्यार्थी अधिकतम दस बिन्दु हासिल कर सकता है। उत्कृष्ट निष्पादन पर दस बिन्दु दिये जाते हैं, चाहे उसका बेस स्कोर कुछ भी क्यों न हो।

जिगसा (Jigsaw) - जिगसा एक तस्वीर या मानचित्र का कार्डबोर्ड पर चिपकाये जाते हैं, जो कि अनियमित आकार के कटे हुये होते हैं। इन अनियमित आकार के ब्लॉक को वापिस एक साथ जमाना होता है। इस, प्रकार की बहुत सी जिगसा पहेलियाँ बाजार में उपलब्ध हैं। यह एक सहयोगात्मक अधिगम तकनीक है" जिसके द्वारा बालकों में सामाजिक संघर्ष को कम करने, बेहतर अधिगम, अभिप्रेरित करने व अधिगम अनुभवों को प्राप्त करने में आनन्द प्रदान करती है। यह तकनीक विश्वविद्यालय के इलीयट ऑर्नसन (Elliot Aronson) ने विकसित की।

जिगसा कक्षा एक विशिष्ट अधिगम तकनीक है। जिस प्रकार जिगसा पहेली में प्रत्येक टुकड़ा या ब्लॉक महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार प्रत्येक विद्यार्थी अन्तिम परिणाम या कार्य के निष्पादन के लिये महत्वपूर्ण है। यदि प्रत्येक विद्यार्थी की भूमिका आवश्यक व महत्वपूर्ण हैं तो प्रत्येक विद्यार्थी आवश्यक हैं।

यह सहयोगात्मक अधिगम विधि की तकनीक है, क्योंकि इसमें सहयोगात्मक कार्य संगठन जुड़ा हुआ है। तथापि विद्यार्थी व्यक्तिगत रूप से पुरस्कार ग्रहण करते हैं। अतैव यह

कहा जा सकता है कि यह विधि सहयोगात्मक पुनरूत्साहन संरचना का प्रयोग नहीं करते हैं। यह विधि उन विषय क्षेत्रों में उपयोगी है, जहाँ विषयवस्तु पूर्व भाग पर निर्भर करती है। जैसे कि विज्ञान एवं गणित विषयों में जब तक अधिगमकर्ता किसी इकाई को पूर्व में अधिगमित नहीं करता है, तो उत्तरोत्तर इकाईयों का अधिगम संभव नहीं होता है।

इस विधि में विद्यार्थियों को छः-छः सदस्यों के दल में विभाजित कर लिया जाता है। अधिगमित की जाने वाली विषय-वस्तु को भी पाँच भागो में बाँटा जाता है एवं प्रत्येक समूह को इकाई के एक भाग को प्रदत्त किया जाता है। छः सदस्यों के समूह में से किसी एक विद्यार्थी को इकाई के एक भाग को अन्य विद्यार्थियों के साथ बॉटने को कहा जाता है। यह व्यवस्था किसी एक सदस्य के अनुपस्थिति होने पर भी पाँचों प्रकरणों / विषय इकाइयों को पूर्ण करने में सहायता करती है। समूह का प्रत्येक सदस्य अध्ययन कर विषय सामग्री की तैयारी करता है। विभिन्न समूहों के सदस्य एक ही प्रकरण / इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् विशिष्ट समूह (Expert group) से मिलकर चर्चा करते हैं। चर्चा के उपरान्त सभी सदस्य अपनी-अपनी टोली में वापस चले जाते हैं और अपने अपने समूह के प्रत्येक सदस्य शिक्षण कराते हैं। इस चरण में विद्यार्थियों के मध्य सकारात्मक अन्तर निर्भरता की भावना विकसित की जाती है। समस्या के सभी पक्षों को जानने हेतु यह आवश्यक हो जाता है कि समूह के सभी सदस्य ध्यान संकेन्द्रित करें एव साथियों के साथ अन्तःक्रिया करें। समूह के सदस्यों के कार्यो में रुचि विकसित हो जाने पर व सभी एक दूसरे को अभिप्रेरित करते हैं इसके पश्चात् विद्यार्थी उस विषय और समस्या के सभी पक्षों पर पहेलियों एवं परीक्षणों को बिना एक दूसरे की मदद के हल करते हैं। परीक्षणों एवं पहेलियों पर आधारित निष्पादन पर विद्यार्थियों को ग्रेड / अंक / पुरस्कार दिये जाते है।

जिगसा का उदाहरण :- इतिहास की कक्षा में पाँच सा छः विद्यार्थियों छोटे-छोटे समूहों में बांटा जाता है। विद्यार्थियों को द्वितीय विश्व युद्ध के बारे में सीखना है। इसके लिए जिगसा में एक समूह मे रमेश को हिटलर के युद्ध पूर्व जर्मनी में सत्ता में आने के बारे में शोध का कार्य दिया गया। समूह के दूसरे सदस्य हरि को हिटलर के 'कान्सन्ट्रैंशन कैम्प' पर अध्ययन करने को कहा गया। ऋषि को द्वितीय विश्व युद्ध में बिट्रेन की भूमिका पर मीरा को सोवियत रुस, टेरी को जापान की भूमिका व क्लारा को परमाणु बम के विकास पर काम करने को कहा गया।

अन्त में प्रत्येक विद्यार्थी को कार्य करके जिगसा समूह में प्रस्तुत करने को कहा गया।

- **समूह अन्वेषण (Group Investigation) :-**समूह अन्वेषण विधि को शारन एवं शारन (Sharan & Sharan) ने 1978 में विकसित किया। थेलन (Telen) के ग्रुप इन्वैस्टीगेशन मॉडल में रुचि के कारण शासन एवं शारन ने इसे विकसित किया। जॉयस एवं वेल (Joyce & Weil, 1972) का कहना है कि इस मॉडल में शिक्षण की व्यूह रचना में प्रजातांत्रिक प्रक्रियाओं व अकादमिक अन्वेषण की प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया गया है। समूह अन्वेषण एक सामान्य कक्षा संरचना योजना है, जिसमें विद्यार्थी लघु समूहों में सहयोगात्मक अन्वेषण, समूह चर्चा एवं सहयोगात्मक योजना एवं प्रोजेक्ट का

प्रयोग करते हुये कार्य करते हैं। छः चरणों में विषय के क्षेत्र को ध्यान में रखते हुये एक सप्ताह या कई सप्ताहों में कार्य को पूर्ण करते हैं -

(i) खोज की अवस्था (Exploratory Stage)

(ii) खोज की योजना (Planning investigation)

(iii) योजना का क्रियान्वयन (Execution)

(iv) रिपोर्ट तैयार करना (Preparation of Report)

(v) रिपोर्ट का प्रस्तुतीकरण (Presentation of Report)

(vi) मूल्यांकन (Evaluation)

सहयोगात्मक अधिगम की विभिन्न विधियाँ कई दृष्टियों से दूसरे से भिन्न हैं। विद्यार्थी दल अधिगम विधियाँ (STAD) (Tat and Jigsaw) दलों के मध्य प्रतियोगिता के द्वारा अभिप्रेरणा प्रदान एवं सहयोग को प्रेरित करते है। जबकि समूह अन्वेषण (Group Investigation, learning Together) प्रतियोगिता माध्यम नहीं बनाते। STAD, TGT एवं TAT का स्वरुप अधिक संरचित है, जबकि Learning Together Group Investigation अधिक संरचित नहीं है। ये विद्यार्थियों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करते है और समूह परितोषिक तुलनात्मक रूप में कम उल्लिखित हैं। विद्यार्थियों को अन्तःक्रिया कौशलों में प्रशिक्षण के आधार पर भी इनमें अन्तर किया जाता है।

- **Teams Game- Tournament (TAT):** टीम गेम टूरनामैन्ट विधि को डीवेरिस व स्लेविन ने 1978 में विकसित किया। इस विधि में स्टूडेन्ट टीमस-एचीवमेन्ट डिविजन के दो पक्षों को शामिल किया गया है। इस विधि मे भी चार से पाँच विद्यार्थियों के समूह को वर्कशीट / कार्य पत्र में प्रवीणता हासिल करनी होती है। STAD में शामिल साप्ताहिक क्विज के स्थान पर साप्ताहिक टूरनामैन्ट को रखा गया है। इसमें दल के सदस्यों को अन्य दलों के साथ प्रतियोगिता में भाग लेकर अपने दल के लिये बिन्दु (Team-Scores) अर्जित करने होते हैं। विभिन्न दल एक दूसरे की टक्कर के होते हैं। प्रत्येक दल के उच्च निष्पादन योग्यता वाले विद्यार्थी को अन्य दो दलों के उच्च निष्पादन योग्यता के (High performer) साथ प्रतियोगिता करनी होती है। इसी प्रकार से औसत निष्पादन वाले सदस्य को अन्य दो दलों के औसत निष्पादन विद्यार्थियों से प्रतियोगिता करनी होती है। विद्यार्थी निष्पादन के बारे में तो जानते हैं, परन्तु अन्य प्रतियोगिता (Tournament Table) के बारे में नहीं जानते। प्रत्येक जीतने वाले प्रतियोगी को फिर उच्चतर प्रतियोगी के साथ मुकाबला करना होता है। जीतने वाला विद्यार्थी प्रत्येक टूरनामैन्ट (Tournament Table) में समान अंक अपने दल के लिये लाता है। इस प्रकार उच्च निष्पादन वाले विद्यार्थी, उच्च निष्पादन वाले विद्यार्थियों व निम्न निष्पादन वाले विद्यार्थियों व निम्न निष्पादन वालें विद्यार्थियों से प्रतियोगिता करते हुये सफलता के समान अवसरों को प्राप्त करते हैं।

दल को बिन्दु (Teampoints) प्रश्नों के सही उत्तरों के आधार पर दिये जाते हैं। चार सप्ताहों में होने वाले टूरनामैन्ट में प्राप्त कुल अकों का संचय किया जाता है। प्रत्येक माह के अन्त में विजेता की घोषणा की जाती है। प्रत्येक सदस्य के द्वारा प्राप्त अंको की भी घोषणा

की जाती है। पिछले माह से प्रत्येक दल की निष्पादन / उपलब्धि की तुलना की जाती है। STAD की भान्ति उच्चतर अंक प्राप्त करने वाले दल को पुरस्कार प्रदान किया जाता है। टूरनामैन्ट में खेल के लिये तीन सदस्यों के दल में एक (Reader) को कार्ड चुनने को कहा जाता है और वह गेम शीट (Game Sheet) में से एक प्रश्न को पढ़ता है। दूसरा विद्यार्थी (I, t Challenger) यदि चाहे तो दिये गये उत्तर को चुनौती दे सकता है अन्यथा तीसरे विद्यार्थी को अवसर देता है। जब सभी विद्यार्थी चुनौती देते हैं अथवा बिना चुनौती दिये अगले विद्यार्थी को मौका देते हैं तो विद्यार्थी सही उत्तर देता है। अंक वाला (Numbered card) उसके पास रहता है।

T.G.T. में अधिगम के मापन शैक्षिक खेलों का प्रयोग किया जाता है, जबकि STAD में क्विज कर प्रयोग किया जाता है। TGT की विशेषता खेलों व टूरनामैन्ट के आयोजन की है, जिनमें विद्यार्थी रुचि लेते है।

सहयोगात्मक अधिगम की विभिन्न विधियाँ कई दृष्टियों से एक दूसरे से भिन्न हैं। विद्यार्थी दल अधिगम विधियाँ (STAD) TGT and Jigsaw) दलों के मध्य प्रतियोगिता के द्वारा अभिप्रेरणा एवं सहयोग को प्रेरित करते हैं। जबकि समूह अन्वेषण (Group Investigation, Learning Together) प्रतियोगिता को माध्यम नहीं बनाते। STAD, TGT, एवं TAI का स्वरूप अधिक संरचित है, जबकि Learning Together एवं Group Investigation अधिक संरचित नहीं है। ये विद्यार्थियों को अधिक स्वायत्तता प्रदान करते है और समूह पारितोषिक तुलनात्मक रूप में कम उल्लेखित हैं। विद्यार्थियों को अन्तःक्रिया कौशलों में प्रशिक्षण के आधार पर भी उनमें अन्तर किया जाता है।

सहयोगात्मक अधिगम को कक्षा में प्रोत्साहन हेतु :-

- विद्यार्थियों को समूह का ऐसे गठन करे कि वे मिल जुल कर उत्पादन कार्य करें।
- समूह के कार्य हेतु स्पष्ट लक्ष्य निर्धारण करें
- समूह के प्रत्येक सदस्य को अलग सौंपे कार्य।
- समूह अन्तक्रिया का प्रबोधन करें।
- जब समूह कार्य न कर पा रहा हो तो उसे सूचना व अर्न्तदृष्टि प्रदान करें।
- प्रत्येक विद्यार्थी को उसके कार्य के लिये जवाबदेही बनायें।
- समूह की सफलता पर पुनर्बलन प्रदान करें।
- विद्यार्थियों को समूह में उनकी प्रभावशीलता का मूल्यांकन करायें।

13.7 सहयोगात्मक अधिगम एवं उपलब्धि (Co-operative Learning & Achievement)

किसी भी विद्यालय का महत्वपूर्ण कार्य प्रभावी रूप में अनुदेशन करना है। वह कोई भी विकल्प या नवप्रवर्तन शीघ्रता व सरलता से स्वीकार कर लिया जाता है, जो विद्यार्थियों की उपलब्धि में उन्नयन करता है। जो नवप्रवर्तन उपलब्धि के अतिरिक्त अन्य पक्षों को बेहतर करता हैं, उसे अपनाने की सम्भावना -क्रम होती है। इस दृष्टि से यदि देखें तो पता चलता

है कि सहयोगात्मक अधिगम विधियों के विकास का प्रमुख उद्देश्य उपलब्धि को बेहतर बनाना था। केवल जिगसा (Jigsaw) के प्रथम प्रारूप एवं वीगल एवं साथियों के (Wiegelctal) द्वारा विकसित विधियों का उद्देश्य अन्तर्समूह सम्बन्धों को विकसित करना था।

Lyons (1982), Yager (1985), Okebukola (1986), Okebukola and Jegeda (1988), Miller (1992), Loning (1993), Ahuja (1994), Lumpe & Staver (1995), Pissani (1995), Town & Grant (1997) ने अपने शोध अध्ययनों में पाया कि सहयोगात्मक अधिगम शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि लाता है।

सहयोगात्मक अधिगम एवं अ-संज्ञानात्मक उपलब्धि (Co-operative Learning & Non-Cognitive Achievement) - बहुत से शोध कार्यो में सहयोगात्मक अधिगम के प्रभाव को विद्यार्थी के अ-संज्ञानात्मक उपलब्धि के सन्दर्भ में भी जानने का प्रयास किया गया है। सहयोगात्मक अधिगम के प्रभाव को स्व-प्रत्यय, कक्षा-कक्ष वातावरण एवं चिन्ता आदि पर देखा गया। सहयोगात्मक अधिगम के फलस्वरूप सौहार्द्रपूर्ण अन्तःप्रजातीय सम्बन्धों का कक्षा में विकास हुआ। यह तार्किक भी है, क्योंकि कक्षा में विद्यार्थी आपस में अन्तःक्रिया करेंगे तो इस बात की पूर्ण सम्भावना है कि वे मित्र बनेंगे।

सहयोगात्मक अधिगम स्व-सम्मान को जन्म देता है। विद्यार्थियों में इस भावना को विकसित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति महत्वपूर्ण है। Guskey & Pigotl (1988) ने 46 शोध अध्ययनों के संश्लेषण में पाया कि सहयोगात्मक अधिगम विद्यार्थियों के संज्ञानात्मक एवं भावात्मक अधिगम परिणामों को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। टाउन्स एवं ग्रान्ट थर्मोडाइनैमिक्स विषय को सहयोगात्मक अधिगम द्वारा पढ़ाने पर पाया कि विद्यार्थियों में अन्तर्वैयक्तिक कौशलों, सम्प्रेषण कौशलों का विकास हुआ।

सहयोगात्मक अधिगम के परिणाम

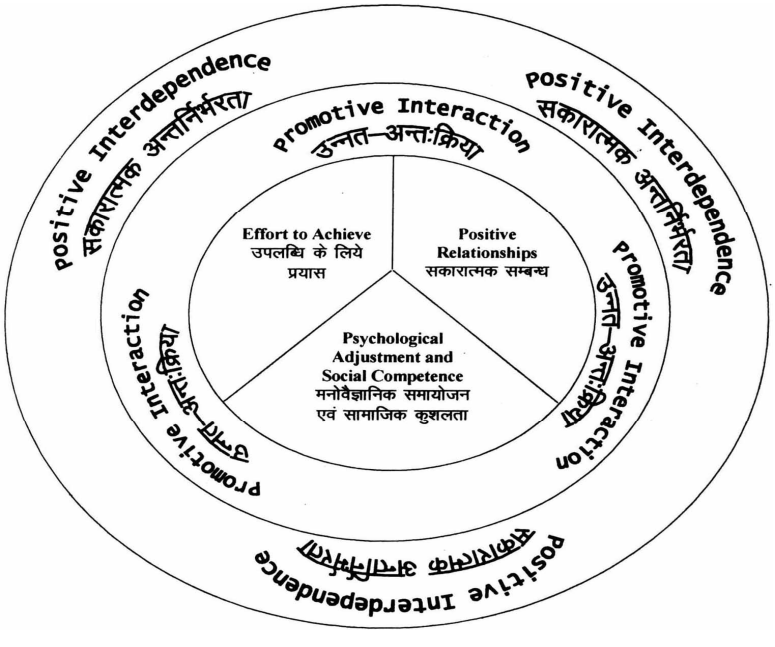

13.8 सारांश
(Summary)

सहयोगात्मक अधिगम एक सफल अधिगम व्यूह रचना है, जिसमें लघु समूह रह कर प्रत्येक विद्यार्थी अपने योग्यता स्तरों के आधार पर विभिन्न अधिगम क्रियाओं के द्वारा विषय को समझते हैं। समूह का प्रत्येक सदस्य केवल अपने अधिगम के लिये ही उत्तरदायी नहीं होता, परन्तु अपने समूह के सदस्यों के अधिगम एवं अधिगम में सहायता और अधिगम के वातावरण को सृजित करने के लिये भी होता है। सदस्यों के सहयोगात्मक प्रयास समान लक्ष्यों को प्राप्ति में सहायता करते हैं।

मेरी सफलता तुम्हें लाभ देगी, तुम्हारी सफलता मुझे लाभ प्रदान करेंगी।

सभी एक साथ डूबेंगे या तैर कर बाहर आ पायेंगे।

एक दूसरे के बिना काम असम्भव है।

एक सदस्य की सफलता को मिल कर मनायें।

- सहयोगात्मक अधिगम क्यों?
- विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में वृद्धि
- विद्यार्थियों के ठहराव में वृद्धि
- विद्यार्थियों को अधिगम अनुभव से विद्यार्थियों में सन्तुष्टि में वृद्धि
- विद्यार्थियों के सम्प्रेषण कौशलों का विकास
- विद्यार्थियों के सामाजिक कौशलों का विकास
- विद्यार्थियों के स्व-सम्मान में वृद्धि

सहयोगात्मक अधिगम के घटक

- सकारात्मक अन्तनिर्भरता
- वैयक्तिक जवाबदेही
- अन्तवैयक्तिक कौशल
- आमने-सामने की अन्त:क्रिया
- समूह प्रक्रमण

सहयोगात्मक अधिगम विधियाँ :-

जानसन एवं जानसन	1960 के दशक के मध्य	Learning together and Alone
डीवरीज एवं एडवर्डस	1970 के दशक प्रारम्भ	Teamed Games Tournaments TGT
शारन एवं शारन		Group Investigation
जानसन एड जानसन		Constructive Controversy
अरोनसन एवं सहयोगी	1970 के दशक के अन्त में	Jigans
स्लेविन एवं सहयोगी		Student Teams Achivements (STAD)
कोहन	1980 के प्रारम्भ	Complex Instruction
स्लेविन एवं सहयोगी		Team Associated Instructure (TAI)
कागन	1980 के मध्य में	Co-operative Learning Structures
स्टीवनस, स्लेविन एवं सहयोगी	1980 के दशक के अन्त में	Co-operative Learning Reading and

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. सहयोगात्मक-अधिगम की अवधारणा का परिचय दें।
   Give an Introduction of the concept of Co-operative Learning.
2. सहयोगात्मक-अधिगम के घटकों की व्याख्या करें।
   Explain the components of Co-operative Leaning.
3. सहयोगात्मक-अधिगम का शिक्षा में योगदान को स्पष्ट करें।
   Clarify the contribution of Co-operative Learning in Education.
4. सहयोगात्मक-अधिगम की विभिन्न विधियाँ कौन सी हैं?
   What are the different methods of Co-operative Learning?
5. सहयोगात्मक-अधिगम की विधि का आप प्रयोग करेंगे व क्यों?
   Which method of Co-operative Learning will you use any why?

13.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- R.V. Slavin (1995), Co-operative Learning, Theory, Research and practice. Englewood cliffs, N.J.: Prentice hall.
- M.Deutach (1949), A Theory of Co-operation and Competition, Human Relations
- J.Ellis ormrod, Educational Psychology. Developing Learners Prentice Hall.
- Loger T.and David W.Johnson-An Overview of Co-operative Learning, Published in J. Thousand, A.Villa ana A.Nevin (ed). Creative and Collaborative Learning, Brookers Press. Baltimore, 1994,
- S.Kagan, (1994) Co-operative Learning, san clement, CA; Kagan Publications

इकाई-14

सूक्ष्म-शिक्षण (Micro-Teaching)

इकाई की संरचना

(Structure Of Unit)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

14.1 प्रस्तावना
(Introduction)

14.2 सूक्ष्म शिक्षण की परिभाषा, मान्यतायें एवं गुण
(Definition, Propositions and Merits of Micro Teaching)

14.3 सूक्ष्म शिक्षण की क्रिया विधि
(Procedures of Micro Teaching)

14.4 शिक्षण कौशलों का अभिज्ञान
(Identification of Teaching Skills)

14.5 प्रतिपुष्टि की क्रियाविधि
(Feedback Procedure)

14.6 सूक्ष्म शिक्षण में अनुरूपण
(Simulation)

14.7 सूक्ष्म शिक्षण की उपयोगिताएँ
(Application of Micro Teaching)

14.8 सारांश
(Summary)

14.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

14.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त विद्यार्थी -

- सूक्ष्म शिक्षण को परिभाषित कर सकेंगे तथा सूक्ष्म शिक्षण के गुणों एवं मान्यताओं की सूची बना सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण की क्रिया विधि का वर्णन कर सकेंगे।
- कौशलों को परिभाषित कर सकेंगे तथा शिक्षक कौशलों के अभिज्ञान की विधियों को बता सकेंगे।

- सूक्ष्म शिक्षण में प्रतिपुष्टि की भूमिका, प्रतिपुष्टि के प्रकार तथा प्रतिपुष्टि की परिभाषा बता सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण में संरचना की भूमिका की व्याख्या कर सकेंगे तथा संचरना की परिभाषा बता सकेंगे।
- सूक्ष्म शिक्षण की सूची बना सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षक प्रशिक्षण के क्षेत्र में अनेक नवाचार विकसित होते रहते हैं। U.S.A के स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय के शिक्षा शास्त्रियों ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कदम उठाये है। उन्होंने विभिन्न कौशलों में पारंगत करने का प्रयास किया। 1961 में डी. बुश, डी. एलन एवं कीथ एचीसन ने इस दिशा में कार्य किया। उन्होंने अनिरूपित परिस्थितियों में शिक्षण कौशलों के विकास की बात कही, जिसमें तुरन्त पृष्ठपोषण का भी प्रावधान था। इस प्रयास को सूक्ष्म शिक्षण के नाम से जाना गया। भारत में भी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालयों में इसका उपयोग किया जाने लगे।

14.2 सूक्ष्म शिक्षण की परिभाषा, मान्यताएँ एवं गुण (Definition, Propositions and Merits of Micro Teaching)

14.2.1 सूक्ष्म शिक्षण की परिभाषा (Definition of Microteaching)

सूक्ष्म शिक्षण शिक्षक-प्रशिक्षण की एक तकनीक है, जिसमें छात्राध्यापक एक ही विषय इकाई को, एक निश्चित शिक्षण कौशल का प्रयोग करके, छात्रों की एक छोटी संख्या को एक अल्प अवधि के लिए शिक्षण करता है।

सूक्ष्म शिक्षण में शिक्षण का अभ्यास, परिभाषित, प्रेषित, मापनीय एवं नियंत्रण करने योग्य शिक्षण कौशलों के रूप में किया जाता है। शिक्षण के पश्चात् छात्राध्यापक को पर्यवेक्षक द्वारा पढाये गये पाठ के बारे में प्रतिपुष्टि दी जाती है, जिसके आधार पर छात्राध्यापक पुन: पाठयोजना बनाता है और पुन: शिक्षण करता है तथा शिक्षण सत्र के दौरान की गयी त्रुटियों को दूर करने का प्रयास करता है। पुन: शिक्षण के पश्चात् छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि दी जाती है। ऐसा तब तक किया जाता है, जब तक छात्राध्यापक एक कौशल को अच्छी तरह से प्रयोग करने में दक्ष न हो जाए। ऐलेन (1966) ने सूक्ष्म शिक्षण को परिभाषित करते हुए कहा कि सूक्ष्म शिक्षण कक्षा के आकार एवं कक्षा समय के रूप में शिक्षण जटिलताओं को कम करता है। पुन: 1969 में ऐलेन ने सूक्ष्म शिक्षण को परिभाषित करते हुए कहा कि 'सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षण से सम्बन्धित सम्प्रत्यय है, जिसका प्रयोग सेवारत एवं सेवा पूर्व दशाओं में शिक्षकों को शिक्षण अभ्यास के लिए ऐसी स्थिति प्रदान करती है, जिससे कक्षा की सामान्य

जटिलताएं कम हो जाती है और शिक्षक बहुत बडी मात्रा में अपने शिक्षण व्यवहार के लिए प्रतिपुष्टि प्राप्त करता है।

शिक्षक प्रशिक्षण की इस प्रविधि में सूक्ष्म शब्द का प्रयोग चार अर्थों में किया गया है -

1. पाठ्य वस्तु की लम्बाई एवं क्षेत्र को कम करके सूक्ष्म (छोटा) किया जाता है-
2. पाठ की अवधि को 40-45 मिनट से घटाकर केवल 5-7 मिनट का बनाकर सूक्ष्म (छोटा) किया जाता है।
3. कक्षा में छात्रों की संख्या 40-50 छात्रों में घटाकर 5- 10 छात्रों की कक्षा बनाकर सूक्ष्म (छोटा) किया जाता है।
4. शिक्षण के दौरान सभी शिक्षण कौशलों पर ध्यान न देकर केवल एक कौशल पर बल दिया जाता है।

इस प्रकार सूक्ष्म शिक्षण में विषय-वस्तु कक्षा, शिक्षण-कौशल एवं कक्षा-अवधि को सूक्ष्म बनाया जाता है।

बुश (1969) के अनुसार ' सूक्ष्म शिक्षण शिक्षक प्रशिक्षण की प्रविधि है, जिसमें शिक्षक वास्तविक छात्रों से समूह को 5- 10 मिनट के लिए, पूर्ण रूपेण परिभाषित शिक्षण कौशल का प्रयोग करके सावधानी से तैयार किये गये पाठों को पढ़ाता है। इसमें कभी-कभी विडियो टेप द्वारा परिणाम भी प्राप्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है।

क्लीफ्त ने अपने सहयोगियों के साथ सन् 1976 में सूक्ष्म शिक्षण को निम्न ढंग से परिभाषित किया-

"सूक्ष्म शिक्षण शिक्षक-प्रशिक्षण की एक प्रविधि है, जो शिक्षण दशाओं का स्वरूप साधारण करती है और शिक्षण अभ्यास को केवल एक विशेष शिक्षण कौशल के लिए संकुचित करती है। साथ ही साथ शिक्षण की अवधि एवं कक्षा के आकार को भी कम कर देती है।" क्लीफ्त के अनुसार सूक्ष्म प्रविधि निम्न तीन दशाओं में सम्पन्न होती है-

ज्ञान प्राप्ति अवस्था	**कौशल प्राप्ति अवस्था**		**स्थानांतरण अवस्था**	
प्रदर्शित कौशल का निरीक्षण	सूक्ष्म पाठ का निर्माण	कौशल अभ्यास	कार्य का मूल्यांकन	वास्तविक शिक्षण दशा में कौशल का स्थानांतरण

14.2.2 सूक्ष्म शिक्षण की मान्यताएं (Propositions of Micro Teaching)

ऐलेन और रेयान (1969) के अनुसार सूक्ष्म शिक्षण निम्नलिखित मूलभूत मान्यताओं पर आधारित है-

1. सूक्ष्म-शिक्षण वास्तविक शिक्षण है। यद्यपि शिक्षण की दशा वास्तविक न होकर रचित होती है, क्योंकि शिक्षक और छात्र अभ्यास की स्थिति में एक साथ कार्य करते हैं, फिर भी वास्तविक शिक्षण और सूक्ष्म-शिक्षण में कोई अन्तर नही है।

2. सूक्ष्म-शिक्षण सामान्य कक्षा में अध्यापन की जटिलताओं को कम कर देता है। कक्षा छोटी हो जाती है। विषय वस्तु का विस्तार कम हो जाता है और साथ ही साथ शिक्षण अवधि भी कम हो जाती है।
3. सूक्ष्म-शिक्षण किसी विशिष्ट या सुनिश्चित कार्य की उपलब्धि के लिए प्रशिक्षण देने की ओर केन्द्रित रहता है।
4. शिक्षण अभ्यास में सूक्ष्म-शिक्षण नियन्त्रण की सुविधा प्रदान करता है। सूक्ष्म-शिक्षण के द्वारा अभ्यास के समय छात्र, अवधि, प्रतिपुष्टि की विधियां, निरीक्षण तथा अन्य बहुत से कारणों पर नियन्त्रण या मन / चाहा हेर-फेर किया जा सकता है।
5. सूक्ष्म शिक्षण के द्वारा सामान्य परिणामों का ज्ञान या प्रतिपुष्टि का आयाम विस्तार हो जाता है। छात्राध्यापक निरीक्षक, सहपाठी अथवा विडियो टेप या इन सभी के द्वारा प्राप्त प्रतिपुष्टि के आधार पर अपने शिक्षण में सुधार लाने का प्रयास करता है।

14.2.3 सूक्ष्म शिक्षण के गुण (Merits of Micro Teaching)

सूक्ष्म शिक्षण के निम्नलिखित गुण हैं, जिनके कारण सूक्ष्म शिक्षण शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में महत्वपूर्ण स्थान रखता है

1. सूक्ष्म शिक्षण एक वास्तविक शिक्षण है।
2. सूक्ष्म शिक्षण में सामान्य कक्षा शिक्षण की जटिलताएं कम हो जाती हैं।
3. छात्राध्यापक का पूर्ण ध्यान एवं प्रयास एक पाठ में एक ही शिक्षण कौशल की ओर केन्द्रित होता है।
4. सूक्ष्म शिक्षण के अन्तर्गत शिक्षण अभ्यास नियन्त्रित दशाओं में संभव हो पाता है।
5. सूक्ष्म पाठयोजना एवं शिक्षण के लिए छात्राध्यापक को विषय वस्तु की एक छोटी इकाई को ही तैयार करना पड़ता है।
6. पाठ का समुचित निरीक्षण साथियों द्वारा या अध्यापक द्वारा किया जाता है।
7. पाठ के तुरन्त बाद ही छात्राध्यापक को पर्यवेक्षक द्वारा समुचित ढंग से प्रतिपुष्टि दी जाती है।
8. प्रतिपुष्टि एवं समालोचना के पश्चात् छात्राध्यापक को अपने पाठ को सुधारने और पुन: नियोजित करने का अवसर तत्काल प्राप्त हो जाता है।
9. प्रतिपुष्टि के साथ समालोचना एवं सुझाव दिये जाते है।
10. सुधारे हुए पुनर्नियोजित पाठ को पढाने का अवसर मिलता है।
11. सूक्ष्म शिक्षण का केन्द्र बिन्दु शिक्षण व्यवहार है।
12. विडियो टेप के प्रयोग से छात्राध्यापक स्वयं के शिक्षण का अवलोकन करके मॉडल पाठ से तुलना करते हैं, तथा त्रुटियों के निवारण का प्रयास करते हैं।
13. सूक्ष्म शिक्षण की समय बचत में सूक्ष्म शिक्षण की एक महत्वपूर्ण भूमिका है।
14. प्रशिक्षण के लिए छात्राध्यापकों को अन्यत्र किसी विद्यालय में नहीं जाना पड़ता है क्योंकि सूक्ष्म शिक्षण के अन्तर्गत शिक्षण अभ्यास संरचित दशाओं में भी किया जा सकता है।

14.3 सूक्ष्म शिक्षण की क्रियाविधि (Procedure of Micro Teaching)

सूक्ष्म शिक्षण उपागम के द्वारा छात्राध्यापकों के प्रशिक्षण हेतु निम्नलिखित कार्यक्रम एंव क्रियाविधि का प्रयोग करना चाहिए -

1. सर्वप्रथम सभी छात्राध्यापकों के बीच सूक्ष्म शिक्षण के अर्थ, उसके घटक, तत्व विशेषताओं, गुणों एवं दोषों पर परिचर्चा की जानी चाहिए। इसे प्रस्तावना पद कहते हैं।
2. परिचर्चा के पश्चात् शिक्षण कौशलों के स्वरुप, उनके मनोवैज्ञानिक आधार तथा उनके घटकों का ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए।
3. शिक्षण कौशलों की पूरी जानकारी देने के पश्चात् आदर्श सूक्ष्म पाठ का प्रदर्शन किया जाना चाहिए। इसे मॉडल पाठ का प्रस्तुतीकरण कहते है। मॉडल पाठ निम्नलिखित विधियों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता हैं।

(क) शिक्षक प्रशिक्षक स्वयं सूक्ष्म पाठ पढाकर दिखा सकता है।

(ख) मॉडल पाठ लिखित रुप में भी छात्राध्यापकों को दिया जा सकता है।

(ग) मॉडल पाठ को विडियो टेप पर रिकार्ड कर उसे दूरदर्शन पर दिखाया जा सकता है।

(घ) साधारण टेप रिकार्डर द्वारा भी मॉडल रिकार्ड करके छात्राध्यापकों को सुनाया जा सकता हैं। छात्रों के सामने उत्तम और बुरे दोनो प्रकार के पाठों का प्रदर्शन किया जा सकता है। छात्राध्यापकों को दोनों प्रकार के पाठों का तुलनात्मक अध्ययन का अवसर प्राप्त होता है और पाठ की अच्छाइयों और कमियों को पहचानने की क्षमता बढ़ती है।

4. मॉडल पाठ के प्रदर्शन के समय छात्राध्यापक सक्रिय होकर पाठ का अवलोकन करते हैं और इसी आधार पर छात्राध्यापक सक्रिय होकर पाठ की समालोचना करते हैं। वे अच्छे और बुरे पाठ एवं शिक्षण में भेद करतें हैं। पाठ की समालोचना के लिए प्रत्येक छात्राध्यापक को अलग-अलग शिक्षण कौशलों के लिए अलग-अलग निरीक्षण प्रपत्र दिये जाते हैं।
5. शिक्षक प्रशिक्षक छात्राध्यापकों को किसी एक शिक्षण कौशल के लिए सूक्ष्म पाठ योजना तैयार करने के लिए समय देता है और अभ्यास करने के लिए सहायता करता हैं।
6. इसके पश्चात छात्राध्यापक 5-10 सहपाठी की छोटी कक्षा को छः मिनट तक पाठ पढ़ाता हैं। इस काल को सूक्ष्म शिक्षण सत्र (Teaching session) कहते हैं। इस पाठ को विडियो टेप या साधारण कैसेट पर रिकार्ड कर लिया जाता हैं। जहां पर विडियाटेप या टेपरिकार्डर उपलब्ध नही हैं, वहां पर शिक्षक प्रशिक्षण और संरचित कक्षा (Simulated class) के ही सहपाठी पाठ का अवलोकन करके निरीक्षण प्रपत्र पर पाठ के लिए समालोचना संकेत बनाते हैं।
7. शिक्षण सत्र पश्चात् छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि प्रदान की जाती है। निम्नलिखित विधियों द्वारा छात्राध्यापकों को प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है -

(अ) यदि छात्राध्यापक के पाठ को रिकार्ड किया गया है, तो रिकार्ड को चलाकर छात्राध्यापक स्वप्रतिपुष्टि (Auto feedback) प्राप्त कर सकता हैं

(ब) प्रतिपुष्टि सहछात्राध्यापको द्वारा भी दी जा सकती है। शिक्षण सत्र के समय सहपाठी छात्राध्यापक पाठ की निरीक्षण तालिका के सहारे पाठ के गुणों और दोषों का विवरण एकत्रित

करते हैं। इसी आधार पर वे अपने सहपाठी छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि प्रदान करते हैं। इसे सहपाठी प्रतिपुष्टि (Peer feedback) कहते हैं।

(स) शिक्षक-प्रशिक्षक भी छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि प्रदान कर सकता हैं। शिक्षक-प्रशिक्षक प्रतिपुष्टि का आधार भी निरीक्षण प्रपत्र रहता है।

प्रतिपुष्टि के माध्यम से छात्राध्यापक द्वारा पढाये गये पाठ की अच्छाइयों एवं त्रुटियों से उसको अवगत कराया जाता है। इस सत्र को समालोचना या प्रतिपुष्टि सत्र (Critique or feedback session) कहते हैं।

8. प्रतिपुष्टि के माध्यम से प्राप्त सुझावों के आधार पर छात्राध्यापक अपने पाठ को पुन सुधारता है। इस सोपान को पुनर्नियोजन (Replan Session) कहते हैं। इस समय भी पाठ का पर्यवेक्षण किया जाता है।
9. पुन: शिक्षण के पश्चात सातवें सोपान की तरह छात्राध्यापक को प्रतिपुष्टि प्रदान की जाती है और उसकी अच्छाइयों एवं त्रुटियों से छात्राध्यापक को अवगत करा दिया जाता है। प्रतिपुष्टि में छात्राध्यापक पर्यवेक्षक द्वारा सुधार के उपाय भी बताये जाते हैं और उनके आधार पर वह पुन: पाठ नियोजित करता है। इस सत्र को पुन: प्रतिपुष्टि सत्र (Refeedback session) कहते हैं। सूक्ष्म शिक्षण की पूरी क्रियाविधि एवं सोपानों को निम्नलिखित ढंग से भी दर्शाया जा सकता है-

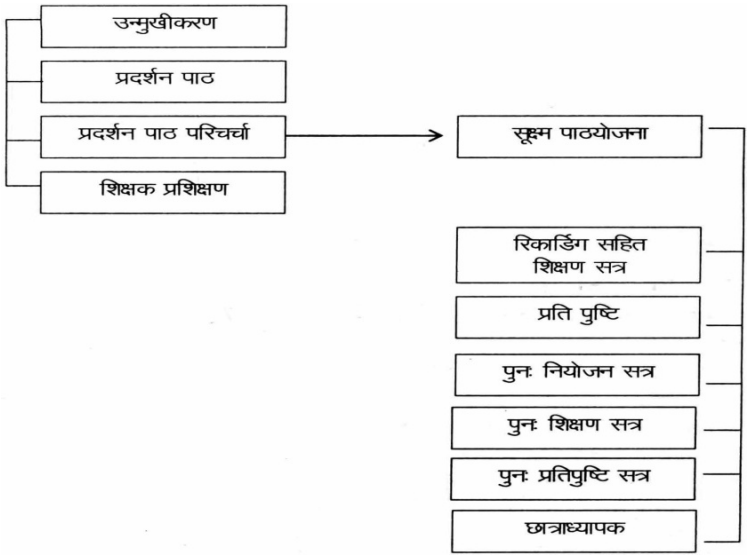

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि मूलत: सूक्ष्म शिक्षण की प्रक्रिया में पांच पद है:-

8. शिक्षण
9. प्रतिपुष्टि
10. पुन: पाठ नियोजन
11. पुन: शिक्षण
12. पुन: प्रतिपुष्टि

इन पाँचों पदों को मिलाकर एक सूक्ष्म शिक्षण चक्र का निर्माण होता है, जिसे निम्नांकित चित्र द्वारा दिखा जा सकता है-

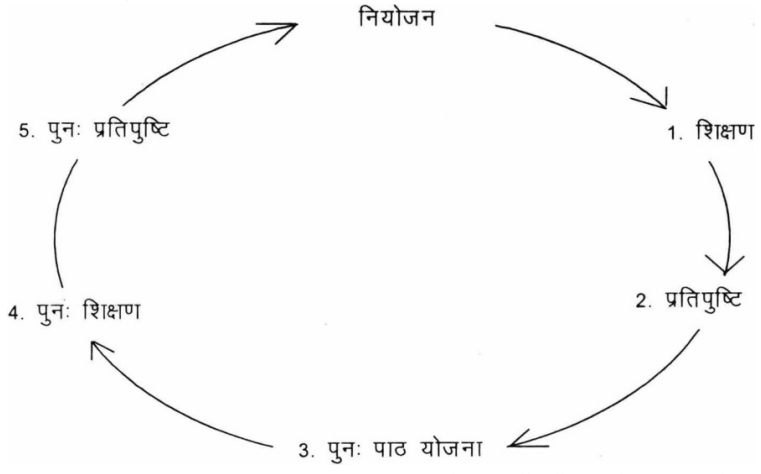

सामान्यत: भारतीय शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रत्येक पद के लिए निम्नलिखित प्रकार से समय का विभाजन किया जाता है-

शिक्षण	–	8 मिनट
प्रतिपुष्टि	–	6 मिनट
पुन: पाठ नियोजन	–	12 मिनट
पुन: शिक्षण	–	6 मिनट
पुन: प्रतिपुष्टि	–	6 मिनट

14.4 शिक्षण कौशल (Teaching Skills)

14.4.1 शिक्षण कौशल की परिभाषा (Definition of Teaching Skills)

शिक्षण की क्रिया में शिक्षक को निपुण होने के लिए यह आवश्यक है कि वह शिक्षण व्यवहारों के प्रदर्शन में दक्ष हो। वास्तव में शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक द्वारा विभिन्न प्रकार के व्यवहारों का प्रतिपादन होता है। समान शिक्षण व्यवहारों के समूह को शिक्षण कौशल कहते है। अत: एक शिक्षण कौशल समान व्यवहारों का समूह है, जो किसी निश्चित शिक्षण उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए शिक्षण द्वारा कक्षा में प्रदर्शित किये जाते है। आज के वैज्ञानिक युग में शिक्षण प्रक्रिया को भी वैज्ञानिक ढंग से देखा जा सकता है। शिक्षण प्रक्रिया विभिन्न शिक्षण कौशलों का समूह है। यदि शिक्षक या छात्राध्यापक के शिक्षण का निरीक्षण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जायेगा कि शिक्षक या छात्राध्यापक शिक्षण प्रक्रिया के कौन से भाग अथवा शिक्षण कौशल का उपयोग कम रहा है या अनुचित ढंग से प्रयोग कर रहा है। शिक्षक-प्रशिक्षक पूरे शिक्षण प्रक्रिया में सुधार लाने का निर्देश न देकर एक या कुछ शिक्षण कौशलों में सुधार लाने का निर्देश दे सकता है।

14.4.2 शिक्षण कौशलों की सूची (List of Teaching Skills)

विभिन्न विद्वानों द्वारा शिक्षण कौशलों की सूचियाँ प्रस्तुत की गयी है। कुछ मुख्य सूचियाँ निम्नलिखित है -

(क) ऐलेन और रेयान (1969) ने विभिन्न विषयों एवं विभिन्न स्तरों पर प्रयुक्त होने वाले विभिन्न शिक्षण कौशलों की सूची प्रस्तुत की है, जो निम्नलिखित है, लेकिन किसी क्रम: में नही है-

1. उद्दीपन परिवर्तन (Stimulus Variation)
2. प्रस्तावना (Set Introduction)
3. समापन (Closure)
4. मौन एवं अशाब्दिक संकेत (Silence and Non Verbal Cues)
5. 5.छात्र सहभाग का पुनर्बलन (Reinforcement of Pupil's Participation)
6. प्रश्न प्रवाह (Fluency in Question)
7. अनुशीलन प्रश्न (Probing Question)
8. उच्चस्तरीय प्रश्न (Higher Order Question)
9. अपसारी प्रश्न (Divergent Question)
10. अवधानात्मक व्यवहार पहचानना (Recognizing Attending Behaviour)
11. स्पष्टीकरण एवं उदाहरण प्रयोग (Illustrating and use Examples)
12. व्याख्यान (Lecturing)
13. नियोजित पुनरावृत्ति (Planned Repetition)
14. संचार की पूर्णता (Completeness of Communication)

(ख) केलीफोर्निया विश्वविद्यालय की प्रयोगशाला (1970) द्वारा निम्नलिखित 18 कौशलों की सूची प्रस्तुत की गयी

1. प्रस्तावना (Establishing set)
2. उपयुक्त संदर्भ निर्माण (Establishing Appropriate frames of Reference)
3. समापन (Achieving closure)
4. अवधान पहचान एवं ध्यानाकर्षण (Recognizing and Obtaining Attending Behaviour)
5. प्रतिपुष्टि प्रदान करना (Providing Feedback)
6. पुरस्कार एवं दण्ड प्रयोग (Employing Reward and Punishment)
7. छात्र सहभाग नियन्त्रण (Control of Pupil's Participation)
8. पुनरावृत्ति (Repetition)
9. स्पष्टीकरण एवं उदाहरण प्रयोग (Illustrating and use of Examples)
10. प्रश्न पूछना (Asking Question)
11. उच्चस्तरीय प्रश्न प्रयोग (Use of Higher Order Question)

12. अनुशीलन प्रश्न प्रयोग (Use of Probing Question)
13. मौन एवं अशाब्दिक संकेत (Silence and Nonverbal cues)
14. छात्र उपनीत प्रश्न (Student Initiated Question)
15. अभिव्यक्ति पूर्णता (Student Initiated Question)
16. उद्दीपन परिवर्तन (Varying Stimulus)
17. व्याख्या (Lecturing)
18. पूर्व संकेत (Pre-cueing)

(ग) पासी (1976) ने अपनी पुस्तक Becoming Better Teacher:A Microteaching Approach में निम्नलिखित 13 कौशलों की विवेचना की है -

1. अनुदेशीय उद्देश्य लेखन (Writing Instructional Objectives)
2. पाठ प्रस्तावित करना (Introducing a Lesson)
3. प्रश्न प्रवाह (Fluency in Question)
4. अनुशीलन प्रश्न (Probing Question)
5. व्याख्या (Explaining)
6. दृष्टान्त व्याख्या (Illustrating with Examples)
7. उद्दीपन परिवर्तन (Stimulus Variation)
8. मौन एवं अशाब्दिक संकेत (Silence and Nonverbal Cues)
9. पुनर्बलन (Reinforcement)
10. छात्र सहभाग में वृद्धि (Increasing Pupil Participation)
11. श्याम पट्ट प्रयोग (Using blackboard)
12. समापन (Achieving Closure)
13. अवधानात्मक व्यवहार पहचानना (Recognizing Attending Behaviour)

14.4.3 शिक्षण कौशलों का अभिज्ञान (Identification of Teaching Skills)

शिक्षण कौशलों के अभिज्ञान में निम्नलिखित विधियाँ प्रयोग में लायी जाती है -

(क) अवलोकन विधि (Observation Method)

इस विधि के प्रयोग से विभिन्न अवलोकन विधियों का विकास किया गया है। साइमन एवं बायर (1967-69) ने इस विधि के प्रयोग से शाब्दिक एवं अशाब्दिक कक्षीय अन्तःक्रियाओं के विश्लेषण हेतु अवलोकन विधि का उपयोग किया। बैरल एवं सहयोगियों ने शिक्षण व्यवहारों की एक सारणी बनाई, जिसके आधार पर प्रक्रिया का अवलोकन किया गया।

इस विधि के अन्तर्गत बहुत से अध्यापकों द्वारा विभिन्न प्रकार की दशाओं में शिक्षण कार्य का अवलोकन किया जाता है। उनके द्वारा किये गये विभिन्न प्रकार के कार्यो एवं व्यवहारों की सूची बना ली जाती है।

विभिन्न अध्यापकों के शिक्षक का विभिन्न दशाओं में शिक्षण कार्य के अवलोकन से यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि सामान्यत: शिक्षण में किन-किन शिक्षण कौशलों का उपयोग आवश्यक है।

(ख) साक्षात्कार एवं तर्क-वितर्क विधि (Interview and discussion Method)

इस विधि का प्रयोग स्वतन्त्र रूप से तथा अवलोकन विधि के सहायक के रूप में शिक्षण कौशलों के पहचान हेतु किया जाता है। इनमें शिक्षकों के साथ शिक्षण कार्य के विषय में साक्षात्कार एवं तर्क-वितर्क किया जाता है, जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षण कौशलों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है।

(ग) पाठ्यक्रम एवं उद्देश्य विश्लेषण विधि (Curriculum and Objective Analysis Method)

पाठ्यक्रमों एवं उद्देश्यों का विश्लेषण किया जाता है। किसी विशेष उद्देश्य प्राप्ति हेतु किस प्रकार का पाठ्यक्रम और किस प्रकार का शिक्षण होना चाहिए। इसका विश्लेषण करके शिक्षण कौशलों की सूची बनायी जाती है। इसमें शिक्षकों के अनुभव, शैक्षिक अनुसंधानों के निष्कर्ष एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर ही निर्णय लिया जाता है।

(घ) शिक्षक, छात्र एवं प्रधानाध्यापक सम्मति विधि (Method Based on opinion of Teachers, Pupils & Headmaster)

यह विधि अन्य विधियों की तुलना में अधिक उपयोगी नहीं है क्योंकि यह विधि अत्यन्त ही व्यक्तिनिष्ठ है। इसमें शिक्षकों, छात्रों एवं प्रधानाध्यापकों में उत्तम शिक्षण की विशेषताओं एवं गुणों के विषय में राय ली जाती है और उसके आधार पर शिक्षण कौशलों की सूची बना ली जाती है।

14.5 सूक्ष्म शिक्षण में प्रतिपुष्टि (Feedback in Micro Teaching)

प्रतिपुष्टि सूक्ष्म शिक्षण का महत्वपूर्ण अंग है। इस नवीन पद्धति में पर्यवेक्षक छात्राध्यापक द्वारा शिक्षण में की गयी अनुक्रियाओं के आधार पर प्रतिपुष्टि प्रदान करता है, जो छात्राध्यापक के लिए उद्दीपन की तरह कार्य करता है, प्रतिपुष्टि प्राप्त करने के पश्चात् छात्राध्यापक अपने शिक्षण में विकास के लिए व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। शिक्षण में सुधार लाने हेतु प्रतिपुष्टि निम्नलिखित प्रकार से उपयोगी है:

1. प्रतिपुष्टि से छात्राध्यापक को यह पता चलता है कि उसके द्वारा पढाया गया पाठ किस हद तक आदर्श पाठ के समीप है।
2. प्रतिपुष्टि से छात्राध्यापकों को उनके शिक्षण की अच्छाइयों एवं त्रुटियां के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।
3. पर्यवेक्षक प्रतिपुष्टि के माध्यम से उत्तम शिक्षण के लिए छात्राध्यापकों का उत्साहवर्धन कर सकता है।

4. प्रतिपुष्टि से छात्राध्यापकों को यह भी पता चलता है कि अगले शिक्षण सत्र में उसे कौन-कौन सी क्रियाओं को दोहराना नहीं है।
5. प्रतिपुष्टि से पाठयोजना में सुधार के लिए आवश्यक निर्देश प्राप्त होते हैं।

शैक्षिक प्रौद्योगिकी के विकास के साथ-साथ प्रतिपुष्टि प्रदान करने के विभिन्न नये तरीकों का प्रयोग होने लगा है। कुछ प्रमुख तरीके निम्नलिखित है:

(क) टेप रिकार्डर या टेलीविजन द्वारा छात्राध्यापकों को प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है। इस विधि में छात्राध्यापक स्वयं ही टेपरिकार्डर अथवा टेलीविजन चलाकर प्रतिपुष्टि प्राप्त कर सकते हैं।

(ख) शिक्षक-प्रशिक्षक सम्बन्धित कौशल के लिए निरीक्षण प्रपत्र के अनुसार छात्राध्यापक के शिक्षण का मूल्यांकन करता है और उसके आधार पर प्रतिपुष्टि प्रदान करता है।

(ग) यदि शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं में प्रशिक्षक पर्यवेक्षकों की कमी हो, और टेपरिकार्डर, टेलीविजन जैसे साधन तो ऐसी दशा में प्रतिपुष्टि सह छात्राध्यापकों द्वारा दी जा सकती है। शिक्षण सत्र के समय निरीक्षण तालिका की सहायता से छात्राध्यापकों के शिक्षण का मूल्यांकन किया जाता है और शिक्षण के गुण, दोषों को प्रतिपुष्टि के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार की प्रतिपुष्टि को सह-छात्राध्यापक प्रतिपुष्टि कहते है।

14.5.1 अन्तरित प्रतिपुष्टि बनाम विलम्ब प्रतिपुष्टि (Immediate feedback versus Delayed Feedback)

प्रतिपुष्टि की प्रक्रिया दो प्रकार की होती है -

कुछ विद्वान प्रतिपुष्टि को एक पुरस्कार के रूप में मानते है और उसकी क्रियाविधि को पुनर्बलन सिद्धांत के रूप में वर्णित करते है। दूसरे विद्वान एक पुनर्बलन न मानकर प्रतिपुष्टि को अधिगमकर्ता के व्यवहार में वांछित सुधार लाने के लिए सूचनायें प्रदान करने का माध्यम समझते है। अभिक्रमित अनुदेश (Programmed Instruction) एवं शिक्षण मशीन के प्रतिपादक पुनर्बलन और प्रतिपुष्टि को अपने माध्यम का महत्वपूर्ण अंग समझते है। उनके अनुसार अन्तरित प्रतिपुष्टि (Immediate Feedback) के प्रयोग से विलम्ब प्रतिपुष्टि की तुलना में अधिक होता है। कुछ अन्य शोधकर्त्ता भी प्रतिपुष्टि की प्रक्रिया को एक पुनर्बलन के रूप में लेते है। किन्तु उनके अनुसार अनन्तरित प्रतिपुष्टि के स्थान पर विलम्ब प्रतिपुष्टि अधिगम को अधिक सुविधाजनक बनाती है। पुनर्बलन सिद्धांत के अनुसार अनन्तरित प्रतिपुष्टि के प्रयोग से अधिगम की गति बढ जाती है, किन्तु सीखे हुये ज्ञान एवं कौशलों के स्थायीकरण में विलम्ब प्रतिपुष्टि ही सहायक सिद्ध होता है। विलम्ब प्रतिपुष्टि के प्रयोग से अधिगम का विस्मरण नहीं होता है।

14.6 सूक्ष्म शिक्षण में अनुरूपण (Simulation in Micro-Teaching)

जब बनावटी दशाओं में कुछ महत्वपूर्ण संचार कौशलों के अभ्यास के लिए शिक्षण किया जाए तो इसे शिक्षण में सरंचना कहते है। सूक्ष्म शिक्षण में सरंचना द्वारा एक ही वर्ग के छात्राध्यापक, छात्र, शिक्षक और पर्यवेक्षक तीनों का कार्य प्रतिपादित कर सकते है और इस प्रकार कक्षा में मूल कक्षा की तरह वातावरण उत्पन्न हो सकता है।

संरचना का प्रयोग सूक्ष्म शिक्षण में यह मानकर किया जाता है कि कुछ अन्य कौशलों की तरह शिक्षण कौशलों में भी परिवर्तन लाया जा सकता है। टेनासी और अर्विन (1969) के अनुसार संरचना मूल दशाओं का प्रस्तुतीकरण है। फिंक (1973) ने संरचना को नियन्त्रित वास्तविकता का प्रस्तुतीकरण बताया है।

फ्लैंडर्स (1970) ने शिक्षण में संरचना के प्रयोग के लिए निम्नलिखित सोपानों का उल्लेख किया है-

1. प्रत्येक व्यक्ति को अक्षर अ, ब, स, द इत्यादि से सम्बोधित किया जा सकता है। इनका कार्य भी एक समय चक्र के अनुसार कभी कार्यकर्ता या निरीक्षक के रूप में बदलता रहता है।
2. जिस कौशल का अभ्यास करना है, उसको विवेचना द्वारा समझा जाता है तथा किसी विशेष कौशल के लिए उपयुक्त प्रकरणों के चयन के लिए सलाह दी जाती है।
3. कौन वार्तालाप शुरू करेगा, कौन बीच में आयेगा और कौन क्रिया को समाप्त करेगा, इन सब बातों का निर्णय शिक्षण के पूर्व में ही निश्चित कर लिया जाता है।
4. मूल्यांकन की विधि अंकित करने वाले न्यादर्श और अंकित करने की विधि निश्चित कर ली जाती है।
5. प्रथम अभ्यास सत्र के पूर्ण होने पर कार्यकर्ता को प्रतिपुष्टि दी जाती है। आवश्यकतानुसार द्वितीय सत्र की क्रियाविधि में परिवर्तन किया जा सकता है।
6. यदि आवश्यकता होती है, तो कोई भी कार्यकर्ता क्रियाविधि एवं प्रकरण बदलकर अगले कौशल के लिए चला जाता है।

14.6.1 सूक्ष्म शिक्षण में अनुरूपण से लाभ (Benefits of Simulation in Micro Teaching)

आज सूक्ष्म शिक्षण में संरचना का व्यापक रूप से प्रयोग हो रहा है। संरचना से सूक्ष्म शिक्षण में निम्नलिखित लाभ है

1. जब छात्राध्यापक बनावटी कक्षा में अध्यापक का स्थान ग्रहण करता है तो वास्तविक कक्षा की तुलना मे कम परेशानियों का सामना करना पडता है क्योंकि बनावटी कक्षा में उसके सहपाठी छात्राध्यापक ही छात्र का कार्य करते है।
2. पर्यवेक्षक के रूप में छात्राध्यापक जब कार्य करता है तो उसको कौशल के सभी घटकों के बारे में जानकारी हो जाती है और साथ ही साथ प्रत्येक घटक को पूरा करने के लिए प्रतिपादित करने वाले व्यवहारों की भी जानकारी हो जाती है। जब छात्राध्यापक पर्यवेक्षक से अपना स्थान बदलकर शिक्षण का कार्य करता है तो सभी घटकों का यथासम्भव उचित प्रयोग करने का प्रयास करता है।
3. जब छात्राध्यापक छात्र के रूप में कक्षा में बैठता है तो उसे छात्रों की कठिनाइयों और समस्याओं के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। एक छात्र अध्यापक से क्या उम्मीदें रखता है, इसकी पूर्ति वह स्वयं अध्यापन करते समय करता है।
4. संरचना के प्रयोग से शिक्षण सरल और चुनौतियों से रहित हो जाता है। छात्राध्यापकों को शिक्षण के समय किसी प्रकार के भय का आभास नहीं होता है।

5. छात्राध्यापकों के शिक्षण अभ्यास के समय वास्तविक दशाओं में छात्र उपलब्ध न होने के कारण उत्पन्न समस्याओं के समाधान में संरचना एक लाभकारी युक्ति है।
6. संरचना में खेल की भावना से कार्य किया जाता है, इसलिए खेल-खेल में कठिन से कठिन कौशलों का प्रशिक्षण दिया जाता है।
7. आवश्यकता पड़ने पर संरचना को बार-बार दुहराया जा सकता है। इस प्रकार कमजोर छात्राध्यापकों के लिए सूक्ष्म शिक्षण चक्र का नियोजन किया जा सकता है।
8. संरचना अभ्यास में किसी का नुकसान नही होता है, जबकि वास्तविक कक्षा में अभ्यास करने से छात्रों का नुकसान होने की सम्भावना रहती है।
9. संरचना से सक्रिय एवं स्पष्ट सहभाग को बढ़ावा मिलता है। छात्राध्यापक आलोचक छात्र, अध्यापक की भूमिका का निर्वाह करते-करते निर्भीक हो जाता है तथा शिक्षण कौशलों से पूर्णरूपेण परिचित हो जाता है।

14.7 सूक्ष्म शिक्षण की उपयोगितायें (Application of Micro Teaching)

सूक्ष्म शिक्षण का उपयोग निम्नलिखित क्षेत्रों में किया जाता है -

1. पूर्व सेवा शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में छात्राध्यापकों को शिक्षण कौशलों में दक्षता प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षण देने के लिए।
2. सेवारत शिक्षकों को उन शिक्षण कौशलों में जिनमें वे दक्ष नहीं है, प्रशिक्षण देने के लिए।
3. शिक्षण के अतिरिक्त अन्य कौशलों के प्रशिक्षण के लिए भी सूक्ष्म शिक्षण का प्रयोग किया जा सकता है।
4. सेना में विशेषकर के विमान चालकों, चिकित्सकों, खिलाड़ियों आदि के प्रशिक्षण में भी सूक्ष्म शिक्षण का प्रयोग किया जा सकता है।

14.8 सारांश (Summary)

सूक्ष्म शिक्षण प्रशिक्षण के क्षेत्र में एक नवाचार है। इसके अन्तर्गत प्रशिक्षार्थियों में अभ्यास पाठ के पूर्व महाविद्यालय में ही अभिरूपित परिस्थितियों में शिक्षण कौशलों का विकास किया जाता है ताकि वे प्रत्येक शिक्षण कौशल में दक्ष हो जावे।

सूक्ष्म शिक्षण चक्र होता है, जिसमें प्रत्येक विद्यार्थी को तब तक सूक्ष्म शिक्षण की प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। जब तक कि वो शिक्षण कौशल में दक्ष न हो जाये।

शिक्षण कौशल शिक्षक के शिक्षण व्यवहार होते है। ये अनेक प्रकार के होते हैं जैसे पाठोपस्थापना कौशल, प्रश्न कौशल, उदाहरण कौशल, पुनर्बलन कौशल इत्यादि।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. सूक्ष्म शिक्षण किसे कहते है? परिभाषित कीजिये।
   What is Micro teaching? Define it.

2. सूक्ष्म शिक्षण चक्र किसे कहते है? संक्षिप्त में चर्चा करें।
What is Micro Feeding Cycle? Discuss it in brief.

3. आप शिक्षण कौशल सूक्ष्म शिक्षण द्वारा कैसे विकसित करेंगे।
How you will develop teaching skills through Micro Teaching.

14.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

Passi, B.K. : Becoming Better Teacher, Baroda

इकाई-15

शिक्षण प्रतिमान (Models of Teaching)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objective)

15.1 प्रस्तावना
(Introduction)

15.2 शिक्षण प्रतिमान की परिभाषा
(Definition of Models of Teaching)

15.3 शिक्षण प्रतिमान की विशेषताएं
(Characteristics of Model of Teaching)

15.4 शिक्षण प्रतिमान और परम्परागत शिक्षण विधि में अन्तर
(Difference between Teaching Models and Traditional Method of Teaching)

15.5 शिक्षण प्रतिमानों का वर्गीकरण
(Classification of Models of Teaching)

15.6 शिक्षण प्रतिमान से सम्बंधित शब्दावलियाँ
(Terms Related to Models of Teaching)

15.7 सारांश
(Summary)

15.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

15.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त विद्यार्थी -

- शिक्षण प्रतिमान को परिभाषित कर सकेंगे तथा शिक्षण प्रतिमान के आवश्यक गुणों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षण प्रतिमान की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे।
- शिक्षण प्रतिमान और परम्परागत शिक्षण विधि में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
- शिक्षण प्रतिमान का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- उदाहरण सहित शिक्षण से सम्बन्धित शब्दावलियों का अर्थ लिख सकेगे।

15.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शिक्षण की गुणात्मकता एवं उसका स्तर महत्वपूर्ण समझे जाते है। वर्तमान समय में ऐसा अनुभव किया जाने लगा है। शिक्षा मनोविज्ञान का केन्द्र 'अधिगम' की अपेक्षा 'शिक्षण' हो गया है चूंकि 'शिक्षण' की कुछ अपनी समस्याएँ हैं, जिनके समाधान द्वारा शिक्षण की गुणात्मकता को बढ़ाया जा सकता है। इसीलिए शिक्षण सिद्धान्तों के प्रतिपादन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी और इस दिशा में कुछ प्रयास किये जा रहे है और शिक्षण प्रतिमानों का विकास हुआ है। 'शिक्षण प्रतिमान' शिक्षण के सम्भावित सिद्धान्त हो सकते है। शिक्षण व्यूह रचना से कक्षा-कक्ष में शिक्षक शैक्षिक वातावरण उत्पन्न कर बालक को अधिगम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए तैयार करता है। इस प्रकार शिक्षण व्यूह रचना ही शिक्षण प्रतिमान को आधार प्रदान करती है। इस इकाई के अन्तर्गत शिक्षण प्रतिमान के सन्दर्भ में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

15.2 शिक्षण प्रतिमान की परिभाषा (Definition of Models of Teaching)

ज्वायस एवं वेल (1978) ने शिक्षण प्रतिमान को परिभाषित करते हुए लिखा है कि "शिक्षण प्रतिमान एक योजना या पद्धति है, जिसको पाठ्यक्रम निर्माण (अध्ययन की लम्बी अवधि के पाठ्यक्रम) अनुदेशन सामग्री निर्मित करने एवं कक्षा तथा अन्य वातावरण में अनुदेशन को निर्देशित करने के लिए प्रयोग में लायी जाती है।"

यदि शिक्षण प्रतिमान की प्रकृति का विश्लेषण करें तो निम्नलिखित चार गुण शिक्षण प्रतिमान को विशिष्टता प्रदान करते हैं

1. शिक्षण प्रतिमान किसी सत्यापित सिद्धांत पर आधारित होता है।
2. शिक्षण प्रतिमान क्रमबद्ध सोपानों का बना होता है।
3. शिक्षण प्रतिमान के सोपानों को हूबहू दोहराया जा सकता है।
4. शिक्षण प्रतिमान के द्वारा कुछ निश्चित शिक्षण सामग्री को उत्पन्न किया जा सकता है।

उपरोक्त आवश्यक गुणों के आधार पर शिक्षण प्रतिमान को परिभाषित करते हुए सनसनवाल एवं सिंह (1991) ने लिखा है, "शिक्षण प्रतिमान विस्तृत रूप में वर्णित एक योजना है, जिसमें सिद्धांतों पर आधारित, क्रमबद्ध एवं दोहराने योग्य सोपान दिये होते है। जिनका प्रयोग करके शिक्षक अधिगमकर्ता में कुछ निश्चित शिक्षण प्रभावों को उत्पन्न कर सकता है।"

15.3 शिक्षण प्रतिमान की विशेषताएं (Characteristics of Models of Teaching)

1. शिक्षण प्रतिमान सत्यापित सिद्धांतों पर आधारित होते हैं। यही कारण है कि प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान की प्रकृति वैज्ञानिक होती है।

2. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान में परिभाषित एवं क्रम से व्यवस्थित सोपान होते है। निश्चित क्रम में सोपानों की व्यवस्था होने के कारण शिक्षण प्रतिमान को दोहराया जा सकता है।
3. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान के अपने निश्चित शिक्षण प्रभाव होते है।
4. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान में शिक्षक एवं छात्रों के कार्यो एवं उत्तरदायित्वों को निर्धारित किया जाता है।
5. प्रतिमान के क्रियान्वयन के लिए कम से कम आवश्यक सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है।
6. शिक्षण प्रतिमान छात्र केन्द्रित होते है।
7. शिक्षण प्रतिमानों का प्रयोग करके प्रभावशाली शिक्षण किया जा सकता है।
8. शिक्षण प्रतिमानों की मदद से अनुदेशन सामग्री का विकास एवं पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा सकता है।

15.4 शिक्षण प्रतिमान एवं परम्परागत शिक्षण विधि में अन्तर (Difference Between Models of Teaching and Traditional Method of Teaching)

शिक्षण प्रतिमान (Models of Teaching)	**परम्परागतशिक्षण विधि (Traditional Methods of Teaching)**
1. प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान किसी न किसी सत्यापित सिद्धान्त पर आधारित होता है।	1. परम्परागत शिक्षण विधि पर आधारित नहीं होती है।
2. इसमें उच्च स्तरीय संरचना होती है।	2. यह संरचित नहीं होता है।
3. शिक्षण प्रतिमानों को दूसरे शिक्षकों द्वारा भी दूसरी कक्षाओं में हुबहू दोहराया जा सकता है।	3. परंपरागत शिक्षण विधि को एक ही शिक्षक द्वारा उसी कक्षा में हुबहू नहीं दोहराया जा सकता।
4. शिक्षण प्रतिमान क्रमबद्ध सोपानों से निर्मित होता है।	4. इसमें निर्धारित सोपान नहीं होते है।
5. शिक्षण प्रतिमान क्रमबद्ध सोपानों से निर्मित होता है।	5. इसमें निश्चित नियम नहीं होते है।
6. छात्रों अध्यापक के उत्तरदायित्व निर्धारित होते हैं।	6. छात्रों एवं अध्यापक के उत्तरदायित्व का निर्धारण नहीं होता है।
7. शिक्षण प्रतिमानों का केंद्र बिन्दु छात्र होता है।	7. परम्परागत शिक्षण विधि छात्र एवं पाठ्य वस्तु केन्द्रित होती है।

15.5 शिक्षण प्रतिमानों का वर्गीकरण (Classification of Models of Teaching)

शिक्षण प्रतिमानों द्वारा प्राप्त किये जाने वाले शिक्षण उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ज्वायस एवं वेल (1972) ने शिक्षण प्रतिमानों को निम्नलिखित चार समूहों में वर्गीकृत किया है-

1. सूचना प्रक्रम प्रतिमान (Information Processing Models)
2. सामाजिक अन्तर्क्रिया प्रतिमान (Social Interaction Models)
3. वैयक्तिक प्रतिमान (Personal Models)
4. व्यवहार परिवर्तन प्रतिमान (Behaviour Modification Models)

15.5.1 सूचना प्रक्रम प्रतिमान (Information Processing Models):

व्यक्ति विभिन्न स्त्रोतों से जानकारी प्राप्त करता है। जानकारी को मस्तिष्क से संगठित करने के लिए जो प्रक्रिया होती है, उसे सूचना प्रक्रम कहते है। विभिन्न व्यक्तियों द्वारा प्रक्रम का स्तर भिन्न होता है। सूचना प्रक्रम की प्रमाणिकता निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है

- अधिगमकर्ता का ध्यान केन्द्रण : जानकारी प्राप्त करते समय अधिगमकर्ता का ध्यान प्रस्तुत जानकारी की ओर केन्द्रित होना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि प्रस्तुत जानकारी अधिगमकर्ता के मानसिक स्तर, रूचि एवं पूर्व ज्ञान से सम्बन्धी हो तथा अधिगमकर्ता के लिए उपयोगी भी हो।
- जानकारी की मात्रा एवं प्रस्तुत करने की दर: आवश्यकता से अधिक जानकारी देने से छात्र जानकारी का कुछ ही अंश ग्रहण कर पाते है। इसके कारण सूचना प्रक्रम अप्रभावशाली होता है। अत: प्रभावशाली सूचना प्रक्रम के लिए प्रस्तुत जानकारी की मात्रा एवं दर अधिगमकर्ता के मानसिक स्तर के अनुरूप होनी चाहिए।
- जानकारी का क्रम : सरल एवं परिचित जानकारी छात्र सरलता से ग्रहण कर लेते है। अत: छात्र की परिचित एवं सरल जानकारी को अपरिचित एवं जटिल जानकारी की तुलना में पहले प्रस्तुत करना चाहिए।
- जानकारी को प्रस्तुत करने का माध्यम : आजकल जानकारी प्रस्तुत करने के लिए बहुत सारे माध्यम उपलब्ध है। परिस्थितियों एवं छात्रों के स्तर को ध्यान में रखकर उचित माध्यमों के द्वारा जानकारी का प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिए। इस समूह में आने वाले प्रतिमान निम्नलिखित है।

1. संकल्पना प्राप्ति (Concept Attainment)
2. आगमन चिन्तन (Inductive Thinking)
3. खोज प्रशिक्षण (Inquire Training)
4. वैज्ञानिक खोज (Scientific Inquire)
5. ज्ञानात्मक वृद्धि (Cognitive Growth)
6. अग्रवर्ती संगठक (Advance Organizer)

7. स्मृति (Memory)

15.5.2 सामाजिक अन्तर्क्रिया प्रतिमान (Social Integration Models)

प्रत्येक समाज या समुदाय के कुछ नियम, परम्पराएं, संस्कृति एवं मूल्य होते हैं। व्यक्ति को किसी समाज या समुदाय में उचित सामंजस्य स्थापित करने योग्य बनाने के लिए उसका विकास उस समुदाय की संरचना के अनुसार किया जाना चाहिए। कुछ ऐसे शिक्षण प्रतिमान हैं, जिनके अन्तर्गत व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों से अन्तर्क्रिया करने का, अवसर प्राप्त होता है। जिसके फलस्वरूप उनमें सामाजिक कौशलों का विकास होता है। इन प्रतिमानों को सामाजिक अन्तर्क्रिया प्रतिमान कहते है। निम्नलिखित शिक्षण प्रतिमान इस समूह में आते है-

1. समूह अन्वेषण (Group Inquiry)
2. सामाजिक खोज (Social Inquiry)
3. प्रयोगशाला विधि (Laboratory Method)
4. जूरिस प्रूडेंशिलय खोज (Juris Prudential Inquiry)
5. भूमिका निर्वाह (Role Playing)
6. सामाजिक संरचना (Social Simulation)
7. मूल्य विश्लेषण (Value Analysis)
8. मूल्य विवेचना (Value Dissension)

15.5.3 वैयक्तिक प्रतिमान (Personal Models) :

वैयक्तिक प्रतिमानों का उद्देश्य व्यक्ति को उसकी क्षमताओं के अनुसार स्वयं का विकास करने में मदद करना है। ये प्रतिमान उन प्रक्रियाओं पर बल देते है। जिनके द्वारा व्यक्ति अपनी विशिष्ट वास्तविकताओं का निर्माण एवं संगठन करता है। इस प्रतिमान के द्वारा व्यक्ति के संवेगात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है। इसके साथ-साथ व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के साथ उचित संबंध स्थापित करने एवं सूचना प्रक्रम में सक्षम हो सकता है। इस समूह में आने वाले प्रतिमान निम्नलिखित है-

1. अनिर्देशात्मक शिक्षण (Non-Directive Teaching)
2. चेतना प्रशिक्षण (Awareness Training)
3. साइनेटिक्स (Synetics)
4. संकल्पनात्मक पद्धति (Conceptual System)
5. कक्षीय गोष्ठी (Classroom Meeting)

15.5.4 व्यवहार परिवर्तन प्रतिमान (Behaviour Modification Models) :

इस समूह में आने वाले सभी प्रतिमानों का मुख्य लक्ष्य अधिगमकर्ता के दृश्य व्यवहारों में परिवर्तन लाना है, न कि अन्तर्निहित मनोवैज्ञानिक संरचनाओं एवं व्यवहारों में। शिक्षण,

प्रशिक्षण, अन्तर वैयक्तिक व्यवहारों एवं निदान में इन प्रतिमानों का विभिन्न प्रकार से प्रयोग किया जाता है। वास्तव में ये प्रतिमान उद्दीपनों के नियंत्रण एवं पुनर्बलन के प्रस्तुतीकरण पर आधारित होते है तथा अन्तर क्रियात्मक दशाओं में सफलता पूर्वक, प्रयोग किये जाते है। व्यवहार प्रतिमानों का एक सामान्य गुण यह है कि इनमें अधिगम कार्य को लघु एवं क्रमिक व्यवहारों में विभाजित किया जाता है। इन प्रतिमानों का प्रयोग करते समय प्रारम्भिक कार्य शिक्षक ही करता है। इस समूह के प्रतिमान निम्नलिखित है -

1. आकस्मिकता की व्यवस्था (Value Disenssion)
2. स्वनियन्त्रण (Self Control)
3. शिथिलता (Relaxation)
4. दबाव न्यूनता (Stress Relecation)
5. स्थापन प्रशिक्षण (Assertive Training)
6. अविघ्न प्रशिक्षण (Direct Training)

15.6 शिक्षण प्रतिमान से सम्बंधित शब्दावलियाँ (Terms Related to Method of Teaching)

प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान को समझने के लिए विशिष्ट शब्दावलियों को समझना आवश्यक है। कुछ शब्दावलियाँ जैसे शिक्षण प्रभाव (Instructional effects), पोषक प्रभाव (Nutrient effects), पदयोजना (Syntax), सोपान (Phases), प्रतिक्रिया का सिद्धांत (Principles of reaction), सामाजिक व्यवस्था (Social system), सहायक तन्त्र (Support system), एवं सिद्वांत जांच (Theory checkup), प्रतिमान के सैद्धांतिक पक्ष से सम्बंधित है। कुछ शब्दावलियां जैसे पाठ योजना निर्देशिका (Lesson Plan guide), पाठ योजना प्रारूप (Lesson plan format), कार्यपत्र (Worksheet), प्रतिमान के प्रयोगात्मक पक्ष से संबंधित है। इन शब्दावलियों की विवेचना निम्नलिखित है -

15.6.1 शिक्षण एवं पोषक प्रभाव (Instructional and Nuriturient effects)

शिक्षण प्रतिमान का प्रयोग करने से अधिगमकर्ता में दो प्रकार के प्रभाव उत्पन्न होते है। पहले प्रकार के प्रभाव को शिक्षण प्रभाव कहते है। शिक्षण प्रभाव प्रतिमान के वे प्रभाव हैं, जिनको प्राप्त करने के लिए प्रतिमान का प्रयोग किया जाता है। शिक्षण प्रभाव एक से अधिक भी हो सकते है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के शिक्षण प्रभाव है-

1. संकल्पना की प्रकृति (Nature of concept)
2. संकल्पना निर्माण की पद्धतियों का विकास (Improved concept building)
3. विशिष्ट संकल्पनाओं का अधिगम (Learning of specific concepts)
4. आगमन तर्क का विकास (Development of Inductive Reasoning)

शिक्षण प्रतिमान के वे प्रभाव जिनके लिए प्रतिमान का प्रयोग नही किया गया हो, बल्कि ये शिक्षण प्रतिमान के अतिरिक्त प्रभाव होते है, पोषक प्रभाव कहलाते है। ये भी एक से अधिक हो सकते है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के पोषक प्रभाव है-

(क) विकल्पों के प्रति जागरूकता (Awareness of Alternatives)

(ख) संदिग्ध अवस्था को सहन करना (Tolerance of Ambiguity)

(ग) सम्प्रेषण में तार्किक चिन्तन के प्रति संवेदन शीलता (Sensitivity to logical reasoning in communication)

15.6.2 पद योजना (Syntax)

शिक्षण प्रतिमान के शिक्षण प्रभावों को प्राप्त करने के लिए शिक्षक कक्षा में कुछ क्रियाएं एक क्रम में करता है। क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित क्रियाओं को शिक्षण प्रतिमान की पदयोजना कहते है। उदाहरण के लिए स्वीकृति अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान (Reception Oriented Concept Attainment Model) की पद योजना निम्नलिखित है-

(क) प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण एवं संकल्पना का अभिज्ञान (Presentation of data and identification of concept)

(ख) संकल्पना प्राप्ति का परीक्षण (Testing of attainment of concept)

(ग) चिन्तन पद्धति का विश्लेषण (Analysis of thinking strategy)

15.6.3 सोपान (Phases)

शिक्षण प्रतिमान का प्रयोग करते समय शिक्षक कुछ क्रियाओं को व्यवस्थित करके क्रम में एक साथ प्रस्तुत करता है। क्रियाओं के इस समूह को सोपान कहते है। अतः शिक्षण की प्रतिमान पद योजना में विभिन्न सोपान क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित होते है। उदाहरण के लिए पूर्व में दिये गये तीनों सोपान मिलकर स्वीकृत अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान की पदयोजना बनाते हैं। दूसरे शब्दों में यह कह सकते है कि सोपान शिक्षण प्रतिमान की पदयोजना की इकाई है।

15.6.4 प्रतिक्रिया का सिद्धांत (Principle of Reaction)

शिक्षण प्रतिमान के द्वारा शिक्षण करते समय अधिगमकर्ता सक्रिय होता है और वह कुछ अनुक्रियाएं करता है। ये क्रियाएं कुछ नियमों पर आधारित होती हैं, जिन नियमों को ध्यान में रखकर शिक्षक अधिगमकर्ता की 'अनुक्रियाओं का संचालन करता है, उसे प्रतिक्रिया का सिद्धांत करते है। उदाहरण स्वरूप संकल्पना-प्राप्ति प्रतिमान के निम्नलिखित प्रतिक्रिया के सिद्धांत है -

(क) छात्रों की आवश्यकता के अनुसार शिक्षक और अधिक उदाहरण छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

(ख) शिक्षक छात्रों के विचारों को ध्यानपूर्वक सुनकर यथासम्भव उपयोग में लाता है।

(ग) शिक्षक छात्रों के सुझावों को सहानुभूति पूर्वक स्वीकार करता है।

15.6.5 सामाजिक व्यवस्था (Social System)

प्रत्येक प्रतिमान में अध्यापक और अधिगमकर्ता कुछ कार्य करते है इन कार्यो के द्वारा अध्यापक कक्षा में एक विशिष्ट प्रकार का वातावरण बनाने में सहायक होता है। यह वातावरण शिक्षण प्रभावों को प्राप्त करने में सहायक होता है। अत: सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षण प्रतिमान को ध्यान में रखकर अध्यापक और अधिगमकर्ता की भूमिकाओं का उल्लेख किया जाता है।

उदाहरण के लिए संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान की सामाजिक व्यवस्था निम्नलिखित है-

शिक्षक की भूमिका :

(क) शिक्षक संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के क्रियान्वयन के लिए उदाहरणों अथवा अंसगठित सामग्रियों का चयन अथवा निर्माण करता है। शिक्षक उदाहरणों अथवा अंसगठित सामग्रियों की संख्या एवं अनुरूपता को छात्रों के स्तर, संकल्पना एवं संकल्पना प्राप्ति की पद्धति को ध्यान में रखकर निर्धारित करता है।

(ख) शिक्षक छात्रों के स्तर एवं संकल्पना की प्रकृति को ध्यान में रखकर संकल्पना प्राप्ति के पद्धति का चयन करता है।

(ग) शिक्षक छात्रों के समक्ष उदाहरणों को प्रस्तुत करने के माध्यम का चुनाव करता है।

(घ) संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के विभिन्न सोपानों के अन्तर्गत छात्रों का क्या करना है, शिक्षक इसके लिए छात्रों को निर्देश देता है।

छात्रों की भूमिका :

(क) छात्र शिक्षक द्वारा दिये गये निर्देशों के अनुसार कार्य करता है।

(ख) संकल्पना प्राप्ति की प्रक्रिया में मुख्य बिन्दुओं को छात्र कार्य पत्र में लिखता है।

15.6.6 सहायक तन्त्र (Support System)

कक्षा में शिक्षण प्रतिमान का उपयोग करने में कुछ सामग्री एवं सुविधाओं की आवश्यकता होती है। सामग्री एवं सुविधाओं की मदद से शिक्षक और छात्र प्रतिमान के सोपानों में निहित क्रियाओं को करते है। अत: जिन सामग्री एवं सुविधाओं से प्रतिमान को क्रियान्वित करने में मदद मिलती है, उन्हें सहायक तन्त्र कहते है।

संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के क्रियान्वयन में निम्नलिखित सहायक तन्त्र की आवश्यकता होती है।

(क) शिक्षकों को संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान का प्रयोग करके शिक्षण करने का प्रशिक्षण।

(ख) शिक्षकों के लिए संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान से सम्बंधित अध्ययन सामग्री।

(ग) संकल्पना के उदाहरण।

(घ) संकल्पना के उदाहरणों को प्रस्तुत करने के लिए माध्यम एवं दृश्य श्रव्य साधन।

15.6.7 सिद्धांत जाँच (Theory Checkup)

सिद्धात जांच वह परीक्षण है जिसका प्रयोग करके यह जाना जा सकता है कि किसी व्यक्ति ने प्रतिमान के सैद्धांतिक पहलुओं को किस हद तक समझ लिया है। सिद्धांत जांच को उपलब्धि परीक्षण भी कहा जा सकता हैं सिद्धांत जाँच में बहु विकल्पीय एकान्तर, लघु उत्तरीय प्रकार के प्रश्न रखे जा सकते है। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्नों की संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान की सिद्धांत जाँच में रखे जा सकते है -

(क) बहु विकल्पनीय प्रश्न:

(i) संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान.....वर्ग के अन्तर्गत आता है।

– व्यवहार परिवर्तन

– सामाजिक अन्तर्क्रिया

– वैयक्तिक

– सूचना प्रक्रम

(ii) भाई एक ..... संकल्पना है।

– संयोजक

– वियोजक

– सापेक्ष

– उपरोक्त सभी

(ख) लघु उत्तरीय प्रश्न

(i) अमूर्त और मूर्त संकल्पना में एक अन्तर लिखिए।

(ii) अंसगठित सामग्री प्रतिमान के सोपानों का नाम क्रम से लिखिए।

(iii) ब्रूनर द्वारा प्रस्तुत संकल्पना प्राप्ति के स्तरों का नाम लिखिए।

(ग) एकान्तर प्रश्न

(i) चयन अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान में नामांकित उदाहरण प्रस्तुत किये जाते है।
सही / गलत

(ii) ज्ञान को समझने के लिए संकल्पनाओं की प्राप्ति आवश्यक है।
सही / गलत

15.6.8 पाठ योजना निर्देशिका (Teaching Analysis Guide)

शिक्षण प्रतिमान का सफल प्रयोग करने के लिए पाठ योजना बनानी होती है। प्रत्येक प्रतिमान से सम्बन्धित पाठ योजना बनाने के लिए कुछ विशिष्ट निर्देशों की आवश्यकता होती है। जब इन निर्देशों को एक क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता हैं तो इसे पाठ योजना निर्देशिका कहते हैं इससे पाठ योजना बनाने में सहायता मिलती है।

15.6.9 पाठ योजना प्रारूप (Lesson Plan Format)

पाठ योजना प्रारूप वह रूपरेखा है जिसका प्रयोग करके शिक्षक पाठ योजना निर्देशिका में दिये गये क्रम के अनुसार पाठ से सम्बंधित आवश्यक जानकारी को व्यवस्थित करके पाठ योजना का निर्माण करता है। प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान का पाठ योजना प्रारूप अलग-अलग होता है।

उदाहरण के तौर पर स्वीकृत अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान के लिए पाठ योजना प्रारूप निम्नलिखित है :

अध्यापक का नाम.....
संस्था का नाम.....
विषय.....प्रकरण.....
दिनांक.....कक्षा.....

शैक्षिक उद्देश्य

1.

2.

3.

4.

संकल्पना का नाम :

संकल्पना का प्रकार :

संकल्पना के आवश्यक गुण :

1.

2.

3.

4.

संकल्पना की परिभाषा :

सकारात्मक उदाहरण :

1.

2.

3.

4.

नकारात्मक उदाहरण :

1.

2.

3.

4.

उदाहरणों में प्रस्तुतीकरण का माध्यम :

प्रथम सोपान : प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण एवं संकल्पना का अभिज्ञान।

(क) स्वीकृत अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान का प्रस्तुतीकरण

(ख) प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण

(ग) गुणों का अभिज्ञान

द्वितीय सोपान : संकल्पना प्राप्ति की जाँच।

(क) उदाहरणों को छात्रों से पूछना।

(ख) उदाहरणों को प्रस्तुत करके छात्रों से संकल्पना की पहचान करवाना।

(ग) संकल्पना का नाम पूछना।

(घ) संकल्पना के आवश्यक गुण पूछना।

(ङ) संकल्पना की परिभाषा पूछना।

तृतीय सोपान : विचार पद्धति का विश्लेषण।

प्रश्न 1.

2.

3.

4.

15.6.10 कार्य पत्र (Worksheet)

प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान के अन्तर्गत अधिगमकर्ता को कुछ निर्धारित क्रियाएं करनी होती है। ये क्रियाएं प्रतिमान के सोपानों के अनुसार होती है। छात्रों को प्रतिमान के विभिन्न सोपानों में निर्धारित क्रियाओं का एक पत्र पर लिखना होता है, जिसे कार्य पत्र कहते है। कार्य पत्र का प्रयोग करने से छात्र सक्रिय रहते है तथा प्रतिमान की विभिन्न क्रियाओं पर उचित ध्यान देते है।

उदाहरण के तौर पर स्वीकृति अभिमुखी संकल्पना प्राप्ति प्रतिमान का कार्यपत्र निम्नलिखित है-

छात्र का नाम .....

संस्था का नाम .....

विषय .....प्रकरण.....

दिनांक .....कक्षा.....

शिक्षक द्वारा प्रस्तुत उदाहरण		गुण / परिकल्पना
सकारात्मक	नकारात्मक	

संकल्पना का नाम .....

संकल्पनाकेआवश्यकगुण .....

संकल्पना की परिभाषा .....

.....

.....

15.6.11 अध्यापन विश्लेषण निर्देशिका (Teaching Analysis Guide)

अध्यापन विश्लेषण निर्देशिका एक अवलोकन प्रपत्र हैं। जिसमें शिक्षण प्रतिमान के सोपानों में निहित शिक्षक की क्रियाओं को शिक्षण व्यवहार के रूप में प्रदर्शित किया गया है। प्रशिक्षण के दौरान अध्यापन विश्लेषण निर्देशिका का प्रयोग करके यह पता लगाया जा सकता है कि शिक्षक ने प्रतिमान के किन सोपानों का प्रयोग सफलता पूर्वक किया तथा किन सोपानों में असफल रहता। अत: इसे प्रतिपुष्टि देने की युक्ति (Feedback device) के रूप में प्रयोग कर सकते है। इसके अतिरिक्त प्रतिमान का प्रयोग करने में शिक्षक किस हद तक दक्ष है, इसका भी पता अध्ययन विश्लेषण निर्देशिका की सहायता से लगाया जा सकता है।

जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है कि अध्ययन विश्लेषण निर्देशिका में शिक्षण व्यवहार कथन के रूप में व्यक्त किया जाता है। प्रत्येक कथन के लिए मापनी का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए शिक्षक अप्रदर्शित व्यवहारों की आवश्यकता का मूल्यांकन करने के लिए निम्नलिखित मापनी का प्रयोग किया जा सकता है -

- आवश्यक नहीं (आ न)
- बहुत कम आवश्यक (ब क आ)
- कम आवश्यक (क आ)
- औसत आवश्यक (औ आ)
- अधिक आवश्यक (अ आ)
- बहुत अधिक आवश्यक (ब अ ओ)

शिक्षक द्वारा प्रदर्शित व्यवहारों की प्रभावशीलता का मापन करने के लिए निम्नलिखित मापनी का प्रयोग किया जा सकता है-

- बहुत कम प्रभावशाली (ब क प्र)
- कम प्रभावशाली (क प्र)
- औसत प्रभावशाली (औ प्र)
- अधिक प्रभावशाली (अ प्र)
- बहुत अधिक प्रभावशाली (ब अ प्र)

15.7 सारांश
(Summary)

किसी विशिष्ट रूपरेखा या आदर्श के अनुरूप किसी के व्यवहार एवं क्रिया को ढालने की प्रक्रिया प्रतिमान कहलाती है। इनका सम्बन्ध अनुदेशन से है, जो अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन एवं वांछित अन्तःक्रिया उत्पन्न करने हेतु विशिष्ट प्रकार से नियोजित किये जाते है। शिक्षण प्रतिमान की अनेक विशेषताएँ होती है। इसके प्रमुख तत्व है - केन्द्रीय उद्देश्य, संरचना, सामाजिक प्रणाली एवं सहायक सामग्री है।

शिक्षण प्रतिमान अनेक प्रकार के होते है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. शिक्षण प्रतिमान किसे कहते है? स्पष्ट कीजिये।
   What is Models of Teaching? Explain it.
2. शिक्षण प्रतिमान के तत्वों का उल्लेख कीजिये।
   Discuss the elements of Models of Teaching.
3. शिक्षण प्रतिमान और परंपरागत शिक्षण विधि में अंतर कीजिये।
   Differential between Models of Teaching and Traditional Teaching.
4. शिक्षण प्रतिमानों का वर्गिकरण कीजिये।
   Classify the Teaching Models.

15.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

1. सनसनवाल, डी.एन. एवं सिंह प्रभाकर : शिक्षण प्रतिमान (Models of Teaching) प्रथम भाग, सोसायटी फॉर एज्यूकेशन, रिसर्च एण्ड डेवलेपमेंट, बडौदा, 1991
2. Broudy, L. : Models and Methods of Teaching, Prentice Hall of Australia, Australia, 1985
3. Joyce, B. and Weil, M : Models of Teaching, Prentice Hall Inc, Englewood, New Jersey, 1972
4. Eggen, Paul etal. : Strategies for Teacher Information Processing Models in the classroom, New jersey, 1972

इकाई-16

अन्त: क्रिया विश्लेषण प्रणाली Interaction Analysis System

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)
16.1 प्रस्तावना
(Introduction)
16.2 कक्षा निरीक्षण अनुसूची
(Class Room Observation Analysis Schedule)
16.3 फ्लैण्डर्स अन्तःक्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति
(Flander's Interaction Analysis Category System)
16.4 शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति
(Verbal Interaction Category System)
16.5 सारांश
(Summary)
16.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

16.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी :

16.1 प्रस्तावना
(Introduction)

शिक्षण व्यवहार एक सामाजिक अन्तक्रिया है, जो शिक्षक एवं शिक्षार्थी के परस्पर होती है। कक्षा-कक्ष में होने वाली घटनाओं का क्रमबद्ध निरीक्षण के द्वारा अन्त: क्रिया के सम्बन्ध में जानकारी हासिल होती है।

कक्षा में शिक्षक-छात्र, छात्र-छात्र एवं शिक्षक-समूह के मध्य शाब्दिक सम्प्रेषण होता है। इसका निरीक्षण वैज्ञानिक ढंग से किया जा सकता है। यानि निरीक्षण प्रणाली वह उपयोगी साधन है, जिससे सीखने की परिस्थितियों के चरों की अन्तःक्रिया को पहिचानना वर्गीकरण, मापन तथा अध्यापक किया जाता है। 1930 में एण्डर्सन, हेलन तथा ब्रअर ने इस दिशा में

कार्य किया। 1951 में फ्लैण्डर्स ने भी इस दिशा में कार्य प्रारम्भ किया। इस इकाई में आप उसी के बारे मे अध्ययन करेगें।

16.2 कक्षा निरीक्षण अनुसूची (Class Room Observation Schedule)

हम अपने दैनिक जीवन में निरीक्षण का उपयोग करते हैं। अपने संपर्क में आने वाले व्यक्तियों के बारे में मत, उनके व्यवहार के निरीक्षण के आधार पर ही करते हैं। कक्षा अध्यापन के मूल्यांकन की निरीक्षण ही सर्वाधिक उपयुक्त विधि है। क्रमबद्ध निरीक्षण के द्वारा ही कक्षा में घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं का अध्ययन संभव है। किसी भी अध्यापक के अध्यापन में वांछित सुधार के लिए हमें निरीक्षण पद्धति का ही सहारा लेना होता है विश्लेषण इसके द्वारा क्रमबद्ध निरीक्षण व्यवहारों की पहचान, अध्ययन एवं वर्गीकरण संभव है। अन्तःक्रिया विश्लेषण के पश्चात् अध्यापक को अपने व्यवहार में वांछित परिवर्तन करने के लिए प्रतिपोष प्रदान किया जाता है, जिसके परिणामस्वरुप वह अपने अध्यापन को प्रभावी बनाता हैं। निरीक्षण के लिए अनेकों निरीक्षण अनुसूचियों का विकास हो चुका है। यहाँ दो प्रमुख निरीक्षण अनुसूचियों/पद्धतियों का वर्णन किया गया है.

1. फ्लैण्डर्स कक्षा अन्तःक्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति
2. शाब्दिक अन्तक्रिया वर्ग पद्धति

16.3 फ्लैण्डर्स कक्षा अन्त:क्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति Flander's Interaction Analysis Category System)

कक्षा सम्प्रेषण के लिए क्रमबद्ध अनेक निरीक्षण पद्धतियों का विकास हो चुका है किन्तु इनमें फ्लैण्डर्स की दस वर्ग अन्तःक्रिया पद्धति सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं प्रचलित हैं। फ्लैण्डर्स ने इसका विकास "अध्यापक प्रभाव और छात्र निष्पत"" विषय पर अपने शोध कार्य के लिए किया था। इसका प्रयोग कक्षा अध्यापन के शाब्दिक व्यवहार के निरीक्षण के लिए किया जाता हैं। इसके अंतर्गत कक्षा अध्यापन का निरीक्षण प्रत्येक तीन सैकण्ड में किया जाता हैं। इसे एक वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिक विधि माना गया है।

16.3.1 फ्लैण्डर्स अन्त:क्रिया विश्लेषण के वर्ग-

फ्लैण्डर्स वर्ग पद्धति में दस वर्ग हैं, जिनमें से प्रथम सात वर्ग अध्यापक वार्त्ता के हैं, वर्ग 8 एवं 9 विद्यार्थी वार्त्ता के हैं तथा वर्ग 10 विश्रान्ति अथवा भ्रम के लिए है। इसका संक्षिप्त वर्णन नीचे है :-

परोक्ष प्रभाव (Indirect effects)

1. **अनुभूति अथवा भावना को स्वीकार करता है (Accepts Feeling)** -अध्यापक वार्त्ता बिना किसी आलोचना के विद्यार्थियों की भावना को स्वीकार करता है तथा भावना के स्तर को स्पष्ट

करता है। अनुभूति सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों हो सकती है। अनुभूतियों की भविष्यवाणी करना तथा उन्हें प्रत्यास्मरण करना, इनके अंतर्गत आते है।

2. **प्रशंसा करता है अथवा प्रोत्साहित करता है (Praise & Encourage)** - विद्यार्थियों के कार्य अथवा व्यवहार की प्रशंसा करता है या उन्हें प्रोत्साहित करता है। चुटकुले / परिहास का प्रयोग तनाव कम करने हेतु बिना किसी दूसरे की कीमत पर करता है।
   सर हिलाना या "हूँ" ठीक है कहते जाओ कहना इसके अंतर्गत है।
3. **विद्यार्थियों के विचारों को स्वीकार करता है या उनका प्रयोग करता है (Ask Question)**- विद्यार्थियों द्वारा व्यक्त विचारों को स्पष्ट करता है, उन्हें निर्मित करता है या विकसित करता है, किन्तु जब अध्यापक अपने विचारों को अधिक जोड़कर प्रयुक्त करता है, तब वर्ग 5 पर चले जाइये।
4. **प्रश्न पूछना है (Ak Question)** - प्रविधि अथवा विषय-वस्तु पर इस आशय से प्रश्न पूछता है कि छात्र उत्तर प्रदान करेगा।
5. **प्रत्यक्ष प्रभाव (Direct Effects)**
6. **भाषण अथवा वक्तव्य देना (Lecturing)** - पाठ्यवस्तु अथवा प्रविधि पर अध्यापक तथ्य या राय व्यक्त करता है। स्पष्टीकरण देता है अथवा किसी का उल्लेख करता है।
7. **निर्देश देना (Giving Direction)** - आदेश, समादेश अथवा आज्ञा देना, जिन्हें आशा की जाती है कि छात्र पालन करेंगे।
8. **आलोचना करना या औचित्य का प्रतिपादन (Criticizing & Showing authority)** - कथन जिनका उद्देश्य विद्यार्थियों के आचरण के प्रतिमानों को अस्वीकार से स्वीकार्य बनाना हो, किसी छात्र को चिल्लाकर कक्षा से बाहर निकाल देना, या बताना कि अध्यापक जो कर रहा है व क्यों कर रहा है अत्यधिक स्वचर्चा।
9. **विद्यार्थी वार्त्ता-अनुक्रिया (Pupil Talk-Response)** - छात्र वार्त्ता अध्यापक के उत्तर में विद्यार्थियों की वार्त्ता, अध्यापक संपर्क स्थापित करने में पहल करता है अथवा विद्यार्थियों के कथन की मांग करता है अथवा स्थितियों की संरचना करता है। अपने विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता सीमित रहती है।
10. **विद्यार्थी वार्त्ता, प्रवर्तन / स्वोपक्रम (Pupil Talk- Initiation)**- विद्यार्थी द्वारा प्रारम्भ किया गया वार्तालाप। विद्यार्थी प्रश्न पूछता है अथवा स्पष्टीकरण चाहता है। अगर अध्यापक विद्यार्थी को बुलाना केवल यह संकेत देने के लिए हो कि अब कौन बोलेगा ऐसी स्थिति में निरीक्षक को यह निश्चित करना पड़ेगा कि क्या विद्यार्थी बोलना चाहता था।
11. **विश्रांति अथवा भ्रम (Silence or Confusion)** - विश्रांति, विराम अथवा भ्रम की लघु अवधियां जिसमें निरीक्षक को सम्प्रेषण समझ में नही आता।
    इन सभी वर्गो का विस्तृत वर्णन निम्नानुसार है -

वर्ग 1 :

वर्ग 1 में वे अध्यापक कथन सम्मिलित होते हैं जो कि अभिवृत्ति अथवा अनुभूति के लहजे को बिना डराये, धमकाये स्वीकार अथवा स्पष्ट करते हैं। यह अनुभूति सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही हो सकती है। अध्यापक इसका प्रयोग कभी-कभार ही करते हैं।

उदाहरण 1. प्रश्न पूछने के पश्चात् उत्तर न पाने पर कहता है, क्या आप थोड़े से भ्रमित है?

उदाहरण 2. मुझे आज कक्षा में बहुत उत्साह दिखाई देता है, कहिए विश्रान्ति में क्या हुआ? उदाहरण 1 एवं 2 में अध्यापक छात्रों की भावनाओं एवं अनुभूतियों को स्वीकार करता है। अत: इन्हें वर्ग 1 में अंकित किया जाना चाहिए।

वर्ग 2 :

प्रशंसा एवं प्रोत्साहन वे कथन हैं, जिनमें स्वीकृति के निर्णय का मूल्य समाहित है। उत्तर देते हुए छात्र अथवा छात्रा की ओर सीधे देखना, सहमति में सिर हिलाना और हूँ हां कहना इस बात का द्योतक है कि विद्यार्थी सही दिशा में है और अध्यापक उससे और अधिक तथ्य जानना चाहता है। जिन कथनों में गर्मजोशी एवं मित्रता का भाव हो वर्ग 1 एवं 2 दोनों के लिए प्रयुक्त होती है, किन्तु वर्ग 2 में अध्यापक की स्वीकृति भी होती है।

शिक्षकों ने यह महसूस किया है कि स्वीकृति एक पुरस्कार है तथा दंड की तुलना में नियंत्रण की अधिक उपयोगी विधि है। विस्मय प्रदर्शन करने वाले शब्द जैसे सही, अच्छा, सुंदर इत्यादि का प्रयोग छात्र कथन के समाप्त होने पर प्राय: अपने आप हो जाता है।

उदाहरण : 1

अ - अध्यापक : सीता प्रश्न आठ का उत्तर क्या है?

ब - सीता : 3.2 किलोग्राम सर।

स - सही, राम क्या आप नवे प्रश्न को हल करेंगे।

यहां पर हम अ एवं ब के लिए वर्ग 4 एवं 8 को अंकित करते हैं। स में प्रशंसा भी है एवं छात्र का उत्तर भी है। अत: वर्ग 2, 8 को अंकित किया जाना चाहिए।

वर्ग 3 :

अध्यापक छात्रों द्वारा व्यक्त विचारों की निम्न अनुक्रिया कर सकता है :

अ - छात्रों द्वारा व्यक्त विचारों को दोहराना।

ब - विचार में सुधार करना, पुनर्संगठित करना अथवा स्वयं के शब्दों में व्यक्त करना।

स - विचार का अनुप्रयोग करना, इसका उपयोग निष्कर्ष तक पहुंचने में करना अथवा समस्या के तार्किक विश्लेषण में अगले सोपान पर पहुंचना।

द - छात्र के विचार की अन्य अथवा अध्यापक के पूर्व में व्यक्त विचार से तुलना करना।

इ - छात्रों के समूह अथवा छात्रों द्वारा कहे गये विचारों का सार प्रस्तुत करना।

वर्ग 3 का अधिकाधिक प्रयोग उस समय किया जाता है, जब अध्यापक छात्रों द्वारा व्यक्त विचारों को ज्ञानात्मक उन्मुखीकरण के द्वारा प्रयोग करता है।

अध्यापक द्वारा छात्रों के विचारों पर आश्रित पूछे गये प्रश्नों का अंकन वर्ग 3 में ही होगा न कि वर्ग 4 में।

उदाहरण :

अ - छात्र : किसी वस्तु का मूल्य घट जाने से लोग उस वस्तु को ज्यादा खरीदते हैं।

अध्यापक : राम के विचार में किसी वस्तु का मूल्य घट जाने से लोग उसे ज्यादा खरीदते हैं। सीता क्या तुम इससे सहमत अथवा असहमत हो?

उपरोक्त उदाहरण में अध्यापक छात्र के विचार को स्वीकृत कर अन्य छात्र से उसके बारे में सहमति अथवा असहमति की मांग करता है। अत: इसे वर्ग 3 में अंकित किया जाना चाहिए न कि वर्ग 1 में

वर्ग 4 :

अध्यापक द्वारा प्रश्न पूछने अथवा समस्या प्रस्तुत करने पर वर्ग 4 को अंकित किया जाता है। उन स्थितियों में भी वर्ग 4 का अंकन किया जाता है। जबकि अध्यापक ऐसी क्रिया करता है जिससे उसे उत्तर की अपेक्षा हो।

प्रश्नों की पहचान करना सरल होता है उन स्थितियों में भी जबकि वे खुले हों।

हालांकि अध्यापक के प्रश्नों को वर्ग 1 से 7 तक अंकित किया जा सकता है। वे वस्तुनिष्ठ एवं आलोचना रहित पूछताछ जिसमें अभिवृत्ति एवं संवेग समाहित हो, वर्ग 1 में अंकित किया जाता है। वर्ग 2 में यदि उनका मंतव्य प्रशंसा हो, वर्ग 3 में यदि वे विद्यार्थियों द्वारा पूर्व में व्यक्त विचारों पर आधारित हो। यदि वे वर्णनात्मक हो, जिनमे उत्तर की अपेक्षा न हो, वर्ग 6 में यदि वे आदेश हों और वर्ग 7 में, जबकि वे आलोचनात्मक हों अथवा उन छात्रों को सजग करने के लिए जो दिवा स्वप्न में व्यस्त हों। उदाहरण : जब अध्यापक कहता है.

1. शीला कृपया खिडकी बंद कर दीजिए?
2. नीला क्या तुम बहरी हो, तुम्हें सुनाई नहीं देता ?
3. क्या तुमने इसके पहले ऐसा सुगठित एवं अच्छी तरह लिखा नाटक देखा है?
4. मोहन भारत की राजधानी बताओ।

कथन 1 में अध्यापक छात्र को खिड़की बंद करने का आदेश देता है। अत: इसे वर्ग 6 में अंकित किया जाना चाहिए। कथन 2 में अध्यापक विद्यार्थी की आलोचना करता है। अत: इसे वर्ग 7 में अंकित किया जाना चाहिए। कथन 3 में अध्यापक छात्र की प्रशंसा करता है। अत: इसे वर्ग 2 में अंकित किया जाना चाहिए। कथन 4 को वर्ग 4 में अंकित किया जाना चाहिए।

वर्ग 5 :

व्याख्यान देना, अभिवृत्ति व्यक्त करना, प्रवृत्तियाँ विचार प्रस्तुत करना, तथा टिप्पणियां करना आदि व्यवहार वर्ग 5 के अंतर्गत किए जाते हैं। इस वर्ग की आवृत्तियां अधिक होती हैं। इसका मूल कारण यह है कि संपूर्ण अन्तःक्रिया में अध्यापक मूलत वक्तव्य ही देता रहता है।

वर्ग 3 एवं 5 में मूल अंतर यह है कि जब अध्यापक छात्रों के विचारों को पुनर्सगठित कर व्यक्त करता है, तब वर्ग 3 में अंकित करना चाहिए, किन्तु जब वह अपने स्वयं के विचारों को अधिक प्रस्तुत करें, तब वर्ग 5 का प्रयोग करना चाहिए।

वर्ग 6 :

शिक्षक की छात्रों को आदेश देने की क्रियाओं को वर्ग 6 में सम्मिलित किया जाता है।

अध्यापक के किसी को आदेश माना जावे अथवा नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि छात्रों के आदेश की अनुक्रिया में कितनी स्वतंत्रता दी जाती है।

उदाहरण: जब शिक्षक छात्रों से कहता है.

1. बैठ जाओ।
2. कक्षा से बाहर चले जाओ।
3. अपना गह कार्य दिखाओ।
4. खिडकी बंद कर दो।
5. मैं चाहता हूं कि तुम थोड़े समय मूल्य वृद्धि की समस्या पर विचार करो।

ये सभी अनुक्रियाएँ वर्ग 6 में आती है, केवल दो इसमें नही आती, क्योंकि उसमें विद्यार्थी की आलोचना है।

वर्ग 7 :

वे कथन जिनका उद्देश्य विद्यार्थियों के आचरण के प्रतिमानों को अस्वीकार्य से स्वीकार्य बनाना हो, वर्ग 7 में अंकित किए जाते है।

उदाहरण : जब शिक्षक कहता है:

1. मुकेश तुम इसी वक्त कक्षा से बाहर चले जाओ।
2. तुम्हें इतनी सी बात भी समझ में नही आती।
3. आपका यह व्यवहार मुझे बिल्कुल पसंद नही है।
4. क्या दिखाई नहीं देता है? चश्मा लगाओ।

उपरोक्त व्यवहारों को वर्ग 7 में अंकित किया जाता है।

वर्ग 8 :

उन स्थितियों में जब अध्यापक छात्रों से प्रश्न करता है, तब छात्र उत्तर देते हैं अथवा निर्देश के बाद शाब्दिक प्रतिक्रिया करते हैं, तब उन्हें वर्ग 8 में अंकित किया जाता है।

वर्ग 9 :

विद्यार्थियों द्वारा प्रारंभ किया गया वार्तालाप वर्ग 9 में अंकित किया जाता है। जब विद्यार्थी अध्यापक से प्रश्न करता है अथवा स्पष्टीकरण चाहता है तब वर्ग 9 में अंकित. किया जाता है।

जब अध्यापक छात्र से प्रश्न करते हैं, छात्र उत्तर प्रदान करने के पश्चात् अपने विचारों को व्यक्त करता है, तब उसे वर्ग 9 में ही अंकित किया जाना चाहिए।

प्रभावशाली अध्यापन के लिए वर्ग 9 का अधिक प्रयोग होना चाहिए। विद्यार्थी उन अध्यापकों की कक्षा में ही अपने विचार व्यक्त करते हैं, जो विद्यार्थी की (उत्तर) अनुक्रिया की प्रशंसा करते हैं और उन्हें प्रोत्साहित करते हैं।

वर्ग 10.

जब कक्षा में विराम अथवा भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो तब वर्ग 10 को अंकित किया जाता है। कभी-कभी कक्षा में (1) ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जब एक से अधिक विद्यार्थी एक साथ बोलने लग जाते है एवं निरीक्षक उस व्यवहार को समझ नहीं पाता है, (2) जब अध्यापक एवं छात्र दोनों में से कोई भी नहीं बोलता है तब इन्हें वर्ग 10 में अंकित किया जाता है।

1.6.3.2 निरीक्षण की प्रविधि (Technique of Observation)

कक्षा अध्यापन के निरीक्षण के लिए सर्वप्रथम निरीक्षक एक ऐसे स्थान पर (कक्षा में) बैठता है, जहां से विद्यार्थियों एवं अध्यापक को देख सकें तथा उनके द्वारा व्यक्त विचारों को सुन सकें। अपना अंकन प्रारंभ करने के लिए प्रारंभ में वह कुछ समय कक्षा को व्यवस्थित होने में देता है। तत्पश्चात् वह कक्षागत व्यवहारों के शाब्दिक कथनों को इस बात का निर्णय करने के पश्चात् कि कौन सी घटना किस वर्ग को सर्वोत्तम प्रतिनिधित्व करती है, तीन सैकण्ड में एक बार, दिये गए दस वर्गों में से किसी एक में व्यवहार के अनुसार अंकित करता है। घटनाओं को वह हिन्दू अरबी के 1,2,3,4,.....10 अंको में इस प्रकार से अंकित करता है, जिससे कि उनका क्रम सुरक्षित रहे।

निरीक्षक एक मिनिट में 20-25 टेली अंकित करता है। प्रत्येक तीन सैकण्ड में एक टेली अंकित करने के हिसाब से 5 मिनट में करीब 100 टेली अंकित हो जाती है तथा एक घंटे में व 200 टेलियां अंकित होती है। निरीक्षक के अंकन की गति उसके (निरीक्षक) कौशल तथा अन्तःक्रिया की जटिलता पर निर्भर करती है।

एक पाठ का कम से कम 20 मिनिट तक निरीक्षण किया जाना चाहिए। क्योंकि 20 मिनिट में कक्षा के शाब्दिक सम्प्रेषण के बारे में पर्याप्त प्रदत्त प्राप्त हो जाते हैं, जिससे अनेकों सूचनायें प्राप्त की जा सकती है।

16.3.3 अन्तःक्रिया मैट्रिक्स की रचना (Matrix)

कक्षा की घटनाओं को 20 मिनिट तक अथवा अधिक समय तक अंकित करने के पश्चात् उसकी व्याख्या के लिए अन्तक्रिया मैट्रिक्स बनायी जाती है। मैट्रिक्स में दस कतारें एवं दस स्तंभ होते है। इस मैट्रिक्स को 10 $\times$ 10 मैट्रिक्स कहते हैं। मैट्रिक्स में दो क्रमागत व्यवहारों के लिए एक आवृत्ति अंकित की जाती है। प्रत्येक जोड़ का प्रथम अंक कतार को तथा दूसरा अंक स्तंभ को प्रदर्शित करता है। प्रथम जोड़ा प्रथम दो अंकों का होता है तथा दूसरा जोड़ा दूसरे एव तीसरे अंक का होता है। इस प्रकार प्रथम जोड़े के बाद का प्रत्येक जोड़ा उसके पूर्व जोड़े को ढकता है।

मैट्रिक्स बनाने से पूर्व आरंभ में वर्ग 10 को अंकित किया जाता है। यदि निरीक्षण आरंभ में टेली 10 वैसे ही हो तब वर्ग 10 को आरंभ में लिखने की आवश्यकता नहीं होती है।

कक्षागत व्यवहार की सभी अनुक्रियाओं को इन्हीं 10 वर्गो में अंकित किया जाता है। यदि कोई घटना तीन सैकण्ड से अधिक समय तक घटित होती रहे तब पुन: उसी वर्ग को अंकित करना चाहिए। अगले पृष्ठ पर मैट्रिक्स बनाने की प्रक्रिया एक उदाहरण द्वारा बताई गई है :-

उदाहरण के लिए	वर्ग तथा युग्म	आवृति
शिक्षक ने व्याख्यान दिया	10	1
शिक्षक व्याख्यान देता रहा	5	
शिक्षक व्याख्यान देता रहा	5	2
शिक्षक ने प्रश्न पूछा	5	3
छात्र सें उतर देने को कहा	4	4
छात्र सें उतर देने को कहा	6	5
छात्र उतर देता रहा	8	6
शिक्षक ने कहा, बहुत अच्छा	8	7
शिक्षक ने कहा, बैठिये	2	8
शिक्षक ने प्रश्न पूछा	6	9
छात्र ने उतर दिया	4	10
शिक्षक ने सही उत्तर दोहराया	8	11
शिक्षक ने व्याख्यान दिया	2	12
शिक्षक व्याख्यान देता रहा	5	13
	5	14
	10	

उपरोक्त उदाहरण को मैट्रिक्स बनाने के लिए 10 ×10 की मैट्रिक्स में पहले व 10वीं पंक्ति के पांचवी पंक्ति के पांचवें स्तंभ में टेली लगायेंगे। इस प्रकार टेली लगाते जायेंगे और अंत में मैट्रिक्स में अध्ययन व्यवहारों का अंकन हो जावेगा। अगले पृष्ठ पर मैट्रिक्स का उदाहरण दिया गया है :-

फलैण्डर्स अन्तर्क्रिया विश्लेषण वर्ग मैट्रिक्स

	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	योग
1											
2					/	/					2
3											
4						/		/			2
5				/	/ / /					/	5
6				/				/			2
7											

8		/ /						/			3
9											
10					/						1
योग		2		2	5	2		3		1	15

क्योंकि कतारों स्तम्भों की योग समान है, अत: मैट्रिक्स की रचना सही है।

16.3.4 व्यवहार अनुपात Behavioural Ratio).

अन्तःक्रिया विश्लेषण मैट्रिक्स में स्तंभ एवं कतारों की आवृत्तियों को व्यवहार अनुपात में बदल लिया जाता है। इन अनुपातों के द्वारा अध्यापक के विभिन्न व्यवहारों का प्रतिशत मालूम हो जाता है। जिसकी सहायता से अध्यापक को अध्यापन में वांछित सुधार के लिए प्रतिपोष भी प्रदान किया जाता है। साथ-साथ अध्यापक के अध्यापन के स्वरूप का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण भी किया जाता है।

शिक्षक वार्त्ता (Teacher Talk)

कक्षा अध्यापन के समय, शिक्षक द्वारा किए गये सभी शाब्दिक व्यवहार शिक्षक कथन वार्त्ता कहलाते हैं। शिक्षक वार्त्ता की गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है :-

$$\text{शिक्षक वार्त्ता} = \frac{(1+2+3+4+5+6+7)\ \text{वर्गों की आवृति} \times 100}{\text{कुल आवृत्तियां}}$$

परोक्ष शिक्षक वार्त्ता (Indirect Teacher Talk) :

परोक्ष शिक्षक वार्त्ता में शिक्षक के उस व्यवहार को अंकित किया जाता है, जिनके द्वारा कक्षा में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, उन्हें अपने विचारों एवं अनुभूतियों को व्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है। छात्रों की अनुभूतियों की स्वीकृति, प्रशंसा करना अथवा प्रोत्साहित करना, प्रश्न पूछना आदि क्रियाएं शिक्षक के अप्रत्यक्ष व्यवहार के अलग-अलग पक्ष हैं।

$$\text{परोक्ष / अप्रत्यक्ष शिक्षक वार्त्ता} = \frac{(1+2+3+4)\ \text{वर्गों की आवृति} \times 100}{\text{कुल आवृत्तियां}}$$

प्रत्यक्ष शिक्षक वार्त्ता (Direct Teacher Talk) :

प्रत्यक्ष शिक्षक वार्त्ता से तात्पर्य उन व्यवहारों से है जिनमें शिक्षक विद्यार्थियों को कक्षागत क्रियाओं में भाग लेने से रोकता है। कक्षा में वक्तव्य देना, छात्रों को आदेश देना, छात्रों की क्रियाओं की आलोचना करना, प्रभुत्व प्रदर्शन करना इत्यादि प्रत्यक्ष अध्यापक व्यवहार के विभिन्न पक्ष हैं।

प्रत्यक्ष शिक्षक वार्त्ता की गणना निम्न सूत्र की सहायता से की जाती है -

$$\text{प्रत्यक्ष शिक्षक वार्त्ता} = \frac{(5+6+7)\ \text{वर्गों की आवृति} \times 100}{\text{कुल आवृत्तियां}}$$

परोक्ष - प्रत्यक्ष व्यवहार अनुपात (Indirect - Direct Behaviour Ration) :

इस अनुपात की गणना के लिए वर्ग 1 से 4 तक की आवृत्तियों के योग को वर्ग 5 से 7 तक की आवृत्तियों के योग से विभाजित किया जाता है। इसकी गणना निम्नलिखित सूत्र के द्वारा की जाती है-

$$\text{परोक्ष-प्रत्यक्ष व्यवहार अनुपात} = \frac{(1+2+3+4)\ \text{वर्गों की आवृति}}{(5+6+7)\ \text{वर्गों की आवृति}}$$

छात्र वार्त्ता प्रतिशत (Pupil Talk Percentage) :

विद्यार्थी अध्यापक द्वारा पूछे गये प्रश्नों की अनुक्रिया में उनका उत्तर प्रदान करते है। वे अपने विचारों एवं अनुभूतियों को व्यक्त करते है। छात्र वार्त्ता में उनकी अनुक्रिया तथा प्रवर्तन दोनों ही समाहित है।

इस हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है-

$$\text{छात्र कथन} = \frac{(8+9)\ \text{वर्गों की आवृति} \times 100}{\text{मैट्रिक्स की कुल आवृत्ति}}$$

विश्रान्ति अथवा भ्रम प्रतिशत (Pause and Confusion) :

विराम एवं भ्रम की लघु अवधियां, जब निरीक्षक सम्प्रेषण को समझने में असमर्थ हों, उन स्थितियों को इस वर्ग में सम्मिलित किया जाता है। इसकी गणना हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है-

$$\text{विश्रान्ति / भ्रम प्रतिशत} = \frac{10\ \text{वर्ग की आवृति} \times 100}{\text{मैट्रिक्स की कुल आवृत्ति}}$$

विद्यार्थी प्रवर्तन अनुपात (Pupil Initiation Ratio) :

विद्यार्थी वार्त्ता में विद्यार्थी अनुक्रिया तथा विद्यार्थी प्रवर्तन की क्रियाओं के अनुपात को विद्यार्थी प्रवर्तन अनुपात कहते है। इसकी गणना के लिए वर्ग 9 की आवृत्तियों को वर्ग 8 तथा 9 की आवृत्तियों से विभाजित कर 100 से गुणा किया जाता है। इसकी गणना सूत्र से की जाती है -

$$\text{विद्यार्थी प्रवर्तन अनुपात} = \frac{\text{वर्ग 9 की आवृति} \times 100}{\text{वर्ग } (4+5) \text{ की आवृत्ति}}$$

शिक्षार्थी प्रश्न अनुपात (Pupil Question Ratio) :

कक्षा अन्तःक्रिया में शिक्षक की प्रश्न करने की प्रवृत्ति को शिक्षक प्रश्न अनुपात कहते है। इसकी गणना हेतु वर्ग 4 की आवृत्ति को वर्ग 4 एवं 5 की आवृत्ति से विभाजित कर 100 से गुणा किया जाता है। शिक्षक प्रश्न अनुपात ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है :-

$$\text{शिक्षक प्रश्नों का अनुपात} = \frac{\text{वर्ग 4 की आवृति} \times 100}{\text{वर्ग } (4+5) \text{ की आवृत्ति}}$$

11.3.5 अन्तःक्रिया विश्लेषण : मूलभूत नियम (Basic Principle)

अन्तक्रिया विश्लेषण के सही उपयोग के लिए उसके मूलभूत नियमों को समझ लेना आवश्यक है। अन्यथा ऐसी स्थिति बन सकती है कि एक वर्ग का अंकन अन्य वर्ग में हो। इन नियमों के पालन करने से निरीक्षण वस्तुनिष्ठ एवं विश्वसनीय हो जाता है। अन्तःक्रिया विशेषण के मूलभूत नियम निम्नलिखित है-

1. जब किसी घटना अथवा कथन को वर्गीकृत करते समय यह निश्चित न किया जा सके कि उसे दो या दो से अधिक वर्गो में से किस वर्ग में वर्गीकृत करें तब उसे वर्ग पांच (5) से जो वर्ग सबसे अधिक दूर हो, उसमें वर्गीकृत करना चाहिए।

उदाहरण 1:

जब वर्ग 8 एवं वर्ग 9 में भ्रम हो तब उस कथन को वर्ग 9 में वर्गीकृत इसलिए करना चाहिए क्योंकि यह वर्ग (9) वर्ग (8) की तुलना में वर्ग (5) से अधिक दूर है।

उदाहरण 2:

जब वर्ग 3 तथा वर्ग 1 में भ्रम हो तब उस कथन को वर्ग 3 में वर्गीकृत करना चाहिए।

2. जब विश्रान्ति की अवधि तीन सैकण्ड से अधिक हो तब उसे वर्ग 10 में ही अंकित किया जाना चाहिए। हालांकि जब शिक्षक श्यामपट्ट पर लिखता हैं एवं छात्र उसे अपनी अभ्यास पुस्तिका में लिखते हैं, उस समय विश्रान्ति रहती है। ऐसे समय निरीक्षक को वर्ग 8 एवं वर्ग 5 का प्रयोग ही करना चाहिए। ऐसा इसलिए किया जाता है, क्योंकि हम अध्यापक के व्यवहार का निरीक्षण कर रहे हैं।
3. प्राय: तीन सैकण्ड में एक ही आवृत्ति अंकित की जाती है, किन्तु उस समय जबकि तीन सैकण्ड में एक से अधिक घटनाएं घटित हो रही हों, तब उन सभी घटनाओं का अंकन किया जाना चाहिए।

उदाहरण :

अध्यापक तीन सैकण्ड में प्रशंसा कर सकता है एवं प्रश्न भी पूछ सकता है, तब निरीक्षक को वर्ग 2 तथा 4 को तीन सेकंड में ही अंकित करना चाहिए। यदि एक ही व्यवहार 3 सैकण्ड से अधिक समय तक हो, जब उसे पुन: उसी वर्ग में अंकित किया जाना चाहिए। अध्यापक द्वारा किए गए मजाक को वर्ग 2 में अंकित किया जाता है। किन्तु यदि अध्यापक किसी छात्र का मजाक उडाता है जब उसे वर्ग 7 में अंकित किया जाना है।

4. भाषागत प्रश्नों को वर्ग 5 में अंकित किया जाना चाहिए। इन प्रश्नों को उत्तर स्वयं अध्यापक देता है तथा ये व्याख्यान विधि का ही एक अंग होते है।
5. जब अध्यापक किसी छात्र के व्यवहार को दोहराता है और यह संप्रेषित करता है कि उसके विचार को विवेचना के लिए स्वीकृत किया गया है, तब इसे वर्ग 3 में अंकित किया जाना चाहिए। अध्यापक किसी छात्र को उसका नाम लेकर पुकारता है, तब निरीक्षक प्राय: इसे वर्ग 4 में अंकित करता है।

6. जब अध्यापक किसी छात्र के सही उत्तर को दोहराता है, तब इसे वर्ग 2 में अंकित किया जाता है।
7. यदि कोई विद्यार्थी किसी अन्य विद्यार्थी की वार्त्ता समाप्त होने पर बोलना प्रारंभ करता है, तब वर्ग 8 एवं 9 के मध्य 10 को छात्र परिवर्तन को दर्शाने के लिए अंकित किया जाना चाहिए। जब बहुत से छात्र किसी प्रश्न का उत्तर एक स्वयं में दें तब इसे वर्ग 8 में अंकित किया जाना चाहिए।

16.4 शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति (The Verbal Interaction Category System)

शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति फ्लैण्डर्स अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति पर आधारित है तथा कक्षा व्यवहार के विश्लेषण के लिए इसमें पांच (5) मुख्य वर्ग होते है। ये 5 वर्ग हैं -शिक्षक, द्वारा प्रारंभ वार्त्ता, शिक्षक अनुक्रिया, विद्यार्थी-अनुक्रिया, विद्यार्थी द्वारा प्रारंभ वार्त्ता एवं अन्य।

16.4.1 शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति : वर्गो का वर्णन (The Verbal Interaction Category System)

शिक्षक द्वारा प्रारंभ वार्त्ता-

1. सूचनाएं अथवा मत प्रदान करता है, विषयवस्तु अथवा स्वयं के विचारों को प्रस्तुत करता है, व्याख्या करता है, उन्मुख करता है, भाषणगत प्रश्न पूछता है, लघु कथन अथवा विस्तारित व्याख्यान हो सकते है।
2. निर्देश देता है : विद्यार्थियों को कुछ विशिष्ट कार्यवाही के लिए कहता है, आदेश देता है।
3. संकीर्ण प्रश्न करता है : अभ्यास के प्रश्न करता है, एक और दो शब्दों में उत्तर वाले अथवा हां एवं नहीं में उत्तर वाले प्रश्न करता है। ऐसे प्रश्न करता है जिनसे विशिष्ट प्रकृति के उत्तर की भविष्यवाणी की जा सके।
4. व्यापक प्रश्न करता है। खुले प्रश्न करता है, विचारोत्तेजक प्रश्न करता है, की तुलना में लंबी अनुक्रिया वाले प्रश्न करता है।

शिक्षक अनुक्रिया **5.** स्वीकार करता है :

5(अ) विचारो : प्रदर्शित करता है, स्पष्ट करना है, विद्यार्थियों के विचारों को प्रोत्साहित अथवा प्रशंसा करता है, संक्षिप्तीकरण करता है अथवा बिना अस्वीकार किए टिप्पणी करता है।

5(ब) व्यवहार : छात्रों के व्यवहार की इस प्रकार अनुक्रिया करता है, जिससे प्रोत्साहन अथवा स्वीकृति मिलती है।

5(स) अनुभूतिः इस प्रकार से अनुक्रिया करता है, जिससे छात्रों की अनुभूति की अभिव्यक्ति का प्रोत्साहन प्रदर्शित होता है।

6. अस्वीकार करता है :

6(अ) विचारों : छात्रों के विचारों की आलोचना करता है, अनदेखा करता है अथवा निरूत्साहित करता है।

6(ब) व्यवहार : छात्रों के व्यवहार को हतोत्साहित करता है अथवा आलोचना करता है, अवांछित व्यवहारों को रोकता है। प्रश्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। किंतु वर्ग 2,3 एवं 4 से भिन्न आवाज के लहजे से निर्देश देता है, जिससे छात्रों पर परिणामकारी प्रभाव होता है।

6(स) अनुभूति : विद्यार्थियों की अनुभूति की अभिव्यक्ति को अनदेखा, हतोत्साहित अथवा अस्वीकार करता है।

(अ) भविष्यात्मक : अपेक्षाकृत लघु उत्तर, प्राय: वर्ग 3 के अनुसरण, वर्ग दो का अनुसरण भी कर सकता है।

7(ब) अभिविष्यात्मक : उत्तर जो प्राय: वर्ग 4 अनुसरण है।

7. अन्य विद्यार्थी को अनुक्रिया कराता है। छात्रों के मध्य संवाद रूप में उत्तर।

छात्र द्वारा प्रारंभ वार्त्ता

8. शिक्षक को वार्त्ता प्रारंभ करने के लिए पहल करता है, ऐसे कथन जो विद्यार्थी शिक्षक को बिना निवेदन निर्देशित करता है।

अन्य

9. अन्य विद्यार्थी से वार्त्ता प्रारंभ करता है। अन्य विद्यार्थी को कथन बिना याचना निर्देशित करता है।

10. विश्रान्ति : कथा संवाद के समय लघु अवधि की विश्रान्ति।

ज-विभ्रम शोर जो नियोजित गतिविधियों में बाधा पहुंचाता है।

4

7ब’

7ब

3

7अ^{2}

1

2

9^{3}

1

4

7ब^{2}

अंक दायीं ओर वर्ग के ऊपर रखे जा सकते हैं, जिससे सहभागिता से करने वाले विद्यार्थियों के परिवर्तन को प्रदर्शित किया जाता है।

वर्गो का वर्णन :

वर्ग 1 : सूचना अथवा मत प्रदान करता है

इस वर्ग का उपयोग उस समय किया जाता है, जबकि अध्यापक तथ्य अथवा मत कक्षा में लघु कथनों को व्याख्यान के रूप में प्रस्तुत करता है। प्राय: जब अध्यापक विषयवस्तु प्रस्तुत करता है, इस वर्ग का उपयोग किया जाता है। इस वर्ग का उपयोग व्याख्या एवं उन्मुखीकरण के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है।

2. निर्देश देता है :

जब शिक्षक विद्यार्थी को कोई विशिष्ट कार्यवाही के लिए कहता है तब वर्ग 2 का उपयोग किया जाता है, जैसे अपनी पुस्तक का पृष्ठ 5 खोलिये? अपनी कुर्सी पर बैठ जाइये, निम्न अंको को जितने जल्दी हो सके जोड़िये, निर्देश प्रश्न के रूप में दिए जा सकते है। जैसे मीनाक्षी क्या तुम एक मिनिट के लिए यहां आ सकती हो?

3. संकीर्ण प्रश्न करता है :

यदि निश्चित अनुक्रिया की भविष्यवाणी की जा सकती हो, तब इस वर्ग का उपयोग किया जा सकता है। अभ्यास अथवा ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर एक या दो शब्दों में दिया जा सके। इस वर्ग के अंतर्गत आते हैं, जैसे 4 एवं 3 जोड़ने पर क्या प्राप्त होगा? म.प्र. की राजधानी क्या है? क्या यह सही है? क्या तुम्हें यह योजना पसंद थी?

शिक्षक अनुक्रिया (Teacher's Response) :

5(अ) विचारों को स्वीकार करता है:

जब अध्यापक विद्यार्थी के विचार को स्पष्ट, प्रदर्शित, प्रोत्साहित अथवा प्रशंसा करता है, तब वर्ग 5 (अ) का उपयोग किया जाता है। यदि अध्यापक विद्यार्थी / विद्यार्थियों के विचारों का संक्षिप्तीकरण करता है, विचारों पर बिना अस्वीकार किए टिप्पणी करता है, इस वर्ग का उपयोग किया जाता है। "हाँ" अथवा अच्छा कहना "तो आपके विचार में राम ने सही निर्णय लिया" इत्यादि वर्ग 5 (अ) के उदाहरण हैं।

5(ब) व्यवहार को स्वीकार करता है:

विद्यार्थी व्यवहार की अनुक्रिया में उनकी प्रशंसा अथवा प्रोत्साहन के व्यवहार इस वर्ग के अंतर्गत आते है। जैसे इस कक्ष के सभी विद्यार्थी सहयोगी हैं। तुमने कहानी सर्वश्रेष्ठ अभिव्यक्ति के साथ कही इत्यादि वर्ग 5 (ब) के उदाहरण हैं।

5(स) अनुभूतियों को स्वीकार करता है:

जब अध्यापक विद्यार्थियों की अनुभूति को स्वीकार करता है तब इस वर्ग का उपयोग किया जाता है। जैसे यदि यह मेरे साथ हुआ होता, तब मैं भी दुःखी होता।

6(अ) विचारों को अस्वीकार करता है :

जब अध्यापक विद्यार्थियों के विचारों की आलोचना करता है, अनदेखा करता है अथवा निरूत्साहित करता है, तब वर्ग 6 (अ) का उपयोग किया जाता है। जैसे-क्या मैंने यहीं चर्चा करने के लिए कहा था? यह सही नही है।

6(ब) व्यवहार को अस्वीकार करता है

अध्यापक की टिप्पणियां जो विद्यार्थियों की आलोचना अथवा निरूत्साहित करने के लिए हो, वर्ग 6 (ब) के अंतर्गत आती है, जैसे "मैंने बैठने के लिए कहा है", "'इसे तत्काल बंद कर दो", इस प्रकार से मुझे कॉपी मत देना। कहने के लहजे का विद्यार्थी पर काफी प्रभाव पड़ता है।

6(स) अनुभूतियों को अस्वीकार करता है :

जब अध्यापक विद्यार्थी की अनुभूति की अभिव्यक्ति की आलोचना करता है, तब वर्ग 6 (स) का उपयोग किया जाता है। जैसे क्या तुम तुम्हारे स्वयं के चिल्लाने से शर्मिन्दा नहीं हो। अपनी व्यक्तिगत अनुभूतियों को बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। तुम्हें चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

विद्यार्थी अनुक्रिया (Pupil's Response) :

7(अ) शिक्षक के बारे में भविष्यात्मक अनुक्रिया

यह अनुक्रिया प्राय: वर्ग 3 मे आती है। अध्यापक द्वारा ऐसा संकीर्ण प्रश्न किया जाना जिससे अपेक्षित उत्तर प्राप्त हो, जिसका प्राय: संक्षिप्त उत्तर हो। वर्ग 7(अ) में 2 का अनुसरण भी किया जा सकता है। निर्देश देना जब शिक्षक कहता है। "श्याम पृष्ठ के ऊपरी कथन को पढ़ो।"

7(ब) शिक्षक की अभिवष्यात्मकता के प्रति अनुक्रिया :

जब विद्यार्थी से अनपेक्षित उत्तर की अपेक्षा हो तब वर्ग 7 (ब) का उपयोग किया जाता है। किंतु विद्यार्थी किसी संकीर्ण प्रश्न का उत्तर भी अनपेक्षित दे सकता है। उदाहरण के लिए जब अध्यापक प्रश्न करता है "इस द्वंद्व का कारण क्या था? विद्यार्थी उत्तर दे सकता है" मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इसका कोई एक कारण नही था। मेरे विचार में कार्य में अनेक कारक थे। हालांकि ऐसी अनुक्रिया बिरले ही कक्षा में प्राप्त होती है।

8. अन्य विद्यार्थी पर अनुक्रिया करना

जब एक विद्यार्थी अन्य विद्यार्थी के प्रश्न अथवा कथन पर अनुक्रिया करता है, जब वर्ग 8 का उपयोग किया जाता है।

विद्यार्थी द्वारा प्रारंभ वार्त्ता :

9. विद्यार्थी अध्यापक से वार्त्ता करता है

जब विद्यार्थी अध्यापक से बातचीत प्रारंभ करता है, तब वर्ग 9 का उपयोग किया जाता है। जैसे "क्या आज हमारी प्रेक्टीकल है" मुझे यह समझ में नहीं आता है कि इस प्रश्न को कैसे हल करूं" क्या आप अंतिम पैरा को दोहरायेगें'।

10. अन्य विद्यार्थी से वार्तालाप करना :

जब एक विद्यार्थी किसी अन्य विद्यार्थी से वार्त्ता प्रारंभ करता है तब वर्ग 10 का उपयोग किया जाता है।

अन्य :

11. विश्रान्ति

वर्ग 11 का उपयोग लघु विश्रान्ति की अवधियों के लिए किया जाता है। जब कक्षा मौन वाचन कर रही हो।

5() विभ्रम :

जब शोर नियोजित गतिविधियों में बाधा डाल रहा हो, तब वर्ग ज का उपयोग किया जाता है।

16.4.2 शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति मैट्रिक्स की रचना

स्तंभ में जो वर्गो में अंक अंकित किए गए है, उन्हें बाद में मैट्रिक्स में स्थानांतरित किया जाता है। उदाहरण के लिए:

अध्यापक : अपनी पुस्तक का पृष्ठ 7 खोलिये। 2

विद्यार्थी : हम कौनसी पुस्तक देखें? 9

अध्यापक : यदि तुमने ध्यान दिया होता तो तुम जानते होते। 6ब

अध्यापक : अब, पृष्ठ क्र0 6 पर एक चित्र है जो जनसंख्या घनत्व एवं व्यवसाय के प्रकार को दर्शाता है। मेरे विचार में ये हमारे उद्देश्य के लिए एक उत्कृष्ट चित्र है। 1

अध्यापक : क्या किसी का कुछ विचार है कि ये दो कारक संबंधित हो सकते है? 1

जब अंकित करने वाला टेली लगाना समाप्त कर लेता है तब, वह अंकों के जोड़े निम्नानुसार बनायेगा-

दूसरा जोड़ा	2 9	प्रथम जोड़ा
चौथा जोड़ा	6 ब 1	तीसरा जोड़ा
छटा जोड़ा	1 1 4 4	3 पंचवा जोड़ा 3 सातवा जोड़ा

जोड़े का प्रथम अंक पंक्ति को दर्शाता है तथा दूसरा अंक स्तम्भ को दर्शाता है। उक्त जोड़ी को चित्र-3 के अनुसार मैट्रिक्स में परिवर्तन किया जा सकता है।

16.4.3 शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति मैट्रिक्स विभिन्न क्षेत्र

क्षेत्र अ (A) :

यह क्षेत्र दीर्घ अवधि के शिक्षक स्वोपक्रम का होता है। इसमें सूचनाओं अथवा मतों का प्रस्तुतीकरण शामिल होता है। निर्देश देना एवं प्रश्न करना इस क्षेत्र में आते हैं। इस क्षेत्र की मुख्य विशेषता यह होती है कि शिक्षक लंबे समय तक बोलता है।

Columns स्तम्भ

ROWS पंक्तियाँ	1	2	3	4	5a	5b	5c	6a	6b	6c	7a	7b	7c	8	9	10	11	z
1	//			/														
2															/			
3																		
4																		
5a																		
5b																		
5c																		
6a																		
6b																		
6c																		
7a																		
7b																		
7c																		
9																		
10																		
11																		
Z																		

COLUMNS स्तम्भ

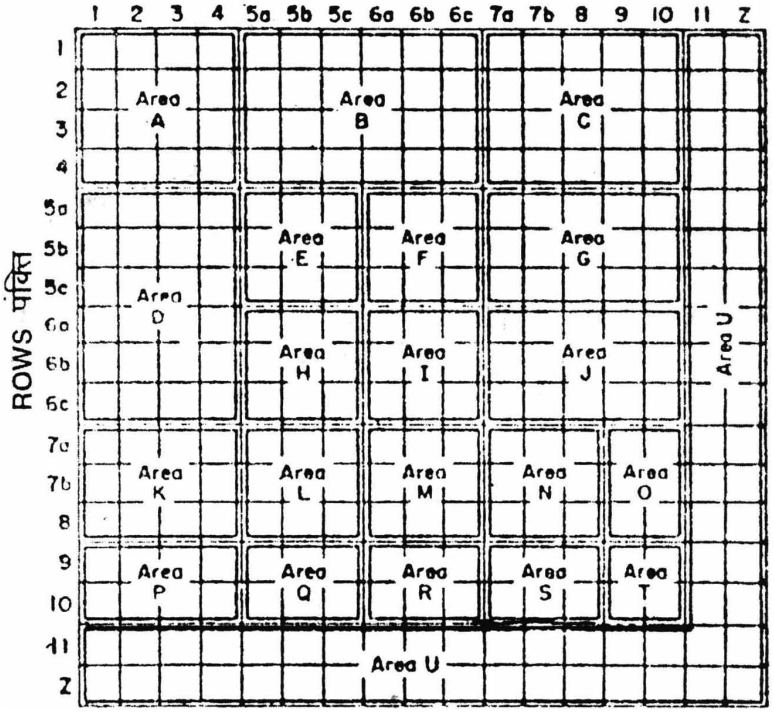

क्षेत्र ब(B) :

इस क्षेत्र की कक्षिकाएं शिक्षक के प्रारंभिक कथनों के बाद शिक्षक अनुक्रिया कथनों को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने को दर्शाती है।

क्षेत्र स(C) :

इस समूह की कक्षिकाएं शिक्षक प्रारंभिक वार्त्ता के बाद की संपूर्ण विद्यार्थी वार्त्ता को दर्शाती है।

क्षेत्र द(D) :

शिक्षक अनुक्रिया कथनों का प्रतिनिधित्व करती है।

क्षेत्र इ(E) :

यह क्षेत्र अध्यापक के दीर्घ अवधि स्वीकृति व्यवहार को दर्शाता है। इसमें विस्तारित विचारों, व्यवहार एवं अनुभूति की स्वीकृति शामिल है।

क्षेत्र फ(F) :

यह क्षेत्र शिक्षक के स्वीकृति व्यवहार के बाद के अस्वीकृति व्यवहार को दर्शाता है।

क्षेत्र ग (G) :

यह क्षेत्र शिक्षक के स्वीकृति व्यवहार के बाद के उन विद्यार्थियों के कथनों को दर्शाता है।

क्षेत्र ह (H) :

यह क्षेत्र शिक्षक के अस्वीकृत व्यवहार के पश्चात् के स्वीकृत व्यवहारों को दर्शाता है।

क्षेत्र आई (I) :

यह क्षेत्र अध्यापक के विस्तारित अस्वीकृत व्यवहारों को दर्शाता है।

क्षेत्र ज (J) :

यह क्षेत्र अध्यापक के अस्वीकृति के कथनों के पश्चात् के समस्त विद्यार्थी कथनों को दर्शाता है।

क्षेत्र क (K) :

यह क्षेत्र विद्यार्थी अनुक्रिया व्यवहारों के पश्चात के अध्यापक के प्रारंभिक कथनों को दर्शाता है। **क्षेत्र ल (L) :**

यह क्षेत्र विद्यार्थी अनुक्रिया के पश्चात् के शिक्षक के प्रारंभिक व्यवहार को दर्शाता है।

क्षेत्र म (M) :

यह क्षेत्र अध्यापक द्वारा विद्यार्थी अनुक्रिया के अस्वीकार करने को दर्शाता है।

क्षेत्र न (N) :

यह क्षेत्र अध्यापक अथवा अन्य विद्यार्थी अनुक्रिया के विस्तारित विद्यार्थी अनुक्रिया को दर्शाता हे।

क्षेत्र ओ (O) :

यह क्षेत्र विद्यार्थी अनुक्रिया कथनों के तुरंत बाद के विद्यार्थी स्वोपक्रम कथनों को दर्शाता है।

क्षेत्र प (P) :

यह क्षेत्र विद्यार्थी के प्रारंभिक वार्त्ता के तुरंत बाद के शिक्षक के प्रारंभिक कथनों को दर्शाता है। क्षेत्र **क्यू (Q) :**

यह क्षेत्र विद्यार्थी स्वोपक्रम के तुरंत बाद की शिक्षक स्वीकृति को दर्शाता है।

क्षेत्र र (R) :

क्षेत्र 'र' विद्यार्थी स्वोपक्रम के तुरंत बाद की शिक्षक स्वीकृति को दर्शाता है।

क्षेत्र श (S) :

यह क्षेत्र विद्यार्थी स्वोपक्रम कथनों के तुरंत बाद की विद्यार्थी अनुक्रिया को दर्शाता है।

क्षेत्र त (T) :

यह क्षेत्र विस्तारित विद्यार्थी प्रारंभिक वार्त्ता को दर्शाता है।

क्षेत्र उ (U) :

यह क्षेत्र विश्रान्ति अथवा विभ्रम को दर्शाता है।

16.5 सारांश (Summary)

कक्षा कक्ष में होने वाली अन्तःक्रिया का निरीक्षक किया जाना जरूरी है। इसके माध्यम से ही पता चलता है कि शिक्षण कितना प्रभावशाली रहा है। शिक्षक कक्षा में सक्रिय ज्यादा है या विद्यार्थी भी है। शिक्षकों के व्यवहार में व्यापक सुधार लाने के लिए उसके व्यवहार का निरीक्षण जरूरी है।

अतःक्रिया विश्लेषण पद्धति के माध्यम से शिक्षकों के व्यवहार का निरीक्षण कर उन्हें उचित पृष्ठपोषण प्रदान किया जा सकता है। मुख्य रूप से दो निरीक्षण पद्धतियाँ हैं, जो कि निम्न हैं -

1. फ्लैण्डर्स अन्तःक्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति
2. शाब्दिक अन्तःक्रिया वर्ग पद्धति

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. फ्लैण्डर्स की अन्तःक्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति क्या है?
   What is Flander's Interaction analysis category System? Explain it.
   फ्लैण्डर्स की अन्तःक्रिया विश्लेषण वर्ग पद्धति के आधारभूत नियम कौन-कौन से है? (What are the Basic Principles of Flander's Interaction Category System?

शाब्दिक अन्तक्रिया वर्ग पद्धति क्या है? समझाइये।
What is the verbal interaction analysis category system? Explain it.

16.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Amidom, E.J. and Hough, J.B. Interaction Analysis : Theory Research and Application, Readings, Mass : Addison Wesly, 1967.
2. Amidon, : et. "Interaction Analysis and its Application to Student Teaching'' Association for Student Teacher Year bood, Dubgane, low : Wiling, C. Brown Co. ; 1965.
3. Bales, R.: Interaction Process Analysis, Cambridge. Massachussets : Addision Wesley Publishing Co. Inc. 1950.
4. Bellock : Amo A. et all.: The Language of the Classroom. : Teachers College Press. Columbia University, 1966.
5. Flanders, N.A. Analyzing Teaching Behaviour. Reading Mass : Addision Wesley Publishing Hall, Inc. 1974.
6. Ober, R. L. et al.: Systematic Observation of Teaching, : Prentice Hall, New Jersey Inc. 1974
7. Simon, A. and Boyer. E.G.: Mirrors for Behaviour : an Anthology of Classroom Observation Instructions, : Research for Better Schools Inc, New York 1967.
8. Vahishtha, K.K. Interaction Analysis : Theory and Research, : Extension Service Department RCE (NCERT), Ajmer 1982.

इकाई-17

शिक्षण व्यूह रचनाएँ (Teaching Strategies)

इकाई की रुपरेखा

(Structure of Unit)

17.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

17.1 प्रस्तावना
(Introduction)

17.2 शिक्षण व्यूह रचनाओं का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Teaching)

17.3 शिक्षण व्यूह रचनाओं की विशेषताएं
(Charactristics of Teaching Strategies)

17.4 शिक्षण व्यूह रचनाओं के प्रकार
(Types of Teaching Strategies)

17.4.1 व्याख्यान
(Lecture)

17.4.2 प्रदर्शन
(Demonstration)

17.4.3 वाद विवाद
(Debate/Discussion)

17.4.4 ट्यूटोरियल
(Tutorial)

17.4.5 भूमिका निर्वाह
(Role Pay)

17.4.6 ब्रेन स्टॉर्मिंग
(Brain Storming)

17.4.7 स्वाध्याय
(Self Study)

17.4.8 सेमीनार
(Seminar)

17.5 सारांश
(Summary)

17.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

(Bibliography)

17.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्यनोपरान्त विद्यार्थी -

1. शिक्षण व्यूह रचनाओं का अर्थ समझ सकेंगे।
2. शिक्षण व्यूह रचनाओं को परिभाषित कर सकेंगे।
3. शिक्षण व्यूह रचनाओं की विशेषताओं की सूची बना सकेंगे।
4. विभिन्न प्रकार की शिक्षण व्यूह रचनाओं की विशेषताओं को बता सकेंगे।
5. विभिन्न प्रकार की शिक्षण व्यूह रचनाओं की उपयोगिताओं को लिख सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षण का प्रमुख उद्देश्य है, बालक का सर्वांगीण विकास करना। इसके लिए शिक्षण का नियोजन इस प्रकार से करना है कि उसमें अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाया जा सके। विद्यार्थी जितने अधिक 'अधिगम अनुभव' प्राप्त करेगा, उतना ही सर्वांगीण विकास की ओर अग्रसर होगा। इसलिए वह उपयुक्त शिक्षण व्यूह रचनाओं का चयन करता है। इसके द्वारा उसे शिक्षण प्रभावी बनाने में सहायता मिलती है। कार्य विश्लेषण एवं शिक्षण उद्देश्य की प्रकृति के आधार पर ही शिक्षण व्यूह रचना का चयन किया जाता है।

इस इकाई में आप शिक्षण व्यूह रचनाओं के बारे में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

17.2 शिक्षण व्यूह रचनाओं का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Teaching Strategies)

शिक्षण के द्वारा शिक्षक छात्रों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। इस कार्य के लिये शिक्षक विभिन्न प्रकार की शिक्षण व्यूह रचनाओं का प्रयोग करता है। इन व्यूह रचनाओं के द्वारा शिक्षक अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त करता है। स्ओनस तथा मौरिस के अनुसार शिक्षण व्यूह पाठ योजना का एक सामान्यीकृत रुप है, जिसमें अपेक्षित व्यवहार - परिवर्तन की संरचना अनुदेशन के उद्देश्यों के रुप में सम्मिलित होती हैं। नीति रचना की रुपरेखा को प्रयुक्त करने के लिये युक्तियों की भी योजना तैयार की जाती है। पाठ योजना की व्यूह रचना बृहत् पाठ्यक्रम का ही अंग मानी जाती है। शिक्षण व्यूह रचना के लिये सोचता है तथा निर्णय भी लेता है। शिक्षण व्यूह रचनाओं शिक्षण विधियों की तुलना में अधिक व्यापक होती हैं। शिक्षण विधियों के अन्तर्गत केवल पाठ्यवस्तु के प्रस्तुत करने को ही ध्यान में रखा जाता है। इसके विपरीत शिक्षण व्यूह रचनाओं में पाठ्यवस्तु उनकी रुचियों, रुझानों, क्षमताओं, योग्यताओं, आवश्यकताओं, मानसिक स्तर तथा पूर्व व्यवहार आदि सभी पक्षों को ध्यान में रखा जाता है। डेविस के अनुसार "शिक्षण की व्यूह रचनाओं शिक्षण की विधियों से अधिक व्यापक

होती है। इनके निर्माण में शिक्षा दर्शन, शिक्षण के उद्देश्य, अधिगम सिद्धांत, वांछित कार्य, प्रतिपुष्टि तथा प्रेरित करने वाले तत्व सम्मिलित होते हैं।

17.3 शिक्षण व्यूह रचनाओं की विशेषताएँ (Characteristics of Teaching Strategies)

शिक्षण व्यूह रचनाओं की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं -

(i) शिक्षण व्यूह रचनाओं में उद्देश्यों को महत्व दिया जाता है। शिक्षण नीतियों का चयन उद्देश्यों के आधार पर किया जाता है।

(ii) शिक्षण व्यूह रचनाओं में कार्य तथा प्रस्तुतीकरण को महत्व दिया जाता है।

(iii) शिक्षण व्यूह रचनाओं में सम्पूर्ण उपागम का अनुसरण किया जाता है।

(iv) शिक्षण व्यूह रचनाओं में पाठ्यवस्तु तथा प्रस्तुतीकरण का ढंग प्रमुख पक्ष होता है। शिक्षण नीति का निर्धारण पाठ्यवस्तु की प्रकृति के अनुसार किया जाता है।

(v) शिक्षण व्यूह रचनायें इस धारणा पर आधारित होती है कि शिक्षण एक कला है।

(vi) शिक्षण व्यूह रचनाओं के मूल्यांकन का मानदण्ड पाठ्यवस्तु का स्वामित्व माना जाता है।

(vii) शिक्षण व्यूह रचनाओं का लक्ष्य प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण करना है।

(viii) शिक्षण व्यूह रचनाओं को परम्परागत मानव सिद्धांत की देन माना जाता है।

(ix) शिक्षण व्यूह रचनाओं में शिक्षण प्रविधियों की सहायता ली जाती है।

17.4 शिक्षण व्यूह रचनाओं के प्रकार (Types of Teaching Strategies)

कक्षा के वातावरण, स्थिति तथा शिक्षक के दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर शिक्षण व्यूह रचनाओं को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया जा सकता है - (i) प्रभुत्ववादी व्यूह रचनाओं (Autocratic Strategies) एवं जनतान्त्रिक व्यूह रचनाओं प्रभुत्ववादी व्यूह रचनाओं (Democratic Strategies) पाठ्यवस्तु तथा शिक्षक केन्द्रित परम्परागत शिक्षण व्यूह रचनाएँ हैं। इन व्यूह रचनाओं के प्रयोग में शिक्षक को स्थान प्रमुख होता है तथा विद्यार्थी का स्थान गौण होता है। शिक्षक विद्यार्थियों की रुचियों, रुझानों, क्षमताओं, योग्यताओं तथा आवश्यकताओं पर ध्यान न देकर पाठ्यवस्तु को स्वयं निर्धारित करता है। इस प्रकार की व्यूह रचनाओं में छात्रों के सामूहिक विकास पर बल दिया जाता है। केवल उनको ज्ञानात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए मदद दी जाती है। प्रभुत्ववादी व्यूह रचनाओं के अन्तर्गत भाषण, प्रदर्शन, ट्यूटोरियल तथा अभिक्रमित अनुदेशन आते है।

जनतान्त्रिक नीतियॉ बालकेन्द्रित होती है। इनमें पाठ्यवस्तु को स्वयं विद्यार्थी निर्धारित करते हैं। इसमें विद्यार्थी की स्थान प्रमुख होता है और शिक्षक का स्थान गौण होता है। इन व्यूह रचनाओं के प्रयोग में शिक्षक और छात्रों के बीच अधिक से अधिक अन्तःक्रिया होती है, जिससे छात्रों का उनकी रुचियों, रुझानों, क्षमताओं का विकास होता है। छात्र इन व्यूह रचनाओं को पसन्द करते हैं और अधिक से अधिक लाभ उठाते हैं। जनतांत्रिक शिक्षण व्यूह

रचनाओं के अन्तर्गत वाद-विवाद, खोज, अन्वेषण परियोजना, समीक्षा, गृहकार्य, ट्यूटोरियल समूह, मस्तिष्क विप्लव, भूमिका निर्वाह, स्वाध्याय तथा संवेदनशील प्रशिक्षण आते है।

17.4.1 व्याख्यान (Lecture)

परिभाषा:- जब शिक्षक किसी विषयवस्तु अथवा तथ्य को प्रस्तुत करने के लिये लम्बी अथवा छोटी अवधि के लिये व्याख्यान का सहारा लेता है तो उसे व्याख्यान व्यूह रचना कहते हैं।

उद्देश्य:-व्याख्यान व्यूह रचना का प्रयोग निम्नलिखित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये किया जाता है -

(क) ज्ञानात्मक आयाम के निम्न स्तर के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये।

(ख) ज्ञानात्मक आयाम के उच्च स्तर के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये।

(ग) भावनात्मक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये।

व्याख्यान व्यूह रचना के प्रयोग में आवश्यक बातें -

1. व्याख्यान उचित अवधि का, अनौपचारिक एवं रुचिकर होना चाहिए।
2. व्याख्यान के दौरान छात्रों को सक्रिय बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए।
3. व्याख्यान के दौरान पाठ्यसामग्री को क्रमबद्ध किया जाना चाहिए।
4. व्याख्यान शब्द प्रतीकों के माध्यम से प्रस्तुत विषय का पूर्ण चित्रण छात्रों के मस्तिष्क में अंकित करने में सक्षम होना चाहिए।
5. व्याख्यान की भाषा, मुहावरे, लोकोक्तियाँ आदि सरल एवं अनुक्रिया युक्त हों।
6. व्याख्यान के साथ किसी अन्य विधि का भी प्रयोग आवश्यक है, क्योंकि इससे छात्रों की रुचि बनी रहती है।
7. शिक्षक को व्याख्यान की समयावधि का ज्ञान होना चाहिए।

व्याख्यान को प्रभावित करने वाले कारक:

किसी भी व्याख्यान की सफलता निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है -

1. शिक्षक को विषय-वस्तु का ज्ञान।
2. शिक्षक द्वारा विषय-वस्तु का संगठन।
3. छात्रों की मानसिक तैयारी।
4. छात्रों को व्याख्यान के मुख्य बिन्दुओं को नोट करने के लिए प्रोत्साहित करना।
5. विभिन्न प्रकरणों में सम्बन्ध स्थापित करना।
6. छात्र की वैयक्तिक विभिन्नताओं को ध्यान में रखना।
7. साधारण भाषा एवं शब्दावलियों का प्रयोग करना।
8. धारा प्रवाह बोलना।
9. शिक्षण सामग्री का प्रयोग करना।
10. सार्थक एवं रोचक दृष्टान्तों का प्रयोग करना।

11. महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर बल देना।
12. व्याख्यान को लक्ष्य की ओर ले जाना।
13. व्याख्यान के माध्यम से छात्रों में तार्किक चिन्तन का विकास करना।

व्याख्यान नीति की विशेषताएँ-

इस शिक्षण नीति की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं -

1. व्याख्यान के द्वारा छात्रों के ध्यान को केन्द्रित किया जा सकता है।
2. छात्रों को थोड़े से समय में अधिक विषय-वस्तु से परिचित कराया जा सकता है।
3. विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया जाता है।
4. बालकों को मौलिक चिन्तन तथा सराहना की क्षमताओं के विकास का अवसर प्राप्त होता है।
5. अध्यापक के व्यक्तित्व का छात्रों पर विशेष प्रभाव होता है। स्पष्टीकरण की सजीवता से बालकों को अध्ययन के लिए प्रेरणा मिलती है।
6. यह नवीन विषय की पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करने के लिए उत्तम पद्धति है।

व्याख्यान नीति की सीमाएँ -

व्याख्यान व्यूह रचना की निम्नलिखित सीमाएं हैं -

1. व्याख्यान व्यूह रचना में केवल प्रस्तुतीकरण पर बल दिया जाता है। इसमें छात्र निष्क्रिय रहते हैं। केवल वक्ता ही सक्रिय रहता है।
2. यह व्यूह रचना उच्च कक्षाओं के शिक्षण के लिये उत्तम है, किन्तु छोटे बालकों के लिए यह व्यूह रचना असफल है।
3. छात्रों की व्यक्तिगत रुचियों पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता है।
4. इस व्यूह रचना में छात्रों की रुचियों, अभिरुचियों तथा अभिवृत्तियों की अपेक्षा होती है।
5. इसमें शिक्षण बिन्दु संतुलित नहीं रह पाते और विषयान्तर होने का भय अधिक रहता है।

17.4.2 प्रदर्शन (Demonstration)-

प्रदर्शन व्यूह रचना का उपयोग क्षेत्र प्रदर्शन नीति का प्रयोग विशेषकर वैज्ञानिक विषयों के शिक्षण में किया जाता है, किन्तु कला, शिल्प अनेक प्रयोगात्मक विषयों का शिक्षण करते समय भी इस विधि का प्रयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है। प्रदर्शन व्यूह रचना की सहायता से शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच शाब्दिक अन्तःक्रिया को बढ़ावा मिलता है। इस व्यूह रचना का सफल प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षक प्रस्तुतीकरण, स्पष्टीकरण तथा वर्णन आदि प्रविधियों का प्रयोग भी साथ-साथ करें।

प्रदर्शन व्यूह रचना के सोपान:

व्याख्यान की अपेक्षा यह कम प्रभुत्ववादी है। इसमें निम्नलिखित तीन सोपानों का अनुसरण किया जाता है -

(क) प्रस्तावना

(ख) विकास एवं

(ग) एकीकरण

प्रदर्शन व्यूह रचना को प्रभावित करने वाले कारक:

प्रदर्शन व्यूह रचना को सफल बनाने के लिए निम्न तीन बातें आवश्यक हैं -

1. जिन वस्तुओं का प्रदर्शन किया जाता है वे बहुत छोटी न हों। ये वस्तुएं इतनी बडी होनी चाहिए कि सभी विद्यार्थी उन्हें बिना कठिनाई के देख सकें।
2. वस्तुओं का प्रदर्शन करते समय कठिन भाषा एवं कठिन शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
3. यदि विद्यार्थियों को किसी कठिनाई का अनुभव हो तो वे उसे शिक्षक से स्वतन्त्रतापूर्वक प्रश्न पूछकर दूर करना चाहिए।

प्रदर्शन व्यूह रचना की विशेषताएँ :-

प्रदर्शन नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं -

1. इससे शिक्षण को सामान्य स्तर तथा उससे निम्न स्तर के छात्रों के लिए मुख्य रुप से प्रयुक्त किया जाता है।
2. इसके द्वारा ज्ञानात्मक तथा क्रियात्मक पक्ष के मध्य निम्न स्तर के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।
3. इस व्यूह रचना का प्रयोग करके अध्यापकों को पाठ विकसित करने के लिए क्रमबद्ध सोपानों का बोध होता है।

प्रदर्शन व्यूह रचना की सीमाएँ

प्रदर्शन व्यूह रचना की निम्नलिखित सीमाएं हैं -

1. छात्राध्यापकों की मौलिकता का विकास नहीं हो पाता है।
2. इसमें अनुकरण पर अधिक बल दिया जाता है।
3. छात्र पाठ प्रदर्शन को आदर्श मानकर कौशल का विकास करते हैं।

17.4.3 वाद-विवाद (Discussion) -

वाद-विवाद एक शैक्षिक समूह क्रिया है जिसमें छात्र सहयोग पूर्वक एक दूसरे से किसी समस्या पर चर्चा करते हैं। इस व्यूह रचना में शिक्षक प्रश्नों द्वारा किसी समस्या पर विचार करने के लिए छात्रों को प्रेरित करता है। शिक्षक पाठ का विकास छात्रों के उत्तरों तथा अनुक्रियाओं द्वारा करता है। यह शिक्षण की एक सक्रिय मौखिक व्यूह रचना है। इसमें शिक्षक और छात्रों को अन्तःक्रिया करने के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त होते है।

वाद-विवाद के उद्देश्य:-वाद-विवाद व्यूह रचना का प्रयोग करने से छात्रों में तर्क-शक्ति विकसित होती है, ज्ञान का विस्तार होता है तथा छात्रों को अभिव्यक्ति का पर्याप्त अवसर प्राप्त होता है। छात्रों में सहयोग द्वारा समस्या समाधान की प्रवृत्ति का विकास होता है।

वाद-विवाद व्यूह रचना के प्रकार- विद्यालयों में दो प्रकार के वाद-विवाद नीतियों औपचारिक और अनौपचारिक का प्रयोग किया जाता हैं। औपचारिक वाद-विवाद पूर्व निर्धारित कार्यक्रम और उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अपनाया जाता है। इसमें निर्धारित नियम होते हैं और उनका पालन करना आवश्यक होता है। अनौपचारिक वाद-विवाद में स्वतन्त्र मौखिक क्रिया-प्रतिक्रिया होती है। इसमें भाग लेने वाले किसी नियम से बंधे नहीं होते हैं। शिक्षक कक्षा

में किसी समस्या के बारे में प्रश्न करके उस पर विचार मांगता है। विचार आने आरम्भ हो जाते हैं और इस प्रकार वाद-विवाद होने लगता है।

वाद-विवाद व्यूह रचना को प्रभावित करने वाले कारक:-

वाद-विवाद व्यूह रचना को सफलतापूर्वक प्रयोग करने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए-

1. वाद-विवाद उद्देश्य निर्धारित होना चाहिए।
2. वाद-विवाद नीति का प्रयोग समस्या की पहचान, विश्लेषण तथा समस्या समाधान करने के लिए किया जाना चाहिए।
3. वाद-विवाद का विषय विचार-विमर्श से तय किया जाना चाहिए।
4. छात्रों का वाद-विवाद में भाग लेने के लिए आवश्यक सूचना तथा सामग्री दोनों का प्रयोग करना चाहिए।
5. वाद-विवाद में शिक्षक को प्रभुत्व नहीं जमाना चाहिए।
6. वाद-विवाद का वातावरण इस प्रकार का होना चाहिए कि इसमें सभी छात्र भाग ले सकें।
7. विचारोत्तेजक प्रश्न पूछकर छात्रों को वाद-विवाद के लिए तैयार करना चाहिए।
8. छात्रों को अपनी सहभागिता का मूल्यांकन करने के लिए प्रेरित करना चाहिए।

17.4.4 ट्यूटोरियल (Tutorial)

ट्यूटोरियल की आवश्यकता:- ट्यूटोरियल गहन शिक्षा का माध्यम है। सामूहिक शिक्षण करते समय शिक्षक विद्यार्थी की व्यक्तिगत समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता। सामूहिक शिक्षण के इस दोष को दूर करने के लिए कक्षा के विद्यार्थियों को छोटे-छोटे समूहों में विभाजित कर दिया जाता है। शिक्षक व्यक्तिगत शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के छोटे-छोटे समूह की समस्याओं को दूर करने का प्रयास करता है।

ट्यूटोरियल के प्रकार:-

ट्यूटोरियल निम्नलिखित तीन प्रकार के होते हैं -

1. निरीक्षण युक्त ट्यूटोरियल (Supervised Tutorial)
2. सामूहिक ट्यूटोरियल (Group Tutorial)
3. प्रयोगात्मक ट्यूटोरियल (Practical Tutorial)

निरीक्षण युक्त ट्यूटोरियल में प्रतिभाशाली छात्र और शिक्षक नियमित रुप से समय-समय पर मिलकर समस्याओं के सम्बन्ध में चर्चा करते हैं। छात्र अपनी कठिनाइयों को व्यक्त करते हैं। शिक्षक छात्रों की कठिनाइयों को दूर करता है।

सामूहिक ट्यूटोरियल का संचालन सामान्य स्तर के छात्रों की कठिनाइयों को दूर करने के लिए किया जाता है। इस प्रकार के ट्यूटोरियल का संचालन करने के लिए शिक्षक को सामूहिक गतिशीलता तथा सामाजिक मनोविज्ञान का ज्ञान होना चाहिए।

प्रयोगिक ट्यूटोरियल का संचालन शारीरिक कौशलों के विकास तथा क्रियात्मक पक्ष के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया जाता है। इसके लिए छात्रों को प्रयोगशाला में कार्य करना पड़ता है। इस प्रकार के ट्यूटोरियल से छोटी कक्षा के छात्रों को अधिक लाभ होता है।

17.3.5 भूमिका निर्वाह (Role Playing):-

परिभाषा:- भूमिका निर्वाह एक ऐसी नीति है, जिसके द्वारा कक्षा के चार-पॉच छात्रों अथवा समूह को दूसरों के अनुभवों का अनुकरण कराया जाता है। पात्रों के रुप में विद्यार्थी अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति स्वाभाविक रुप से करते हैं। इससे उनकी अभिवृत्तियों में परिवर्तन एवं विकास होता है। भूमिका निर्वाह एक औपचारिक विधि है, जिसका प्रयोग करते समय विद्यार्थियों को बिना अभ्यास कराए ही भूमिका दे दी जाती है और विद्यार्थी उस भूमिका का निर्वाह कक्षा में करते हैं। इतिहास, विज्ञान तथा साहित्य में इस प्रकार की व्यूह रचना का प्रयोग किया जाता है।

उद्देश्य:-भूमिका निर्वाह व्यूह रचना के द्वारा छात्रों की अभिव्यक्ति का विकास, मनोरंजन, श्लाघात्मक विकास, संवेगों की रचना तथा शारीरिक अभिव्यक्ति होती है।

भूमिका निर्वाह के सोपान:

इस व्यूह रचना का उपयोग करने में निम्नलिखित पाँच: सोपानों का अनुसरण किया जाता है -

- कार्यक्रम की रुपरेखा तैयार करना।
- छात्रों की भूमिका निर्धारित करना।
- छात्रों से भूमिका निर्वाह करवाना।
- छात्रों के व्यवहारों का अवलोकन।
- छात्रों को प्रतिपुष्टि करना।

17.4.6 ब्रेन स्टॉर्मिंग (Brain Storming)

परिभाषा :- ब्रेन स्टॉर्मिंग एक जनतांत्रिक व्यूह रचना है। यह व्यूह रचना इस सिद्धांत पर आधारित है कि छात्रों को अन्तःक्रिया द्वारा अधिक सिखाया जा सकता है। इस व्यूह रचना के अन्तर्गत छात्रों को एक समस्या दे दी जाती है। छात्र समस्या पर विचार करते हैं और अनुक्रियाएँ प्रदान करते हैं। शिक्षक छात्रों की अनुक्रियाओं को श्याम पट्ट पर वर्गीकृत करके लिखता है। एक बिन्दु ऐसा आता है जब कि छात्रों के समक्ष पूरी समस्या स्पष्ट हो जाती है।

ब्रेन स्टॉर्मिंग के लिए आवश्यक बातें:

इस विधि का प्रयोग करते समय कुछ ऐसे साधनों की मदद ली जाती हैं जिनसे छात्रों को परस्पर विचार-विमर्श तर्क वितर्क तथा वाद-विवाद करने के लिए प्रेरित करते हैं। ब्रेन स्टॉर्मिंग एक समस्या केन्द्रित व्यूह रचना हैं। इसमें जहां एक ओर विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि होती है, वहीं दूसरी ओर उन्हें समूह में बैठकर - चिन्तन करने के लिए भी प्रोत्साहन मिलता है। शिक्षा शास्त्रियों का मत है कि शिक्षक की तुलना में छात्रों को समूह अधिक मूल्यवान

विचार प्रस्तुत कर सकता है। अत: शिक्षक को समय-समय पर ब्रेन स्टॉर्मिंग व्यूह रचना का प्रयोग करना चाहिए।

17.4.7 स्वाध्याय (Self Study)

परिभाषा:-विगत कुछ वर्षो से शिक्षाशास्त्रियों की ऐसी धारणा बन गयी है कि परम्परागत नीतियों द्वारा छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने के लिए बाध्य किया जाता है। परम्परागत शिक्षा नीतियों के विरोध में एक नयी व्यूह रचना का विकास हुआ है जिसे स्वाध्याय अथवा स्वतन्त्र अध्ययन कहते हैं। इस व्यूह रचना के अन्तर्गत यह आवश्यक नहीं है कि शिक्षक कक्षा में उपस्थित रहे तथा शिक्षण कार्य नियमित रुप से संचालित होता रहे। वस्तुत: यह विधि विद्यार्थी केन्द्रित है। इसका प्रयोग इस धारणा को ध्यान में रखकर किया जाता है कि इससे छात्र स्वाध्याय द्वारा अथवा स्वतन्त्र रुप से अध्ययन करके समस्या को हल कर सके।

स्वाध्याय की क्रिया विधि :- इस व्यूह रचना के अन्तर्गत छात्र या तो अकेले या छोटे-छोटे समूहों में अध्ययन करते हैं। वे अपने अध्ययन की रुप रेखा बनाकर अपना-अपना कार्य स्वयं करते हैं। स्वतन्त्र अध्ययन से जहां एक ओर छात्र अपना-अपना कार्य करने में रुचि लेते हैं, वही दूसरी ओर वे समस्या को बिना किसी कठिनाई के सफलतापूर्वक सुलझा लेते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास पैदा होता है। इस शिक्षण नीति के अन्तर्गत शिक्षक एक मार्ग दर्शक के रुप में कार्य करता है। जब छात्रों को कार्य पूरा करने और अध्यापन करने में कठिनाई उत्पन्न होती है, तो उन्हें शिक्षक से परामर्श करना पड़ता है। शिक्षक उनकी समस्याओं का निदान करके शैक्षिक निर्देशन देता है। इस नीति के अन्तर्गत शिक्षक का उत्तरदायित्व बढ़ जाता है क्योंकि शिक्षक को व्यक्तिगत निर्देशन भी देना पड़ता है।

17.4.8 सेमीनार (Seminar)

परिभाषा:- सेमीनार शिक्षा की एक ऐसी नीति है, जिससे चिन्तन स्तर के अधिगम के लिए अन्तःक्रिया की परिस्थिति उत्पन्न की जाती है। इस व्यूह रचना की विभिन्न स्तरों पर शिक्षण स्थितियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

उद्देश्य:-इस व्यूह रचना के उपयोग से अधिगम की ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती है, जिससे ज्ञानात्मक पक्ष के उच्च उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती हैं सेमीनार में भाग लेने से उच्च भावनात्मक पक्षों का विकास भी होता है। ज्ञानात्मक तथा भावनात्मक पक्षों के विकास के अतिरिक्त छात्रों को सेमीनार में अपने दृष्टिकोण रखने का तथा स्पष्टीकरण मांगने का अवसर प्राप्त होता है। प्रश्न पूछने तथा प्रश्नों के उत्तर देने के कौशल का विकास होता है। अपने विरोधी दृष्टिकोण को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने का, तर्क करने के संतुलित ढंग का विकास होता है। सेमीनार के मानक व्यवहारों के आचरण कौशल का विकास होता है।

सेमीनार के आयोजन में आवश्यक भूमिकाएँ:-सेमीनार के आयोजन में चार भूमिकाओं की आवश्यकता होती हैं - व्यवस्थापक, अध्यक्ष, वक्तागण और भागीदार सेमीनार के आयोजन

का पूर्ण दायित्व व्यवस्थापक का होता है। सेमीनार का प्रकरण, वक्ताओं के विषय में, सेमीनार की तिथियों एवं समय, कार्य की रुप रेखा तैयार करता है। अधिकांश परिस्थितियों में अध्यक्ष का भी चयन करता है।

अध्यक्ष या संचालक का चयन सेमीनार के भागीदार करते हैं। अध्यक्ष के लिऐ ऐसे व्यक्ति का चयन करना चाहिए जो प्रकरण को समझता हो। संचालन के साथ-साथ अध्यक्ष अपने कर्त्तव्यों को भी समझता हो।

व्यवस्थापक प्रकरण को तैयार करने तथा प्रस्तुतीकरण के लिए वक्ताओं का निर्धारण करता है। वक्ता प्रकरण को गहन रुप में तैयार करता है और उसकी प्रतिलिपि तैयार करके सेमीनार से पूर्व उसका वितरण कर देता है। एक अच्छा वक्ता वाद-विवाद को उत्साहित करता है। वक्ता के प्रश्नों का उत्तर देने, विरोधी विचारों के प्रति सम्मान और सहनशीलता होनी चाहिए।

भागीदार या श्रोतागण को भी प्रकरण का बोध होना चाहिए। भागीदारों को उचित प्रश्नों को सामने रखकर स्पष्टीकरण की मांग करनी चाहिए। भागीदार प्रकरण सम्बन्धी अपने अनुभवों एवं विचारों को रख सकते हैं। उन्हें अपने प्रश्नों को अध्यक्ष द्वारा वक्ता तक पहुँचाना चाहिए। सेमीनार में 25-40 भागीदारों को सम्मिलित किया जा सकता है।

सेमीनार के लिए प्रकरण पूर्वनियोजित होता है। प्रकरण के विभिन्न पक्षों के लिए एक से अधिक व्यक्ति अलग-अलग प्रपत्र तैयार कर सकते हैं। अक्सर सेमीनार की व्यवस्था एक कक्षा तथा विभाग द्वारा महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों तथा शोध संस्थाओं के स्तर पर की जाती है। सेमीनार के कार्य के संचालन के लिए सेमीनार के भागीदारों में से ही अध्यक्ष का चयन किया जाता है। यदि सेमीनार एक दिन से अधिक चलता है तो अध्यक्ष का चयन प्रतिदिन किया जाता है। प्रकरण को वक्ता द्वारा प्रस्तुत करने के पश्चात् अध्यक्ष वाद-विवाद का अवसर देता है।

वाद-विवाद के समापन पर अध्यक्ष अपने विचार प्रस्तुत करता है। इसमें यह प्रकरण सम्बन्धी वाद-विवाद के निष्कर्ष का संक्षेपीकरण करता है, प्रकरण के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है एवं अन्त में वक्ताओं की सराहना करता है और सभी भागीदारों को सहयोग के लिए धन्यवाद देता है।

सेमीनार की कार्यप्रणाली तथा वाद-विवाद के प्रमुख पक्षों का आलेख भी तैयार किया जाता है। उपयोगी प्रकरणों तथा वाद-विवाद के निष्कर्षो को भी प्रकाशित किया जाता है।

सेमीनार के प्रकार :

सेमीनार की व्यवस्था विभिन्न स्तरों पर की जाती है। इस विचार से सेमीनार को चार वर्गो में विभाजित कर सकते हैं -

1. लघु सेमीनार
2. मुख्य सेमीनार
3. राष्ट्रीय सेमीनार एवं

4. अन्तर्राष्ट्रीय सेमीनार।

सेमीनार के उपयोग:

1. ज्ञानात्मक एवं भावनात्मक विकास के लिए।
2. लोकतांत्रिक मूल्यों के विकास के लिए।
3. प्रस्तुतीकरण एवं तर्क की क्षमता विकसित करने के लिए।
4. उच्च प्रकार की अधिगम आदतों का विकास करने के लिए।
5. स्वाध्याय को प्रोत्साहित करने के लिए।
6. आलोचनात्मक चिन्तन विकसित करने के लिए।
7. प्रकरण सम्बन्धी निरीक्षण तथा अनुभवों को प्रस्तुत करने के लिए।

सेमीनार व्यूह रचना की कमियाँ:

1. किसी विषय के सभी प्रकरणों के लिए सेमीनार का आयोजन नहीं किया जा सकता है।
2. शिक्षा के सभी स्तरों पर इस व्यूह रचना का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।
3. सेमीनार में अन्तःक्रिया सम्पूर्ण में नहीं हो पाती है।
4. सेमीनार के वाद-विवाद काल में भागीदारों को विभिन्न समूहों में बंट जाने की सम्भावना रहती है।

17.5 सारांश (Summary)

शिक्षक के द्वारा शिक्षण प्रक्रिया के दौरान वांछित परिवर्तन लाने के लिए अनेक प्रकार के प्रयास किये जाते है। इस कार्य के लिए शिक्षक अनेक व्यूह रचनायें काम में लेता है। इनकी सहायता से अधिगम उद्देश्य की प्राप्ति आसान हो जाती है। ये मुख्यत: दो प्रकार की होती है (1) प्रभुत्ववादी (2) जनतांत्रिक।

कुछ मुख्य शिक्षण व्यूहरचनाएँ है - वाद-विवाद, भूमिका, निर्वाह, व्याख्यान, ट्यूटोरियल, स्वाध्याय, मस्तिष्क, विप्लव इत्यादि।

व्यूहरचना का सम्बन्ध कार्य प्रणाली से होता है। यानि वह कार्य व्यवस्था तथा नीति जिसके माध्यम से शिक्षण-लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है। व्यूहरचना की आवश्यकता एक या अनेक सम्बन्धित पाठों के संदर्भ में अनुभव की जाती है।

यह एक या कई पाठों की सामान्यीकृत व्यवस्था है, जिसमें संरचना अनुदेशनात्मक लक्ष्यों के अनुसार वांछनीय छात्र व्यवहार, तथा इसके सफल कार्यान्वयन हेतु सुनियोजित युक्तियों की रूपरेखा उपलब्ध होती है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. शिक्षण व्यूह रचनायें किसे कहते है?
   What do you mean by Main Teaching Strategies?
3. शिक्षण व्यूहरचनायें मुख्य रूप से कितने प्रकार की होती है?

What are th Main Teaching Strategies?

4. व्याख्यान को प्रभावित करने वाले कारक कौन-कौन से है?
What are the effecting factors to Lecture?

5. ट्यूटोरियल किसे कहते है और ये कितने प्रकार के होते है?
What do you mean by Tutorial and What are the Types?

6. भूमिका निर्वाह के सम्बन्ध में संक्षिप्त में टिप्पणी लिखे।
Write short note on 'Role Play'.

17.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

MC Closky, M.C.	:	Teaching Strategies and class-room (Editor)Realties, Prentice-Hall, IMC,Englewood cliffs, New Jersey, 1971
Gerhand, M.	:	Effective teaching Strategies with the Behavioural Outcomes Approach, Parker Pub. Company, West Nyack N.Y. 1971.
भटनागर, आर.पी.एवं भटनागर एस.	:	शिक्षक तकनीकी, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाऊस, मेरठ, 1992

इकाई-18

शिक्षण की व्यवस्था (Organising Teaching)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

18.1 प्रस्तावना
(Introduction)

18.2 शिक्षण की व्यवस्था का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Organizing Teaching)

18.3 शिक्षण व्यवस्था की प्रमुख क्रियाएँ
(Main Operations of Organizing Teaching)

18.3.1 उपयुक्त शिक्षण युक्तियों का चयन
(Selecting Appropriate Teaching Tactics)

18.3.2 अधिगम की उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री का चयन
(Selecting an Appropriate Audio Visual Learning Aids)

18.3.3 उपयुक्त सम्प्रेषण नीतियों का चयन
(Selecting an Appropriate Communication Strategies)

18.4 उपयुक्त कक्षा आकार का चयन
(Selecting an Appropriate Class Size)

18.4 सारांश
(Summary)

18.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

18.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अधिगम के पश्चात् विद्यार्थी-

- शिक्षण की व्यवस्था का अर्थ स्पष्ट कर सकें।
- उपयुक्त शिक्षण युक्तियों के चयन की व्याख्या कर सकेंगे।
- अधिगम की उपयुक्त श्रव्य-दृश्य सामग्रियों का उल्लेख कर सकेंगे।
- उपयुक्त कक्षा आकार के चयन को परिभाषित कर सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना (Introduction)

शिक्षा के क्षेत्र में आज विभिन्न प्रकार के परीक्षण किये जा रहें हैं। अनेक नवीन प्रवृत्तियाँ तथा कार्य पद्धतियाँ शिक्षण के क्षेत्र में प्रचलित हो रही हैं। अब पढ़ाने की अपेक्षा सीखने पर अधिक जोर दिया जा रहा है। विज्ञान एवं तकनीकी के उच्चतम विकास के फलस्वरूप आज शिक्षण को एक उच्चतम व्यावसायिक क्रिया समझा जाने लगा है। शिक्षक का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य है- अपने छात्रों के लिये शैक्षिक लक्ष्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों की रचना करना और उन्हीं के अनुसार छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाने की चेष्टा करना। इस हेतु अध्यापक को शिक्षण की उचित व्यवस्था करनी होती है। शिक्षण की व्यवस्था के अन्तर्गत अध्यापक को विभिन्न कार्य करने होते हैं, यथा-उपयुक्त शिक्षण युक्तियों का चयन, उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री का चयन, उपयुक्त सम्प्रेषण नीतियों का चयन, उपयुक्त कक्षा-आकार का चयन आदि। प्रस्तुत इकाई में इन्हीं बिन्दुओं का उल्लेख किया गया है।

18.2 शिक्षण व्यवस्था का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Organizing Teaching) -

शिक्षण में पूर्व निश्चित उद्देश्यों के अनुरूप अधिगम क्रियाओं के माध्यम से प्रदान करता हैं। अधिगम क्रियाओं का क्रमबद्ध आयोजन ही शिक्षण व्यवस्था है। शिक्षण व्यवस्था के माध्यम से छात्रों के व्यवहार में निर्देशित परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। आइवर के डेवीज के अनुसार-'शिक्षण व्यवस्था शिक्षक का वह कार्य है, जिसमें वह सीखने के साधनों को व्यवस्थित व सम्बन्धित करता है जिससे सीखने के उद्देश्यों की प्राप्ति बहुत प्रभावशाली, कुशलता पूर्ण व मितव्ययी रीति से सम्पन्न करना सम्भव हो सके।

18.3 शिक्षण व्यवस्था की प्रमुख क्रियाएँ (Main Operations of Organizing Teaching) :

शिक्षण व्यवस्था की चार क्रियाओं का वर्णन किया है जिनका विस्तृत उल्लेख निम्नलिखित है-

(अ) उपयुक्त शिक्षण युक्तियों का चयन (Selecting an Appropriate Audio Visual Learning Aids)

(ब) अधिगम की उपयुक्त दृश्य-सामग्री का चयन (Selecting an Appropriate Audio Visual Learning Aids)

(स) उपयुक्त संप्रेषण नीतियों का चयन (Selecting Appropriate Communication Strategies)

(द) उपयुक्त कक्षा आकार का चयन (Selecting an Appropriate Class Size)

18.3.1 (अ) उपयुक्त शिक्षण युक्तियों का चयन (Selecting Appropriate Teaching Tactics) -

शिक्षण युक्तियों लक्ष्य से सम्बन्धित होती हैं और शिक्षक के व्यवहार को प्रभावित करती हैं। शिक्षण युक्तियों के अन्तर्गत वे सभी बातें आ जाती है, जो पढ़ाते समय परिस्थितियों के अनुसार शिक्षक को करनी पड़ती है। "शिक्षक युक्तियाँ शिक्षण नीतियों की अपेक्षा अधिक गहरी तथा विस्तृत होती है।" एक शिक्षण की जा सकती है, जिससे कि पाठ्यवस्तु छात्र भली-भाँति हृदयंगम कर लेते हैं। ये युक्तियाँ ज्ञान को रोशनी देकर स्थिर बनाने का प्रयास करती हैं और शिक्षण के स्वरूप को सरल एवं स्पष्ट करती है।

शिक्षक शिक्षण में सबसे पहले पाठ्यवस्तु को विभिन्न इकाइयों में विभाजित कर लेता है। इसके पश्चात् प्रत्येक इकाई को पाठ्यवस्तु विश्लेषण के आधार पर विभिन्न उपइकाईयों में विभाजित कर लेता है। प्रत्येक शिक्षण बिन्दु को व्यवहार परख उद्देश्य के रूप में परिभाषित करने के पश्चात् हर शिक्षण बिन्दु के अनुरूप विभिन्न शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों का प्रयोग करते हुए अधिगम अनुभवों का आयोजन करता है। इस प्रकार शिक्षण व्यवस्था के माध्यम में शिक्षक छात्र अन्तःक्रिया, छात्र-छात्र अन्त:क्रिया तथा स्वयं अपनी अन्त:क्रिया का अवसर प्रदान करता है। हर इकाई तथा अधिगम का अपना स्वरूप होता है जिसको अधिगम स्वरूप होता है उसको अधिगम स्वरूप कहते हैं। अत: अधिगम स्वरूप के अनुसार ही शिक्षण युक्तियों का चयन किया जाता है। राबर्ट गेने के अनुसार प्रमुख अधिगम स्वरूप निम्नलिखित हैं-

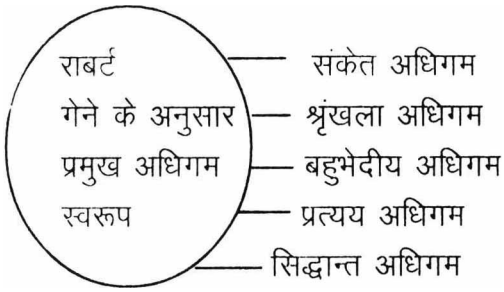

(1) **संकेत अधिगम (Signal Learning):-** संकेत अधिगम संरचना में अधिगम करना किसी संकेत के प्रति अनुक्रिया करना है। इसको उद्दीपन-अनुक्रिया अधिगम के (S-R) नाम से भी पुकारते हैं। इस अधिगम के अन्तर्गत छात्रों को उद्दीपक विशेष के प्रति अनुक्रिया कराते हैं ताकि उद्दीपक अनुक्रिया पुनर्बलन द्वारा दृढ़ हो जाये। अत: अधिगम स्वरूप के लिये-

1. छात्र को अनुक्रिया के लिये उद्दीपन दिया जाये।
2. सही अनुक्रिया को पुनर्बलन द्वारा दृढ़ किया जाये तथा अवांछनीय अनुक्रिया को छोड दिया जाये
3. छात्रो को निरन्तर अभ्यास तथा पूर्नबलन दिया जाये

(2) **श्रृंखला अधिगम (Chain Learning):-**श्रृंखला अधिगम संरचना के अन्तर्गत शिक्षक पाठ्य-वस्तु को एक निश्चित क्रम या श्रृंखला में प्रस्तुत करता है। इसमें पहले से सीखे गये दो संकेत (Signal) होते हैं।

जो पूर्व निर्धारित क्रम से आगे बढ़ते हैं और श्रृंखला का निर्माण करते हैं। श्रृंखला संरचना में पहले सीखे गए संकेतों की जानकारी अवश्य होनी चाहिए। इसीलिये इसको पहले से सीखे हुए संकेतों का क्रम भी कहा जा सकता है। श्रृंखला में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है तथ्यों के क्रम (Sequence) में होना। गेने ने दो तरह की श्रृंखला संरचना बताई हैं-

(i) शाब्दिक श्रृंखला (Verleal chain learning), जैसे कविता पाठ।

(ii) अशाब्दिक श्रृंखला (Non-Verleal Chain Learning):- साइकिल चलाना।

(1) इस अधिगम संरचना में तीन युक्तियाँ काम में लाई जाती है-

(2) आगे बढ़ने की श्रृंखला (Progressive Chaining):- इसमें संकेत से आगे बढ़कर श्रृंखला के अन्तिम बिन्दु तक पहुँचते हैं।

(3) रटकर सीखना (Rote Learning):- इसमें श्रृंखला के प्रत्येक तत्व को रटकर याद किया जाता है।

(4) पीछे हटने की श्रृंखला (Retrogressive chaining):-इसमें आगे बढ़ने के विपरीत श्रृंखला के अन्तिम बिन्दु से चलकर श्रृंखला के प्रारम्भ तक पहुँचते हैं।

उपर्युक्त तीनों युक्तियों में पीछे हटने की श्रृंखला अधिक प्रभावशाली मानी जाती है। ज्ञानात्मक एवं भावात्मक अधिगम की अपेक्षा क्रियात्मक (Psychornotor) अधिगम अधिक स्थायी होता है।

श्रृंखला अधिगम में निम्न शिक्षण युक्तियों का प्रयोग होता है-

(1) छात्र के समक्ष श्रृंखला पूर्ण रूप में प्रस्तुत की जाए।

(2) शुरू में संकेत अधिगम क्रमशः दिये जाएं। पीछे हटने की श्रृंखला में अन्तिम अनुक्रिया पहले और पहली अनुक्रिया पहले और पहली अनुक्रिया सबसे बाद में प्रस्तुत की जाए।

(3) श्रृंखला का अभ्यास कराया जाए ताकि मुश्किल तथ्य भी सरलता से याद हो सके।

(3) **बहुभेदीय अधिगम (Multiple Discrimination):-** इसमें पहले संकेत एवं श्रृंखला की संरचना आवश्यक है। बहुभेदीय अधिगम में एक तथ्य से अलग करके उनमे अन्तर स्पष्ट किया जाता है। यह संरचना छात्रों के अनुभव द्वारा विकसित होती है। अत. आवश्यकतानुसार मध्यमस्थों या जाड़ने वाले उकसावों (Prompts or cues) का प्रयोग किया जाता सकता है। इसमें चार शिक्षण युक्तियाँ महत्त्वपूर्ण हैं-

(i) उद्दीपन व अनुक्रिया स्पष्ट होनी चाहिये।

(ii) सभी परिस्थितियों एवं तथ्यों को एक साथ छात्रों के समक्ष रखा जाए ताकि वे तुरन्त अन्तर खोज सके।

(iii) छात्रों का अन्तर ज्ञात करने के लिये उचित अवसर प्रदान किये जाएं। उन्हें 'सरल से कठिन' सूत्र का प्रदान सिखाना चाहिये।

(iv) अन्तर के लिये छात्रों को अभ्यास कराया जाए, जिससे वे कठिनाइयों को दूर कर सके।

(4) **प्रत्यय अधिगम (Concept Learning):-** इस अधिगम में छात्र उद्दीपन के प्रति अमूर्त विशेषताओं के प्रति अनुक्रियाएं करता है, विषय का प्रत्यय अधिगम में प्रमुख स्थान हो जाता है। छात्रों में सामान्यीकरण की क्षमता का विकास किया जाता है संकेत तथा श्रृंखला अधिगम का ज्ञान होने पर प्रयत्न तथा अवधि द्वारा बालक प्रत्ययों को सीखता है। सामान्यीकरण के पश्चात् छात्रों के समक्ष ऐसी

परिस्थितियाँ उत्पन्न करनी चाहिये कि वे दो भ्रांत पूर्ण प्रयासों में विभेदीकरण कर सके। प्रत्यय अधिगम में निम्न युक्तियों का प्रयोग किया जाता है-

(i) सभी परिस्थितियों को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, जिससे कि छात्र तुरन्त सामान्यीकरण कर सकता है।

(5) **अधिनियम अधिगम (Principle Learning):-** इस प्रकार की संरचना में दो या दो से अधिक प्रत्ययों की श्रृंखला शामिल होती है। इस श्रृंखला में के प्रत्ययों में परस्पर सम्बन्ध होता है। अत: प्रत्येक सिद्धान्त को समझाने के लिये उससे सम्बंधित प्रत्ययों का ज्ञान होना आवश्यक है। इस में अधिनियम अधिगम शिक्षण युक्तियाँ प्रयोग की जाती हैं-

(i) सिद्धान्त के बारे में पूरी जानकारी दी जाए।

(ii) सिद्धान्त में नियत तथ्यों को एक श्रृंखला में प्रस्तुत किया जाए।

(iii) प्रत्ययों का प्रत्यास्मरण तथा अभ्यास कराया जाए।

(ब) अधिगम उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री का चयन (Selecting an Appropriate A.V Learning Aids):- शिक्षण की व्यवस्था में दृश्य-श्रृव्य सामग्री का महत्व है। इनके प्रयोग द्वारा छात्रों की ज्ञान की वास्तविकता का बोध होता है। सहायक सामग्री शिक्षण को सरल तथा स्पष्ट बनाती है। छात्र विषयवस्तु को सही रूप में जानने में समर्थ होते हैं। सहायक सामग्री के चयन में चित्रों की अपेक्षा वास्तविक वस्तुओं को वरीयता (Preference) दी जाती है। सहायक सामग्री का उद्देश्य श्रवण व दृष्टि की ज्ञानेन्द्रियों को सक्रिय बनाकर ज्ञान ग्रहण करने के मार्ग खोलना है।

सहायक सामग्री के उद्देश्य (Objectives of A.V. Aids):-

(i) बालकों की पाठ के प्रति रुचि पैदा करना तथा विकसित करना।

(ii) बालकों को तथ्यात्मक सूचनाएँ रोचक ढंग से प्रदान करना।

(iii) बालकों को अधिक क्रियाशील बनाना।

(iv) पढ़ने में अधिक क्रियाशील बनाना।

(v) अभिवृत्तियों पर आशानुकूल प्रभाव डालना।

(vi) तीव्र एवं मन्दबुद्धि बालकों को योग्यतानुसार शिक्षा देना।

(vii) पाठ्यसामग्री को स्पष्ट सरल तथा बोधगम्य बनाना।

(viii) बालक को ध्यान पाठ की ओर केन्द्रित करना।

(ix) बालकों की निरीक्षण शक्ति का विकास करना।

(x) अमूर्त पदार्थो को मूर्त रूप देना।

श्रृव्य–दृश्य शिक्षण साम्रगी

दृश्य साम्रगी		श्रृव्य साम्रगी	दृश्य श्रव्य साम्रगी
सामान्य	यांत्रिक	1. रेडियो	1. दूरदर्शन
1. श्याम पट्ट	1. चित्र विस्तारक यंत्र	2. ग्रामोफोन	2. फिल्मस
2. फलालैन पट्ट	2. प्रक्षेपण यंत्र	3. टेपरिकार्डर	3. नाटक
3. लपेट फलक	(क) ओवरहैड़ प्रोजेक्टर		4. संगणक
4. चित्र	(ख) फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर		5. इण्टरनेट
5. मापचित्र	(ग) स्टिरियोस्कोप		6. टेलीटीचिंग एवं टेलीक्रॉन्फ्रैसिग
6. रेखाचित्र	(घ) एपीडायस्कोप		
7. चार्ट			
8. संग्रहालय			
9. प्रतिकृति (मॉडल)			
10. पत्र–पत्रिकाएं			
11. एटलस			
12. शैक्षिक भ्रमण			
13. वास्तविक–पदार्थ			
14. कठपुतली			
15. समयरेखा			

दृश्य-साधन:- ये वे साधन हैं जिन्हें देखकर विषयवस्तु को समझने में सहायता मिलती है। ये दो प्रकार के होते हैं (i) सामान्य दृश्य साधन, (ii) यांत्रिक दृश्य साधन।

(i) **सामान्य दृश्य साधन** - ये वे दृश्य साधन हैं जिनके प्रयोग के लिये किसी मशीन व विद्युत की आवश्यकता नहीं पड़ती है। शिक्षक स्वयं ही इन्हें कक्षा में प्रयुक्त कर सकता है।

(i) **श्यामपट्ट**:- प्राध्यापक के लिये चॉक तथा बोर्ड उतने ही आवश्यक है, जितने कि एक सैनिक के लिये शस्त्र। प्रभावशाली प्रध्यापक सदैव इनका प्रयोग करता है।

श्यामपट्ट प्रयोग में सावधानियां:- श्यामपट्ट के प्रयोग में निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिये-

(1) श्यामपट्ट पर जो लेख लिखा जाए, वह स्पष्ट, शुद्ध, आकर्षक और सुगमता से पढ़ा जाने वाला होना चाहिये।

(2) श्यामपट्ट पर लिखने की गति बहुत धीमी नहीं होनी चाहिए।

(3) श्यामपट्ट पर बहुत अधिक व बहुत देर तक नहीं लिखते रहना चाहिये।

(4) किसी विशिष्ट बात, तथ्य या सूचना पर जोर देने के लिये उसे रंगीन चॉक से रेखांकित कर देना चाहिये।

(5) चित्र, तालिका आदि रंगीन चॉक से बनाने चाहिये।

(6) लिखते समय साथ-साथ बोलते भी रहना चाहिये तथा बीच-बीच में पीछे छात्रों की और भी ध्यान देना चाहिये ताकि अनुशासन बना रहे।

(7) श्यामपट्ट पर व्यर्थ बातें नही लिखनी चाहिये।

(8) श्यामपट्ट पर जो बात जितनी देर के लिये आवश्यक है, उसे उतनी ही देर लिखा रहना चाहिये।

(9) श्यामपट्ट पर लिखते समय कुछ तिरछे खड़े होकर लिखना चाहिये जिससे कि श्यामपट्ट शिक्षक के शरीर से ढक न जाए और बालकों को लिखा हुआ दिखाई दे सके।

(10) शिक्षक को खडिया से खेलते नहीं रहना चाहिये।

(11) लिखते समय खडिया की किट-किट या श्यामपट्ट की आवाज नहीं होनी चाहिये।

(12) जहाँ कही भी सम्भव हो बालकों को श्यामपट्ट का उपयोग करने का अवसर देना चाहिये।

(13) श्यामपट्ट को हाथ से साफ नहीं करना चाहिये।

(14) श्यामपट्ट पर लिखी सामग्री को समझाने हेतु संकेतक का प्रयोग करना चाहिये।

(15) कक्षा छोड़ने से पूर्व श्यामपट्ट को साफ कर देना चाहिये।

(2)फलालैन पट्ट:- यह लकडी का बना एक बोर्ड होता है, जिस पर फलालैन का कपड़ा चढ़ा रहता है। चित्रों शब्दों आदि को कागज लगाकर फलालैन पर चिपकाया जाता है। कथा रचना, युद्ध वर्णन आदि से सम्बन्धित चित्र क्रमानुसार इस बोर्ड पर लगाकर शिक्षण को रोचक बनाया जा सकता हैं।

(3)लपेट फलक- लपेट फलक रैग्जीन से बना बोर्ड होता है। इस पर मूल्यांकन प्रश्नों को घर से लिखकर ले जाया जाता है। अभ्यास कार्य भी इस पर कराया जाता है। पद्य शिक्षण के अन्तर्गत कठिन शब्दार्थ इस पर लिखकर ले जाए जाते हैं।

(4)चित्र:- चित्रों का प्रयोग विषय की व्याख्या करने में हो सकता है या पाठ विकास में बालक जहाँ भी कठिनाई अनुभव करे, उसका स्पष्टीकरण करने में हो सकता है। वस्तु की स्पष्ट धारणा बनाने में सहायक हो सकता हैं। चित्र उपयुक्त, बड़े तथा स्पष्ट होने चाहिये।

(5)मानचित्र:- भौगोलिक एवं ऐतिहासिक पाठ्यवस्तु हो तो वही मानचित्र स्थिति को स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

(6)रेखाचित्र:- रेखाओं द्वारा आकृति प्रदान करके भी विषयवस्तु को स्पष्ट किया जा सकता है। चित्र, प्रतिकृति आदि के अभाव में अध्यापक इनका प्रयोग कर सकता है। किसी बिन्दु का वर्गीकरण दर्शाने में भी रेखाचित्र सहायक होते हैं।

(7)चार्ट:- चार्ट में चित्र इत्यादि बड़े कागज पर दर्शाये जाते हैं। इनकी सहायता से बालक पाठ में रुचि लेने लगते हैं और बहुत सें कठिन स्थलों का स्पष्टीकरण हो जाता है।

(8)संग्रहालय:- संग्रहालय ऐसा स्थान है, जहाँ प्राचीन और दुर्लभ वस्तुएं रखी जाती हैं। छात्रों को भी इस प्रकार की वस्तुऐं एकत्रित करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। छात्रों द्वारा एकत्रित की गई वस्तुओं को विशेष क्रम में वर्गीकृत कर शिक्षण को रोचक बनाया जा सकता है।

(9)प्रतिकृति (मॉडल):- किसी वैज्ञानिक महत्व के विषय के स्पष्टीकरण में प्रतिकृति का महत्वपूर्ण स्थान है। यथा- उद्योग धन्धों, विभिन्न बॉध परियोजनाओं, प्रसिद्ध इमारतों आदि के विषय में छात्रों की स्पष्ट धारणा निर्मित करने में यह लाभदायक है। इसके निर्माण में छात्रों का सहयोग लिया जाए, तो शिक्षण और भी रोचक हो जाता है।

(10) पत्र-पत्रिकाएं:- वर्तमान मे ज्ञान के अत्यधिक विस्फोटक के कारण छात्र केवल निर्धारित पाठ्यक्रम के पाठ पढ़कर ही सन्तुष्ट नहीं होते। अत: उन्हें विषय के अतिरिक्त जानकारी देने हेतु पत्र-पत्रिकाओं का ज्ञान देना भी आवश्यक है। विषय से सम्बन्धित कौन-कौनसी पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। उनके प्रकाशक कौन हैं। वे कहीं उपलब्ध हो सकती है। ताकि वे इनकी सहायता से ज्ञानवर्द्धन कर सके।

(11) एटलस:- इतिहास में प्रसिद्ध नगरों, विभिन्न राज्यों की राजधानी, अनेक स्थलों व अन्य आवश्यकता, ऐतिहासिक तथ्यों का ज्ञान छात्र स्वयं एटलस के माध्यम से कर सकते हैं। छात्र को एटलस स्वाध्याय के लिये प्रेरित करता है। अत: प्रत्येक छात्र के पास व विद्यालय में एक ऐतिहासिक एटलस अवश्य होना चाहिये।

(12) शैक्षिक भ्रमण:- पर्यटन ज्ञान करने का स्थल तथा वास्तविक साधन है। इसके अन्तर्गत छात्र प्राकृतिक एवं सामाजिक वातावरण में शिक्षण की समस्याओं को समझने तथा परखने का प्रयास करते हैं। निरीक्षण द्वारा यथार्थ रूप से ज्ञानार्जन करना छात्रों को रुचिकर भी लगता है।

(13) वास्तविक पदार्थ:- मेढ़क, चूहा, पौधे, फूल, बीज, पत्ती आदि जैसी वस्तुएं कक्षा में प्रत्यक्ष रुप से दिखाई जा सकती हैं। प्रत्यक्ष वस्तुओं को देखकर छात्र द्वारा वस्तुए अति उपयोगी तथा सजीव साधन मानी जाती हैं।

(14) कठपुतली:- कठपुतलियाँ छोटे बच्चों को शिक्षा देने हेतु प्रभावशाली सामग्री है। भारतीय संस्कृति के विभिन्न प्रसंग कठपुतलियों द्वारा ही प्रस्तुत किये जाते थे तथा मनोरंजन के रूप में काम में ली जाती थी। इनके प्रयोग से बालक खेल-खेल में ही विषय सामग्री का ज्ञान प्राप्त कर सके हैं, साथ ही बालकों का मनोरंजन भी हो जाता है।

(15) समय रेखा:- समय रेखा कालक्रम का ज्ञान प्रदान करने में सहायता प्रदान करती है। समय रेखा में समय को विभिन्न प्रकार से (क्षैतिज, लम्बवत्) प्रदर्शित किया जाता है। विभिन्न ऐतिहासिक घटनाओं की तिथियाँ भी कालक्रम से लिखी जाती हैं। किसी भी महान् व्यक्ति का जीवन परिचय, किसी, साम्राज्य के उद्भव, विकास एवं पतन के कारणों व परिणामों को समय-रेखा द्वारा प्रदर्शित किया जीता - है।

(ii) यांत्रिक दृश्य साधन:-

वे दृश्य साधन हैं, जिनके लिये विद्युत तथा यंत्रो की आवश्यकता पड़ती है। कुछ प्रमुख यांत्रिक दृश्य साधन निम्नानुसार हैं:-

(1) **चित्र विस्तारक यंत्र**:- चित्र विस्तारक यंत्र की सहायता से छोटे चित्रों को बड़ा आकार प्रदान किया जा सकता है। ये ध्वनि रहित होते हैं। अध्यापक पाठ्यपुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं आदि में से चित्र लेकर इस यंत्र की सहायता से विषय को स्पष्ट कर सकता है। इससे चित्र बनाने में लगने वाले समय की बचत हो सकती है।

(2) प्रक्षेपण यंत्र:-

(क) ओवरहैड प्रोजेक्टर:- पारदर्शिकाएं तैयार कर ओवरहैड प्रोजेक्टर की सहायता से प्रस्तुत की जा सकती है। ये पारदर्शिकाएं सभी विषयों के लिये उपयोगी हैं।

(ख) फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर:- इस यंत्र की सहायता से किसी विषय से सम्बन्धित कई चित्रों का प्रदर्शन करके उसका पूरा बिम्ब छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है।

(ग) स्टिरियोस्कोप:- किसी प्राकृतिक दृश्य या ऐतिहासिक स्थल को मूर्त रूप देने में यह यंत्र उपयोगी होता है।

(घ) एपिडायस्कोप:- छपी हुई पुस्तकों को इस स्कोप के नीचे रखा जाता है तथा उसका बिम्ब पर्दे पर आ जाता है तथा उसका बिम्ब पर्दे पर आ जाता है, जिसे सभी छात्र देख व पढ़ सकते हैं।

श्रव्य साधन:- श्रृव्य साधन वे साधन हैं, जिन्हें सुनने से विषयवस्तु को समझने में सहायता मिलती हे। ये निम्नलिखित हैं-

(1) रेडियो:- रेडियो द्वारा समाचार तथा दूर-दूर स्थानों में होने वाली घटनाओं का वर्णन सुना जा सकता है, इससे व्यक्ति के सामान्य ज्ञान में बुद्धि होती है। आदर्शमय व्याख्यान सुनने से बालकों का नैतिक विकास होता है। देश-विदेश के विद्वानों के विचारों से बालकों को अवगत कराया जाता है। भाषायी विकास की दृष्टि से भी रेडियो का अत्यधिक महत्व हैं।

(2) ग्रामोफोन:- ग्रामोफोन द्वारा बालकों को मनोरजन एवं शिक्षण प्राप्त हो सकता हैं। इसमें ऐसे रिकॉर्ड बजाये जा सकते हैं, जो अच्छे गीतों ऐसे के हो या अच्छे भाषणों के हो या नये शैक्षणिक मूल्य रखने वाली कहानी या नाटक के हों। इन रिकॉर्डों को सुनने में बालकों की रुचि बनी रहती है और वह सरलता से जो बात उसे समझानी है, समझ जाता है।

(3) टेपरिकॉर्डर- टेपरिकॉर्डर द्वारा किसी विषय विशेषज्ञ की वार्त्ता, व्याख्या, वाद-विवाद भाषण आदि का टेप किया जा सकता है तथा बाद में इसके द्वारा छात्रों को आवश्यक जानकारी दी जा सकती है।

दृश्य-श्रव्य सामग्री:-दृश्य-श्रव्य सामग्री से तात्पर्य उन साधनों से हैं, जिनमें श्रृव्य तथा दृश्य दोनो इन्द्रियों का प्रयोग होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से इन साधनों का प्रयोग होता है। मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से इन साधनों का प्रयोग अधिक प्रभावशाली होता है, क्योंकि किसी भी पाठ का जो अंश देखने से समझ में नहीं आता है, वह सुनने से तथा जो सुनने से समझ में नहीं आता, वह देखने से शीघ्रता से समझ में आ जाता है। प्रमुख श्रृव्य-दृश्य साधन निम्नानुसार हैं-

(1) दूरदर्शन:- वर्तमान में दूरदर्शन पर छोटे बालकों से लेकर प्रौढों तक के लिये अनेक कार्यक्रम प्रसारित हो रहे हैं। विश्वविद्यालय अनुदान अयोग द्वारा देशव्यापी कक्षा-कक्ष के प्रोग्राम कालेज के विद्यार्थियों के लिये बहुत लोकप्रिय हैं। शिक्षक को विभिन्न पत्र- 'पत्रिकाओं अथवा दूरदर्शन केन्द्रों से आवश्यक सामग्री प्राप्त कर छात्रों को उतरने अवगत कराकर उन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से शैक्षिक कार्यक्रम देखने को प्रेरित करना चाहिये।

(2) फिल्मस:- विभिन्न स्थानों पर घटित क्रियाओं को फिल्मस अथवा चलचित्र की सहायता से कक्षा में दिखाया जा सकता है। जैसे-खेल के मैदान हुआ खेल या किसी फैक्टरी का कार्यक्रम फिल्म द्वारा दिखाया जा सकता है। इतिहास के पृष्ठों से लिये हुये कई शताब्दियों के दृश्य कुछ ही समय में कक्षा में प्रस्तुत किये जा सकते है। यथा, पदिमनी का जौहर, पृथ्वीराज संयोगिता का विवाह आदि को वास्तविक रूप से चलचित्र द्वारा दिखाया जा सकता है।

(3) नाटक:- भाषा, इतिहास, अर्थशास्त्र, नागरिक-शास्त्र, सामाजिक अध्ययन आदि के पाठों को नाटक की सहायता से सरलता पूर्वक हृदयंगम कराया जा सकता है- (i) कक्षाभिनय प्रणाली से (ii) रंगमंचीय अभिनय से।

(4) संगणक:- शिक्षण में कम्प्यूटर का प्रयोग दो प्रकार से किया जा सकता है, जिसके कारण से इसके माध्यम से प्रदत्त शिक्षा के कारण शिक्षा के दो रूप हैं- (i) कम्प्यूटर सहायक शिक्षण, (ii) कम्प्यूटर प्रशासित शिक्षण।

(i) **कम्प्यूटर सहायक शिक्षण**:- यह शिक्षण की अति सरल एवं स्वाभाविक विधि है। इसमें छात्र को एक-टेली टाइपराईटर के सम्मुख बैठा दिया जाता है। कम्प्यूटर द्वारा तथ्य सूचना टाइप की जाती है। जिसके प्रत्युत्तर में छात्र अपने की-बोर्ड पर टाइप करता है। इस प्रकार कम्प्यूटर छात्रों की बड़ी संख्या के शिक्षण हेतु प्रयोग किया जाता है। इसे कम्प्यूटर बेस्ट लर्निंग भी कहा जाता है।

(ii) **कम्प्यूटर प्रशासित शिक्षण**:- इसमें शिक्षक की शैक्षिक प्रक्रिया को प्रशासित करने मे सहायतार्थ कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है, जो छात्रों की योग्यता का मापन करने और शिक्षण सम्बन्धी प्रस्तावित कोर्स को पूर्ण कराने में शिक्षक की सहायता करता है।

(5) इण्टरनेट:- इण्टरनेट एक अन्तर्राष्ट्रीय नेटवर्क प्रणाली है, जो अनेक नेटवर्क को आपस में जोडती है। किसी भी विषय से सम्बंधित शिक्षा सम्बन्धी सूचनाएं इण्टरनेट के द्वारा संगणक के पर्दे पर आ जाती हैं। इस प्रणाली से जुड़े कम्प्यूटर के मध्य तेज गति से ऑकड़ों का सम्प्रेषण, इलेक्ट्रॉनिक अखबार पढ़ना, विश्व के किसी भी व्यक्ति से बात करना, देश-विदेश के पुस्तकालयों से सम्पर्क रखना, पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन भी सम्भव है। इसमें टेलीविजन कनेक्शन का होना अनिवार्य है।

(6) टेलीटीचिंग एवं टेलीकॉन्फ्रैसिंग:- इस तकनीकी का प्रयोग क्षेत्रीय सीमाओं के पार विद्यार्थी शिक्षक तथा शैक्षिक संस्थाओं को आपस मे जोडने के लिये होता है। इस तकनीकी की सहायता से विभिन्न प्रदेशों के विद्वानों व शैक्षिक संस्थाओं से जुड़कर छात्रों का ज्ञान वर्द्धन कर से सकते हैं। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय में दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में इस तकनीकी का प्रयोग किया जा रहा हैं।

(स) उपयुक्त सम्प्रेषण नीतियों का चयन (Selecting Appropriate Communication Strategies):- शिक्षण के संगठन को प्रभावशाली बनाने के लिये यह आवश्यक है कि इसमें सम्प्रेषण (Communication) होता रहे। सम्प्रेषण का तात्पर्य है:- एक विचार का दूसरे के द्वारा ग्रहण करवाना। शिक्षक को प्रशिक्षण विद्यालयों में छात्रों को जटिल नियमों, पद्धतियों तथा निर्देशन आदि के बारे में बताना पड़ता है। इसके लिये वह पाठ्यवस्तु के साथ-साथ सम्प्रेषण का भी उपयोग करता हैं। वह पहले पाठ्यवस्तु का विश्लेषण करता है कि प्रकरण सम्बन्धी जानकारी कैसे छात्रों तक सम्प्रेषित की जाए या पहुँचाई जाए तथा सम्प्रेषण के लिये कौनसी नीतियाँ अधिक उपादेय होगी, कौनसी नहीं। अत: यह आवश्यक है कि शिक्षक को सभी सम्प्रेषण नीतियों के विषय में ज्ञान हो। आइवर के डेवीज ने आदान-प्रदान की समस्या के निराकरण हेतु चार नीतियों का वर्णन किया है। ये दो प्रमुख भागों के अन्तर्गत हैं-

1. वे नीतियाँ जो सही समाधनों के चयन का आश्वासन नहीं देती।

2. वे जो आवश्यक सूचना की उपलब्धि में सही समाधनों के चयन का आश्वासन देती है प्रथम श्रेणी में दो नीतियाँ

(i) निरन्तर गद्य (Continuous prose) और

(ii) खोज प्रक्रिया (Heuristics) हैं। दूसरे भाग के अन्तर्गत भी दो नीतियाँ

(iii) अंकन तथा एल्गोरिथमस (Algorithms) तथा

(iv) निर्णय तालिका (Dcisiontateles) है। प्रत्येक का विस्तृत वर्णन निम्नलिखित है-

(i) निरन्तर गद्य (Continuous prose):- इसमें विद्यार्थियों को विभिन्न तथ्यों तथा सूचनाओं का ज्ञान प्रदान कर उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती हैं। इसमें शैली एवं भाषा, जिसमें सूचनाएं दी जा रही है- महत्वपूर्ण होती हैं। अत: शिक्षक को चाहिये कि वह सरल, सुगम तथा स्पष्ट शब्दों का प्रयोग करें तथा समस्त सूचनाएं छोटे-छोटे तथा स्पष्ट पदों में प्रस्तुत करें। पाठ्यवस्तु पढ़ाने के लिये सही वाक्यों का प्रयोग करें और क्रमबद्ध रुप से विचार रखे। इसके लिये व्याख्यान विधि (Lecture Method) तथा अभिक्रमित अध्ययन (Programmed Instruction) आदि का प्रयोग किया जाता है। गद्य सम्प्रेषण का प्रयोग करते समय निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी चाहिये-

(1) गद्य या प्रकरण की संरचना क्रमबद्ध, सरल, प्रवाहपूर्ण तथा स्पष्ट हो।

(2) जटिल तथ्यों के लिये छोटे तथा सरल वाक्य प्रयोग किये जाएं।

(3) संयुक्त वाक्यों का प्रयोग किया जाए।

(4) नकारात्मक (Negative) वाक्यों का प्रयोग न किया जाए।

(ii) खोज प्रक्रिया (Heuristic):- सम्प्रेषण की इस विधि का प्रयोग पोल्या तथा डनकर (Polya & Duncker) ने समस्या समाधान के क्षेत्र में किया था। इसमें प्रयास एवं भूल (Trial & Error) द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इस विधि का स्वरूप प्रयोगात्मक (experimental) होता है। खोज की जाती है। खोज विधि शीघ्र सम्पन्न होने वाली व कम खर्चीली है। इसमें शिक्षक व छात्र मिलकर पहले एक समस्या का समाधान खोजा जाता है। शिक्षक छात्रों को आवश्यकतानुसार निर्देशन देता रहता है, पर छात्रों को स्वयं समाधान खोजना होता है।

(iii) अंकन या एलगोरिथ्मस (Algorithms):- एलगोरिथ्मस का अर्थ अरबी में गिनती के क्रम से है। इसका प्रयोग अंकगणित में किया जाता है। इसमें समस्या प्रक्रिया एक तर्क-पूर्ण पेड (Logical tree) के रूप में क्रमबद्ध रहती है। यह योजना खोज प्रक्रिया के अनुरूप ही है। इस विधि का विकास लन्दन विश्वविद्यालय में वासन तथा जोन्स (Wason and Jones) ने सरकार के नियमों की व्याख्या करने में प्रयुक्त किया। इसमें कम समय में कार्य को सरलतापूर्वक किया जा सकता है। नियमों को एलगोरिथ्मस के प्रयोग से क्रमबद्ध रीति से प्रस्तुत किया जाता जा सकता है। इस विधि की निम्नांकित विशेषताएं हैं-

(1) यह श्रृंखला अधिगम संरचना के लिये अधिक उपयोगी है, पर बहु-भेदीय संरचना में सफल नहीं रहती है।

(2) छात्रों की तार्किक योग्यताओं का विकास करती है।

(3) यह छात्रों की कमजोरियों का पता लगाकर उपचार भी करती है।

(4) इसमें शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति पूर्ण रूप में की जाती है।

(5) यह समस्या -समाधान के कार्यो एवं परिस्थिति को सुगम और सरल विधि से प्रस्तुत करती है।

(iv) **निर्णय तालिका (Decision tables):-** इन्हें तर्क (Logic) तालिकाओं के नाम से भी पुकारते हैं। पैकर और डेवीज (Packer & Devies) ने इनके प्रयोग का विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने इनका प्रयोग जटिल नियमों तथा निर्देशन के आदान-प्रदान हेतु किया। इनका क्षेत्र दो प्रकार की सूचनाओं में निहित है। प्रथम, वे प्रश्न जिनके उत्तर देने हैं और दूसरे, उन प्रश्नों के आधार पर लिये जाने वाले निर्णय। निर्णय तालिकाएं समस्याओं को परिभाषित करने तथा दशाओं और कार्यो के मध्य कारण कार्य (Cause of effect) सम्बन्ध स्थापित करने में सहायक है। ये प्रत्येक घटना की सम्पूर्ण व्याख्या करती हैं। इसमें त्रुटियों की सम्भावना नहीं रहती है। निर्णय तालिकाओं के निर्माण द्वारा समस्या व कार्य का सरलीकरण हो जाता है।

(द) उपयुक्त कक्षा आकार का चयन (Selecting an Appropriate Class Size):- शिक्षण में कक्षा के उपयुक्त (Optimum) आकार अथवा अधिगम समूह का निर्णय महत्वपूर्ण है। इसका सीधा सम्बन्ध छात्रों की सीखने की आवश्यकताओं तथा उद्देश्य प्राप्ति की प्रकृति से है। अत: सीखने के साधनों की उचित व्यवस्था में कक्षा के उपयुक्त आकार का चयन महत्वपूर्ण है।

प्राय: विद्यालयों में कक्षा का आकार बड़ा होता है। उसमें स्थान की अपेक्षा छात्रों की संख्या अधिक होती है। जिससे छात्रों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना सम्भव नहीं हैं। शिक्षा-शास्त्रियों का मत है कि गुणात्मक उन्नति के लिये कक्षा में छात्रों की संख्या हमें शिक्षा पर किये जाने वाले व्यय तथा साधनों के सम्बन्ध मे भी सर्तक रहना चाहिये।

कक्षा के आकार पर विशेषज्ञों के विभिन्न मत हैं। अमेरिका मे सह आदर्श 24 विद्यार्थियों का हैं उनका कहना है कि इस संख्या को प्रयोगशाला, प्रोजेक्टर तथा अन्य कार्यो के लिये सुविधानुसार उपयुक्त समूहों में विभाजित करना संभव है। कक्षा के आकार का छात्रों के व्यक्तित्व तथा सामूहिक विकास में बड़ा महत्व हैं। डेवीज महोदय का कथन है कि ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष के निम्न स्तर के उद्देश्यों की प्राप्ति में बड़ी व छोटी कक्षाओं की निष्पत्ति में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। उच्च स्तर के ज्ञानात्मक व भावात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में कक्षा में पाँच या सात विद्यार्थियों का होना अधिक उपयुक्त माना गया है। सर्वोच्च स्तर की प्राप्ति के लिये छात्र व शिक्षक का अनुपात एक-एक का होना आवश्यक है। इस प्रकार कक्षा के आकार का चयन करने में हमें सीखने के उद्देश्यों, प्रशासनिक सुविधाओं, व्यावसायिक समस्याओं तथा शिक्षण स्तरों को ध्यान में रखना आवश्यक है। यह शिक्षक के नियंत्रण आकार (Span of Control) तथा बैठने की व्यवस्था पर भी निर्भर है। बड़े समूहों में शिक्षक का कार्य अधिक होता है। उसके लिये उसे अधिक तैयारी की आवश्यक होती है। वह अपने कार्य में अधिक स्वतंत्रता अनुभव नही करता। कक्षा के उपयुक्त आकार के सम्बन्ध में ऐलन (Allen) का मत है कि- "कक्षा के आकार का मानदण्ड (Criterion) छात्रों की उस संख्या से है जिनको शिक्षक

सीखने की परिस्थिति में प्रभावशाली ढंग से व्यवस्थित कर सकता हैं।" इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध शिक्षक की व्यवस्था, उत्प्रेरणा तथा नियंत्रण से है। यह सीखने के उद्देश्यों की नियंत्रण से है। यह सीखने के उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुरूप होना आवश्यक है।

18.4 सारांश

(Summary)

शिक्षण में शिक्षक पूर्व निश्चित उद्देश्यों के अनुरूप अधिगम अनुभव अधिगम क्रियाओं के माध्यम से प्रदान करता है। अधिगम क्रियाओं का क्रमबद्ध आयोजन ही शिक्षण-व्यवस्था है। आई.के.डेवीज ने शिक्षण व्यवस्था की चार क्रियाओं का वर्णन किया है- (1) उपयुक्त शिक्षण युक्तियों का चयन, (2) अधिगम की उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री का चयन, (3) उपयुक्ता सम्प्रेषण नीतियों का चयन, (4) उपयुक्त कक्षा आकार का चयन।

उन्होंने अधिगम के स्वरूप के अनुसार ही शिक्षण युक्तियों के चयन का सुझाव दिया है। राबर्ट गेने के अनुसार प्रमुख अधिगम स्वरूप हैं- संकेत अधिगम, श्रृंखला अधिगम, बहु भेदीय अधिगम, प्रत्यय अधिगम एवं सिद्धान्त अधिगम।

अधिगम की उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री के चयन के अन्तर्गत डेवीज ने उल्लेख किया है कि शिक्षण की व्यवस्था में दृश्य-श्रव्य सामग्री का विशेष महत्त्व है। इनके प्रयोग द्वारा छात्रों को ज्ञान की वास्तविकता का बोध होता है। अत: यथास्थान उपयुक्त श्रव्य-दृश्य सामग्री का उपयोग किया जाना चाहिये। उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री के अतिरिक्त उपयुक्त सम्प्रेषण नीतियों के चयन एवं उपयुक्त कक्षा-आकार के चयन का भी वर्णन किया है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. शिक्षण की व्यवस्था का अर्थ स्पष्ट कीजिए।
   Explain the meaning of organizing teaching.
2. उपयुक्त शिक्षण युक्तियों के चयन से आप क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए।
   What do you understand by selecting an appropriate teaching tactics? Describe in detail.
3. श्रृंखला अधिगम एवं सिद्धांत अधिगम में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
   Clarify the difference between chain learning and principle learning.
4. रॉबट गेने द्वारा दिए गए प्रमुख अधिगम सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।
   Describe the objectives of audio-visual aids and precautions should be taken in their use.
5. श्रव्य-दृश्य सामग्रियां कौन-कौनसी होती हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए।
   Which are the audio-visual aids? Describe in detail.

6. श्रव्य-दृश्य सामग्रियों के उद्देश्य एवं इनके उपयोग में बरती जाने वाली सावधानियों का वर्णन कीजिए।
Describe the objectives of audio-visual aids and precautions should be taken in their use.

7. आइवर के डेवीज के द्वारा दी गई सम्प्रेषण की नीतियों का उल्लेख कीजिए।
Discuss the communication strategies given by Ivor K. Davies.
उपयुक्त कक्षा आकार के चयन से क्या तात्पर्य हैं?
What do you understand by an appropriate class size?

18.5 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- कुलश्रेष्ठ एस.पी.: शैक्षिक तकनीकी के मूलाधार, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1982.
- शर्मा ए.पीए: शिक्षण तकनीकी, अशोक पब्लिशिंग हाउस, मेरठ, 1980.
- भूषण शैलेन्द्र एवं कुमार अनिल: शिक्षण तकनीकी, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1982.
- पुरोहित जगदीश नारायण : शिक्षण के लिये आयोजन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर
- 1982
- माथुर एस. एस.: शिक्षण कला एवं शैक्षिक तकनीकी, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1961
- Skinner B.F.: Technology of Teaching, Maredith corporation, New York, 1968.
- Trow William clark : Psychology of teaching and learning, Eurasia Publishing House, New Delhi.
- Knirk F.G. & Childs john w : Instructional technology, Hort rinehat, Newyork.
- Kulshrestha S.P. & Iangira N.K. : Innovations in Teaching.
- Nickson M.: Educational technology a systematic approach for teacher ward Lock, 1971.
- Bajpai, A.C. & Leadham, J.F. : Aspects of Educational technology iv, Pitman Publishing House, 1970.

इकाई-19

सम्प्रेषण (Communication)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)
19.1 प्रस्तावना
(Introduction)
19.2 सम्प्रेषण : संकल्पना
(Communication : Concept)
19.3 सम्प्रेषण के तल
(Elements of Communication)
19.4 सम्प्रेषण के प्रकार
(Types of Communication)
19.5 प्रभावी सम्प्रेषण के बिन्दु
(Essentials of Effective Communication)
19.6 सम्प्रेषण को प्रतिमान द्वारा देखना
(Viewing Communication through models)
19.7 सम्प्रेषण की बाधाएं
(Barriers in Communication)
19.8 सारांश
(Summary)
19.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

19.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी-

- सम्प्रेषण की संकल्पना से परिचित हो सकेंगे।
- विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषणों के एवं उनके प्रमुख तत्वों को जान सकेंगे।
- प्रभावी सम्प्रेषण के प्रमुख बिन्दुओं तथा सम्प्रेषण में आने वाली बाधाओं से अवगत हो सकेंगे।

19.1 प्रस्तावना
(Introduction)

शिक्षण नियोजन के पश्चात शिक्षक का कार्य होता है। शिक्षण की व्यवस्था करना है। शिक्षण व्यवस्था को 'सम्प्रेषण व्यूह रचना भी कह सकते है। शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति विद्यार्थियों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन के सन्दर्भ में होती है। शिक्षक कक्षा में इस प्रकार की अधिगम परिस्थितियों का निर्माण करता है कि विद्यार्थियों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन हो सके।

जब भी शिक्षण प्रक्रिया में अन्तःक्रिया शिक्षक-शिक्षार्थी के मध्य अधिक होगी तब अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। अत: शिक्षक का उपयुक्त सम्प्रेषण माध्यम का चुनना आवश्यक है। सम्प्रेषण की प्रकृति की माध्यम का निर्धारण करती है। इस इकाई में हम सम्प्रेषण के बारे में जानकारी हासिल करेंगे।

19.2 सम्प्रेषण : संकल्पना
(Communication : Concept)

सम्प्रेषण शब्द अंग्रेजी के "कम्यूनिकेशन" का हिन्दी पर्याय है। इसका उदीव लेटीन के "कम्यूनिस" से हुआ है, जिसका अर्थ होता है समान। "सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति, विचारों, तथ्यों, अनुभूतियों तथा प्रभावों का इस प्रकार से आदान-प्रदान करते हैं जिससे कि उनमें से प्रत्येक संदेश का अर्थ, उद्देश्य एवं उपयोग समान रूप से ग्रहण करता है। प्रतीकों के उपयोग से अर्थ प्राप्त करने की यह एक गतिशील और अनोखी प्रक्रिया है।

19.3 सम्प्रेषण के तत्व
(Elements of Communication)

सम्प्रेषण के लिए हमेशा तीन तत्वों की आवश्यकता होती है :

1. स्त्रोत / प्रवर्तक सम्प्रेषक (Source)
2. संदेश / कथ्य (Message)
3. गन्तव्य / ग्राहक सम्प्रेषक (Destination/Receiver)

1. स्त्रोत / प्रवर्तक सम्प्रेषक (Source)

सम्प्रेषण स्त्रोत के द्वारा संदेश भेजा जाता है। यह स्त्रोत व्यक्ति, समाचार-पत्र या प्रकाशन गृह हो सकते है। शिक्षक कक्षा में जब पढ़ता है, तब वह व्याख्यान देता है, श्यामपट्ट पर लिखता है, चित्र बनाता है, इन सभी स्थितियों में वह सम्प्रेषण के स्त्रोत के रूप मे कार्य करता है।

2. संदेश / कथ्य (Message)

संदेश लिखित अक्षर, हवा में ध्वनि या प्रकाश तरंगों के रूप में अथवा अन्य प्रतीकों के रूप में हो सकता है, जिनका अर्थपूर्ण विवेचन किया जा सके, जैसे मुंह पर ऊँगली रखकर चुप रहने का इशारा करना। भाषा का प्रयोग भी शाब्दिक प्रतीकों में ही संदेश भेजने हेतु किया जाता है।

3. गन्तव्य / ग्राहक सम्प्रेषक (Destination/Receiver)

संदेश सुनकर, देखकर, पढकर एवं अन्य इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया जाता है। भाषण सुनने वाले श्रोता, समाचार-पत्र पढ़ने वाले व्यक्ति, क्रिकेट मैच अथवा सिनेमा देखने वाले दर्शक सभी गन्तव्य हो सकते है। इन्हें ग्राहक सम्प्रेषण भी कहा जाता है।

19.4 सम्प्रेषण के प्रकार (Types of Communication)

सम्प्रेषण के निम्नलिखित तीन प्रकार होते है :

1. अन्त: वैयक्तिक सम्प्रेषण
2. अन्तर्वेयक्तिक सम्प्रेषण
3. लोक सम्प्रेषण

1. अन्त: वैयक्तिक सम्प्रेषण (Intrapersonal Communication)

जब व्यक्ति स्वयं से बातचीत (सम्प्रेषण करता है तब वह अंत: वैयक्तिक सम्प्रेषण का उपयोग करता है)। अनेक बार एकाकी होने पर अथवा विभिन्न स्थितियों की कल्पना कर व्यक्ति स्वयं से सम्प्रेषण करता है। जैसे: नौकरी के लिए साक्षात्कार होने के पूर्व विभिन्न प्रकार के प्रश्न स्वयं करना एवं उनके उत्तर प्रदान करना।

2. अन्तवैयक्तिक सम्प्रेषण (Interpersonal Communication)

जब सम्प्रेषण दो या दो अधिक व्यक्तियों के मध्य होता है, तब वह अन्तवैयक्तिक सम्प्रेषण कहलाता है। जैसे (1) दो मित्रों का वार्तालाप (2) सामूहिक विचार-विमर्श।

3. लोक सम्प्रेषण (Mass Communication)

जब सम्प्रेषण एक व्यक्ति तथा व्यक्तियों के समूह के मध्य हों तब वह सम्प्रेषण, लोक-सम्प्रेषण कहलाता है। कक्षा में प्राय: अधिकतर लोक सम्प्रेषण का ही उपयोग किया जाता है। जैसे (1) आमसभा में किसी नेता का भाषण (2) विद्यालयों में अतिथि का वक्तव्य (3) महाविद्यालयों में किसी विशेषज्ञ का वक्तव्य।

19.5 प्रभावी सम्प्रेषण के बिन्दु (Essential for Effectives Communication)

19.5.1 प्रारम्भिक / सम्बोधन शब्द (Addressing Words)

वक्तव्य के प्रारंभ में श्रोताओं की ओर मुस्कराकर देखने के पश्चात् वक्ता श्रोताओं हेतु सम्बोधन शब्दों का प्रयोग करता है। इन शब्दों के प्रयोग से सम्प्रेषण हेतु वातावरण तैयार होता है।

उदाहरण : **1.** अध्यक्ष महोदय, प्राचार्य जी, शिक्षक गण, विद्यार्थियों तथा मित्रों

2. भाईयों तथा बहनों

सम्बोधन शब्दों का प्रारम्भ अध्यक्ष से कर वरिष्ठता के क्रम में अन्य लोगों का नाम लेना चाहिए। संबोधन शब्दों का प्रयोग करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिए कि इसमें सभी प्रकार के श्रोताओं का उल्लेख हो। क्योंकि ऐसा करने से सभी का ध्यान आकर्षित हो जाता है -

19.5.2 प्रस्तावना / भूमिका / परिचय (Introduction)

व्याख्यान का प्रारंभ विषय की प्रस्तावना से किया जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य श्रोताओं का अवधान प्राप्त करना, तथा उन्हें विषय की ओर उन्मुख करना होता है। प्रस्तावना में वक्ता अपने वक्तव्य का मूल आधार प्रस्तुत करता है। यदि आप पूर्व में सुने गये व्याख्यानों को याद कर विचार करेंगे तब ये पायेंगे कि वक्ता मुख्यत: निम्नलिखित प्रकार की भूमिकाओं का प्रयोग करते है।

1. रोचक कहानियाँ
2. उद्धरण
3. किसी अवसर का सन्दर्भ, इत्यादि।

19.5.3 विराम (Pausing)

सम्प्रेषण के दौरान अध्यापक अथवा वक्ता जब कुछ सैकण्ड के लिए रूक जाता है, इस समय अन्तराल को विरामन कहते हैं। शब्दों, वाक्यों, विचारों के मध्य के अन्तराल के रूप में इसका उपयोग होता है। जब अध्यापक बिना रूके लगातार बोलता चला जाता है, तब व्याख्यान चाहे कितना ही रोचक क्यों न हो, श्रोता उसे आत्मसात नहीं कर पाते हैं। विरामन का उपयोग मुख्य रूप से निम्नलिखित अवसरों पर किया जाता है :

4. व्याख्यान के प्रारंभ में विद्यार्थियों की ओर मुस्कराकर देखने का समय उसका ध्यान आकर्षित करने हेतु।
5. किसी महत्वपूर्ण विचार के पूर्व एवं पश्चात्।

6. प्रश्न करने से पूर्व एवं प्रश्न करने के पश्चात्।
7. ऐसे वाक्य जिनके बाद श्रोताओं को हंसी आवे।
8. किसी नये शब्द के प्रयोग के पश्चात् इत्यादि।

19.5.4 संकेतन (Gestures)

यदि आप दो महिलाओं के संवादन का ध्यान से निरीक्षण करेंगे, तो यह मालूम होगा कि वे सम्प्रेषण हेतु भाषा के प्रयोग के साथ ही साथ वे सिर हिलाती है तथा शरीर को एक स्थिति से दूसरी स्थिति में ले जाती है। शरीर के अंगों का सम्प्रेषण हेतु उपयोग संकेतन कहलाता है। पुस्तकालयों एवं अस्पतालों में वहां के कर्मचारी मुंह पर ऊँगली रखकर शांत रहने के संकेत का उपयोग करते है। यदि आप किसी बात से सहमति अथवा असहमति प्रकट करते हैं तब आप अपने सिर को ऊपर नीचे की ओर तथा दायें से बायें की ओर या बायें से दायें की ओर बार-बार हिलाकर, बिना शब्दों के प्रयोग से अपनी बात कह सकते है। संकेतों का उपयोग एकाकी एवं बोलने के साथ किया जाता है, क्योंकि कभी-कभी बोली गई बात का प्रभाव उतना नहीं होता है, जितना कि संकेत के साथ होता है। शाब्दिक सम्प्रेषण (बोले गए शब्दों) एवं संकेतनों द्वारा सम्प्रेषण में निम्न संबंध होते हैं :-

19.5.5 मुखाभिव्यक्ति / चेहरे की अभिव्यक्ति / भाव (Facial Expression)

सम्प्रेषण प्रक्रिया में चेहरे की विशिष्ट भूमिका रहती है। अन्य शाब्दिक सम्प्रेषणों की सुस्पष्टता चेहरे के हाव-भाव से व्यक्त होती है। कुछ विद्वान यह मानते हैं कि बोलने के बाद यही प्राथमिक सूचनाओं का स्त्रोत है। चेहरे की सम्प्रेषण प्रक्रिया में निम्नलिखित भूमिका रहती है.

1. यह मानव की संवेगात्मक अवस्था को सम्प्रेषित करता है। जैसे हर्ष, शोक, क्रोध, भय, चिन्ता, निराशा आदि।
2. इसके द्वारा वक्ता / श्रोता की अभिव्यक्ति का भी पता चलता है। जैसे-यदि श्रोता वक्तव्य सुनने में रूचि ले रहे है तब चेहरे पर प्रसन्नता का भाव दिखता है। यदि उन्हें वक्तव्य से अरूचि हो तब चेहरे पर तनाव नजर आता है। अत: चेहरे की अभिव्यक्ति से वक्ता श्रोताओं से प्रतिपोष प्राप्त करता है। चेहरे पर अवसर के अनुरूप भाव आना आवश्यक है। जैसे -
   पुरस्कार वितरण के समय चेहरे पर प्रसन्नता का भाव होना चाहिए।
   शोक सभी के समय चेहरे पर दुःख का भाव होना चाहिए।

19.5.6 ध्वनि विस्तार प्रबलता (Loudness)

ध्वनि के अन्य घटकों की तुलना में ध्वनि विस्तार (प्रबलता) से हम अधिक परिचित हैं। दिन प्रतिदिन विभिन्न अवसरों पर ध्वनि विस्तारक यंत्रों का उपयोग किया जाता है। एक ही वक्ता विभिन्न स्थानों एवं श्रोताओं की संख्या तथा विषयवस्तु की प्रकृति के अनुसार ध्वनि के विस्तार में परिवर्तन कर वक्तव्य देता है।

जब कभी ध्वनि छात्रों को सुनाई नहीं देती, तब छात्र कहने लग जाते हैं कि कृपया थोडी तेज आवाज में बोले। हमें सुनाई नहीं दे रहा है। प्राय: यह भी देखा गया है कि सम्प्रेषण भाषण के प्रारंभ में श्रोताओं से यह जानने के लिए कि उसकी आवाज का विस्तार ठीक है अथवा नहीं, पूछता है कि, "क्या आप मेरी आवाज सुन पा रहे हैं?" जब ध्वनि सुनने योग्य न हो तो श्रोता अधिक जोर देकर सुनने का प्रयास करते हैं और संपूर्ण वक्तव्य का केवल कुछ भाग ही सुन पाते है।

ध्वनि विस्तार अनेक कारणों पर आश्रित होता है जिनमें से प्रमुख है:

1. श्रोताओं की संख्या
2. कक्ष का आकार
3. कक्ष की ध्वनि संबंधी विशेषताएँ
4. सामान्य शोर-स्तर

19.5.7 स्वरमान (Pitch)

आवाज के उतार चढ़ाव को आवृत्ति / स्वरमान कहते हैं। हम अपने परिचितों की आवाज सुनकर ही पहचान जाते है। क्योंकि उनके स्वरमान में अंतर होता है। आवृत्ति के द्वारा बोलने वाले की मन: स्थिति का भी पता चलता है।

1. अहा ! कैसा सुंदर आकाश है। (प्रसन्नता)
2. अरे ! शेर आ रहा है। (भय)
3. हाय ! कितना दर्द है। (दुःख)

स्वरमान के प्रभावी प्रयोग और स्वरमान में परिवर्तनों से वक्ता को सही रूप से भाव और अर्थ सम्प्रेषित करने में सहायता मिलती है।

यदि वक्ता विभिन्न अवसरों पर आवाज में उतार एवं चढ़ाव का उपयोग कर बोलता है तो श्रोताओं की रूचि बनी रहती है। उतार-चढ़ाव के विभिन्न प्रकार है :

1. धीमी आवाज से तेज आवाज
2. तेज आवाज से धीमी आवाज
3. धीमी आवाज से तेज आवाज एवं फिर धीमी आवाज
4. तेज आवाज से धीमी आवाज तथा फिर तेज आवाज।

19.5.8 गति / दर (Speed)

बोलने की गति सम्प्रेषण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह देखा गया है कि जब अध्यापक धीरे-धीरे बोलते हैं अथवा बहुत तेज गति से बोलते है, तब छात्र व्याख्यान में रूचि नहीं लेते है। इसके मुख्य कारण हैं :

1. गति अधिक होने से छात्रों को अपना ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है तथा उस बिन्दु पर विचार करने का समय नहीं मिल पाता।
2. धीमी गति होने से छात्र अन्य बातों पर विचार करने लगते है।

19.5.9 उच्चारण (Pronunciation)

सम्प्रेषण प्रभावी तभी हो सकता है, जबकि शब्दों का उच्चारण सही प्रकार से किया जावे। सम्प्रेषण की प्रक्रिया में वक्त निम्नलिखित अशुद्ध उच्चारणों के कारण अपना प्रभाव खो सकता है।

1. प्रतिस्थापन

1. जब एक अक्षर के स्थान पर अन्य अक्षर का प्रयोग हो जैसे :
2. 'पकड़' के स्थान पर "पतड़" का प्रयोग।
3. "लैम्प" के स्थान पर "येम्प" या प्रयोग।
4. "वन" के स्थान पर "बन" का प्रयोग।

3. विलोपन

जब शब्द में किसी अक्षर का प्रयोग न किया जावे जैसे

1. "स्वास्थ्य" के स्थान पर "स्वास्थय" का प्रयोग।
2. "परवाह" के स्थान पर "परवा" का प्रयोग।
3. "स्टेशन" के स्थान पर "टेशन" का प्रयोग।

4. संवर्धन / आगम

1. जब शब्द में किसी अन्य अक्षर को मिलाकर प्रयोग किया जावे जैसे :
2. "स्कूल" के स्थान पर "इस्कूल" का प्रयोग।
3. "किसान" के स्थान पर "किरसान" का प्रयोग।
4. "स्मारक" के स्थान पर "इस्मारक" का प्रयोग।

19.5.10 भाषा (Language)

भाषा मानव सम्प्रेषण का उपकरण है। यह शाब्दिक ध्वनियों द्वारा निर्मित होती है। यदि कोई शब्द-ध्वनि सही उत्पन्न नहीं की जाती, तब सुनने वाला उसका गलत विवेचन कर सकता है।

भाषा के प्रभावी उपयोग हेतु सामान्य सुझाव :

1. उन शब्दों का प्रयोग करना चाहिए जिनसे श्रोता भली-भांति परिचित हो। जैसे : चलचित्र के स्थान पर सिनेमा तथा चिकित्सालय के स्थान पर अस्पताल का प्रयोग।
2. वे शब्द जो वक्ता के मंतव्य को सम्प्रेषित न कर सकें अथवा सम्प्रेषित करने हेतु पर्याप्त मूर्त न हो, का प्रयोग नहीं करना चाहिए। जैसे : थोड़ा-सा, अक्सर, शायद, संभवतः, विश्वासपात्र, बहादुरी इनका निर्वधन प्रत्येक श्रोता अपने अनुभवों के आधार पर अलग-अलग करता है।
3. लम्बे शब्दों के स्थान पर छोटे शब्दों का प्रयोग करना चाहिए। इससे श्रोताओं का ध्यान बना रहता है तथा समय की बचत होती है।
4. वाक्यों की लंबाई बहुत अधिक नहीं होनी चाहिए तथा लंबे एवं छोटे वाक्यों का मिला-जुला प्रयोग करना चाहिए।

19.5.11 समापन / उपसंहार (Conclusion)

वक्तव्य के अंत में उसका समापन किया जाता है। वक्तव्य के उद्देश्य के अनुसार समापन का उपयोग प्राय: निम्नलिखित दो बातों हेतु किया जाता है :

1. श्रोताओं को वांछित निर्णय लेने हेतु अभिप्रेरित करना।
2. संपूर्ण वक्तव्य के मूल बिन्दुओं को संक्षेप में प्रस्तुत करना जिससे कि श्रोता वक्तव्य के सार को याद रख सके।

   समापन हेतु निम्नलिखित विधियों का उपयोग किया जाता है, जिसमें से कुछ प्रस्तावना के समान ही है

1. संक्षेप
2. भाषणगत प्रश्न
3. व्यक्तिगत संदर्भ

19.5.12 ध्यानपूर्वक सुनना (Listening Attentionaly)

गतिशील सम्प्रेषण हेतु ध्यानपूर्वक सुनना आवश्यक है। प्रवर्तक सम्प्रेषक के द्वारा कोई संदेश भेजा जाता है, यदि सम्प्रेषक उसने सुने ही नहीं तो सम्प्रेषण हो ही नहीं सकता है। ध्यानपूर्वक सुनना वक्ता एवं श्रोता दोनों के लिए आवश्यक है। वक्ता प्रतिपोष तभी प्राप्त कर सकता है, जबकि श्रोता ने ध्यानपूर्वक संदेश को सुना हो। सेमीनार में जब वक्ता अपना भाषण समाप्त कर लेता है। उसके पश्चात् प्रश्नोत्तर काल होता है। इस समय में श्रोता वक्तव्य का अपने दृष्टिकोण से मूल्यांकन करते हैं तथा वक्ता के प्रस्तुतीकरण एवं विषयवस्तु के पक्ष में अपना मत बताते है। कुछ बातों का स्पष्टीकरण भी वे वक्ता से मांग लेते है। ऐसी सूचनाएं जो सम्प्रेषित न की गई हो उन्हें वे वक्ता से प्रश्न कर प्राप्त करते हैं। इससे वक्ता श्रोताओं से प्रतिपोष प्राप्त करते है। इससे वक्ता श्रोताओं से प्रतिपोष प्राप्त करता है।

19.6 सम्प्रेषण को प्रतिमान द्वारा देखना : (Viewing Communication through models)

सम्प्रेषण पद्धति को सांकेतिक रूप से निम्न प्रतिमान के द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है :

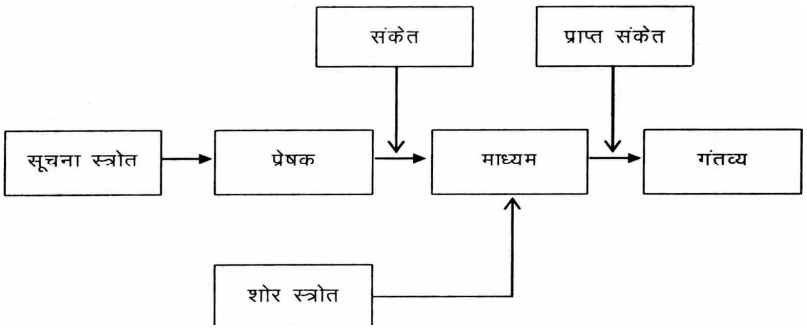

सम्प्रेषण प्रतिमान (Communication Model)

संभावित संदेशों के समुच्चय (पुत्() से वाँछित संदेश का चयन सूचना स्त्रोत द्वारा किया जाता है। प्रेषक इस संदेश को संकेत में बदलता है, जिसे सम्प्रेषण माध्यम की सहायता से ग्राही के पास भेजा जाता है।

ग्राही, प्रेषित संकेत को पुन: संदेशों में बदल देता है और संदेश को गंतव्य (Destination) तक पहुंचाता है। दूरभाष में संकेत परिवर्तित विद्युत करंट होता है तथा माध्यम तार होता है। वाणी में संकेत परिवर्तित ध्वनि दबाव एवं माध्यम हवा होती है। रेडियो की स्थिरता तथा दूरभाष के विकार शोर कहलाते है।

19.7 सम्प्रेषण की बाधाएँ (Barriers of Communication)

कोई भी वस्तु जो सही सम्प्रेषण में रूकावट डालती है अथवा रोकती है, सम्प्रेषण बाधा कहलाती है। विभिन्न प्रकार की बाधाएं निम्न हैं-

1. संदेश में बहुत अधिक अथवा अत्यन्त अल्प सूचनाएं भेजने से भी सही एवं प्रभावी सम्प्रेषण नहीं हो पाता है।
2. संकेत पद्धति के प्रति अनुभव में कमी के कारण सम्प्रेषण में बाधा आती है। जैसे अन्य भाषा का प्रयोग करना।
3. आंतरिक शोर (Internal Noise) जैसे जब व्यक्ति अन्य वस्तुओं के बारे में विचार करता है अथवा स्थिति में असहज अनुभव करता है।
4. बाह्य शोर (External Noise) : पर्यावरण में उपस्थित उद्दीपक को ग्राहक सम्प्रेषक के अवधान को बाधा पहुंचाते है, जैसे प्रिय गीत अथवा पंखे खड़खड़ाने की अप्रिय आवाज। यदि अशाब्दिक संदेश को अनदेखा कर शाब्दिक संदेश भेजा जाता है तब संदेह हो सकता है। जैसे कहना मुझे जाने की जल्दी नही है और अपनी पुस्तकें समेटना।

यदि आप ऐसी संकेत पद्धति का उपयोग करें जिसका आपको अनुभव नहीं है, तब यह सम्प्रेषण में बाधा पहुंचा सकता है। जैसे सेल्समेन द्वारा विदेशी भाषा एवं तकनीकी शब्दों का उपयोग है। अर्थ का गलत निर्वचन (Interpretation) करने पर भी सम्प्रेषण में बाधा पहुंच सकती है।

यदि संदेश उपयुक्त ध्वनि प्रबलता में नहीं भेजा जावे तब भी सम्प्रेषण में बाधा पहुंचती है।

19.8 सारांश (Summary)

सम्प्रेषण का तात्पर्य है, वह प्रक्रिया जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति विचारों, तथ्यों, अनुभूतियों तथा प्रभावों का इस प्रकार आदान-प्रदान करते हैं, जिससे उनमें से प्रत्येक व्यक्ति संदेश का अर्थ, उद्देश्य एवं उपयोग समान रूप से ग्रहण करते है।

सम्प्रेषण के लिए तीन तत्वों की आवश्यकता होती है। प्रभावी सम्प्रेषण के लिए हमे अनेक तथ्यों / बिन्दुओं को ध्यान में रखना पडता है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्र.1 सम्प्रेषण की परिभाषा दीजिए।

प्र. सम्प्रेषण के तत्व लिखिए।

प्र.3 विभिन्न प्रकार के सम्प्रेषणों में अंतर कीजिए।

प्र.4 संकेतनों की सम्प्रेषण में भूमिका बताइये।

प्र.5 ध्वनि विस्तार का उपयोग कैसे किया जाना चाहिए?

प्र.6 सम्प्रेषण प्रतिमान द्वारा सम्प्रेषण प्रक्रिया समझाइये।

प्र.7 सम्प्रेषण की बाधाएं प्रभावी सम्प्रेषण को कैसे प्रभावित करती हैं?

19.9 ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. Argyle, Michal : Social Interaction, London, Methuen & Co., 1969.
2. Bellesters, David : “Community Based Education. A Programme to Improve Home School Communication”. Journal of Educational Research, California Vol. XXV, No. 1974.
3. Hanley Theodore, D & Developing & Thurman Wagvel : Vocal Skills, Holt Rinehart & Winston, London, 1962.
4. 4.Hargreaves, D.H. : Interpersonal Relations, Roultedge & kegan, Paul, London, 1972.
5. Hess E.H. & Polt, J.M. : “Pupil Size as related to interest value of Stimuli Science.” 1960.
6. Heun L.R. & Heun, R.D.: Developing Skills for Human Interaction, Charless E. Merril Publishing London Co. 1978.
7. Knot, G.P.: “Non- verbal Communication during Early Childhood”, Theory into Practice, Vol. XVII, 1978.
8. Nelson, O.W. & Pess. N.S.: Communication in the Secondary school Classroom, Prentice Hall, Inc., New Jersey, 1970.
9. Pal, Hans Raj : “Curriculum Construction for Developing Social Skills in Teacher for Establishing Closer Contact with Community”, Unpublished Doctoral Dissertation, Indore University, 1981
10. Scoot Luse, Binder : Developing Communication Skills, A Guide for Classroom Teacher McGraw Hill Book, Inc., 1971.

11. Smith Alfred, G : Communication and Culture, McGraw Hill Book, Inc., New York 1971.

इकाई-20

सम्प्रेषण के सिद्धान्त (Theories of Communication)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

20.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

20.1 प्रस्तावना
(Introduction)

20.2 अरस्तु का सिद्धान्त
(Aristotle's Theory)

20.3 इच्छा स्वातन्त्रयवादी सिद्धान्त
(Libertarian Theory)

20.4 फ्री प्रैस सिद्धान्त
(The Free-Press Theory)

20.5 लेसबेल का सिद्धान्त
(Harald D. Laswell's Theory)

20.6 शेनन-वीवर का सिद्धान्त
(The Shannan Weaver Theory)

20.7 सम्प्रेषण सिद्धान्त
(Berlo's Dynamic Process Theory)

20.8 सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त
(Social Responsibilities Theory)

20.9 सारांश
(Summary)

20.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

20.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप-

- सम्प्रेषण के विभिन्न सिद्धान्तों से संबंधित तथ्यों की व्याख्या कर सकेंगे।
- सम्प्रेषण के सिद्धान्तों में निहित प्रमुख तत्त्वों की तुलना कर सकेंगे।
- सम्प्रेषण के विभिन्न सिद्धान्तों का उदाहरण दे सकेंगे।

- सम्प्रेषण के विभिन्न सिद्धान्तों की समालोचना कर सकेंगे।
- सम्प्रेषण के विभिन्न सिद्धान्तों का शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में प्रयोग कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना (Introduction)

सम्प्रेषण के संप्रत्यात्मक ज्ञान को हम पूर्व इकाई में प्राप्त कर चुके हैं। प्रस्तुत इकाई में सम्प्रेषण के कतिपय सिद्धान्तों को समझाया गया है।

यह तथ्य पूर्वविदित है कि सम्प्रेषण एक गत्यात्मक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति चेतनतया अथवा अचेतनतया दूसरों को सांकेतिक रूप से, उपकरणों के माध्यम से या अन्य साधनों से प्रभावित करता है। सम्प्रेषण में दो या दो से अधिक व्यक्ति, विचारों, भावनाओं, तथ्यों, प्रभावों इत्यादि का विनिमय करते हैं। इस विनिमय में संकेतों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। यदि सम्प्रेषणदाता द्वारा भेजा गया संदेश सम्प्रेषण प्राप्तकर्त्ता तक स्पष्ट रूप से उसी रूप में पहुँच जाता है तो संदेश प्राप्ति का लक्ष्य पूर्ण हो जाता है। दोनों पक्षों में समन्वय स्थापित हो जाता है। यह संदेश विचार अभिवृत्ति, ज्ञान या सूचना के रूप में भी हो सकता है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया पर शिक्षण की प्रभावशीलता निर्भर रहती है। इस द्विमार्गी प्रक्रिया के सम्पन्न होने के विभिन्न सिद्धान्त हैं प्रत्येक चिन्तक ने अपने-अपने दृष्टिकोण के आधार पर सम्प्रेषण की प्रक्रिया सम्पन्न होने की व्याख्या की है। इन चिन्तकों में से कुछ प्रमुख द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों में अरस्तु जॉन मिल्टन, फ्रेडरिक सिबर्ट, हेरेल्ड लेसवेल शेनन वीवर, डेविड बलों इत्यादि के विचारों को इस इकाई में प्रस्तुत किया गया है।

20.2 अरस्तु का सिद्धान्त (Aristotle's Theory)

सर्वप्रथम सम्प्रेषण का सिद्धान्त सुदूर अतीत में ग्रीक दार्शनिक अरस्तु (Aristotle) द्वारा प्रतिपादित किया गया स्वीकार किया जा सकता है। इस सिद्धान्त में सम्प्रेषण में पटु वक्ता (order) तथा श्रोता समुदाय (Audience) के मध्य प्रक्रिया सम्पूर्ण होती है।

अरस्तु ने सम्प्रेषण में स्रोत के रूप में वक्ता का विषय में पटु होना महत्त्वपूर्ण माना है। वक्ता को अपना संदेश श्रोता तक पहुँचाने के लिए जिन माध्यमों का सहारा लेना होता है उनमें हाव-भाव, प्रस्तुतिकरण की शैली, भाषा, उतार-चढ़ाव तथा कथनों में प्रभाव महत्त्वपूर्ण है। इनमें से किसी में भी परिवर्तन आने से वक्ता का संदेश श्रोता समुदाय तक ज्यों का त्यों नहीं पहुँच पाता। अतः अरस्तु ने वक्ता एवं श्रोता समुदाय के मध्य संदेश को प्रभावपूर्ण शैली में प्रस्तुत करने पर बल दिया।

अरस्तु द्वारा प्रतिपादित सम्प्रेषण का सिद्धान्त

Aristotle's Theory of Communication

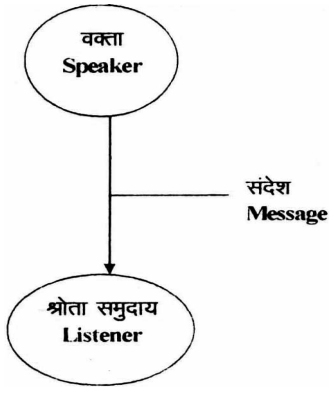

वक्ता अपना संदेश श्रोता समुदाय तक सूचनाओं, निर्देशों तथा अपने निर्णयों के रूप में पहुँचाता है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया में संदेश की प्रभावशीलता द्वारा श्रोता समुदाय के विचारों अभिमतों तथा अभिवृत्तियों में परिवर्तन लाया जाता है। वर्तमान में शिक्षा तकनीकी में सम्प्रेषण की प्रक्रिया को महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है किन्तु प्राचीनकाल में भी यह सम्प्रेषण प्रक्रिया अपने भिन्न रूप में सम्पन्न होती थी। अरस्तु का सिद्धान्त इसी तथ्य की पुष्टि करता है।

20.3 इच्छास्वातन्त्र्यवादी सिद्धांत (Libertarian Theory)

जॉन मिल्टन (John Milton - 1608-1674) जॉन स्टुअर्ट मिल (John Stuart Mill- 1806- 1873) ने 17, 10 वीं शताब्दी में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इनका मानना था कि विचार प्रकटीकरण की स्वतंत्रता होनी चाहिए। छिद्रान्वेषण (Censorship) का इन लोगों ने विरोध किया। सत्य को प्रकट होने देना चाहिए, भले ही कुछ भी क्यों न हो। मानव प्रजाति को वास्तविकता का सामना करने के लिए तैयार किया जाना चाहिए। तथ्यों का प्रच्छन्न रखना अनैतिक है। सत्य को सामने आना चाहिए।

सम्प्रेषण का इच्छास्वातन्त्र्यवादी सिद्धान्त इस अवधारणा पर आधारित है कि सम्प्रेषण-सामग्री लिखित रूप में ज्यों की त्यों प्रस्तुत की जानी चाहिए। इस सिद्धान्त के अनुयायी स्वीकार करते थे कि सम्प्रेषण में सत्य की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। प्रजातंत्र की सफलता के लिए सभी तथ्यों की जानकारी जनसामान्य को होनी चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में इस सिद्धान्त की उपादेयता सूचनाओं को मौलिक रूप में प्रस्तुत करने के अर्थों में है। सम्प्रेषण तकनीकी में स्रोत से, संदेश प्राप्तकर्त्ता तक संदेश के पहुँचने की प्रक्रिया में तथ्यों में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। संदेश का वास्तविक स्वरूप ज्यों का त्यों रहना चाहिए।

20.4 फ्री प्रैस सिद्धान्त
(The Free-Press Theory)

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन फ्रेडरिक सिबर्ट (Fredrick Siebert) ने किया था। पूर्व में 17 वीं तथा 18 वीं शताब्दी में जॉन मिल्टन द्वारा इच्छा स्वातन्त्र्यवादी सिद्धान्त दिया गया था। सिबर्ट की यह अवधारणा उसी परम्परा का विचार है। प्रिंट मीडिया के प्रारम्भ के साथ जन्म लेने वाली विचारधारा इच्छा स्वातन्त्र्यवादी का मत था कि मीडिया को सरकार से अलग स्वतंत्र रूप से संचालित होने देना चाहिए। उस समय सत्तावादी (Authoritarians) तथा इच्छास्वातन्त्र्यवादी (Libertarians) के मध्य संघर्ष चल रहा था। सत्तावादी चिन्तकों का मानना था कि सरकार का सृजन ही इस लिए हुआ है कि वह राज्य की सेवा करे। किन्तु इसके विपरीत स्वातन्त्र्यवादी विचारकों का मत था कि सरकार की उत्पत्ति जनसेवा के लिए हुई है, इसके अनुसार निर्णय का अधिकार कुछ व्यक्तियों के हाथों में न होकर समाज के हाथ में होना चाहिए।

यदि किसी भी प्रकार का नियन्त्रण प्रेस पर रहता है तो यह सिद्धान्त काम नहीं करता। प्रेस को सरकार एवं व्यक्तियों के मध्य सम्पर्क के रूप में कार्य करना चाहिए और यदि ऐसा नहीं होता, सरकार इस सम्पर्क को काटती है तो यह सूचना की स्वतन्त्रता के अधिकार का हनन है। इसी कारण वर्तमान समय में प्रेस (मीडिया) को चौथा आधार स्तम्भ माना गया है। प्रेस सरकार पर नियन्त्रण रखती है। इस सिद्धान्त को निम्नलिखित आधारभूत मान्यताएँ हैं-

- प्रकाशन को सदैव सेंसरशिप से स्वतन्त्र (Free) होना चाहिए।
- प्रकाशन का कार्य एवं वितरण प्रत्येक व्यक्ति के लिए खुला होना चाहिए।
- प्रेस द्वारा किसी दल पर की गई टिप्पणी को दण्डनीय न माना जाए।
- कुछ भी प्रकाशित करने की बाध्यता नहीं होनी चाहिए।
- प्रकाशन के लिए तथ्य एकत्रित करने के साधनों पर रोक नहीं होनी चाहिए।
- पत्रकारों को अपने संगठन में स्वतन्त्रता होनी चाहिए।

इस सिद्धान्त की आलोचना भी की गई है कि यदि प्रकाशन का कार्य नैतिक एवं शासकीय हितों से हटकर किया जाये तो उस पर प्रतिबन्ध भी लगाना चाहिए। शैक्षिक तकनीकी में यह सिद्धान्त पाठ्यक्रम निर्माण की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकता है। पाठ्यक्रम में प्रकाशित किया जाने वाला ज्ञान, नैतिक आधार पर जाँचा-परखा होना चाहिए तथा वास्तविक होना चाहिए। सम्प्रेषण में यथातथ्यता को महत्त्व दिया जाना स्वीकार किया गया है।

स्वमूल्यांकन

प्र.1 अरस्तु का सम्प्रेषण का सिद्धांत वक्ता में किस गुण को आवश्यक मानता है?

प्र.2 इच्छास्वातन्त्र्यवादी विचारक सत्य के विषय में क्या मान्यता रखते थे?

प्र.3 फ्री-प्रेस सिद्धांत मीडिया पर सरकार के हस्तक्षेप को लेकर क्या विचार रखता था?

20.5 लेसबेल का सिद्धान्त
(Harald D. Laswell's Theory)

हैरल्ड लेसवेल (Laswell) ने 1948 में अपने सिद्धान्त में कौन क्या कहता है? किस माध्यम से कहता है? तथा उसका क्या प्रभाव होता है? किस पर प्रभाव होता है? इन प्रश्नों पर आधारित सम्प्रेषण को महत्त्वपूर्ण माना। एक राजनीतिक विज्ञान के ज्ञाता के नाते उन्होंने उदाहरण स्वरूप हिटलर तथा चर्चिल को उदघृत किया तथा स्पष्ट किया कि इन दोनों ही व्यक्तियों का सीधा रेडियों प्रसारण या प्रत्यक्ष भाषण, एक साधारण व्यक्ति के भाषण की तुलना में भिन्न सम्प्रेषण होता है इस आधार पर इन्होंने अधिक तत्त्व ज्ञानात्मक सिद्धान्त को प्रस्तुत किया जिसमें चार तत्त्वों के सम्मिश्रण से सम्प्रेषण के प्रभाव को स्पष्ट किया गया।

लेसवेल का सिद्धान्त

(Laswell's Theory of Communication)

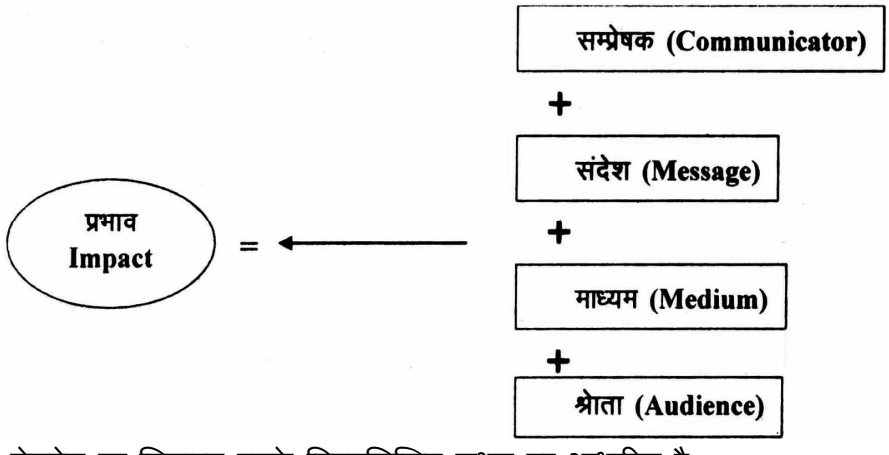

लेसवेल का सिद्धान्त उसके निम्नलिखित कथन पर आधारित है :-

"Who says what, in which channel to whom with what effect?"

कौन? (Who?) - इससे अभिप्राय शिक्षक से है, पाठ्यपुस्तकों का लेखनकर्ता तथा सम्प्रेषण में दूरदर्शन, आकाशवाणी प्रसार इत्यादि भी 'कौन' में सम्मिलित किए जाते हैं।

क्या कहता है? (Says What?) - इससे अभिप्राय सम्प्रेषण की विषय-वस्तु से है। शिक्षण में पाठ्यवस्तु को उदाहरण स्वरूप लिया जा सकता है।

किन माध्यमों से? (By what means?) - सम्प्रेषण का माध्यम क्या है? यह स्पष्ट होना जरूरी है। आमने-सामने का संवाद, चलचित्र, चित्र, आकाशवाणी या दूरदर्शन किन माध्यमों से संकेत' दिया जा रहा है? यह भी महत्त्वपूर्ण है।

किसे? (To Whom?) - किसे संदेश दिया जा रहा है? संदेश प्राप्तकर्त्ता से यहीं अभिप्राय छात्र से है।

किस प्रभाव से? (With What effect?) - किस प्रभाव से यहाँ अभिप्राय है - प्रतिक्रिया या पृष्ठपोषण के स्वरूप को निश्चित करने से।

सम्प्रेषण के इस स्वरूप में सम्प्रेषण की परिस्थितियाँ मुख्य रूप से संदेश के प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण प्राप्ति पर निर्भर करती हैं।

20.6 शेनन - वीवर का सिद्धांत (The Shannan Weaver Theory)

शेनन वीवर मुख्य रूप से सम्प्रेषण तकनीकी से जुड़े विद्वान थे। इनका यह सिद्धान्त सम्प्रेषण सिद्धान्त के नाम से भी जाना जाता है। इनका सिद्धान्त सम्प्रेषण में बाधक तत्त्व (Noise) को नियन्त्रित करने पर आधारित है। इनके प्रारम्भिक सिद्धान्त को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है:-

शेनन-विवर प्रतिरूप

The Shannon-Weaver Model

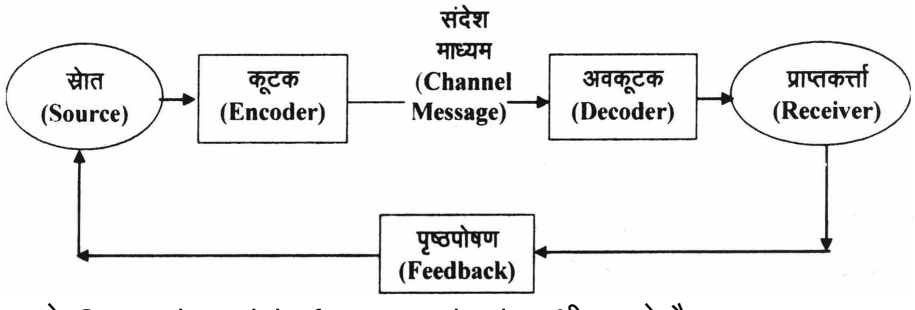

इसे General model of communication भी कहते है।

- **क्लूड़ शेनन तथा रेन (1949) (claude Shannon and warren weaver)**

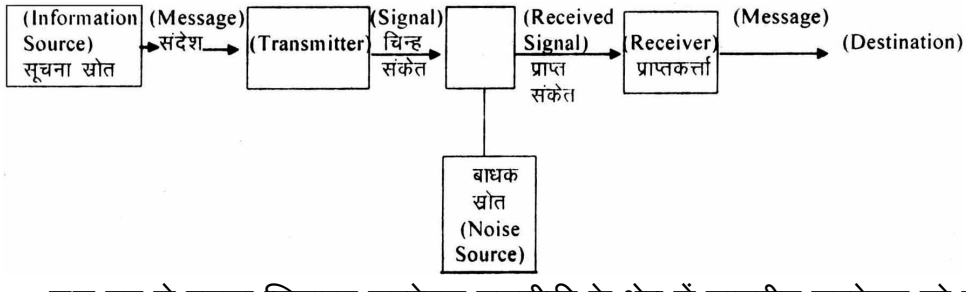

मूल रूप से इनका सिद्धान्त सम्प्रेषण तकनीकी के क्षेत्र में मानवीय सम्प्रेषण को ज्ञात करता है। यह सिद्धान्त निम्नलिखित छः तत्त्वों की अवधारणा पर आधारित है:-

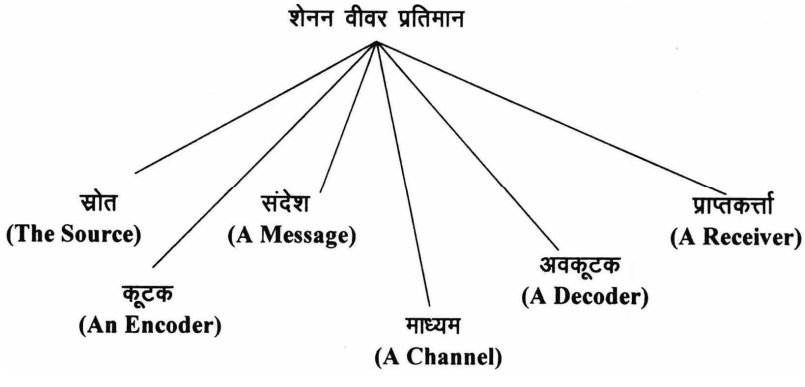

स्त्रोत (The Source) - एक व्यक्ति या एक समूह के रूप में ही प्रत्येक मानवीय सम्प्रेषण में एक स्रोत होता है जिसे शेनन की शब्दावली में सूचना स्रोत (Information Source) कहा गया है। इस स्रोत के कारण ही व्यक्ति सम्प्रेषण में लिप्त होता है। यह सम्प्रेषण के लिए मूल आंकड़े प्रस्तुत करता है। प्राप्तकर्त्ता के लिए इस स्रोत के द्वारा सम्प्रेषित सूचना का अत्यधिक महत्त्व होता है। शिक्षा के क्षेत्र में सूचना का स्रोत विषय-वस्तु पाठ्यवस्तु या पाठ्यक्रम हो सकते हैं।

इस पाठ्यवस्तु या सीखने के अनुभव की प्राप्ति के लिए उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है तथा इस स्रोत से प्राप्त सूचना को आगे सम्प्रेषित किया जाता है।

कूटक (The Encoder) - जब सम्प्रेषण किया जाता है तो मस्तिष्क में एक विशिष्ट लक्ष्य स्पष्ट रूप से होता है। यह लक्ष्य निम्नलिखित में से कोई एक भी हो सकता है -

आप चाहते हैं तो लोग आपको मित्रवत मानें। आप लोगों को कोई सूचना देना चाहते हैं। आप उनके माध्यम से कुछ कराना चाहते हैं। आप उन्हें अपने विचार से सहमत कराना चाहते हैं तथा अन्य भी कारण हो सकते हैं। इसके लिए आपको कोई संदेश देना होता है। यह संदेश कूट भाषा में होता है। आपका उद्देश्य कैसे पूर्ण हो इस कूट संदेश को कैसे अवकूट (encode) किया जाये। इसके लिए एक अवकूटक की आवश्यकता होती है। सम्प्रेषण में अवकूटक का कार्य होता है कि वह संदेश को कूट संदेश से सम्प्रेषण में परिवर्तित कर दें।

प्रसारणकर्त्ता (Transmitter) - आकड़ों को संदेश के रूप में परिवर्तित करता है और ग्राहक (प्राप्तकर्त्ता) के पास भेज देता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि शेवर के मतानुसार संदेश को चिन्हों में परिवर्तित करके ही भेजा जाता है। यह एनकोडिंग का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण खण्ड हैं क्योंकि सही चिन्हों के चयन पर ही प्राप्तकर्त्ता को संदेश को सफलतापूर्ण प्राप्त करने का लक्ष्य निर्भर करता है। इस स्थान पर शेवर एवं विवर ने भाषा को महत्त्वपूर्ण माना है। यह भाषा ही है जो आंकड़ों को समझने में सहायक होती है। प्राप्तकर्त्ता एवं प्रदाता दोनों की भाषायी क्षमता पर संदेश प्राप्ति निर्भर करती है। समस्त प्रक्रिया में सम्प्रेषण में भाषा का महत्त्व भी है।

शोर (Noise) -यहाँ शोर से अभिप्राय सम्प्रेषण मे संदेश को प्राप्तकर्त्ता के पास भेजने की प्रक्रिया में प्रदाता एवं प्राप्तकर्त्ता के मध्य बाधा उपस्थित करने वाले कारकों से है। ये कारक भिन्न-भिन्न रूप में उपस्थित रहते हैं।

प्राप्तकर्त्ता (Receiver) - इस सोपान पर संदेश का स्वरूप इस प्रकार का हो जाता है जिसे पुन:

बताया जा सके। प्राप्तकर्त्ता एवं प्रदाता के मध्य सम्प्रेषण के परिणाम स्वरूप चिन्हों में परिवर्तित संदेश प्रदाता की ओर से प्राप्तकर्त्ता को पहुँचाया जाता है।

लक्ष्य (Destination) - सम्प्रेषण सूचना प्रक्रिया में जो महत्त्व 'स्रोत' का है वही महत्त्व 'लक्ष्य' का भी है। लक्ष्य तक चिन्हों का पहुँचना अनिवार्य होता है।

स्वमूल्यांकन

प्र.1 लेसवेल किस विषय का ज्ञाता था?

प्र.2 लेसवेल के सिद्धांतों में 'किस प्रभाव' को समझाइये।

प्र.3 शेनन वीवर के सिद्धांत में 'शोर' से क्या अभिप्राय है?

प्र.4 शेनन वीवर के सिद्धांत में स्त्रोत का अंतिम छोर क्या है?

20.7 सम्प्रेषण सिद्धान्त (Berlo's Dynamic process Theory)

डेविड बर्लो (David Berlo) ने 1960 में एस.एम.सी.आर. (S.M.C.R.) का सिद्धान्त स्थापित किया। इनका चिन्तन इससे पूर्व दिए गए सिद्धान्तों से भिन्नता लिए है। इन्होंने सम्प्रेषण को एक भिन्न अर्थ में समझाया जिसमें पूर्व में दिए गए विचारों से आगे गत्यात्मक सम्प्रेषण को स्वीकार किया गया। सम्प्रेषण में विभिन्न प्रकार के ज्ञान, अभिवृत्ति एवं कौशल के साथ-साथ सामाजिक संरचना तथा संस्कृति को सम्मिलित किया गया। क्योंकि सम्पूर्ण सम्प्रेषण एक सामाजिक परिदृश्य में पूर्ण होता है। अत: उसे यांत्रिक एवं निर्जीव स्वीकार नहीं किया जा सकता। सम्प्रेषण गत्यात्मक होता है। इसी मान्यता को केन्द्र में रखकर इस सिद्धान्त का विकास किया गया है।

बलों ने एक नई उपागम से इस सिद्धान्त की संरचना की उसने इन घटकों के मध्य रुचि तथा संबंध को भी पहचानने का प्रयास किया तथा इस सिद्धान्त में बलों ने सम्प्रेषण के चार तत्त्वों को नियंत्रित करने वाले कारकों को भी चिन्हित किया। चार तत्व जो सम्प्रेषण के लिए महत्त्वपूर्ण हैं।

डेविड बलों ने प्रत्येक कारक में पाँच तत्वों को खोज कर उनके साथ-साथ अन्त: संबंध को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

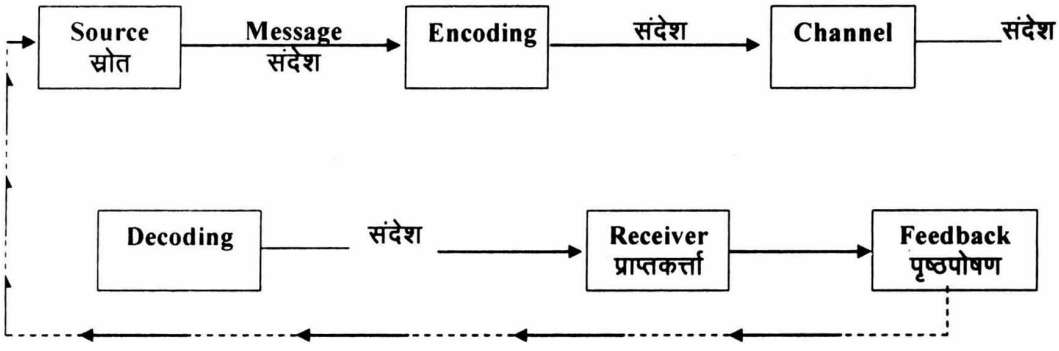

इस सिद्धान्त में संदेश भेजने वाला व्यक्ति संदेश का निर्माण करने का कार्य भी करता है। वह उसे लिखता है। एनकोडिंग करता है। इसके पश्चात् किसी माध्यम के द्वारा उस संदेश के प्रेषित किया जाता है। सम्प्रेषण में ये माध्यम दूरभाष, रेडियो, दूरदर्शन, सम्भावना इत्यादि

हो सकते हैं। संदेश जहाँ भेजा जाता है, वहाँ उसे पढकर डिकोड किया जाता है तथा जिस तक पहुँचाना है, वहाँ पहुँचाया जाता

डेविड बर्लो ने स्रोत तथा प्राप्तकर्त्ता के संबंध पर बल दिया है। इन्होंने सम्प्रेषण कौशलों में पाँच कौशल महत्त्वपूर्ण माने - बोलना (Speaking), लिखना (writing), सुनना (Listening), पढ़ना (Reading) तथा तर्क (Reasoning)। इनका मानना है कि सम्प्रेषण व्यवहार में अभिवृत्तियों, ज्ञान, सामाजिक संरचना तथा संस्कृति का भी प्रभाव पड़ता है। निम्नलिखित चित्र से इस बात को समझा जा सकता है-

बर्लो का "SMCR" सिद्धान्त

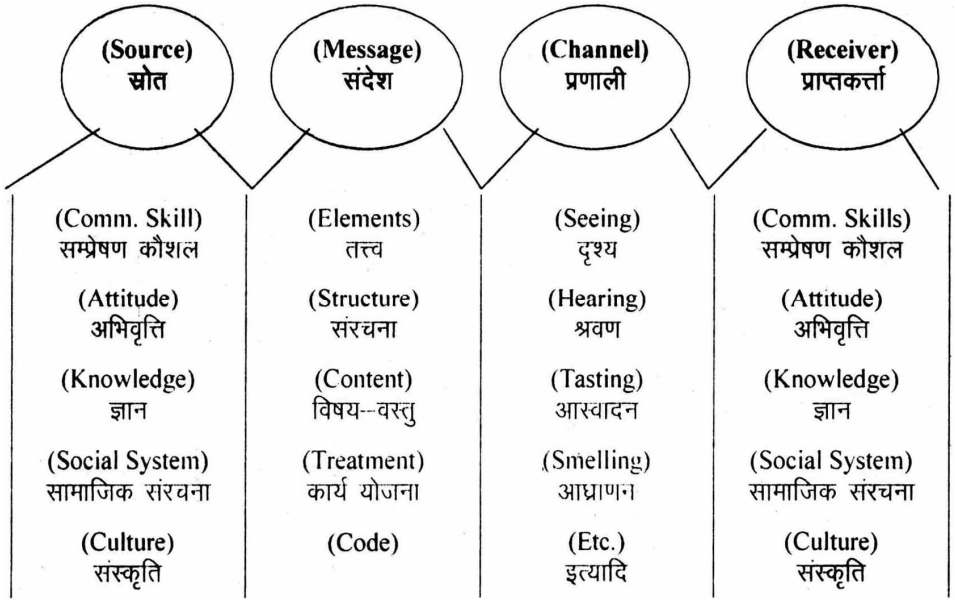

बर्लो का सिद्धान्त

(Berlo's Model)

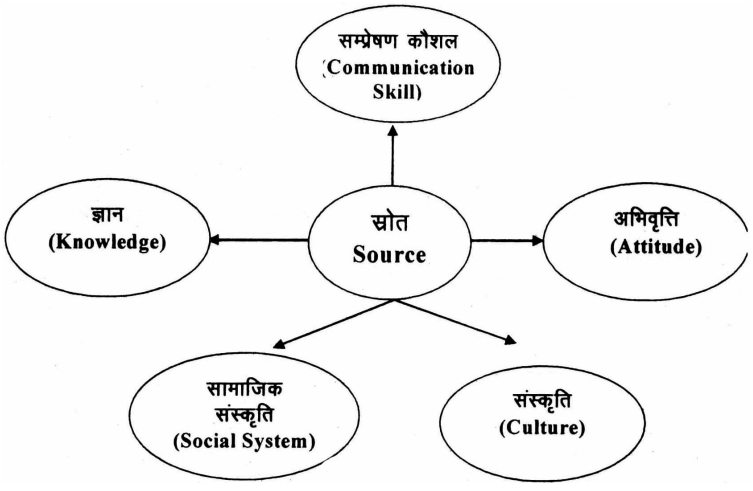

स्वमूल्यांकन

प्र.1 बर्लो का सिद्धान्त किस मान्यता पर आधारित है?

प्र2 बर्लो ने किन सम्प्रेषण कौशलों को महत्त्वपूर्ण माना, सूची दीजिए।

प्र3 सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त किस चिन्तन पर आधारित है?

प्र.4 सामाजिक उत्तरदायित्व सिद्धान्त में कौनसे दो प्रकार के उत्तरदायित्व स्वीकार किए गये हैं?

20.8 सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त (Social Responsibilities Theory)

सोशल रेस्पाँसिबिलिटी की थ्योरी नैतिकता एवं आदर्शवादी चिन्तन पर आधारित है। इसके अनुसार सम्प्रेषण में महत्त्वपूर्ण कारक समाज के प्रति दायित्व बोध है। समाज को क्या चाहि? समाज के लिए क्या उचित है? यह निर्णय करना सम्प्रेषण का मूल बिन्दु है। कुछ भी, किसी प्रकार की भी सूचना सम्प्रेषित नहीं की जानी चाहिए। सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों पक्षों को ध्यान में रखकर सम्प्रेषण किया जाना चाहिए। दायित्व सकारात्मक भी हो सकता है, नकारात्मक भी। यदि एक शराब के व्यवसायी को विज्ञापन प्रसारित करना है तो वह उस सम्प्रेषण में कम उम्र के बालकों का प्रयोग न करे। वह अपने व्यवसाय को बढ़ाने के लिए भी सामाजिक दायित्व से विमुख नहीं हो सकता। सकारात्मक रूप में सम्प्रेषण में सामाजिक दायित्व बोध को सम्प्रेषित किया जाता है। जैसे विज्ञापन में मानवाधिकार एवं जागरूक नागरिकता को प्रदर्शित करना 'जागो ग्राहक जागो' क्रम के विज्ञापन सकारात्मक सम्प्रेषण का उदाहरण है। रेखा चित्रिय प्रदर्शन से सामाजिक दायित्व के सिद्धान्त को समझ सकते हैं -

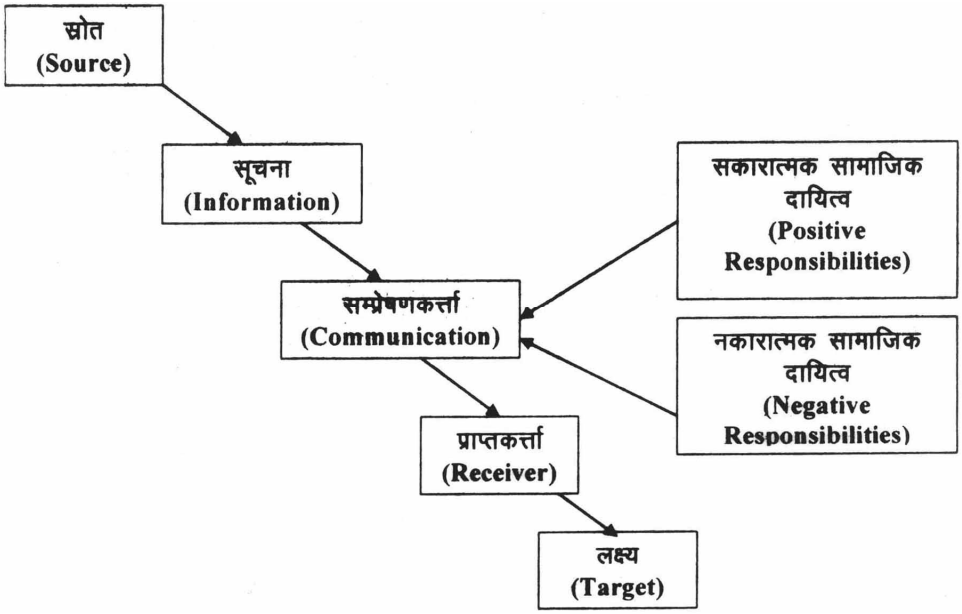

समाज में भिन्न-भिन्न घटकों की भूमिकाएँ एवं दायित्व भिन्न-भिन्न होते हैं। अपनी भूमिका का निर्वहन सामाजिक संदर्भ में किया जाए इसके लिए स्रोत के आधार पर सूचना लक्ष्य तक पहुँचाई जाती है। भिन्न-भिन्न घटक अपनी भूमिका का निर्वाह कर लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं जैसे कि राज्य का सामाजिक दायित्व है कि वह नागरिकों के अधिकार सुरक्षित करे तथा कम्पनियाँ अपने कार्यरत कर्मचारियों के मानवाधिकारों को संरक्षण प्रदान करने वाली परिस्थितियाँ प्रदान करे।

20.9 सारांश

(Summary)

प्रभावशाली शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के लिए सम्प्रेषण का प्रभावपूर्ण होना आवश्यक शर्त है। संदेश को जिस अर्थ में भेजा जा रहा है वह उसी अर्थ को प्राप्तकर्त्ता तक सम्प्रेषित करे, यह महत्त्वपूर्ण होता है। इस प्रक्रिया के लिए विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न सिद्धान्तों का निरूपण किया है। प्रस्तुत इकाई में प्राचीन चिन्तक अरस्तु के सिद्धान्त से लेकर अधुनातन सिद्धान्तों की चर्चा की गई है। सारांश रूप में कह सकते हैं कि अरस्तु का चिन्तन वक्ता एवं श्रोता समुदाय के मध्य सटीक व प्रभावपूर्ण सम्प्रेषण प्रक्रिया पर आधारित है। वक्ता को अपने विषय में पटु (कुशल) होना चाहिए जिससे सम्प्रेषण सार्थक हो सके।

इसके पश्चात् जॉन मिल्टन, जॉन स्टुअर्ट मिल ने सम्प्रेषण में स्वतन्त्रता को महत्त्वपूर्ण माना इन्होंने सेंसरशिप को अनैतिक कार्य माना। इनका विचार था कि सत्य को प्रकट होने देना चाहिए, सम्प्रेषण में यथातथ्यता आवश्यक होती है। इसी सिद्धान्त पर आधारित फ्री प्रैस सिद्धान्त में, सिबर्ट ने प्रैस की स्वतन्त्रता पर बल दिया तथा यह कहा कि प्रेस को प्रकाशन की पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। निर्णय का अधिकार कुछ व्यक्तियों के हाथों में न होकर समस्त जनता को दिया जाना चाहिए। लेसवेल ने भाषण की प्रभावशीलता को सम्प्रेषण में महत्त्वपूर्ण माना तथा कौन कह रहा है? किस माध्यम से क्या कह रहा है? इसे प्रभावपूर्ण स्वीकार किया। शेनन एवं वीवर ने सम्प्रेषण में छः तत्त्वों को महत्त्वपूर्ण माना ये छः तत्त्व क्रमशः स्रोत, कूटक, संदेश, माध्यम, अवकूटक एवं प्राप्तकर्त्ता है। इनके अनुसार सम्प्रेषण में शोर (Noise) का हस्तक्षेप महत्त्वपूर्ण होता है। डेविड बलो ने एस.एम.सी.आर. सिद्धान्त में सामाजिक संरचना तथा संस्कृति जैसे कारकों को भी सम्प्रेषण में सम्मिलित किया तथा स्रोत एवं प्राप्तकर्त्ता के संबंधों को प्रभावकारक स्वीकार किया। अन्त में, सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त स्वीकार किया गया, जिसमें सम्प्रेषण में सकारात्मक एवं नकारात्मक पक्षों को भी मान्यता दी गई तथा सामाजिक दायित्व को महत्त्वपूर्ण मानकर सम्प्रेषण करने पर बल दिया गया। मानवाधिकारों को भी सुरक्षित रखने के तथ्य को स्वीकार किया गया। मानवाधिकारों का हनन करने वाले तथ्यों को सम्प्रेषित न किया जाए।]

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्र.1 सम्प्रेषण के सर्वप्रथम सिद्धान्त के रूप में किस दार्शनिक के विचारों को स्वीकार किया गया है? इस सिद्धान्त को समझाइये।

Which ideology has been accepted as the first theory of Communication?

प्र.2 सम्प्रेषण में सेंसरशिप का विरोध करने वाली विचारधारा को स्पष्ट कीजिए।
Explain the theory of opposing of censorship in communication.

प्र3 प्रकाशन कार्य को किसी भी प्रकार की बाध्यता से मुक्त मानने वाली विचारधारा कौन सी है. इसकी प्रमुख बातें कौन-कौन सी हैं?
Which is the theory, which regards that the publication work should be free from all boundaries?

प्र.4 भाषण की प्रभावशीलता सम्प्रेषण में किस प्रकार प्रभाव डालती है? स्पष्ट कीजिए।
How does the effectiveness of Lecture affects Communication? Explain.

प्र.5 शेनन वीवर के छः कारकों को स्पष्ट कीजिए।
Elucidate six factors of Shannon-Weaver's theory.

प्र.6 सामाजिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त की प्रासंगिकता का उल्लेख कीजिए।
Explain the relevance of social-responsibilities theory.

20.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- Berlo, D. "The process of communication; An Introduction to theory and practice." New York; Halt. Rinehart and Winston 1960.
- Laswell, H. The structure and function of communication in society. In L.Bryson (ed.). The Communication of idas, Newyork; Harper 1948.
- Shannon, C & Weaver, W. "The Mathematical theory of Communication." Urbana, IL. Universities of Illinious Press 1949.
- Robert Gallager, "Information Theory and Reliable Communication", New York, John Wiley and sons, 1968.
- Theodarson, S & Theodarson. A. "A Modern dictionary of Sociology", New York cassell Education Limited, 1969.
- Wikipedia, the free encyclopedia "Social Responsibilities."

इकाई-21

दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री (Audio -Visual Aids)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

21.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

21.1 प्रस्तावना
(Introduction)

21.2 दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का अर्थ एवं महत्व
(Meaning and Importance of Audio-Visual Aids)

21.3 दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का वर्गीकरण
(Classification of Audio-Visual Aids)

21.4 आवश्यक एवं वैकल्पिक दृश्य-श्रव्य सामग्री एवं साधन
(Essential and Optional Audio-Visual Aids)

21.5 दृश्य-श्रव्य सामग्री के गुण एवं विशेषताएँ
(Characteristics and Qualities of Audio-Visual Aids)

21.6 दृश्य-श्रव्य सामग्री के चयन हेतु मापदण्ड
(Criteria for selection of Audio-Visual Aids)

21.7 अधिगम उद्देश्य एवं दृश्य-श्रव्य सामग्री
(Audio-Visual Aids and learning Objectives)

21.8 सारांश
(Summary)

21.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची'
(Bibliography)

21.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी-

1. शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया में दृश्य-श्रव्य सामग्री के अर्थ एवं महत्व से परिचित हो सकेंगे।
2. विभिन्न दृश्य-श्रव्य सामग्रियों से परिचित हो सकेंगे।
3. शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया में दृश्य-श्रव्य सामग्री के योगदान को समझ सकेंगे।
4. दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का उपयोग, चयन, तथा घटक जो माध्यम चयन पर प्रभाव डालते हैं, से परिचित करवाना।

5. दृश्य-श्रव्य सामग्री तथा शिक्षण उद्देश्यों के सम्बन्ध सूत्रों के विश्लेषण की योग्यता विकसित कर सकेंगे।

21.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रस्तुत इकाई में दृश्य-श्रव्य अध्यापन सहायक सामग्री की प्रकृति एवं उपयोग के सम्बन्ध में चर्चा की गई हैं। दृश्य- श्रव्य अध्यापन सामग्री को शिक्षक उपकरण एवं सीखने के एक मार्ग के रुप में लिया गया है। इन सामग्रियों में वे सभी बातें सम्मिलित हैं, जिन्हें रुपान्तरित किया जा सकता है, देखा सुना जा सकता है तथा जिसका ऐसे उपकरण की तरह उपयोग होता है, जो प्रक्रिया को सुलभ बनाते हैं। दृश्य-श्रव्य सामग्री विषय शिक्षण में सहायक होती है तथा सीखने के विभिन्न धरातल पर प्रभावशीलता मे वृद्धि करती है। इन सामग्रियों, साधनों के उपयोग करने का प्रमुख कारण यह है कि इनके द्वारा जानकारियों का अर्थ पूर्ण स्त्रोत सीखने की विभिन्न परिस्थितियों में प्रदान किये जा सकें तथा शिक्षार्थी (Learner) के अनुभव को विस्तृत बनाया जा सके। शैक्षिक अनुभव प्रभावी तथा परिणामदायक तभी होते हैं, जब कोई शिक्षार्थी देखकर, सुनकर, छूकर, स्वाद गंध आदि इन्द्रिय अनुभव से इन्हें आत्मसात करता है। यह अनुभव मूर्त, प्रत्यक्ष तथा किसी न किसी तरह स्थाई होता है। अत: व्यापक समझ के लिये इन्द्रिय अनुभव आवश्यक है। यह भी कहा जा सकता है कि विविध एवं संख्या मे अधिक अनुभव विषय को समझने तथा उसका अर्थ ग्रहण करने में सहायक होते हैं। हालांकि दृश्य-श्रव्य साधन एवं सामग्री मानवीय तत्व शिक्षक का विकल्प नहीं है। ये साधन सामग्री शिक्षक को अपना विषय प्रभावी रुप से समझाने में सहायक होती हैं। अर्थात ये सामग्रियाँ इस कार्य का एक अंग मात्र हैं। प्रमुख भूमिका मानवीय घटक द्वारा ही पूर्ण होती है। ये सामग्रियां तथा साधन व्यावहारिक स्तर पर उपलब्ध होते हैं या शिक्षक द्वारा निर्मित किये जा सकते हैं। शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति हेतु ये साधन के रुप में प्रयुक्त किये जा सकते हैं। दृश्य-श्रव्य सहायक साधनों को शिक्षण एवं सीखने के सन्दर्भ में देखा जा सकता है। अत: यदि आप इन विधियों एवं तकनीकों का शिक्षण में समुचित उपयोग करना चाहते हैं तो सीखने की प्रक्रिया में इन साधनों के सम्बन्धों को समझना आवश्यक है। अन्य घटकों के साथ दृश्य-श्रव्य साधन शिक्षण एवं अधिगम (सीखने) को अर्थपूर्ण एवं प्रभावी बनाने में सहायक होते है।

21.2 दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का अर्थ एवं महत्व (Audio-Visual Aids : Meaning and Significance)

शिक्षण एवं सम्प्रेषण को व्यापक रुप से उत्कृष्ट बनाया जा सकता है यदि हमारे सीखने के अनुभव मूर्तरूप में हों दृश्य-श्रव्य सामग्रियाँ ऐसे साधन हैं जो शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया में योगदान करते हैं। ये साधन सभी स्तरों पर सीखने का आधार प्रदान करते हैं। इस कथन

का यह अभिप्राय नहीं है कि दृश्य-श्रव्य साधन हर परिस्थितियों में अनिवार्य हैं या सीखने की उन परिस्थितियों को नकार दिया जावे, जिनमें यह साधन प्रयुक्त न होते हों। मुख्य बात यह है कि यह साधन तथा इनका चुना हुआ समुचित उपयोग सीखनेको उत्कृष्ट बनाता है। भारत में कुछ शिक्षकों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों की यह धारणा है कि दृश्य-श्रव्य सामग्रियाँ शिक्षण एवं सीखने की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण योगदान नहीं करती हैं। यही नहीं यह भी माना जाता है कि विद्यालयों में इन साधनों का प्रयोग पश्चिम से आयातित व्यर्थ का बोझ है। परन्तु यह भावना तर्क आधारित नहीं है। कुछ अवधारणाएं ऐसी भी होती हैं, जिन्हें समझाने में शिक्षक कठिनाई महसूस करते है तथा शिक्षार्थी के लिए भी इन अवधारणाओं को समझना कठिन होता है। ऐसी परिस्थितियों में दृश्य-श्रव्य सामग्रियों की सहायता से शिक्षक इन अवधारणाओं को सहज एवं प्रभावी ढंग से सिखा पाते हैं। आवश्यक यह है कि इन साधन सामग्रियों का समुचित विधि अनुरूप उपयोग किया जावे, ताकि शिक्षण को सुमन्नत किया जा सके।

ऐसे कई अनुभव है जिन्हें इन साधनों की मदद से कक्षा में प्रस्तुत किया जा सकता है जो कि अन्यथा सम्भव नहीं हो पाते। फिल्म, टेलीफिल्म, मॉडल्स आदि के द्वारा इन्हें कक्षा में प्रस्तुत किया जा सकता है। इन साधनों के द्वारा प्रभावी प्रस्तुतीकरण होने से विद्यालय त्यागने वाले छात्रों की संख्या को कम किया जा सकता है।

21.3 दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का वर्गीकरण (Classification of Audio-Visual Aids)

इन साधन सामग्रियों को मोटे तौर पर नियमानुसार वर्गीकृत किया जा सकता है।

(Printed Media) मुद्रित माध्यम

(Non Projected Media) अप्रक्षेपित माध्यम

(Mass Media) जनसंचार के साधन

(Silent Project Media) मूक प्रक्षेपित माध्यम

(Audio Media) श्रव्य माध्यम

(Electronic Media) इलैक्ट्रॉनिक माध्यम

(Audio-visual Media) दृश्य श्रव्य माध्यम

1. मुद्रित माध्यम (Print Media) - इसमें पाठ्य पुस्तक प्रोग्राम पाठ, फ्लेश कार्ड, खेल, गाईड, पुस्तक आदि सम्मिलित किये जाते हैं। ये शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में कलेवर होते हैं।
2. अप्रक्षेपित (Non-Project) - माध्यम इसके अन्तर्गत चॉक बोर्ड, फलालेन बोर्ड, फोडो चित्र, ड्राइंग, चित्रकारी आदि सम्मिलित हैं।
   इन्हें ग्राफिक सामग्री के अन्तर्गत रखा जाता है।
3. श्रव्य माध्यम (Audio Media) - इसमें वे साधन सम्मिलित हैं, जिन्हें सुना जा सकता है। इसमें वक्ता दिखलाई नहीं देता, परन्तु इसकी आवाज रिकार्ड रहती है। इसके अन्तर्गत टेप-रिकार्डर, रिकॉर्ड प्लेयर, ऑडियो टेप, सम्पादित भाषण तथा टेलीफोन को सम्मिलित किया जाता है।

4. मूक प्रक्षेपित माध्यम (Silent Project Media) - इसमें स्लाइड, फिल्म-स्ट्रिप, ओवर हेड प्रोजेक्टर, मूक फिल्म, स्टीरियोस्कोपिक प्रस्तुतीकरण आदि को सम्मिलित किया जाता है।
5. दृश्य-श्रव्य (Audio-Visual) प्रोजेक्टेड मीडिया - इस वर्ग के अन्तर्गत ध्वनियुक्त फिल्म, ध्वनियुक्त स्लाइड, वीडियो कैसेट, ध्वनियुक्त चलचित्र आदि सम्मिलित किये जाते हैं।
6. इलेक्ट्रॉनिक माध्यम (Electronic Media) - क्लोज सर्किट टीवी, वीडियो, टेप रिकार्डर, कम्प्यूटर सहायता युक्त शिक्षण निर्देश, वीडियो डिस्क, मल्टीमीडिया इन्टरेक्टिव वीडियो आदि को दृश्य-श्रव्य सामग्री के हार्डवेयर के रुप में नामांकित किया जाता है।
7. जन संचार (Mass Media) - इसके अन्तर्गत शैक्षिक पाठों के लिये, रेडियो एवं टेलिविजन के उपयोग को लिया जाता है। इसके द्वारा बड़े समूह की शैक्षिक आवश्यकता की पूर्ति की जाती है। इस वर्ग के अन्तर्गत समाचार पत्र एवं पत्रिकाएं भी आती हैं।

दृश्य-श्रव्य सामग्रियों, साधनों का वर्गीकरण लचीला है। कई बार एक वर्ग दूसरे वर्ग की सीमा में प्रवेश कर जाता है।

21.4 आवश्यक एवं वैकल्पिक दृश्य-श्रव्य साधन (Essential and Optional Audio-Visual Aids)

उपरोक्त वर्णित दृश्य-श्रव्य सामग्रियों में से मुद्रित माध्यम एवं नॉन प्रोजेक्टेड माध्यम को आवश्यक सहायक सामग्री के रुप में तथा अन्य सहायक सामग्रियों को वैकल्पिक सामग्रियों के रुप में वर्गीकृत किया गया है। आवश्यक दृश्य-श्रव्य सामग्री किसी शैक्षिक कार्यक्रम का अभिन्न अंग होती है। जो किसी अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक होती है। विज्ञान प्रयोगों को पुस्तक पढ़कर नहीं समझाया जा सकता। बल्कि प्रयोग को फिल्म या टीवी. कार्यक्रम के द्वारा दर्शाना होता है इसमें गतिशीलता होती है तथा इस तरह से इसे भली प्रकार समझाया जा सकता है। वैकल्पिक सहायक सामग्रियों का चयन शिक्षक द्वारा अपनी शिक्षण व्यूह रचना के अनुरुप किया जा सकता है। यह चयन शिक्षक अपनी रुचि, दक्षता व वरीयता के आधार पर अपने शिक्षण को प्रभावी बनाने हेतु किया जा सकता है। यदि दृश्य-श्रव्य साधन सामग्री को स्थाई रुप से उपलब्ध सामग्री द्वारा पुष्ट एवं उन्नत बनाया जा सके तो यह किसी बने बनाए बाजार में उपलब्ध साधन के प्रयोग से ज्यादा उपयुक्त होगा। यदि हम निर्माण प्रक्रिया में सम्मिलित होंगे तब हम स्थानीय रुप से उपलब्ध सामग्री का उपयोग विश्वासपूर्वक कर सकेंगे। ऐसी सहायक सामग्री जब स्वयं हमारे द्वारा विकसित होगी तथा उसमें समुदाय एवं शिक्षार्थियों की सहभागिता होगी, इसे आवश्यक सामग्री की तरह वर्गीकृत किया जा सकेगा। इस तरह से वैकल्पिक दृश्य-श्रव्य सामग्री तथा अनिवार्य सामग्री परस्पर न सिर्फ सम्बन्धित है, बल्कि आपस में अदल-बदल करने योग्य भी है। व्यापक रुप में यह कहा जा सकता है कि अनिवार्य दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री संदेश की स्पष्टता को नियंत्रित करती है। जिससे कि अवधारणा सरलता से समझाई जा सके, जबकि वैकल्पिक माध्यम विषयवस्तु की गुणवत्ता को बढाते हैं। इसके अन्तर्गत रंग, कठपुतली, चलचित्र आदि को लिया जा सकता है।

21.5 दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री के गुण एवं विशेषताएँ (Characteristics and Qualification of Audio -Visual Aids)

दृश्य-श्रव्य सामग्री व्यापक रुप से प्रस्तुतीकरण विधि की तरह कार्य करती है तथा यह शिक्षक के अधीन कार्य करती है जिससे कि शिक्षक माध्यम का सफल उपयोग कर पाता है। दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्रियों की विशेषताओं को निम्नानुसार वर्णित किया जा सकता है-

1. शिक्षक को अपने शिक्षण अनुदेशन कार्यक्रम को इस तरह योजनाबद्ध करना चाहिए कि वे दृश्य-श्रव्य सामग्री शैक्षिक कार्यक्रम का अभिन्न अंग बन जाये।
2. दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री के सफल उपायों हेतु इसका चयन भली प्रकार से किया जाना चाहिए।
3. शिक्षक इस हेतु प्रशिक्षित हो कि कब, कहां और कैसे, किस दृश्य-श्रव्य सामग्री का उपयोग किया जावे। शिक्षक को दृश्य-श्रव्य सामग्री के निर्माण एवं उपयोग के लिये विशेष रुप से प्रशिक्षित होना चाहिए।
4. शिक्षक को ऐसी सामग्री का उपयोग करना चाहिए जो कि शिक्षार्थी के अनुभव से सम्बन्धित हो। दृश्य-श्रव्य सामग्री उपयोग करने का प्रमुख उद्देश्य यह है कि सम्प्रेषण को उन्नत बनाया जावे। इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु यह आवश्यक है कि शिक्षक तकनीक की मूलभूत अवधारणाओं की गहरी समझ हो। इसे शिक्षक सहायक सामग्री के व्यवस्थित उपयोग के सम्बन्ध में देखा जा सकता है। इन सामग्रियों को किसी विशिष्ट उद्देश्य की पूर्ति हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है तथा उसका मूल्यांकन कर यह पता लगाया जा सकता है कि कोई विशेष सहायक सामग्री किसी खास उद्देश्य को पाने में कहा तक सफल सिद्ध हुई है।

(प्र.) शिक्षक अधिगम प्रक्रिया में दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्रियों की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?

21.6 दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री के चयन हेतु मानदण्ड (Criteria for Selection of Audio-Visual In Teaching Learning Process)

शिक्षण सहायक सामग्री शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया में कार्यकारी भूमिका निभाती है। शिक्षक कक्षा एवं विद्यालय वातावरण के अनुरुप सहायक सामग्री का चयन करता है तथा उसकी रुपरेखा निश्चित करता है। दृश्य श्रव्य सामग्री के चयन के लिए जिन प्रमुख मानदण्डों को अपनाया जाना चाहिए वे निम्नानुसार हैं।

21.6.1 आवश्यकताएं एवं उद्देश्य

दृश्य-श्रव्य सामग्री इस स्थिति में प्रयोग की जानी चाहिए जब उसका उपयोग किया जाना किसी अवधारणा को समझाने के लिए आवश्यक हो तथा अन्य किसी माध्यम द्वारा उसका समझाया जाना संभव न हो। दूसरे शब्दों मे सिद्धांत रुप में यह कहा जा सकता है कि

अनुदेशन उद्देश्य (Teaching Objectives) ही यह निर्धारित करते हैं कि कौन सा माध्यम अपनाया जाए। यदि कोई अवधारणा पुस्तक के माध्यम से स्पष्ट हो सकती है तो दृश्य-श्रव्य माध्यम का उपयोग आवश्यक नहीं होगा। यदि पर्यावरण के सम्बन्ध में छात्रों को कुछ बताया जाना है तो पेड पौधों के चित्र दिखलाने के बजाय कक्षा के बाहर लगे पेड पौधे दिखलाना उपयुक्त होगा। शिक्षक के लिये यह जानना आवश्यक है कि क्या किसी अवधारणा विशेष को पुस्तक के माध्यम से समझाना वाकई कठिन है। ऐसी अवधारणाओं को सूचीबद्ध करना या सारणीबद्ध करना उपयोगी होगा, जिन्हें सामान्य रीति से नहीं समझाया जा सकता।

21.6.2 अधिगम गतिविधियॉ (Learning Activities)

जिन श्रोताओं या शिक्षार्थियों को लक्ष्य रखकर अनुदेशन किया जाना है तथा शिक्षण सहायक सामग्री उपयोग की जानी है। वे हमेशा केन्द्र बिन्दु होना चाहिए। अधिगम गतिविधियाँ भी शिक्षण उद्देश्यों की पूर्ति के लक्ष्य पर आधारित होनी चाहिए तथा इसे पूर्व में ही भली प्रकार योजनाबद्ध कर लेना चाहिए। तकनीकी शब्दावली में यह कहा जा सकता है कि ये सभी क्रियाकलाप शिक्षक के दृष्टिकोण एवं नियंत्रण में होने चाहिए।

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में जो भी विभिन्न गतिविधियाँ, क्रिया-कलाप आयोजित की जाती है, वे क्रियाकलाप ही सहायक सामग्री की प्रकृति निश्चित करते हैं। उदाहरण के लिए-सेमीनार के लिए ओवर हेड प्रोजेक्टर, फिल्म स्क्रिप्ट उपयुक्त साधन हैं। जबकि यदि प्रदर्शन (Demonstration) दिया जाता है, तब इन साधनों में Close Circuit TV, Video Cassette कैसेट प्लेयर को सम्मिलित किया जाना उपयुक्त होगा।

21.6.3 अधिगम स्तर (Level of Learning)

शिक्षार्थी की उपलब्धि उस माध्यम व उसके प्रकार पर निर्भर करती है जिससे कि उन्हें प्रस्तुतीकरण दिया जाता है। कुछ शिक्षार्थियों के लिए एक विशेष प्रकार का माध्यम उपयुक्त हो सकता है, तो दूसरों के लिए कोई अन्य प्रकार उपयुक्त होता है। यद्यपि इस सम्बन्ध में कोई ठोस अनुसंधान परिणाम उपलब्ध नहीं है कि माध्यम का शिक्षार्थी में अधिगम के विभिन्न स्तरों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

21.6.4 उपलब्धता घटक (Accessibility Factor)

भारत के अधिकांश विद्यालय महंगे इलेक्ट्रॉनिक संसाधन नहीं जुटा सकते, जिनका उपयोग शिक्षण अधिगम में किया जा सके। ऐसे विद्यालयों को ग्राफिक सामग्रियों या कुछ सुधरी हुई सामग्रियों पर निर्भर रहना होता है। जो उनके विद्यालय पर्यावरण में उपलब्ध होती हैं। इस तरह उपलब्धता के आधार पर माध्यम का चयन वांछित हो जाता है।

21.6.5 माध्यम चयन को प्रभावित करने वाले सामान्य घटक (General Factor affecting the Choice of Media)

ऐसे कई घटक हैं जो माध्यम चयन को प्रभावित करते हैं, परन्तु किसी माध्यम विशेष का चयन विभिन्न शिक्षार्थी समूह एवं परिस्थितियों पर निर्भर करता है तथा इसकी विभिन्नताओं से प्रभावित होता है। माध्यम चयन करने से पूर्व अन्य बातों पर विचार पर लेना उचित होगा जैसे शिक्षण विधि तथा इसका व्यावहारिक पक्ष आदि। शिक्षक जो कि महत्वपूर्ण मानवीय घटक है, कई बार उसकी रुचि, अरुचि, कौशल के अभाव आदि के कारणों से ही शिक्षक किसी माध्यम विशेष को नहीं चुनता। कई बार शिक्षक का किसी माध्यम विशेष के प्रति पूर्वाग्रह दृष्टिकोण, रुचि, अरुचि भी उसे बाधित करती है। यदि शिक्षक अपनी स्वयं की शिक्षण सहायक सामग्री विकसित करता तथा बाजार से उपलब्ध सामग्री नहीं अपनाता तब मनोवैज्ञानिक कारणों से भी यह स्वयं के द्वारा विकसित सामग्री ही प्रस्तुत करना चाहेगा। ऐसी स्थिति में शिक्षक सामग्री विकास का अंग होगा तथा कक्षा में ऐसी सामग्री का आत्म विश्वासपूर्वक उपयोग कर सकेगा तथा यह सहायक सामग्री माध्यम के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक होगी। अत: उपयुक्त माध्यम के चयन के संदर्भ में कोई निश्चित परिभाषित मानदण्ड नहीं अपनाया जा सकता। यदि हम किसी अवधारणा विशेष के सम्बन्ध में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के अन्तर्गत दो विभिन्न माध्यमों के परिणामों की तुलना करें, तो प्रत्येक माध्यम सफल हो सकेगा। परन्तु यह कहना कठिन होगा कि कौनसा माध्यम ज्यादा सफल है। कुछ ऐसे पाठ या अवधारणाएं भी हो सकती हैं, जिनमें एक से अधिक माध्यमों का सम्मिलित उपयोग उपयुक्त हो सकता है। Multi Media Package विभिन्न अवधारणाओं के लिये उन्हें भली प्रकार समझाने में ज्यादा प्रभावी हो सकते हैं। शिक्षण सहायक सामग्री के अन्तर्गत, पुस्तक ब्लेक बोर्ड, प्रयोग, भ्रमण आदि को सम्मिलित किया जा सकता है। यह भी ध्यान रहना चाहिए कि जब तक शिक्षण सामग्री का उपयोग करते है तब हमें तकनीकी दक्षता पर जरुरत से ज्यादा जोर नहीं देना चाहिए बल्कि विषय अवधारणा की गंभीरता एवं जटिलता को ध्यान में रखते हुए शिक्षण सहायक सामग्री की योजना बनानी चाहिए। शिक्षण सहायक सामग्री के उपयोग का औचित्य होना आवश्यक है। दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री चयन के लिए सिद्धांत रुप में शिक्षार्थी के मानसिक स्तर अवधारणा, उसके विभिन्न चरण आदि का विचार किया जाना चाहिए।

21.7 अधिगम उद्देश्य एवं दृश्य-श्रव्य सामग्री (Learning Objective and Audio - Visual Materials)

सीखना अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका परिणाम व्यक्ति के व्यवहार परिवर्तन के रूप में घटित होता है। यह शिक्षार्थी के अन्तस में होता है। शिक्षण प्रक्रिया अधिगम की सहायक होती है। शिक्षण अधिगम परस्पर निर्भर प्रक्रियाएं है जो एक दूसरे पर अवलम्बित

होती हैं। वे एक दूसरे के बिना घटित नहीं हो सकती। अधिगम शिक्षक के सीधे हस्तक्षेप के बिना केवल उस स्थिति में हो सकता है जब सम्पूर्ण वातावरण निर्मित हो तथा शिक्षार्थी सीखने के लिए पूर्णत: प्रेरित हो।

अधिगम उद्देश्य अनुकूल वातावरण निर्मित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यदि शिक्षार्थी के अधिगम लक्ष्य स्पष्ट रुप से परिभाषित तथा सुस्पष्ट हों तो इसके अनुरुप सामग्री चयन एवं वातावरण निर्मित किया जा सकता है अर्थात् शिक्षण अधिगम के लक्ष्य उपलब्धि के संदर्भ में स्पष्ट होना चाहिये ताकि उनके अनुरुप शिक्षक विधि, माध्यम, सहायक सामग्री का चयन स्वतंत्रतापूर्वक कर सकें।

अमरीकी मनोवैज्ञानिक बॉब मेगर (Bob Mager) के अनुसार अधिगम उद्देश्य व्यवहार के रुप में होना चाहिए। यह कि शिक्षार्थी अधिगम होने के पश्चात् क्या कर सकने में समर्थ होगा? किन परिस्थितियों में एवं किस स्तर पर वह इस व्यवहार का कार्य निर्वाह कर सकेगा। B.S. Bloom उद्देश्यों की तीन श्रेणियों का वर्णन करता है जो कि मेगर के अनुरुप ही हैं। आप अनुदेशन उद्देश्यों के वर्गीकरण से पूर्व परिचित होंगे जो कि निम्नानुसार हैं :-

ज्ञानात्मक उद्देश्य

संज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive Objectives) - इसमें शिक्षार्थी (Learner) को जानने के योग्य होना चाहिए।

भावात्मक उद्देश्य (Affective Objectives) - इसके अन्तर्गत रुचि, दृष्टिकोण आते हैं।

कौशलात्मक उद्देश्य (Psychomotor) - इसके अन्तर्गत कौशलात्मक उद्देश्य सम्मिलित हैं।

ब्लूम द्वारा व्यवहार के रुप में प्रदर्शित उद्देश्य निम्न शब्दावलियों में प्रस्तुत किए जाते हैं।

1. ज्ञान - Knowledge
2. पाठ बोध - Comprehension
3. उपयोग - Application
4. विश्लेषण - Analysis
5. संश्लेषण - Synthesis
6. मूल्यांकन -Evaluation :आकलन इन्हें संक्षेप में Performance, कार्य निर्वाह Condition, स्थिति नियंत्रण एव अंतर के रुप में वर्णित किया जा सकता है।

दृश्य श्रव्य सामग्री के उपयोग का अभिप्राय यह है कि यदि विशिष्ट उपकरण उपर्युक्त निर्देश, उपकरण, मॉडल, चार्ट तथा अन्य सामग्रियों का उचित रुप में प्रयोग किया गया है, तो वह कार्य निर्वाह के रुप में उच्च स्तरीय होगा तथा उसका मूल्यांकन किया जा सकेगा।

21.7.1 कार्य निर्वाह (Performance)

जब उद्देश्यों के तीन भागों की पहचान कर ली जाती है तब प्रत्येक की आवश्यकता कार्य निर्वाह कथन के रुप में होती है जिसका अवलोकन तथा मापन किया जाना है। इसके सामान्य उदाहरण है जैसे नाम देना, पहचान करना, गणना करना, कथन करना, संगठित

करना, दर्शाना आदि के रुप में है। कार्य निर्वाह स्पष्ट होना चाहिए, जिसका अवलोकन एवं मापन किया जा सके। इसके द्वारा उपर्युक्त सहायक सामग्री, विधि तथा माध्यम का निर्धारण किया जा सकेगा।

21.7.2 स्थिति (Condition)

अनुदेशन उद्देश्य जैसा कि पूर्व में बतलाया गया है कथन का यह भाग दृश्य-श्रव्य सामग्री के स्थान को प्रमुख रुप से वर्णित करता है। इसके अन्तर्गत उपकरण, दृश्य-श्रव्य सामग्री, निर्देश, परिस्थितियाँ तथा वातावरण जिनमे कार्य निर्वाह उपलब्ध किया जाना है, आदि को सम्मिलित किया गया है। इन सभी का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है तथा ये शिक्षण अधिगम प्रक्रिया से जुड़े हुए हैं। दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री विषय की स्पष्टता हेतु प्रयुक्त की जाती है। इसका उल्लेख किया जाना चाहिए, क्योंकि कई बार किसी अवधारणा को इसकी सहायता के बिना स्पष्ट करना संभव नहीं होता, जब मानक एवं आवश्यकता आधारित सहायक सामग्री उपयोग नहीं की जाती तब परिणाम उपयुक्त नहीं होते। ऐसी स्थितियाँ जब दृश्य-श्रव्य सामग्री निर्देश (Manuals) उपकरण, आवश्यक नहीं होते तथा तब उनकी सहायता के बिना वांछित उद्देश्य पाना संभव नहीं होता ऐसी स्थितियों का उल्लेख व्यवहार उद्देश्य में स्पष्ट रुप से किया जाना चाहिए।

21.8 सारांश (Summary)

दृश्य श्रव्य सामग्री को शिक्षण में उपकरण एवं सीखने के एक मार्ग के रूप में लिया गया है। ये सभी साधन एवं उपकरण सीखने की प्रक्रिया को सरल एवं प्रभावी बनाते है। शैक्षिक अनुभव को अधिक स्थायी बनाने के लिए इनका प्रयोग किया जाता है।

ये सामग्रियाँ अनेक प्रकार की होती है। इन सामग्रियों का चयन प्रत्येक शिक्षक बहुत सोच समझकर करता है। प्रत्येक सामग्री हर विषय वस्तु कक्षा, विद्यार्थी एवं शिक्षक के लिए उपयुक्त नही होती है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. दृश्य श्रव्य सामग्री किसे कहते है? ये कितने प्रकार की होती है?
   What do you understand by Audio-Visual Aids? What are three types?
2. किसी भी दृश्य-श्रव्य सामग्री के चयन में आप किन-किन बातों को ध्यान में रखेंगे।
3. अनिवार्य सहायक सामग्री एवं वैकल्पिक सहायक सामग्री में अन्तर कीजिए।
   Differential between essential and optional Audio-Visual Aids.

21.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- ब्राउन जेम्स डब्ल्यू लेविस : ऑडियो विजुअल इन्सट्रक्शन
- रिचार्ड वी एण्ड हर्किल्लेरोड : टेक्नोलॉजी मीडिया एण्ड मेथडस, मेग्राहिल बुक कंपनी न्यूयार्क
- डेल एडगर : ऑडियो विजुअल मेथडस इन टीचिंग: ड्राइडन प्रेस, न्यूयार्क
- डेन्ट. ई.सी. : ऑडियो विजुयल हेण्ड बुक सोसाइटी फार विजुअल एज्यूकेशन, सिकागो
- डेवी जान : ऑडियो विजुअल हेण्ड बुक सोसाइटी फार विजुअल एजुकेशन, शिकागो
- इरिक्सन कार्लटन, डब्ल्यू एच.एण्ड, डेविस एच.कल : एक्पीरिअन्स एण्ड एड्युकेशन टेक्नोलॉजी, मेकमिलन, लन्दन।
- फिन.जे. : ऑडियो विजुअल इक्विपमेंट मेन्युअल, ड्रायडन प्रेस, न्यूयार्क
- किन्डन जे एस : ए.वी. मटीरियल एण्ड टेक्निक्स, अमेरिकन बुक कम्पनी न्यूयार्क।
- लिडसी पेटर : ह्यूमन इन्फार्मेशन प्रोसेसिंग, एच एण्ड नार्मन एकेडेमिक प्रेस, न्यूयार्क।
- डॉनाल्ड ए मार्शल मेकलहन : अन्डरस्टेंडिंग मीडिया, मैकग्रा हिल, न्यूयार्क।
- रोमियाजोस्की ए.जे. : सलेक्शन एण्ड यूज ऑफ इन्सट्रक्शनल मीडिया, कांगनपंग लि, लंदन
- समर डब्ल्यू एल. : विजुअल मेथड्स इन एजुकेशन ऑक्सफोर्ड बेसिल ब्लेक वेल
- थायर एल : कम्युनिकेशन कान्सेप्टस एण्ड प्रास्पेक्टीव, मेकमिलन एण्ड कंपनी लिमिटेड, लंदन।

इकाई-22

अन्तक्रियात्मक टेलिविजन (Interactive Television)

इकाई की संरचना

(Structure of unit)

22.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

22.1 प्रस्तावना
(Introduction)

22.2 शैक्षिक टेलिविजन तथा उसका विकास-क्रम
(Educational Television and its Development)
22.2.1 शैक्षिक टेलिविजन के क्षेत्र में भारतीय उपलब्धियाँ
22.2.2 टेलिविजन पर दर्शक नियंत्रण

22.3 भारतीय प्रयोग
(Indian Experiments)
22.3.1 साइट
22.3.2 प्रशिक्षण तथा विकास संचार चैनल (टी.डी.सी.सी.)

22.4 अन्त:क्रियात्मक टेलिविजन का प्रयोग
(Technology of Interactive Television)
22.4.1 अन्तःक्रियात्मक क्या है? (क्रियात्मकता)
22.4.2 डी.पी.ई.पी. का दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम

22.5 अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन की प्रौद्योगिकी
(Technology of Interactive Television)
22.5.1 अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन में उपग्रह
22.5.2 संकेत ग्रहणकारी केन्द्र
22.5.3 प्रति सम्पर्क (रिवर्स-लिंक)

22.6 दूरस्थ शिक्षा में अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन
(Interactive Television In Distance Education)

22.7 सारांश
(Summary)

22.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

22.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

अन्तःक्रियात्मक टेलीविजन शैक्षिक टेलीविजन के क्षेत्र में अपेक्षाकृत एक नई अवधारणा है। प्रारम्भ में इसे टेलिकॉन्फ्रेसिंग के रुप में जाना जाता था। दो तरफा सम्प्रेषण की विशेषता के योग के बाद से यह अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन के रुप में लोकप्रिय हो गया है।

इस इकाई के पढ़ने के उपरान्त विद्यार्थी -

- अनुदेशनात्मक टेलिविजन को परिचालित करने वाली प्रौद्योगिकियों को समझ सकेंगे।
- अन्तःक्रियात्मक की अवधारणा से अन्तरंग हो सकेंगे।
- प्रसारणशील व प्रसारणोत्तर टेलिविजन में भेद स्थापित कर सकेंगे।
- टेलिविजन के ऐतिहासिक विकास क्रम से परिचित हो सकेंगे।
- अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन के विविध प्रकारों व उपयोगिताओं के बोध कर सकेंगे तथा
- टेलिविजन द्वारा प्रशिक्षण के लाभ ज्ञात कर सकेंगे।

22.1 प्रस्तावना
(Introduction)

इस इकाई के माध्यम से आपको शैक्षिक टेलिविजन की शुरुआत से लेकर उसकी अन्त: क्रियात्मकता की अवस्था तक के समस्त अविष्कारों एवं विकास-क्रमों के विषय में जानकारी दी जाएगी। आप टेलिविजन कार्यक्रमों को प्राय: देखते होंगे और अक्सर यह सोचते भी होंगे कि आप उसकी क्रियाशीलता के विषय में कुछ और अधिक जानकारी कैसे हासिल करें। इस इकाई से आपको ऐसे प्रसंगों से सम्बन्धित सवालों के जवाब मिल सकेंगे।

इस इकाई से आपको प्रसारणशील टेलिविजन के कुछ अत्याधुनिक विकास क्रमों को जानने-समझने का अवसर मिलेगा। आप टेलिविजन के पर्दे पर दिखाई देने वाले व्यक्ति से बातचीत व अन्तःक्रिया की सम्भावनाएं भी तलाश कर सकेंगे। तथ्यत: अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन प्रकार का प्रचलन हमारे देश में 1993 के बाद से सतत् होता आ रहा है। यदि आप व्यक्तिगत रुप से इस प्रसारण का अनुभव करना चाहें तो आप किसी मुक्त विश्वविद्यालय के केन्द्र से सम्पर्क स्थापित करें और सुनिश्चित करें कि आप इस प्रकार के टेलिविजन को कब देख सकते हैं और उसके प्रसारण में हिस्सा ले सकते हैं।

22.2 शैक्षिक टेलिविजन तथा उसका विकास
(Educational Television and Its Development)

शैक्षिक टेलिविजन शैक्षिक रेडियो का स्वाभाविक उत्तराधिकारी है। इसके बावजूद अन्तःक्रियात्मक टी.वी. जिस नक्षत्रों के क्रम में प्रकट हुआ, वे शैक्षिक रेडियो के नक्षत्रों की अपेक्षा कहीं अधिक तेजस्वी थे। जन संचार मे रेडियो की शुरुआत 1993 के दशक के दौरान

हुई और लगभग उसी समय से उसका शैक्षिक उपयोग भी होने लगा। परन्तु शैक्षिक टेलिविजन का समारम्भ 1950 के प्रारम्भिक वर्षो में तब हुआ जब बी.बी.सी. तथा रेडियो डिफ्यूजन टेलिविजन फ्रेन्चाइज ने स्कूलों के लिए ज्ञानवर्द्धक कार्यक्रम बनाना शुरु किया। इटली ने 1958 में टेलिस्क्युला (अन्तरिक्ष के टेलिविजन स्कूल) की शुरुआत की, यूगोस्लाविया तथा पोलेण्ड ने 1960 में तथा चीन व रुस ने 1962 में। उसके बाद अनके देशों ने इस होड में हिस्सा लेना शुरु कर दिया।

शिक्षा में टेलिविजन एक विरोधाभास है। टेलिविजन विक्रय के एक सशक्त माध्यम के रुप में विकसित हुआ और आज भी वह ऐसा ही सशक्त माध्यम है, परन्तु शिक्षा के संदर्भ में वह कुछ भी नहीं बेचता। वाणिज्यिक टी.वी. अधिकांश लोगों तक पहुंचने की दृष्टि से संरचित व संचालित होता है जबकि आई.टी.वी केवल विशिष्ट अल्पसंख्यकों की सेवा को ही समर्पित है। समूची दुनिया में टेलिविजन को विज्ञापन से प्राप्त धन का संरक्षण मिलता है, लेकिन शिक्षा के संदर्भ में उसे यह सहारा भी नहीं मिलता। सबसे बडा विरोधाभास तो यह है कि टी.वी. के प्रयोग की शुरुआत करने वाले शिक्षक ही थे। प्रायोगिक टी.वी. प्रसारण सबसे पहले 1932 में अमेरिका के आयोवा विश्वविद्यालय में हुआ परन्तु मनोरंजन टीवी. ने निर्णायक रुप से जन-समर्थन प्राप्त किया और अपने लिए विश्वव्यापी दर्शक समूह सुनिश्चित किया। 12 मई 1952 को पहले गैर-पारम्परिक शैक्षिक टी.वी. प्रसारण से पूर्व दो सौ वाणिज्यिक टी.वी. केन्द्र कार्यरत थे।

जैसे-जैसे टेलिविजन के मनोरंजन पक्ष ने आधिपत्य जमाया, टेलिविजन का एक मात्र कार्य व भूमिका यह मानी जानी लगी कि वह घर के भीतर बैठे दर्शकों का प्रभावी मनोरंजन करें। एक बार शिक्षण-उपकरण के रुप में उसकी स्वीकृति हो जाने पर शैक्षिक संदर्भ में उसकी उपादेयता में चार चाँद लग जाएंगे। आज विश्व में सर्वत्र इस दिशा में प्रयास जारी है।

22.2.1 शैक्षिक टेलिविजन में भारतीय उपलब्धियाँ

पिछले लगभग पच्चीस वर्षो से भारत में उपग्रह संचार के जरिए शैक्षिक तथा सामाजिक प्रासंगिकता विषयक शिक्षा से जुड़े कार्यक्रम बनाने व उन्हें प्रसारित करने के प्रयास हो रहे हैं। इस अवधि के दौरान भारत ने देसी तकनीक व प्रौद्योगिकी से इनसेट (इंडियन नेशनल सेटेलाइट) का विकास किया है। इनसेट श्रृंखला में भारत ने अनेक उपग्रह अंतरिक्ष कक्षा में छोड़े हैं। टेलिविजन प्रसारण के लिये उपग्रह अनिवार्यत: आवश्यक नहीं हैं, परन्तु उपग्रह के जरिए यदि प्रसारण हो तो वह तत्काल देश के सभी भागों में प्रसारित हो सकता है, जिसे टी.।वी. की भाषा में 'लाइव' कवरेज कहा जाता है।

आज हमारे देश का कोई भी भाग टी.वी. प्रसारण से अछूता नहीं है। आज देश में अनुमानत: 52 मिलियन टी.वी. सेट्स हैं जिनमें से 18 मिलियन टी.वी. सेट्स ग्रामीण क्षेत्रों के 95 मिलियन परिवारों से सरोकार रखते हैं। तथ्यत:, टी.वी. सेट्स का राष्ट्रीय वितरण काफी असंतुलित रुप से शहरी क्षेत्रों के पक्ष में हैं।

22.2.2 टेलिविजन पर दर्शक नियंत्रण

आपने गौर किया होगा फिर भी यह उल्लेख अप्रासंगिक होगा कि प्रसारणशील टेलिविजन पर दर्शकों का नियंत्रण बहुत कम होता है सिवाय इसके कि वे चैनल बदल-बदल कर अपना पसंदीदा कार्यक्रम टेलिविजन पद देख लें। रिकॉर्डेड प्रकार में दर्शकों को अधिक पसंद की गुंजाइश होती है। इसमें दर्शक आने वाली फिल्म या कार्यक्रम को रोक सकता है, 'रिवाइन्ड-कर सकता है, 'रिप्ले' कर सकता है या एक ही शॉट को बार-बार देख सकता है, ताकि वह सुविधानुसार पसंदीदा गति पर शॉट देखते हुए उसे बेहतर समझ सके। अब तो कुछ कैसेट प्लेयर कुछ हिस्सों को 'जूम' करके या रोक कर दिखने की सुविधा भी उपलब्ध कराते हैं, ताकि बेहतर व स्पष्टतर छवि दर्शन सम्भव हो सके।

प्रसारणशील टेलिविजन तथा वीडियो कैसेट एक अर्थ में काफी समान होते हैं। दोनों ही रिकॉर्डेड चल-चित्र प्रसारित करते हैं। राष्ट्रीय चैनल पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रम भी विडियो कैसेट पर वितरित किए जा सकते हैं। यद्यपि प्रसारण किए जाने वाले कार्यक्रम यू-मेटिक वीडियो टेप पर ढाले जाते है। जो कि 'हाई रिजोल्यूशन' गुणवान होते हैं। इस गुणवत्ता में कोई भी घटाव घरेलू टी.वी. सेट पर आने वाले चित्रे को विकार प्रदान कर सकता है या उसकी ध्वनि की गुणवत्ता को अस्त-व्यस्त कर सकता है।

टी.वी. पर समय की मर्यादा भी व्याप्त होती है। टी.वी. कार्यक्रम एक निर्धारित समय पर ही प्रसारित होते हैं। वे व्यक्ति-विशेष की सुविधानुसार नहीं देखे जा सकते। वीडियो प्रकार में दर्शक अपनी सुविधानुसार समय चुनते हुए अपने पसंदीदा कार्यक्रम देख सकते हैं। यह सुविधा वीडियो प्रकार को वयस्कों व कार्यरत विद्यार्थियों के लिए विशेष उपयोगी व इस आधार पर लोकप्रिय भी बनाती है। यह सम्भव है कि स्कूल व कॉलेज विद्यार्थी समूहों के लिए भी टी.वी. समय सारिणी सुविधाजनक न हो और इसलिए वे इन कार्यक्रमों का भरपूर लाभ न उठा सकें। रिकॉर्डेड प्रकार में सबको समय व अवसर की समान सुविधा उपलब्ध होती है।

आपको अक्सर यह इच्छा होती होगी कि आप टी.वी. पर प्रकट वक्ता से सवाल पूछे या अपना मत उसको अभिव्यक्त करें। अब तक यह सब कर पाना प्राय: सम्भव नहीं था, परन्तु अब उपग्रह संचार सेवाओं के विकास ने यह चमत्कार भी प्रस्तुत कर दिया है। इस सुविधा के विषय में विस्तृत चर्चा आगे की जाएगी।

22.3 भारतीय प्रयोग (Indian Experiment)

पिछले खण्ड के अध्ययन से आपको विश्व के संदर्भ में टेलिविजन के उदय व प्रसार के विषय में ज्ञात हुआ। आपको प्रसारणशील तथा टी.वी. कार्यक्रम के रिकॉर्डेड प्रकार के विषय में भी पर्याप्त जानकारी प्राप्त हुई। आपको उस खण्ड में आश्वस्त किया गया था कि आपको उन प्रयोगों के बारे में बताया जाएगा, जिन्होंने टी.वी. कार्यक्रम प्रस्तुतकर्ता व दर्शकों के मध्य

अन्तःक्रिया को सम्भव कर दिखाया। अब आपको ऐसे ही कुछ प्रयोगों के विषय में बताया जा रहा है, जो विगत वर्षो के दौरान भारत में चरितार्थ हुए।

22.3.1 सेटेलाइट इन्सट्रक्शन टेलिविजन एक्सपेरिमेन्ट (साइट)

साइट भारत में प्रसारणशील टेलिविजन संबंधी प्रारम्भिक प्रयोगों में से एक था। यह 1975-76 के दौरान परिचालित किया गया। साइट **(ISRO)** (इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाईजशन) तथा भारत सरकार के सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के संयुक्त प्रयासों का प्रतिफल था। 1970 के दशक के प्रारम्भिक वर्षो के दौरान भारत का अपना कोई उपग्रह नहीं था। अमेरिका के **नासा** (नेशनल एरोनॉटिकल एंड स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन) ने हमें पहला उपग्रह **ए.टी.एस-एफ.** उपलब्ध कराया। यह एक वर्ष की अवधि के लिए उपलब्ध कराया गया था (1 अगस्त, 1975 से 31 जुलाई 1976 तक)। यह वह समय था जब भारत में साइट प्रयोग प्रवर्तित किया गया था। **साइट** प्रयोग में सूचना का प्रवाह व संचरण एक दिशा में ही था, इसलिए दर्शकों को इसमें सेवा प्रतिपादकों व प्रस्तुतकर्त्ताओं से सवाल-जवाब की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। साइट प्रयोग से उत्साहित होकर **इसरो** ने एक समूचा ट्रान्सपॉन्डर शैक्षिक व प्रशिक्षण उद्देश्यों के लिए नियत कर दिया, जिसे प्रशिक्षण व विकास संचार चेनेल (टी.डी.सी.सी.) की संज्ञा दी गई।

22.3.2 ट्रेनिंग एंड डेवलपमेन्ट कम्यूनिकेशन चैनल (टी.डी.सी.सी.)

टी.डी.सी.सी. **इसरो** द्वारा प्रबंधित चैनल है। इसने एक तरफा वीडियो व दो-तरफा ऑडियो टेलिकॉन्फ्रेसिंग के जरिए पंचायती राज के निर्वाचित प्रतिनिधियों, प्राथमिक स्कूल शिक्षकों तथा दाईयों को सफलतापूर्वक प्रशिक्षण प्रदान किया है। इन विकास क्रमों से प्रेरित होकर इसरो ने मध्यप्रदेश के झबुआ जिले में उपग्रह संचार के जरिए विकास का कार्य अपने हाथ में लिया। यह जिला एक समय भारत के सर्वाधिक पिछड़े जिलों में से एक माना जाता था, जहां केवल 14.52% साक्षरता थी, जबकि साक्षरता का औसत 23.22% व मध्यप्रदेश का औसत 44.20% था। प्रशिक्षण के क्षेत्र में टेलिविजन के लाभ को देखते हुए अब प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों के लिए एक प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार किया गया है जिसके विषय में हम अगले खण्ड में चर्चा करेंगे।

22.4 अन्त:क्रियात्मक टेलिविजन प्रयोग (Experiment of Interactive Television)

अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन के क्षेत्र में अनेक समानधर्मी प्रयोग किए गए हैं। यद्यपि प्राथमिक स्कूल के शिक्षकों के लिए इस श्रृंखला का पहला ऐसा प्रयोग इं.गा.रा.मु.वि.वि. (इग्नू) तथा एन.सी.ई. आर.टी के संयुक्त तत्वावधान में 7-13 फरवरी, 1993 के दौरान प्रवर्तित किया गया। आपको यह आभास होगा कि 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए निःशुल्क व अनिवार्य

प्राथमिक शिक्षा के उद्देश्य से मानव संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार ने एक जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई.पी.) का सूत्रपात किया है। यह एक शर्मनाक स्थिति है कि भारत में निरक्षरता (46%) दुनिया की अधिकतम निरक्षरताओं में गिनी जाती है। इस स्थिति के उपचार के लिए (डी.पी.ई.पी.) के अन्तर्गत प्राथमिक स्कूल शिक्षकों को प्रशिक्षित करने का उपक्रम किया गया है। ऐसे प्रशिक्षण की एक बुनियादी समस्या यह है कि प्रशिक्षार्थियों को अपना घर-बार छोड़ कर प्रशिक्षण स्थल पर रहना पडता है और प्रशिक्षण विषयक अवर-संरचना भी अत्याधिक व्यापक होती है, जिसके फलस्वरुप उच्च लागत का निवेश अवश्यम्भावी हो जाता है। अध्यापन से बिल्कुल भिन्न, प्रशिक्षण में प्रदर्शन, परिचर्चा, अन्तक्रिया व अन्य ऐसी तकनीके समाहित की जाती हैं जो अन्तर्वैयक्तिक अन्तःक्रिया के बिना सम्भव नहीं हैं। दूरस्थ शिक्षा प्रकार मे आदर्श-प्रशिक्षण सम्भव नहीं हैं, क्योंकि उसमें जीवन्त अन्त:क्रिया की कोई गुंजाइश नहीं होती। इस कमी को दूर करने के लिए अन्तःक्रियात्मक प्रौद्योगिकी को काफी उपयोगी माना जाता है।

22.4.1 अन्त:क्रियात्मकता क्या है?

अन्तःक्रियात्मकता को प्राय: दूरदर्शन मशीन की ऐसी गुणवत्ता माना जाता है, जो कि उपयोगकर्ता से अन्तःक्रियाशील होकर उनकी शंकाओं और समस्याओं का हल खोजती है और उपयोगकर्ता को इस प्रक्रिया में अधिकतम लाभ उपलब्ध कराती है। इस गुणवत्ता ने टी.वी. उपयोगकर्त्ताओ को वांछित सूचनाओं को खोजने व उन तक यादृच्छिक पहुंच स्थापित करने में भी सहायता प्रदान की है। पारम्परिक वीडियो में वांछित सूचना तक पहुंच विलम्बित होती थी, क्योंकि सूचना मार्ग मात्र एक दिशा में व्याप्त था। समय के अन्तराल के पश्चात् अब वीडियो पर दृश्य-सूचनाओं का कम्प्यूटरीकृत अभिलेखन एवं अंकन सम्भव हो गया है। प्रारम्भ में यह सुविधा भी सीमित थी, परन्तु सी.डी. रोम (CD ROM) के प्रचलन से यह समग्र व सम्पूर्ण स्थिति पा चुकी है। अन्तःक्रिया, इस दिशा में चयन निर्धारण की आवश्यक चिंतन-प्रक्रियाओं की उपस्थिति तथा इस समस्त अनुभव से अनुप्रमाणित उपयोगकर्ताओं के व्यवहार में बदलाव। टेलिविजन की यह गुणवत्ता अलगाव में कार्यशील उपयोगकर्ताओं के बड़े काम की है। इसलिए इसकी दूरस्थ शिक्षा में विशेष उपयोगिता है।

प्रसारण प्रकार में टेलिविजन की अन्तःक्रियात्मकता जीवन्त (लाइव) होती है। इसका अर्थ यह है कि कार्यक्रम प्रस्तुतकर्ता के प्रस्तुतीकरण के दौरान कोई दर्शक अपनी इच्छानुसार तत्काल सवाल करने के लिए सर्वथा स्वतंत्र होता है। इससे कक्षा-अध्यापन की स्थितियॉ मुखरित व अनुरुपित होती हैं और प्रशिक्षक के रुबरु होने का जज्बा पैदा होता है। यह सब प्रशिक्षक व प्रशिक्षार्थियों के बिना अपनी जगह से हिले सम्भव हो पाता है। यह प्रयोग, जैसा कि बताया जा चुका है, व्यावहारिक रुप ले चुका है।

22.4.2 डी.पी.ई.पी. का दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम

डी.पी.ई.पी. के दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम का पहला प्रयोग कर्नाटक में हुआ, जहां राज्य के 20 केन्द्रों से कोई 850 प्राथमिक स्कूल शिक्षक इस प्रयोग के लिए चुने गए। इन प्रशिक्षार्थियों को इग्नू के शिक्षण सिरे से विषय-विशेषज्ञों द्वारा प्रशिक्षण प्रदान किया गया जो कि उसके नई दिल्ली परिसर में स्थित था। उपग्रह संचार द्वारा 2 घंटे के कुल 14 सत्र प्रसारित किये गये। जिन्हें, 'ज्ञानार्जन' सिरों' पर प्राप्त किया गया। ये 'ज्ञानार्जन' सिरे, जैसा कि बताया जा चुका है, कर्नाटक राज्य के 20 स्थानों पर फैले हुए थे। शिक्षण व ज्ञानर्जन सिरों के बीच दूरी औसतन 2500 किमी थी। इस व्यवस्था द्वारा उक्त उल्लिखित प्रशिक्षार्थियों को कुल 28 घंटे का प्रशिक्षण प्रदान किया गया। इन सत्रों में व्याख्यान के बाद प्रशिक्षार्थियों को एस.टी.डी. टेलिफोन सुविधा द्वारा सवाल पूछने की सुविधा थी या वे फैक्स द्वारा ये सवाल शिक्षण सिरे तक पहुंचा सकते थे। आपको यह जान कर हैरानी होगी कि इन सत्रों के दौरान कुल 3000 प्रश्न पूछे गए, 600 टेलिफोन कॉल किए गए और 240 फैक्स संदेशों का सहारा लिया गया। इस वास्तविक अन्तःक्रिया काल' के माध्यम से प्रशिक्षार्थियों के सवालों के जवाब दिए गए और उनकी शंकाओं का समाधान किया गया। वास्तविक प्रशिक्षण सत्रे के उपरान्त सीनियर विशेषज्ञों से भी परिचर्चाएं आयोजित की गई। शिक्षण सिरे पर व्याख्यान देते विशेषज्ञों से भी आमने-सामने बातचीत इस दौरान सम्भव हो सकी।

इस इकाई के पूर्व खण्डों में प्रस्तुत अध्ययन-सामग्री से आप यह भली भॉति समझ गए होंगे कि अन्त:क्रियात्मक का निहितार्थ है सवाल पूछने या शंका प्रस्तुत करने की सुविधा और तत्काल फीडबैक पाने का सहज अवसर उपलब्ध होना। टेलिविजन के संदर्भ में अन्त:क्रियात्मकता का एक अन्य प्रसंग है प्रसारित कार्यक्रम को रोकना (स्टॉप) फिर से देखना (रिवाइन्ड) आगे बढ़ना (फॉरवर्ड) तथा कार्यक्रम को चालू करना (प्ले)। प्रसारण प्रकार में अन्त:क्रियात्मकता से आश्य है टेलिफोन, फैक्स या लाइव प्रसारण द्वारा जीवन्त हस्तक्षेप का प्रकार, इस प्रकार प्रौद्योगिकी की उपलब्धता पर निर्भर होता है। हम टेलिफोन या फैक्स प्रकार के हस्तक्षेप के विषय में जानकारी हासिल कर ही चुके हैं। अब हम 'लाइव' प्रसारण हस्तक्षेप पर दृष्टिपात करेंगे।

22.5 अन्त:क्रियात्मक टेलिविजन की प्रौद्योगिकी (Technology of Interactive Television)

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम सम्बन्धी प्रयोग की जानकारी से आप समझ ही गए होंगे कि अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन में 'शिक्षण सिरा' स्टूडियो होता है। यह स्पष्ट है कि शिक्षक अथवा अनुदेशक का व्याख्यान 'लाइव' प्रसारित होता है, ताकि दर्शक व श्रोता उसे यथा आवश्यकता देख-सुन सकें। हालांकि अधिकांशत: यह व्याख्यान 'सीधे ही' (लाइव) प्रसारित किया

जाता है, परन्तु यह भी सम्भव है कि वह रिकार्डिंग के उपरान्त प्रसारित हो और विशेषज्ञ को स्टूडियो में उपलब्ध कराया जाए ताकि वह वहां के दर्शकों के सवालों के जवाब दे सके। ऐसी स्थिति में स्टूडियो व उसके समस्त यांत्रिक उपकरणों के साथ-साथ 'अपलिंक' सुविधा का प्रभावी होना भी अन्तक्रियात्मक टेलिविजन प्रसारणों के लिए निहायत जरुरी है।

अपलिंग सुविधा' को 'अर्थ-स्टेशन' के नाम से भी जाना जाता है। यह विविध संकेतों व संदेशों को उपग्रह तक प्रसारित करने का काम अंजाम देता है। भारत में अधिकांश शैक्षणिक आदान-प्रदान (संचार) ट्रैक्ट (ट्रान्सपोर्टेबल रिमोट एरिया कम्यूनिकेशन टर्मिनल) की सहायता से होता है, जो कि नई दिल्ली के मैदान गढ़ी के इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय परिसर में स्थित है।

पोर्टेबल रिमोट एरिया कम्युनिकेशन टर्मिनल (ट्रैक्ट) इसरो की सम्पत्ति है जो कि स्थाई रुप में इं.गा.रा.मु.वि.वि. परिसर में स्थित व कार्यरत है। अपनी इस क्रियाशीलता द्वारा वह दूरस्थ शिक्षण के उद्देश्यों एवं प्रक्रियाओं को समर्पित है। ट्रैक्ट उपग्रह को संकेत भेजता है और उपग्रह अपने क्रम में उन्हें वापिस पृथ्वी पर संचारित करता है।

22.5.1 अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन में उपग्रह

भारत में इनसेट श्रृंखलाओं में अनेक संचार उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़े हैं। जब संकेत पार्थिव आधार पर भेजे जाते हैं तो वे बहुत ज्यादा दूर तक नहीं संचरण नहीं कर पाते। इसके विपरीत जब उन्हें उपग्रह तक भेजा जाता है और वहां से उनका वापिस पृथ्वी पर संचरण होता है तो उनका प्रसारण क्षेत्र अत्यधिक व्यापक व जन-प्रभावी बन जाता है। पार्थिव संकेतों को बूस्टर्स की सहायता से अधिक दूरी तक भेजा जा सकता है, परन्तु इस स्थिति में उनके क्षीण हो जाने की आशंका विद्यमान रहती है। साथ ही प्रणाली में अक्सर अवरोध भी प्रकट हो सकते हैं।

उपग्रह भू-स्थिर कक्षा (जिओ-स्टेशनरी ऑर्बिट) में रखे जाते हैं। वहां वे पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से अप्रभावित रहते हैं। वे पृथ्वी से समक्रमिक भी होते हैं ताकि -वे पृथ्वी के उस भाग विशेष को सतत देखते रहे जिसे उन्हें संकेत भेजने हैं। अगर वे उससे विमुख या विरत हों तो संकेतों के संचरण में व्यवधान उपस्थित होता जाएगा। एक समय लक्ष्य यह निर्धारित किया गया था कि लगभग एक सौ ट्रान्सपॉन्डर्स सक्रिय होंगे (ट्रान्सपॉन्डर्स उपग्रहों के वह महत्वपूर्ण भाग होते हैं जो विभिन्न महत्वपूर्ण कार्य सम्पादित करते हैं जैसे टेलिफोन-लिंक स्थापित करना, मौसम सम्बन्धी जानकारी उपलब्ध कराना आदि) परन्तु इनसेट-II डी की विफलता ने इस लक्ष्य को निर्णायक आघात पहुंचाया। अकेले उसी में 37 ट्रान्सपॉन्डर्स का प्रावधान किया गया था।

22.5.2 रिसीव स्टेशन्स

रिसीव स्टेशन्स या टॉक बैक टर्मिनल्स में अत्यधिक उच्च क्षमता के वी.एच.एफ. टी.वी. सेटस सुसज्जित होते है। वी.एच.एफ. आज आम घरों में भी प्राय: उपलब्ध हैं। पार्थिव संचरण में टी.वी. सेट्स संचारित संकेतों को सीधे ग्रहण कर लेते हैं लेकिन उपग्रह संचार में संकेत टेलिविजन रिसीव ओनली उपकरणों (टी.वी.आर.ओ.) द्वारा ही ग्रहण किए जाते हैं। उसके बाद वे पार्थिव संचरण के लिए उपलब्ध कराते हैं, जो कि वी.एच.एफ. सेट्स तक पहुंचते हैं। अक्सर टी.वी. आर.ओ. उपकरण स्वयं अपनी निजी क्षमता द्वारा ये संकेत सी.एच.एफ. सेट्स तक पहुंचाते हैं।

कुछ स्थानों पर वी.एच.एफ. सेट के उपयोग के लिए डाइरेक्ट रिसेप्शन सिस्टम (डी.आर.एस.) लगे होते हैं। ये प्रणालियां पार्थिव संचरण क्षेत्र के परे उपग्रह संचरण से अभिमुखी होती हैं। डी.आर.एस. प्रणाली में एक (पेराबोलिक) एन्टीना तथा कम आवाज वाला पूर्व-उद्घोषक कन्वर्टर लगा होता है। दूर-दराज के क्षेत्र में टीवी संकेत ग्रहण करने के लिए डी.आर.एस. प्रणाली विशेष उपयोगी है। भारत में इनसेट II बी उपग्रह के प्रसारित सी-बैन्ड के जरिए संकेत संचारित किए जाते हैं, जो कि देश के विभिन्न भागों में क्रियारत डी.आर.एस. अथवा टी.वी. आर.ओ. उपकरणों द्वारा प्राप्त किए जाते हैं।

22.5.3 प्रति-सम्पर्क (रिवर्स लिंक)

संकेत ग्रहण करने वाले केन्द्रों से विभिन्न पद्धतियों के माध्यम से सम्पर्क स्थापित किया जाता है जो प्रति-सम्पर्क कहलाता है। यह उपलब्ध प्रौद्योगिकी पर निर्भर होता है।

22.6 दूरस्थ शिक्षा में अन्त:क्रियात्मक टेलिविजन (Interative Television in Distance Education)

इस इकाई के माध्यम से यह कामना की गई है कि अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन को पुष्ट व क्रियाशील करने के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी के विषय में आपको जानकारी दी जाए। साथ ही, आपको यह भी बताया जा सकता है कि इस दिशा में हमारे देश में क्या और कैसी अवर-संरचना विकसित की गई? जैसा कि आपको आभास हो ही गया होगा, यह प्रणाली भारत में मूलत: दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र प्रयुक्त हो रही है। इसके अतिरेकपूर्ण प्रयोग से बचने के लिए कुछ सावधानियों का निर्वाह का उल्लेख यहां आवश्यक है।

दूरस्थ शिक्षा की गुणवत्ता का एक प्रशंसनीय प्रसंग है 'विद्यार्थी की सुविधानुसार अध्ययन का समय व रफ्तार'। 'ज्ञानार्जक की स्वायत्तता' निश्चित रुप से एक ऐसा प्रमुख आधार स्तम्भ है, जो दूरस्थ शिक्षा को रुबरु शिक्षा प्रकार से सर्वथा भिन्न स्थापित करता है। आज प्रौद्योगिकी इस प्रकार तेजी से विकसित हो रही है कि वह ज्ञानार्जकों तक विविध स्थानों पर अपनी पहुँच बना रही है- शयन कक्ष से पर्वतारोहण स्थल तक। यह पहुंच अन्तःक्रियात्मक

टेलिविजन प्रणाली चरितार्थ करने में सक्षम है, परन्तु यह महत्वपूर्ण है कि संदेश ग्रहण करने वालों की स्वतंत्रता का सम्मान किया जाए। यह सच है कि किसी भी वांछित स्थल तक ऐसी पहुंच अब नितान्त सम्भव हो चली है परन्तु उसकी यह पहुंच इतनी गहन और व्याप्त है कि उसके समाधान के लिए अब 'आन्सरिग मशीन' जैसे उपकरणों का आविष्कार अपरिहार्य हो गया है।

विविध व्यक्तियों व अध्येताओं द्वारा दूरस्थ शिक्षा मुक्त शिक्षा की अपने-अपने ढंग से परिभाषा दी गई है, परन्तु सभी परिभाषाओं में एक समान तत्व यह है कि इसके अन्तर्गत अब अध्येताओं के लिए किसी केन्द्रीय परिसर मे ज्ञार्नाजन आवश्यक नहीं रहा। वे इस अनिवार्यता से मुक्त हो गए हैं। अब वे शिक्षक व शिक्षितों के मध्य अ-संसक्त (नॉन-कॉन्टीगुअस) सम्प्रेषण के लिए प्रौद्योगिकी व संचार-साधनों पर अधिकाधिक निर्भर होते जा रहे हैं। पारम्परिक शिक्षा प्रणाली ज्यादातर 'स्पून फीडिंग' प्रणाली ही साबित होती रही है। हम ज्ञानार्जकों में ऐसा कौशल नहीं पैदा करते कि वे स्वतंत्र हो सकें या कि वे शोध व अनुसंधान द्वारा स्वतंत्र अध्ययन संसाधित कर सकें। खोज के द्वारा वैयक्तिक अध्ययन वैचारिक मौलिकता तथा वैयक्तिकता का विकास करते हैं। इनके दरम्यान ज्ञानार्जक को अनेक विकल्पों में से एक चुनने की स्वतंत्रता होती है। सामूहिक ज्ञानार्जन या इस संदर्भ में प्रचलित विद्वत् अन्तःक्रिया मौलिकता नहीं, बल्कि सामान्यता (Mediocrity) समपुष्ट करती है।

समव्यस्क अन्तःक्रिया (Peer Interaction) के संदर्भ में कीगन के दो वक्तव्य यहां विशेषत: प्रासंगिक हैं। प्रथम, दूरस्थ शिक्षा को परिभाषित करते हुए कीगन का यह कहना है कि "(यह) ज्ञानार्जन प्रक्रिया की समूची अवधि के दौरान शिक्षक व ज्ञानार्जक के मध्य अर्द्ध-स्थायी पार्थक्य की परिचायक है। द्वितीय, अन्तःक्रिया के संदर्भ में कीगन का यह मत है कि "(यह) ज्ञानार्जन की प्रक्रिया की समूची अवधि के दौरान ज्ञानार्जक समूह की अर्द्व-स्थायी अनुपस्थिति की घोतक है, ताकि लोग व्यक्ति के रुप में न कि समूह रुप में पढ़ाए जा सके। 'दूरस्थ शिक्षा की ये दोनों विशेषताएँ - 'शिक्षक व ज्ञानार्जन की अर्द्व-स्थायी पृथकता' तथा ज्ञानार्जक समूहों का अर्द्ध-स्थायी अनुपस्थिति' - मेरी समझ में ज्ञानार्जकों को वह स्वतंत्रता व परिवेश प्रदान करती हैं, जिससे वे अपने आप अपने बलबूते पर अपना काम कर सके। न तो व्यक्तिगत रुप से और न ही अन्तक्रिया के किसी समकालिक या 'लाइव' प्रकार द्वारा।

अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन विद्वतजनों व शिक्षक-ज्ञार्नाजकों के बीच अन्तःक्रिया को प्रोत्साहित करने का आश्वासन देता है। इसके द्वारा विद्वत् अन्तःक्रिया के लिए प्रौद्योगिकी प्रयोग संबंधी सुझाव भी प्रस्तुत होते हैं। हम संभवत: दूरियों के परे चरितार्थ होने वाली तात्कालिक अन्त:क्रिया के लिए आवश्यक प्रौद्योगिकी की गुणवत्ता में बह से जाते हैं। क्या कक्षा आयोजित शिक्षण की इस बात के लिए आलोचना नहीं की गई कि कक्षा में शिक्षक को 'औसत' के लिए सेवारत होना पड़ता है? बेहतर तथा सुस्त विद्यार्थी इस प्रक्रिया में नहीं संबोधित होते। अधिकांशत: अन्तःक्रियात्मक शिक्षण प्रक्रिया में औसत विद्यार्थी ही बाजी मार लेते हैं। हम अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन के महत्वपूर्ण 'रिमोट कंट्रोल' को भूल रहे हैं जो कक्षा को यदि

एक बार 'स्विच-ऑफ' कर दे तो दोबारा ज्ञानार्जक को वहां पहुंचाने का कोई जरिया ही नहीं रह जाता।

दूरस्थ शिक्षा का औसत ज्ञानार्जक एक वैयक्तिक विद्यार्थी है। हमने तय यह किया था कि हम दूरस्थ शिक्षा का एक नया संदर्भ तैयार करेंगे न कि पारम्परिक शिक्षा प्रणाली की काई अनुकृति। समव्यस्क अन्तःक्रिया स्वागत योग्य है, परन्तु वह कोई दारुण आवश्यकता नहीं है। यदि लाभ पाने वालों से 'स्वतंत्रता' तथा अन्तःक्रिया में से कोई एक चीज चुनने को कहा जाए तो वे निस्संदेह स्वतंत्रता को ही चुनेंगे। मुद्रण व श्रव्यदृश्य संचार (कैसेट्स) असम्पृक्त ज्ञानार्जक को संबोधित थे परन्तु अन्त:क्रियात्मक टेलिविजन ने ऐसी प्रणालियाँ ईजाद की हैं जो समूह अन्तःक्रिया की इजाजत देती हैं। अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन की यह गुणवत्ता की वह शिक्षक व ज्ञानार्जक के बीच दूरी घटाती है या वह विशेषज्ञों को दूर-दराज के ग्रामीण विद्यार्थियों के लिए उपलब्ध कराती है, प्रशंसनीय है परन्तु कक्षा-प्रकार की अन्तःक्रिया की अनुकृति संभवत: दूरस्थ शिक्षा की मूल भावना के ही विरुद्ध है। शिक्षण संबंधी अन्तःक्रिया किसी सुनिश्चित समय पर पूर्वनिर्धारित स्थान पर ही सम्भव है। यदि ज्ञानार्जक सेवारत हैं या वे अन्यथा सक्रिय नागरिक' हैं तो उन्हें दोनों वृत्तियों में से किसी मे अनुपस्थित रहना ही पड़ता है। यह स्थिति दूरस्थ शिक्षा की मूल प्रकृति से ही विपरीत है। अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन ऐसी परिचालन-प्रक्रिया की स्थिति में ज्ञानार्जकों की उनके पसंदीदा समय व स्थान पर ज्ञानार्जन की स्वतन्त्रता, दोनों का क्षय करता है। गौरतलब बात यह है कि न केवल प्रौद्योगिकी की पहुंच बढ़ायी जाए बल्कि ज्ञानार्जकों की स्वतंत्रता भी अक्षुण्य हो और इस अक्षुण्य स्थिति में ही यह पहुंच बढ़े।

22.7 सारांश
(Summary)

इस इकाई की सामग्री से यह भलिभांति प्रकट होता है की देश के विविध भागों से कार्यक्रम-दर्शकों को अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन द्वारा कुशलतापूर्वक शिक्षित-प्रशिक्षित किया जा सकता है। लाभ पाने वाले की भौगोलिक स्थिति इस मार्ग में अब बाधक नहीं रही। बीस वर्षो से अधिक अवधि तक प्रवर्तित इन प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया है कि हमारे पास बिना किसी विदेशी मदद व सहयोग से स्वयं अपनी प्रौद्योगिक क्षमता व विशेषज्ञता के बल पर ऐसा कर पाना सहज सम्भव है। यद्यपि हम इन प्रयोगों से सभी को लाभ पहुंचा पाने में असमर्थ है, क्योंकि अब तक देश में सभी नागरिकों को यह सुविधा समान रुप से सुलभ नहीं हो सकी है। इसका निहितार्थ यह है कि हमें कार्यक्रमों के सामुदायिक प्रदर्शनों व उनमें भागीदारी को बढ़ावा देना होगा। इसके लिए यह भी जरुरी होगा कि शैक्षिक कार्यक्रम प्रसारणों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समय भी निर्धारित किया जाए। साथ ही, ऐसे कार्यक्रम निर्मित किए जाएं जो व्यापक उपयोगिता व प्रभावशीलता सम्पन्न हों। अगले खण्ड में हम उन विभिन्न प्रौद्योगिकियों के

विषय में जानकारी उपलब्ध करेंगे जो इन शिक्षा-सेवाओं को सुलभ कराती हैं। अगले खण्ड विषयक ऐसी चर्चा से पूर्व हमारे लिए कुछ अभ्यास संसाधित करना प्रासंगिक होगा।

आपको अब तक यह अनुभूति हो चुकी होगी कि समक्ष अन्तःक्रियात्मक टीवी. नेटवर्क के माध्यम से हम स्थान, दिशा तथा स्थिति की परवाह किए बिना विशेषज्ञों व ज्ञानार्जकों के बीच व्यवहार्य सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। इससे भी ज्यादा गौरतलब बात यह है कि देश के विविध भागों में कार्यरत शोधकर्त्ता इस माध्यम से लाभ उठाते हुए समानधर्मी व परस्पर सहयोगी अनुसंधान चरितार्थ कर सकते हैं। इन रणनीतियों के समावेश से ही उपलब्ध राष्ट्रीय संसाधनों तथा अवर-संरचनात्मक सुविधाओं के समान लाभ अर्जित किए जा सकते हैं। हालांकि इस इकाई में सर्वत्र 'अन्तःक्रियात्मक टेलिविजन' पद का प्रयोग हुआ है, इस स्थिति व प्रक्रिया को टॉक बैक प्रयोग उपग्रह आधारित अन्त:क्रियात्मक नेटवर्क तथा 'इन्टरएकटिव नैरोकास्टिंग' के नामों से भी जाना जाता है। इसलिए इन संज्ञाओं व उनके प्रकट विविधताओं से आपको दिक्-भ्रमित होने की कहीं कोई आवश्यकता नहीं है। जैसा कि स्पष्ट है, निहित प्रौद्योगिकी व परिचालन क्रम में ये सब अनन्य और इसलिए एक हैं।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. प्रसारणशील टेलिविजन तथा रिकॉर्डेड विडियो में सर्वाधिक महत्वपूर्ण अन्तर कौन-कौन से है?
2. अंत: क्रियात्मक टेलिविजन के लिए शिक्षक प्रशिक्षण व ज्ञानार्जन सम्बन्धी कौनसा विषय सर्वाधिक उपयोगी हैं और क्यों?
3. अंत:क्रियात्मक टेलिविजन प्रणाली के प्रमुख संघटक तत्वों का उल्लेख कीजिये।
4. भारत में अंत:क्रियात्मक प्रणाली के विकास में इ.गा.रा.मु.वि.वि. (इग्नू) की क्या भूमिका रही है?

22.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- डेवी जान ऑडियो विजुअल हेण्ड बुक सोसाइटी फार विजुअल एजुकेशन, शिकागों
- इरिक्सन कार्लटन, डब्ल्यू एच.एण्ड, डेविस एच.कल : एक्पीरिअन्स एण्ड एड्युकेशन टैक्नोलॉजी, मेकमिलन, लन्दन।
- फिन.जे.: ऑडियो विजुअल इक्विपमेंट मेन्युअल, ड्रायडन प्रेस, न्यूयार्क
- किन्डन जे एस : ए.वी. मटीरियल एण्ड टेक्निक्स, अमेरिकन बुक कम्पनी, न्यूयार्क।
- लिडसी पेटर : ह्यूमन इन्फार्मेशन प्रोसेसिंग, एच एण्ड नार्मन एकेडेमिक प्रेस, न्यूयार्क।
- डॉनाल्ड ए मार्शल मेकलहन : अन्डरस्टेंडिंग मीडिया, मैकग्रा हिल, न्यूयार्क।

इकाई - 23

मुद्रित सामग्री का महत्व, औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में अनुरुपक एवं खेल (Importance of Printed Material, Simulation and Games in Formal and Non-Formal Education)

इकाई की संरचना

(Structural of Unit)

23.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and objectives)

23.1 प्रस्तावना
(Introduction)

23.2 प्रिंट मीडिया
(Print Media)

23.3 मुद्रित सामग्री के विभिन्न प्रकार
(Different Types of Printed Material)

23.3.1 पाठ्य पुस्तकें
(Test Book)

23.3.1.1निर्देशन श्रोत के रूप में पाठ्य पुस्तकें

23.3.1.2 पाठ्य पुस्तकें: विद्यार्थी अभिरुचि के श्रोत के रूप में

23.3.1.3 पाठ्य पुस्तकों में चित्रों की महत्ता

23.3.2 संदर्भ पुस्तकें
(Reference Books)

23.3.3 सामान्य पुस्तकें
(General Books)

23.3.4 पत्रिकायें धारावाहिक: सामयिक पत्रिकायें एवं समाचार पत्र
(Journal, Magazine and News Paper)

23.4 अनुरूपक
(Simulation)

23.5 खेल
(Games)

23.6 सारांश

(Summary)
23.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

23.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त विद्यार्थी-

मुद्रित सामग्री के विभिन्न प्रकारों का वर्गीकरण कर सकेंगे।

औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में मुद्रित सामग्री के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।

शिक्षा में अनुरुपक एवं खेलों की भूमिका का महत्त्व समझ सकेंगे।

23.1 प्रस्तावना
(Introduction)

अधिगम हेतु अध्ययन सामग्री के विभिन्न प्रकारों के उपयोग के बारे में आप जान सकेंगे। हमारी शिक्षण अधिगम व्यवस्था में मुद्रित सामग्री का काफी प्रयोग होता हैं। साथ ही शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के अन्तर्गत कई अन्य प्रकार की गतिविधियाँ भी संचालित की जाती हैं। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में अनुरुपक एवं खेलों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस इकाई के अन्तर्गत आप मुद्रित सामग्री की प्रकृति, अनुरुपक एवं खेलों के संदर्भ में जान पाओगे। साथ ही औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में इनके प्रयोग के संदर्भ में जान सकेंगे।

23.2 मुद्रित संचार (प्रिंट मीडिया)
(Print Media)

पूर्व साक्षरता जनजातीय युग में सभी प्रकार का संचार व्यक्तियों के मध्य कानों एवं आखों द्वारा प्रत्यक्ष: होता था। यह एक सीमित स्थान एवं अल्प समय तक ही सीमित रह पाता था। ज्ञान केवल मौखिक आधार पर प्रदान किया जाता था। अत: विषय में एक सीमित मात्रा में ही ज्ञान का प्रवाह संभव था। ज्ञान, बड़े व्यक्तियों द्वारा युवाओं को मौखिक रुप से प्रदान किया जाता था। विभिन्न भाषाओं के लिपि के उद्भव के फलस्वरुप संचार व्यवस्था में स्थिरता आयी। संस्कृति का विकास लेखन एवं अध्ययन के विकास पर निर्भर करने लगा। 1450 में गुटनबर्ग में प्रिंटिंग प्रेस की खोज ने आधुनिक संचार व्यवस्था में क्रांति पैदा कर दी। प्रिंटिंग प्रेस ने व्यक्ति को तीव्र रुप से आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। इसने अरस्तु की पुरानी पुस्तकों को विभिन्न जगहों पर फैलाया। प्रिंटिंग प्रेस के फलस्वरुप ही मध्य युग में पुस्तकालयों की एक श्रृंखला प्रारंभ हुई, जिसके फलस्वरुप पुनर्जागरण की असाधारण बौद्धिक लहर संभव बन पायी।

23.3 मुद्रित सामग्री के विभिन्न प्रकार (Different Type of Print Media)

मुद्रित सामग्री को निम्नलिखित श्रेणियों में बांटा जा सकता है -

1. **पाठ्य पुस्तकें** - पुस्तकों को इस रुप में तैयार किया गया कि किसी विशिष्ट कक्षा की विषय सामग्री को व्यवस्थित क्रम के रुप में प्रस्तुत कर सकें।
2. **संदर्भ पुस्तकें** - एनसाईक्लोपीडिया, शब्दकोष, वार्षिकी पुस्तकें, पंचांग, जीवनियां तथा भौगोलिक संदर्भ ग्रन्थ।
3. सामान्य पुस्तकें।
4. **धारावाहिक** - सामयिक पत्रिकायें एवं समाचार पत्र।

23.3.1 पाठ्य पुस्तकें (Text Books)

शिक्षक एवं विद्यार्थी के मध्य कक्षा में शैक्षणिक संवाद स्थापित करने में पाठ्य पुस्तकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। साथ ही पाठ्य पुस्तकें विभिन्न विद्यार्थियों के मध्य भी संवाद स्थापित करती है। पाठ्य पुस्तकों का मुख्य संबंध विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण है। पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थी को ऐसी सूचनाएँ प्रदान करती हैं, जो कि उसे अधिगम समय के एक विशिष्ट बिन्दु पर आवश्यक हों। ये पाठ्यक्रम विषय इकाई के संदर्भ में भी सूचनाएं प्रदान करती हैं। प्रत्येक विद्यार्थी द्वारा पाठ्य पुस्तकों का प्रयोग कक्षा में या घर पर स्व-अधिगम के लिए भी किया जाता है। इनका प्रयोग औपचारिक विद्यालय एवं अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रम के एक भाग के रुप में भी किया जा सकता है। हमारे जैसे देश में जहां पर कि अन्य अनुदेशन सामग्री बहुत कम पायी जाती है। घर पर पाठ्य पुस्तकों के माध्यम द्वारा ही अधिगम प्रक्रिया संभव बन पाती है। घर पर विद्यार्थी पाठ्य पुस्तकों के माध्यम द्वारा उन्नत अधिगम कर सकता है। कुछ स्थितियों में विद्यार्थी पाठ्य पुस्तकों के द्वारा अतिरिक्त अधिगम भी कर सकता है।

शिक्षकों के लिए पाठ्य पुस्तकें एक पाठ्यक्रम के रुप में काम आती हैं। ये शिक्षण विषय सूची को परिभाषित करती हैं तथा उसको सीमांकित करती हैं। शिक्षक पाठ्य पुस्तकों के माध्यम द्वारा विभिन्न प्रकार के शैक्षणिक प्रयोगों, जैसे समूह कार्य एवं व्यक्तिगत गृह कार्य को संचालित कर सकते हैं। पाठ्य पुस्तक में दी गयी तकनीक शिक्षा को अपने शिक्षण कार्य में संगठित करने में सहायता प्रदान करती हैं। इस प्रकार से पाठ्य पुस्तकें औपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। अध्ययन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें की मुद्रित अक्षरों एवं मुद्रित चित्रों के माध्यम द्वारा सूचनाएं एकत्रित की जाती है। एक अच्छी पाठ्य पुस्तक में उपयुक्त संख्या में चित्र होने चाहिए। अगर कठिनाई स्तर को कम करना है, तो पाठ्य पुस्तक में चित्र बिम्बों का सहारा लिया जाना चाहिए।

23.3.1 निर्देशन स्रोत के रुप में पाठ्य पुस्तकें

हमारे देश में पाठ्य पुस्तकें शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए ही एक मात्र निर्देश हैं। मुद्रण कला का विकास इतना हो गया है कि आज पाठ्य पुस्तकों की आवश्यकता नहीं रह गयी है। अधिकांश पाठ्य पुस्तकें अनाकर्षक एवं मुद्रण की दृष्टि से बहुत कमजोर हैं। पाठ्य पुस्तकों में मुद्रित विषय सूचना के अतिरिक्त कुछ चुने हुए चित्र भी होने चाहिए ताकि आखों को आकर्षित कर सकें एवं विद्यार्थी को अपने विषय की जानकारी प्राप्त करने में मुद्रित सामग्री रुचिकर लग सकें।

बाजार में आज बहुत सी पाठ्य पुस्तकें पायी जाती हैं किन्तु इनमें अपर्याप्त जानकारी होती है तथा एक संकीर्ण दृष्टिकोण होता है। इस तरह की पाठ्य पुस्तकों को विद्यालय के पाठ्यक्रम में नहीं अपनाया जा सकता। अगर पाठ्य पुस्तकों में कोई कमियां हैं, तो उन्हें दूर किया जाना चाहिए। इन कमियों को दूर करने के लिए अन्य पाठ्य पुस्तकों का उपयोग किया जा सकता है या अतिरिक्त अनुपूरक पुस्तकों का प्रयोग किया जा सकता है।

23.3.1.2 पाठ्य पुस्तकें : विद्यार्थी अभिरुचि के स्रोत के रुप में

पाठ्य पुस्तक की महत्ता को सीखने के प्रभावशाली माध्यम तथा संशोधित शिक्षण विधियों के प्रयोग के रुप में नकारा नहीं जा सकता है, एक अच्छी पुस्तक जो कि विशेषज्ञ लेखक द्वारा लिखी गयी है तथा उसमें उचित उदाहरण, चित्र, अच्छी प्रिंटिंग तथा उसकी साज सज्जा प्रभावशाली है, तो वह एक शिक्षक को। निश्चित रुप में बहुत सहायता पहुंचाती हैं। इसलिए शायद इस देश में अनुदेशन के लिए आज भी बहुत से शिक्षा शास्त्री मुख्यत मुद्रित सामग्री पर ही निर्भर करते हैं।

23.3.1.2 पाठ्य पुस्तकों में चित्रों की महत्ता

यह संचार साधनों के चित्रित स्वरुप होते हैं, जो कि किसी भी विषय सामग्री को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। किसी पुस्तक में इनका चयन करते समय निम्न सिद्धांतों पर ध्यान दिया जाना उपयोगी रहेगा

1. विषय वस्तु में चित्र प्रकार्यात्मक होने चाहिए, उन्हें मुद्रित सामग्री का एक सहायतित अंग के रुप में कार्य करना चाहिए।
2. चित्रों को पढ़ने में अनवरतता और एकता प्रदान करनी चाहिए।
3. चित्र ऐसे हों जो विद्यार्थियों की रुचि को बढ़ा सकें।
4. रंगीन चित्र विद्यार्थियों को वास्तविकता के और अधिक निकट लाते हैं तथा समझने मे सहायता प्रदान करते हैं।

23.3.2 संदर्भ पुस्तकें (Reference)

अकादमिक उन्नति के लिए आवश्यक सभी सूचनाएं उपलब्ध नहीं हो पाती हैं। कभी-कभी पाठ्य पुस्तक के कुछ भागों को और अधिक स्पष्ट करने के लिए अतिरिक्त

सूचनाओं, आकड़ों तथा व्याख्याओं की आवश्यकता होती है, तब हमें संदर्भ पुस्तकों की आवश्यकता पडती है। संदर्भ पुस्तकों के अंतर्गत विश्व कोश, शब्द कोश, वार्षिकी, जीवनियां एवं भौगोलिक संदर्भ आदि आते हैं। इनका प्रयोग मुख्यत: उच्च शिक्षा के छात्र करते हैं, फिर भी विद्यालय स्तर के विद्यार्थी इन संदर्भ पुस्तकों में उपयुक्त सामग्री खोजने के लिए काफी जिज्ञासु होते हैं।

सामान्यत: संदर्भ पुस्तकें अन्य पुस्तकों की अपेक्षा ज्यादा विश्वसनीय एवं अध्ययन होती हैं तथा ये समसामयिक समस्या के अध्ययन एवं उनके समाधान में भी उपयोगी होती हैं। कुछ संदर्भ पुस्तकें विशेष रुप से युवा विद्यार्थी के लिए तैयार की जाती है। अन्य प्रकार की संदर्भ सामग्री उच्च स्तरीय विद्यार्थियों एवं शोधकर्त्ताओं के लिए होती है। ऐसी संदर्भ पुस्तकें थोडी जटिल प्रकृति की होती हैं। विद्यालय पुस्तकालयों के लिए संदर्भ पुस्तकों का चयन विश्वसनीयता, उपयुक्त आकड़ों एवं सामयिक सूचना की उपलब्धता आदि के आधार पर किया जाना चाहिए। विद्यार्थियों को अपने अध्ययन के संदर्भ पुस्तकों के प्रयोग हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए।

चित्र संदर्भ पुस्तकों की सामग्री को स्पष्ट करने में तथा उसे अनुपूरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये कठिन को साधारण तरीके से प्रस्तुत करते हैं तथा अस्पष्ट एवं अभूर्त को स्पष्टत: अभिव्यक्त करते हैं।

23.3.3 सामान्य पुस्तकें (General Books)

इस श्रेणी में पुस्तकों के विभिन्न समूहों को सम्मिलित किया जाता है। इनका अध्ययन अध्ययनकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है। सामान्य पुस्तकों के अध्ययन द्वारा अध्ययनकर्ता अपने ज्ञान को और आगे बढा सकता है। किन्तु ये पुस्तकें संदर्भ पुस्तकों एवं पाठ्य पुस्तकों की भांति किसी निश्चित दिशा सीमा को लेकर नहीं चलती। इस प्रकार की पुस्तकों का औपचारिक शिक्षा में बहुत कम महत्व होता है। किन्तु ये पुस्तकें निजी आनन्द मनोरंजन तथा मानसिक आराम प्रदान करती हैं तथा अध्ययनकर्ता को तरोताजा बनाती हैं। इस प्रकार की पुस्तकें अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में ज्ञान का मुख्य स्रोत हो सकती हैं। विद्यार्थी अपनी विशिष्ट अधिगम आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इस तरह की पुस्तकों का उपयोग कर सकता है।

23.3.4 धारावाहिक: सामयिक पत्रिकायें एवं समाचार पत्र

(Journal, Magazine, News Paper)

शैक्षिक प्रक्रिया में इस श्रेणी में मुद्रित सामग्री का विशेष महत्व है। धारावाहिकों मे अध्ययन सूचनाएं तथा आकड़ों एवं शोध रिपोर्टो से संबंधित विशिष्ट जानकारियाँ होती हैं। शोधकर्ताओं के लिए ये काफी - उपयोगी होती हैं। समाचार पत्र एवं सामयिक पत्रिकाएं घटनाओं की सूचना एवं मत प्रदान करती है। औपचारिक 'शिक्षा का विद्यार्थी -इन सूचनाओं' का प्रयोग

अपने ज्ञान को अद्यतन, बनाये रखने में कर सकता है। साथ ही दूरस्थ शिक्षा के विद्यार्थी को भी अधिक से अधिक इस प्रकार की मुद्रित सामग्री पर निर्भर करना चाहिए।

23.4 अनुरूपक (Simulation)

अनुपूरक वृहद स्तरीय परियोजना का छोटा प्रस्तुतीकरण होता है। ये महत्वपूर्ण वास्तविक जीवन गतिविधियों को प्रस्तुत करने के लिए विशेष रुप से बनाये जाते हैं। इसके द्वारा, बिना किसी बाधा, अतिरिक्त मूल्य एव न्यूनतम समय में विद्यार्थी वास्तविक स्थिति से परिचित हो सकता है। अनुरुपक विद्यार्थी को अनुभव प्रदान करते हैं जिनके माध्यम से वह स्थिति को समझ सकता है। वायुयान के अनुपूरक मॉडल का प्रयोग पायलटों को उड़ान प्रशिक्षण देने के लिए किया जा सकता है। इसी तरह के कारों के अनुरुपक मॉडलों द्वारा चालकों को प्रशिक्षित किया जा सकता है। सेना एवं नौ सेना के प्रशिक्षण प्रतिष्ठानों के मॉडलों के द्वारा भी थोड़ी सी जगह में हथियारों के प्रयोग का प्रशिक्षण दिया जा सकता है। विद्यालयी स्तर पर अनुरुपक स्थितियों के द्वारा कठिन परिस्थितियों में विद्यार्थियों में निर्णय निर्माण क्षमता को बढ़ाने के लिए किया जा सकता है। इस तरह के अभ्यासों से भविष्य संबंधी विचारों को भी पैदा किया जा सकता है।

अनुरुपक, गत्यात्मक एवं चलन शील मॉडल होते हैं अर्थात् ये स्थिर एवं चित्र प्रस्तुतिकरण के विपरीत होते हैं। इसके अन्तर्गत किसी वस्तु की प्रतिकृति को प्रस्तुत किया जा सकता है तथा इसके माध्यम द्वारा एक क्रमबद्ध तरीके से उसमें होने वाले विकासों को अभिव्यक्त किया जाता है। प्रयोगशालाएं वह क्षेत्र होते हैं, जहां कि मेक्रो (व्यापक) प्रक्रियाओं को इस सीमा तक छोटा करके प्रस्तुत किया जाता है कि विद्यार्थी वास्तविक मॉडल की तरह उनमें काम कर सकता है। जबकि व्यापक प्रक्रियाओं की वास्तविक स्थिति में उसके लिए कार्य करना संभव नहीं हो पाता। सामाजिक प्रक्रियाओं के लिए कुछ अनुरुपक एवं खेल बनाये गये हैं जो कि राजनीति विज्ञान, अर्थ शास्त्र शिक्षा, व्यवसाय अध्ययन एवं प्रशासन के रुप में अभिव्यक्त होते है। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन कार्यक्रम, अनुरुपक आधारित अधिगम व्यवस्था को अधिक प्रभावी बनाने में योगदान प्रदान करते है।

23.5 खेल (Games)

खेल मानव द्वारा संचालित गतिविधियों पर संचालित होते हैं। यह अधिगम की ऐसी पद्धति जिसके अन्तर्गत बच्चों की गतिविधियों को महत्व प्रदान किया जाता है। इसके माध्यम द्वारा मूल सिद्धांतों की अवधारणात्मक समझ को तीव्रता से विकसित करने के लिए प्रयास किया जाता है। पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक विद्यालय के बच्चों के लिए भाषा, सामाजिक अध्ययन एवं गणित की शिक्षण अवधारणाओं को विकसित करने के लिए बहुत से सहभागी

खेल बनाये जाते है। प्राकृतिक विज्ञानों व्यावसायिक शिक्षा, राजनीति विज्ञान एवं प्रशिक्षण के लिए भी बहुत से खेलों का विकास किया है। इन खेलों के लिए विश्लेषणात्मक एवं बौद्धिक कार्य की आवश्यकता पडती है। खेलों को साधारण या जटिल प्रकृति के आधार पर विभिन्न भागों में बाट सकते हैं।

शोध परिणाम यह दर्शाते हैं कि विद्यार्थी खेल को बहुत पसंद करते हैं। ये उनकी रुचि एवं पाठ्यक्रम कार्य में उनके लगाव को बढ़ाते हैं। अनुरुपक एवं खेल विद्यार्थियों को इस हेतु स्पष्टत: तैयार करते हैं कि वे यह जान सकें कि विद्यार्थी क्या कर रहे हैं, क्या देख रहे हैं, क्या सुन रहे हैं खेल कक्षा में पढाये गये सिद्धांतों एवं अवधारणाओं के संदर्भ में भी गतिविधियों के माध्यम द्वारा अभिरुचि पैदा करते हैं। विद्यार्थी एक खेल की मुख्य बातों को जानकर के वह इनकार प्रयोग जटिल खेल में कर सकता है। यह लगभग उसी प्रकार से है जिस प्रकार से कि पहले एक पेड़ को देखें और बाद में पूरे वन से परिचित हों। किन्तु इस स्थिति में भी वह पेड़ की मुख्य अवधारणा के महत्व को नहीं भूल पाता।

इस संदर्भ में बहुत से कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर कार्यक्रमों को विकसित किया गया है जहां शिक्षा एवं बहुसंचार कार्यक्रमों के माध्यम द्वारा शैक्षणिक एवं गैर शैक्षणिक विषयों को ज्यादा स्पष्ट एवं रुचिकर बनाया जाता है। शब्दों के साथ खेलना, संदेहास्पद विषयों के उलझाव, पृथ्वी के चक्कर, निश्चित समय में यात्रा आदि विषयों पर सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं। विभिन्न प्रकार की 'गतिविधियों द्वारा विद्यार्थी अपने चिंतन को अधिक तीव्र बना सकता है तथा समस्या निवारणोत्मक कौशल एवं गतिविधियों को सुधार सकता है। इलेक्ट्रॉनिक खेल भी विकसित कर बनाये गये हैं, जिन्हें कि विद्यालय या घर के टेलिविजन सेट पर खेला जा सकता है। शिक्षा में इनके प्रयोग को काफी उपयोगी माना है चाहे औपचारिक विद्यार्थियों की कक्षा हो, चाहे घर या क्लब हो अनुरुपक एवं खेल बच्चों को शिक्षित करने का- एक लोकप्रिय साधन बन गया है।

23.6 सारांश
(Summary)

इस इकाई के अन्तर्गत आप यह जान पाये हैं कि औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा के प्रयोग में आने वाली मुद्रित सामग्री के विभिन्न प्रकारों, अनुरुपक एवं खेलों की प्रकृति क्या है? शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सबसे अच्छी स्रोत सामग्री के रुप में मुद्रित सामग्री का महत्वपूर्ण स्थान होता है। औपचारिक शिक्षा के संदर्भ में इसका प्रयोग पाठ्यक्रम के एक भाग के रुप में किया जा सकता है। विद्यार्थी इसका प्रयोग सूचनाओं को आद्यतन बनाने एवं व्यक्तित्व निर्माण में कर सकते हैं। अनुरुपक एवं खेल विद्यार्थी केन्द्रित गतिविधियाँ होती हैं जो कि विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु संचालित की जाती है। कम्प्यूटर सहायतित अनुदेशन के विकास के फलस्वरुप आज बाजार में अनुरुपक एवं खेलों से संबंधित बहुत सारे सॉफ्टवेयर पैकेज

उपलब्ध हैं। इनका प्रयोग विद्यालयों एवं विद्यालयों से बाहर दोनों ही स्थितियों में किया जा सकता है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. मुद्रित सामग्री किसे कहते है? इसके प्रकारों का वर्णन कीजिये।
2. पाठ्यपुस्तक किसे कहते है? इसमें पाई जाने वाली कमियों का उल्लेख करो।
3. खेल द्वारा शिक्षण कार्य कैसे हो सकता है? समझाइये।

23.7 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

- क्रोन बैक, लीजे (सं.): टैस्ट मैटेरियल इन माडर्न एज्यूकेशन, हेन्सी हॉल्ट एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क 1954.
- स्मिथ कार्ल, यू : साइन्टीफिक प्रिंसीपल ऑफ टैक्स्ट बुक डिजायन एण्ड इलस्ट्रेशन, ऑडियो विजुअल कम्यूनिकेशन रिव्यू VIII.
- ससराम, बिलबुर (सं.) द प्रोसेस एण्ड इफैक्ट ऑफ माँस कम्युनिकेशन, डरवाना: यूनीवर्सिटी ऑफ इलीनोस प्रेस, 1961.
- वेप्लस, डगलास (सं.) प्रिंट, रेडियो एण्ड फिल्म इन डेमोक्रेसी, यूनीवर्सिटी ऑफ शिकागों प्रेस, शिकागों 1942.
- डाले, ड्रगलर, ऑडियो विज्यूअल मैथडस इन टीचिंग, ड्राइडेन प्रेस, न्यूयार्क, 1977.
- ब्राउन, लेविस एण्ड कर्हले रॉड: ऑडियो विजुअल इन्सट्रक्शनल टैक्नोलोजी, मीडिया एण्ड मैथड्स, मैग्राहिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, 1977.
- विटिज एण्ड चार्ल्स एचुलर : एज्यूकेशनल टैक्नोलॉजी, इट्स नेचर एण्ड यूज, हार्पर एण्ड रॉ पब्लिशर्स, 1977.
- प्रिंटिटेड मीडिया एण्ड द रीडर : हार्पर एण्ड रॉ, न्यूयार्क, 1974.
- बुकोक, सरने एण्ड सचिल्ड (सं.) : सिमुलेशन गेम एण्ड लर्निंग, सेज पब्लिकेशन, न्यूयार्क, 1968.
- गैने, रॉबर्ट, सिमुलेटरर्स ट्रेनिंग, रिसर्च एण्ड एज्यूकेशन, न्यूयॉर्क, वीले, 1965.
- टान्स एण्ड डेरिक डर्विन. सिमुलेशन एण्ड गेमिंग इन एज्यूकेशन, वर्नस एण्ड नोबल, न्यूयार्क, 1969.
- रोजी पोटर एण्ड बुश विडल: दी न्यू मीडिया एण्ड एज्यूकेशन, अलडायल पब्लिशिंग, शिकागों हाऊस.
- क्रॉस, हॉय एण्ड शिफर : ऑडियो विज्यूअल एज्यूकेशन, थमसन कॉरवेल कंपनी, न्यूयार्क, 1972.

इकाई-24

माध्यम वर्गीकरण योजना Media Classification Schemes

इकाई की संरचना

(Structure of unit)

24.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

24.1 प्रस्तावना
(Introduction)

24.2 प्रत्यक्ष सोद्देश्य अनुभव
(Direct Purposeful Experience)

24.2.1 युक्रियुक्त अनुभव
(Contrived Experience)

24.2.2 नाटकीय अनुभव
(Dramatised Experience)

24.2.3 अवलोकन के द्वारा अधिगम
(Learning Through Observation)

24.2.4 प्रदर्शन
(Demonstration)

24.2.5 शैक्षिक भ्रमण
(Excursion)

24.2.6 एग्जीविट्स
(Exhibits)

24.2.7 टेलीविजन एवं गति चित्र
(Television and Motion Picture)

24.2.8 रेडियो रिकार्डिंग एवं स्थिर चित्र
(Radio Recording and Still Picture)

24.2.9 दृश्य प्रतीक
(Visual Symbols)

24.2.10 मौखिक प्रतीक
(Verbal Symbols)

24.3 सचेतक
(Cautions)

24.4 चर

(Variable)
24.5 प्रक्षेपी एवं अप्रक्षेपी सहायक सामग्री
(Projected and Non Projected Aids)
24.6 दृश्य-श्रव्य सामग्री
(Audio Verbalism)
24.6.1 भाषण मे कमी
(Reduces verbalism)
24.6.2 प्रभावी अधिगम
(Effective Learning)
24.6.3 सामग्री का आकर्षण
(Aids Facination)
24.6.4 क्रियाशीलता
(Activates)
24.6.5 दृश्य-श्रव्य सामग्री एवं प्रेरण
(Motives)
24.6.6 वैचारिक निरन्तरता
(Continuity of Thought)
24.6.7 अवधारणा विकास
(Development of Concept)
24.6.8 अनुभव के दायरे को विकसित करना
(Enlarge the Scope of Experience)
24.6.9 प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया
(Effective Teaching Learning Process)
24.6.10 दृश्य-श्रव्य सामग्री द्वारा उत्पन्न नवीनता एवं विभिन्नता
(Breaks Monotony)
24.6.11 सीखने में सुस्पष्टता
(Clarity in Learning)
24.7 सारांश
(Summary)
24.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

24.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की सम्प्राप्ति पर विद्यार्थी -

1. एडगर डेल के 'कोन ऑफ एक्सपीरियन्स' से परिचित हो सकेंगे।
2. शिक्षण अधिगम (टीचिंग लर्निंग) प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की दृश्य- श्रव्य सामग्रियों के अन्तरसम्बन्धों को समक्ष सकेंगे तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में प्रत्येक सामग्री की भूमिका को समझ सकेंगे।
3. पूर्ण विशुद्ध अमूर्त तथा प्रत्यक्ष अनुभव में विभेद दर्शा सकेंगे।

24.1 प्रस्तावना
(Introduction)

प्रस्तुत इकाई, आपको नवीन अनुभव देने के लिये तथा आप शिक्षण अधिगम परिस्थितियों में अनुदेशात्मक (इनस्ट्रक्शनल) सहायक सामग्री का चयन कर सकने में बडी योग्यता पा सकें, जिससे कि अधिगम अनुभव प्राप्त किये जा सकें आदि तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए निर्मित की गई हैं। साथ ही प्रस्तुत इकाई में आपको एडगर डेल्स के अनुभव शंकु (कोन ऑफ एक्सपीरिअन्स) के सम्बन्ध में भी बतलाया गया है। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्रियों में परस्पर सम्बन्धों पर चर्चा की गई है तथा प्रत्यक्ष अनुभव एवं अमूर्त अनुभव मे अन्तर को समझाया गया है। डॉ० एडगर डेल ने अपने एकीकृत अधिगम (इन्टीग्रेटेड लर्निंग एप्रोच) को प्रतिपादित किया। यह पहल अनुदेशन की नवीन सामग्री के सम्बन्ध में थी तथा यह एक शिक्षण प्रतिमान (टीचिंग मॉडल) था। विभिन्न प्रकार के अनुभवों के द्वारा अवधारणा विकसित होने सम्बन्धी प्रेरणा डेल महोदय ने जे.एस. ब्रूनर से प्राप्त की थी। यह सीखने की सुप्रसिद्ध तीन विधियों के समान ही थी। इसके अन्तर्गत सीखने के तीन मोड (रीतियां) जैसे प्रत्यक्ष अनुभव, चित्रात्मक अनुभव, एवं प्रतीकात्मक अनुभव सम्मिलित किये गये हैं।

डेल के अनुसार जब हम कोई प्रयोग कर रहे होते हैं तब हम अपनी इन्द्रियों (मदेमे) का प्रयोग कर रहे होते हैं। साथ ही उसमें हम भौतिक रुप से भी सम्मिलित होते हैं। कभी-कभी जब हम अवलोकन मात्र करते है, तब भौतिक क्रियाकलाप न्यूनतम सहभागी होते हैं। बल्कि कुछ करने की अनुभूति अधिक होती है। डेल महोदय का अनुभव शंकु (कोन ऑफ एक्सपीरियन्स) शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अनुभवों को उभारते हुए उनकी भूमिका को समझाता है तथा साथ- ही यह भी दर्शाता है कि किस तरह अनुदेशन सामग्री प्रत्येक पहलू की भूमिका पर जोर देती है। जैसा कि उदाहरण से स्पष्ट होता है कि 'कोन' ऊपर की ओर अमूर्तता के उच्च मान बिन्दु के साथ गतिशील होता है। जब मौखिक प्रतीकों का प्रयोग होता है।

डेल का अनुभव 'कोन' अधिगम प्रक्रिया का पूर्णत: त्रुटि रहित प्रतिनिधि प्रस्तुतीकरण नहीं हैं। यह अधिगम एवं सम्प्रेषण प्रक्रियाओं में व्याप्त सम्पूर्ण जटिलताओं का पूर्ण समाधान नहीं है। उदाहरणार्थ ऊपर की ओर 'कोन' की आकृति का सकरा होना यह नहीं दर्शाता है कि सीखने में (अधिगम में) कठिनाई का स्तर बढ़ रहा है। 'कोन' अमूर्तता की डिग्री (डिग्री ऑफ एब्स्ट्रेक्टनेस) को दर्शाता है न कि कठिनाई के स्तर को। हम 'कोन ऑफ एक्सपीरियन्स को एक लचीले प्रतिमान (मॉडल) के रुप में देख सकते हैं।

24.2 प्रत्यक्ष सोद्देश्य अनुभव (Direct Purposeful Experience)

'कोन' वास्तविक अवलोकन से प्रतीकात्मक प्रतिनिधि प्रस्तुतीकरण अनुभव की व्यापक श्रृंखला प्रस्तुत करता है। प्रत्यक्ष अनुभव 'कोन' को आधार प्रदान करते हैं तथा क्रिया द्वारा सीखने (Learning) के सिद्धांत पर जोर देता है। यह उन सभी अनुभवों को समाहित करता है जो कि ज्ञानेन्द्रीय मे सम्मिलित होते हैं, जैसे देखना, सुनना, स्वाद, अनुभूति, गंध आदि। ये परिपूर्ण समस्त अधिगम (सीखने) को आधार प्रदान करते हैं तथा उन उद्देश्यों से सीधे सम्बन्धित होते हैं, जिन्हें हम व्यवहार के रुप में निर्धारित करते हैं।

अनुभव शंकु - कोन ऑफ एक्सपीरियन्स

The Cone of Experience

मौखिक प्रतीक चिन्ह (Verbal Symbols)

दृश्य प्रतीक चिन्ह (Visual Symbols)

रिकार्डेड रेडियो स्थिर चित्र (Recorded Radio Motion-Less Pictures)

गतिमान (चल) चित्र (Motion Picture)

शैक्षिक टी.वी. (Educational TV)

प्रदर्शन (Exhibites)

अध्ययन यात्रा (Study Trips)

प्रदर्शन (Demonstration)

ड्रामेटाइजड एक्सपीरियन्स (Dramatised Experience)

युक्तियुक्त अनुभव (Contrived Experience)

प्रत्यक्ष सोद्देश्य अनुभव (Direct Purposeful Experience)

यह उन विभिन्न गतिविधियों का प्रतिनिधि प्रस्तुतीकरण है, जिससे हम सलग्न होते हैं। ताकि हम अर्थपूर्ण विचार एवं जानकारी प्राप्त कर सकें। जो कि क्रिया द्वारा सीखने (Learning By Doing के सिद्धांत पर आधारित है। उदाहरण के लिये, जब हमें कोई ऐसी विशिष्ट योजना प्रदान की जाती है, जो विद्यालय वातावरण में उपलब्ध होती है, तब यह ज्यादा अच्छा होगा कि उस वातावरण में कक्षा ली जाये बजाय कि श्यामपट्ट पर योजना चित्रित की जाये।

अनुसंधान दर्शाते हैं कि जिन बालकों को प्रत्यक्ष अनुभव के द्वारा सीखने का अवसर प्राप्त होता है (जो प्रकृति से सीखते हैं) वे ज्यादा प्रभावी एवं सही रुप में सीखते हैं। अर्थपूर्ण सामान्यीकरण में प्रत्यक्ष अनुभव की भूमिका जीवन्त होती है। यद्यपि प्रथम प्रत्यक्ष अनुभव में कुछ अंशों में अमूर्तता विद्यमान होती है।

24.2.1 युक्तियुक्त अनुभव (Contrived Experience)

बच्चों का अमूर्तता के साथ साहचर्य उन वस्तुओं के प्रति जिन्हें देखा नहीं जा सकता उसे भी हटाया जा सकता, उन अनुभवों को वास्तविक वस्तु के प्रतिरुप के द्वारा प्रस्तुत उन अनुभवों को वास्तविक वस्तु के प्रतिरुप के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। जैसे प्रतिमान(मॉडल) एवं Mockups बच्चों को अमूर्त का अनुभव कराने में सहायक होते है। जबकि इन्हें वास्तविक वस्तु के द्वारा समझाना कठिन होता है। कई बार वास्तविक वस्तु को उसके आकार के कारण कक्षा मे नहीं लिया जा सकता या उसके साथ अन्य जटिलतायें संलग्न होती हैं। अत: युक्तियुक्त प्रदर्शन एवं उसके प्रतीकों द्वारा प्रदर्शन सहायक होता है तथा इसके द्वारा उद्देश्य युक्त अनुभव को प्राप्त किया जा सकता है। नक्शे जो किसी देशी की भौतिक स्थिति दर्शाते हैं, वे सर्वोत्तम प्रदर्शन होते हैं। इनके द्वारा प्रदर्शन व्यापक अनुभव प्राप्त होता है जो अन्यथा सम्भव नहीं हो पाता। जैसे एक वायुयान की उड़ान को कक्षा में उसके मॉडल के द्वारा अच्छी तरह समझाया जा सकता है, बजाय वास्तविक वायुयान के। इसी तरह प्रयोगशाला में कई प्रदर्शनों के द्वारा वास्तविक स्थितियों की तरह घटनाओं को दर्शाया जाता है। युक्तियुक्त अनुभव वह पहली सीढ़ी है जो छात्रों को वास्तविकता से जोड़ती है।

24.2.2 नाटकीय अनुभव (Dramatised Experience)

कुछ ऐसी भी शिक्षण अधिगम वस्तुऐं होती है, जिनका बहुत सीमित उपयोग होता है। यह उपयोग उनके आकार प्रकार तथा समय के कारण होता है। शिक्षार्थी भूतकालिक अनुभव को नहीं पहुंच पाते और युक्तियुक्त अनुभव के द्वारा भी विगत अनुभव को मूर्तरुप में नहीं ला पाते। ऐसी घटनाओं को नाटकीय अनुभव के द्वारा पुन: निर्मित किया जाता है। नाटकीयकरण में बच्चों की सृजनात्मकता उभर कर सामने आती है। इस अनुभव के द्वारा सक्रिय भागीदारी के कारण शिक्षार्थी जटिल अवधारणाओं का बोध प्राप्त कर पाते हैं। जो कि अन्यथा सम्भव नहीं होता। यह बोध व अनुभूति नाटक में शिक्षार्थी द्वारा भाग लेने एवं इसे देखने से घटित होती है। इस तरह की अनुभूतियां लक्ष्य प्राप्ति में सहायक एवं उपयोगी होती हैं। यह माना जाता है कि ड्रामा में भाग लेने वाले शिक्षार्थी की भागीदारी इसे देखने वालों की बनिस्बत अधिक होती है।

24.2.3 अवलोकन के द्वारा अधिगम (Learning Through Observation)

नाटकीकरण से परे शिक्षार्थी अमूर्तकरण की ओर प्रवर्त होता है तथा अवलोकन की स्थिति मे प्रवेश करता है। जब शिक्षार्थी की सहभागिता कम होती है तब यह अमूर्त सक्रिय

अनुभूति करता है तथा नाटकीकरण, स्टडी ट्रिप्स, एग्जीबिट्स प्रोजेक्टेड सहायक सामग्री, रेडियो स्थिर चित्र तथा अन्य ग्राफिक शिक्षण सामग्री ट्रिप्स की अनुभूति से गुजरता है। इन स्थितियों में शिक्षार्थी प्रत्यक्ष सम्मिलित नहीं होता। वह मात्र अवलोकनकर्ता होता है। यह अप्रत्यक्ष सहभागिता भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में महत्वपूर्ण होती है।

24.2.4 प्रदर्शन (Demonstration)

प्रदर्शन मानसिक दक्षता को बढ़ावा देता है। साथ ही सृजनात्मकता कल्पनाशीलता प्रभावी सम्प्रेषण की प्रक्रिया में उत्पन्न करता है। प्रदर्शन में कार्य प्रतिफल अनुदेशनात्मक उद्देश्यों पर निर्भर करते है। इसमें (Learning By Doing करके सीखने के सिद्धांत प्रस्तुत होता है। नाटकीकृत घटनाओं में करना एवं अवलोकन दोनों ही बातें सम्मिलित रही है। 'प्रदर्शन' में सीखना (अधिगम) अवलोकन के माध्यम से होता है। इसमें शिक्षार्थी घटना को प्रत्यक्ष घटित होते हुए देखता एवं अनुभव करता है।

24.2.5 शैक्षिक भ्रमण (Study Trips)

इसके अन्तर्गत विभिन्न अधिगम अनुभव सम्मिलित होते हैं तथा ये अनुभव परस्पर सम्बन्धित होते हैं। शिक्षार्थी विद्यालय से निकलकर व्यक्ति, वस्तु एवं घटनाओं को वास्तविक रुप में देखता एवं अनुभव करता है। माना इन घटनाओं में उसकी काल्पनिक सहभागिता है, चेतन तथा अवचेतन रूप से शिक्षार्थी अनुभव ग्रहण करता है।

24.2.6 एग्जीबिट्स (Exhibits)

अधिगम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए वर्किंग मॉडल एग्जीबिट्स के रुप में प्रदर्शित किये जाते हैं। इसमें मॉडल के साथ स्थिर चित्रों की श्रृंखला, चार्ट पोस्टर आदि को भी सम्मिलित किया जा सकता है। सभी एग्जीबिट्स (प्रदर्शन) में एक बात सामान्य रुप से पायी जाती है कि इन्हें दर्शक द्वारा अवश्य ही देखा जाना चाहिए और यह आदर्श स्थिति होगी कि मॉडलों का संचालन दर्शकों द्वारा ही किया जावे ताकि दर्शकों की इन मॉडलों से सहभागिता स्थापित हो सके। उदाहरणार्थ, विज्ञान केन्द्र (साइन्स सेन्टर) प्रगति मैदान, नई दिल्ली, नेशनल म्यूजिमय ऑफ नेचरल हिस्ट्री नई दिल्ली, विश्वैश्वरयया औद्योगिक एवं तकनीकी म्यूजियम बंगलौर आदि संस्थान ऐसे हैं, जहां दर्शक प्रदर्शित सामग्री, मॉडल आदि का स्वयं व्यवहार करते हैं। दर्शक प्रदर्शित सामग्रियों को संचालित करते हैं, देखकर, छूकर अनुभव करते हैं। इस माध्यम से उनके सीखने के अनुभव में वृद्धि होती है।

24.2.7 टेलीविजन एवं गति चित्र (Television and Motion Picture)

टेलीविजन एवं गतिशील चित्र दोनों ही प्रदर्शित सामग्री के अंग होते है। टेलीविजन एवं फिल्म के माध्यम से सुगठित रुप में वास्तविक अनुभव दिये जाते है। आधुनिक विशेष तकनीक के माध्यम से तीव्र गति से होने वाली प्रक्रिया को धीमी गति में तथा धीमी गति

को तीव्र गति में दर्शाया जा सकता है। ताकि दर्शक उसे भली प्रकार से समझ सकें। किसी फिल्म को प्रदर्शन के उद्देश्यों के अनुरुप योजनाबद्ध किया जाता है। इसमें वास्तविक घटनाओं को सार रुप में प्रदर्शित किया जाता है। इसमें हम किसी घटना को आदि से अंत तक जान सकते हैं। टी.वी. की सूचना प्रदर्शित करने की अपनी क्षमता है तथा यह एक निश्चित समय में लक्ष्य को पूरा कर पाता है। उपग्रह की मदद से संसार के दूरदराज स्थान पर घटित हो रही घटना को दर्शाया जा सकता है। भारत के शैक्षिक इतिहास में सेटेलाइट इनस्ट्रक्शनल प्रयोग 1975-76 तथा शिक्षा के लिये उपग्रह प्रयोग विशिष्ट हैं।

24.2.8 रेडियो रिकार्डिंग एवं स्थिर चित्र (Radio Recording and Still Pictures)

रेडियों रिकार्डिंग, स्थिर चित्र, ऐसी विधि सामग्रियां है, जो कि Cone of Experience 'अनुभव शंकु' का एक हिस्सा है। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो पढ़ नहीं सकते, उनके लिये दृश्य एवं श्रव्य सामग्री आवश्यक होती हैं। इसमें सोफ्टवेयर सामग्री, स्थिर चित्रों स्लाइड, ट्रान्सपीरेन्सी आदि के रुप में तैयार की जाती है। यह अतिरिक्त प्रदर्शन संसाधन के रुप में प्रयुक्त होते हैं। इसी तरह सामान्य चित्रकारी उन लोगों के लिये आसानी से प्रयोग की जा सकती है जो पढ़ना नहीं जानते। ऑडियो कैसेट के साथ यदि स्थिर चित्रों को संलग्न कर दिये जावे तो ये शिक्षार्थी पर सकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करते है। इस तरह रेडियो प्रसारण शिक्षा में सशक्त माध्यम के रुप में कार्य करता है।

24.2.9 दृश्य प्रतीक (Visual Symbols)

दृश्य प्रतीक शिक्षार्थी को अमूर्त स्थिति की ओर प्रवृत्त करते है। चार्ट, ग्राफ, नक्शे तथा चित्र, दृश्य प्रतीक (Visual Symbol) हैं, जो वास्तविकता को प्रतिनिधि रुप में प्रदर्शित करते हैं। चाक बोर्ड, ओवर हेड ट्रांस्पीरेंसी आदि प्रतीकों को प्रदर्शित करने के लोकप्रिय माध्यम है।

साधारण दण्डचित्र (बार ग्राफ) जो जनसंख्या वृद्धि प्रदर्शित करता है तथा आय का बढ़ना घटना दर्शाता है, यह एक ऐसा प्रतीकात्मक प्रदर्शन है। यह उन्हीं लोगों के लिये है जो इसकी पृष्ठभूमि से परिचित हैं तथा उसका अर्थग्रहण कर सकते हैं।

प्रतीकों की भाषा विशिष्ट होती हैं। अत: बालकों को इन प्रतीकों की भाषा समझने हेतु प्रशिक्षण किया जाना चाहिए ताकि वे उन्हें आसानी से समझ सके।

24.2.10 मौखिक प्रतीक (Verbal Symbols)

मौखिक प्रतीक को 'कोन' के अंतिम वर्ग के अन्तर्गत रखा गया है। इनमें कोई दृश्य संकेत निहित होता जो शब्द लिखे या बोले जाते हैं वे (आब्जेक्ट) से भिन्न होते हैं तथा ये अमूर्त से सम्बन्धित होते हैं। जैसे Cow', गाय शब्द ठीक Cow गाय की तरह नहीं है और न ही यह Cow गाय की तरह दिखायी या सुनायी पड़ता है। कुछ लेखकों ने लिखे एवं बोले हुए शब्दों में अन्तर भी निर्धारित किया है। अर्नेस्ट हार्नस के अनुसार 'छापे हुए शब्द' प्रतीक

हैं। भाषित संकेत (मौखिक संकेत) बोलने के लिये होते हैं। इन संकेतों को 'कोन' के अन्य अनुभवों के अन्तर्गत लिया गया है। चाहे वे प्रत्यक्ष अनुभव हो या प्रतिमान हो, गति (चल) चित्र या रेडियो रिकार्डिग हो, भाषिक प्रतीक अमूर्त है।

24.3 सचेतक (Cautions)

डेल का 'कोन ऑफ एक्सपीरियन्स' अधिगम प्रक्रिया तथा अवधारणा निर्धारण के सम्बन्ध में बहुत योगदान करता है। परन्तु यह जटिल अवधारणाओं अन्तर्सम्बन्धों, के वास्तविक क्रम को अधिगम (सीखने) की: प्रक्रिया में समझाने की उपेक्षा करता है। यह सिर्फ उच्च मूर्त्तता (Concreteness) से निम्न मूर्तता या निम्न से उच्च मुर्त्तता (Concreteness) पर ही जोर देता है। अमूर्त में हमेशा ऐसा कुछ निहित नहीं होता कि उसे समझना कठिन जो जबकि हम अमूर्त मौखिक प्रतीक का अर्थ ग्रहण कर रहे होते हैं।

जैसा कि डेल ने अपने कोन ऑफ एक्सपीरियन्स में वर्णन किया है। हम अपने दैनिक जीवन में प्रत्यक्ष अनुभवों से प्रारम्भ नहीं करते। एक बच्चा प्रतीकात्मक अनुभवों से प्रारम्भ कर इसे दूसरे अनुभवों से सम्बन्धित कर सकता है, जिसमें कि वह सीधा संलग्न होता है। किसी अवधारणा निर्माण में सभी अनुभव समान रुप से उपयोगी होते है।

24.4 चर (Variables)

अधिगम प्रक्रिया को सम्पन्न बनाने के लिये प्रत्येक संवेदन का इसके अधिकतम स्तर तक उपयोग किया जाना चाहिए तथा उसके बाद ही उसे दूसरे संवेदन से जोड़ना चाहिये। नई अवधारणा सीखने में किसी भी अनुभव पर जरुरत से ज्यादा जोर नहीं डालना चाहिए। अमूर्त एवं मूर्त विचार पर पूर्ण अधिकार करने के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष एवं मौखिक प्रतीकों के बीच अन्तर करना कठिन है। यह प्रत्येक बालक में भिन्न हो सकते हैं।

चरों में मानसिक योग्यता समझ का स्तर सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि समाहित होती है। इन चरों की पूर्ण समझ प्राप्त करने के पश्चात् शिक्षक विद्यार्थियों को अमूर्त एवं मूर्त अनुभव प्रदान कर सकता है, जिससे कि शिक्षार्थी विभिन्न कठिनाइयों से उबर सके।

डेल का 'कोन' विषय अनुरुप शिक्षण सहायक सामग्री चुनने में सहायक हैं। प्रत्येक सहायक सामग्री की अपनी विशेषताऐं होती हैं। कुछ सहायक सामग्री किसी संदेश विशेष के लिए उपयुक्त हो सकती है।

संदेश के अनुरुप माध्यम के बीच तालमेल स्थापित करने में भी डेल का कोन मदद करता है। इसी अवधारणा या उप अवधारणा विशेष के लिये कोई माध्यम उपयुका होता है। तो दूसरे के लिये कोई दूसरा माध्यम उपयुक्त हो सकता है। इसके अतिरिक्त माध्यमों में मेल-जोल या विभिन्न माध्यमों का उपयोग किसी एक माध्यम की तुलना में ज्यादा प्रभावी

होता है। अधिगम प्रक्रिया के किसी अवधारणा को सीखने समझने में विभिन्न माध्यम, विभिन्न अनुभव प्रदान करते है।

24.5 प्रक्षेपी एवं अप्रक्षेपी सहायक सामग्री (Projected and Non Projected Aids)

शिक्षार्थी जब किसी अवधारणा की जटिलताओं का सामना करता है, तो उसे विभिन्न अनुभव प्राप्त करने के लिये अधिकाधिक अवसरों की आवश्यकता होती है। शिक्षक व्यापक समझ को समाहित करता है जो कि निर्धारित पाठ्य पुस्तक में निहित नहीं होती।

शिक्षकों के पास व्यापक विविध दृश्य सामग्री उपलब्ध होती हैं, जिन्हें प्रयोग से पहले परीक्षण करना आवश्यक होता है। परीक्षण से प्राप्त पृष्ठ पोषण संप्रेषण को प्रभावी बनाने में सहायक होती है। Film, Film Strip, Slides, स्थिर चित्र, टी.वी. नक्शे, Graphics Radio Recording, Chart, Posters तथा Model आदि। ये कुछ दृश्य-श्रव्य सामग्रियॉ हैं। विभिन्न लेखकों द्वारा विभिन्न दृष्टिकोण से इन सामग्रियों का वर्गीकरण किया गया है। कुछ लेखकों ने इनका वर्गीकरण दृश्य एवं श्रव्य सामग्री वर्ग के रुप में किया है। दृश्य वर्ग के अन्तर्गत, चित्र (Photograph) चित्र सामग्री, चित्र पुस्तिका, नक्शे, Posters, प्रदर्शन, Chalk board, Bulletin board, Planned Diagram, Models, Film Slide, Transparency, Cartoon, Drawing आदि को सम्मिलित किया जाता है।

कुछ अन्य दृश्य-श्रव्य सामग्री को लागत मूल्य के दृष्टिकोण से वर्गीकरण करते हैं। जैसे उच्च मूल्य लागत, मध्यम तथा निम्न लागत सामग्री। इसके अतिरिक्त दृश्य-श्रव्य सामग्रियों का वर्गीकरण प्रक्षेपी एवं अप्रक्षेपी (Projected and Not Projected) सामग्री के रुप में किया जाता है।

प्रक्षेपी सामग्री: प्रक्षेपी सामग्री वह सामग्री है, जिसे पर्दे पर प्रदर्शित किया जाता है। यह सामग्रियाँ मुख्यत: फिल्म स्लाईड, फिल्म स्ट्रिप्स, वीडियो टेप्स, टेलीविजन, वीडियो डिस्क आदि के रुप में होती है।

अप्रक्षेपी सामग्री: इसके अन्तर्गत Chart, Graph, नक्शे, चित्र, स्थिर-चित्र Audio-Tap, Programme Record Model आदि सम्मिलित किए जाते है।

प्रक्षेपी सामग्री के लिये Hardware आवश्यक होता है, जैसे Film Projector Film Strip, Slide Projector, टी.वी. मॉनीटर, वी.सी.आर. वीडियो डिस्क, ओ.एच.पी. कम्प्यूटर आदि।

प्रक्षेपी सामग्री: (Projected Aids) के प्रमुख वर्ग निम्न है। चलचित्र प्रोजेक्टर, (मोशन पिक्चर प्रोजेक्टर) मूक चलचित्र या ध्वनि चलचित्र। दोनों ही प्रकार के Projectors में भिन्नता होती है। सरल एवं व्यापक उपयोग के द्वारा शैक्षिक टी.वी., कैसेट इस वर्ग के अन्तर्गत लिये गये है।

स्थिर चित्र प्रोजेक्टर: ये सामान्यत: फिल्म स्ट्रिप और स्लाईड के रुप में होते हैं। इनका आकार 2 inch से 3 $\frac{1}{4}$ वर्ग इंच तक होता है।

अ-पारदर्शी प्रक्षेपन (Opaque Projection) : पुस्तकें तथा अन्य अपारदर्शी सामग्री ओपेक प्रोजेक्टर के द्वारा प्रक्षेपित की जा सकती है। इसे इपिस्कोप के नाम से जाना जाता है। यह 3D सामग्री के सम्बन्ध में उपयुक्त होता है।

अप्रक्षेपी सामग्री सहज उपलब्ध होती है एवं शिक्षक द्वारा परिमार्जित की जा सकती है। यह विभिन्न रंगरुप एवं परिणाम में प्राप्त हो सकती है। इन्हें आवश्यक एवं उपयोग के अनुरूप प्राप्त किया जा सकता है। इसका वर्तमान उदाहरण ब्लेक बोर्ड है जो विद्यालयों में अधिगम प्रक्रिया (Learning Acbutors) का केन्द्र बना हुआ है। ये अप्रक्षेपी, नॉन प्रोजेक्टड सामग्री शिक्षार्थी एवं शिक्षक के सीखने में सहभागिता को प्रोत्साहित करती है (यदि इनका उपयोग दक्षतापूर्वक किया जाए तो ये सामग्रियाँ कक्षा में प्रभावी सिद्ध होती है।

24.6 दृश्य-श्रव्य सामग्री (Audio Visual Aids Material)

दृश्य-श्रव्य सामग्री का वर्गीकरण जेम्स डी फीन्स (Fins) ने दृश्य-श्रव्य सामग्री के व्यावहारिक उपयोगी पक्ष को विचार अपनाया है। उसका दृष्टिकोण विभिन्न अनुसंधानों पर आधारित है; जो इस विषय पर आयोजित हैं। Fins के अनुसार, दृश्य-श्रव्य सामग्री के मुख्य रुप में तीन वर्ग हैं। जैसे (Auditory Aids), श्रव्य सामग्री, (Visual Aids) दृश्य सामग्री तथा (Audio-Visual Aids) दृश्य-श्रव्य सामग्री। (Auditory Aids) श्रव्य सामग्री के अन्तर्गत Cassette Recording ग्रामोफोन डिस्क रेडियों रिसीवर को समाहित किया गया है। दृश्य-श्रव्य सामग्री के अन्तर्गत स्लाईड, फिल्म स्ट्रिप, ओ.एच.पी. इपिडिसकोप को समाहित किया जाता है। दृश्य-श्रव्य सामग्री के अन्तर्गत टी.वी., फिल्म, वीडियो, कम्प्यूटरीकृत निर्देश आदि को सम्मिलित किया गया है। Fins के अनुसार, इन सामग्रियों से निम्न लाभ पाए जा सकते है; यदि इन्हें शिक्षण अधिगम परिस्थितियों में प्रयुक्त किया जावें।

24.6.1 सम्भाषण में कमी (Reduces Verbalism)

दृश्य-श्रव्य सामग्रियों की मदद से अर्थपूर्ण अवधारणाऐं विकसित की जाती है, क्योंकि ये सामग्रियाँ अवधारणापूर्ण चिन्तन के लिए ठोस आधार प्रदान करती हैं। मौखिक कथन कभी-कभी सीखने में बाधा उत्पन्न करते हैं तथा दृश्य-श्रव्य सामग्रियाँ सीखने के अनुभवों को मूर्तरुप प्रदान करती हैं तथा मौखिक कथनों को कम करती हैं।

24.6.2 प्रभावी अधिगम (Effective Learning)

विभिन्न आयु समूहों के अनुसार विभिन्न प्रस्तुतीकरण तकनीक आवश्यक होती है। कुछ नवीन प्राप्त करने हेतु नई आवश्यकता उत्पन्न होती है। इन नई आवश्यकता के अनुसार नवीन अनुभवों के अनुरूप नवीन प्रक्रिया शुरु होती है। कार्टून, चार्ट, पोस्टर को उनकी उपयोगिता अनुसार रूपांतरित किया जा सकता है तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनका प्रभावी उपयोग किया जा सकता है। जो अधिगम को प्रभावी एवं स्थायी बनाता है।

24.6.3 सामग्री का आकर्षण (Aids Fascination)

यदि किसी अवधारणा का प्रयोग नाटक तथा कहानी के रुप में प्रस्तुत किया जाता है तो सीखने वाले शिक्षार्थी का ध्यान बढ़ता है। यदि दृश्य-श्रव्य सामग्री को भली प्रकार उपयोग किया जाता है तो शिक्षार्थी उसमें रुचि लेने लगते हैं। ये उनकी जिज्ञासा में वृद्धि करते हैं तथा शिक्षार्थी सृजनात्मक रुप से अधिगम प्रक्रिया में सहभागी बन जाते है।

24.6.4 क्रियाशीलता (Activates)

यह क्रियाशीलता को जाग्रत करती है। फिल्म, नक्शे, चार्ट तथा प्रदर्शन क्रियाशीलता को जागृत करते हैं, जो कि इन सामग्रियों के विकसित करते समय मस्तिष्क में छिपी रहती हैं। इन सामग्रियों का दक्षता पूर्ण प्रयोग रच-क्रियाशीलता को जगाता है। यह श्रोता के मन मस्तिष्क में गहरी छाप छोडते है।

24.6.5 दृश्य-श्रव्य सामग्री एवं प्रेरण (Motivates)

दृश्य-श्रव्य सशक्त, संप्रेषण माध्यम है तथा शिक्षार्थी को सकारात्मक दिशा में प्रेरित करता है। शिक्षार्थी की विभिन्न रुचियाँ, आशाएँ, अपेक्षाऐं, भय आदि माध्यम के प्रति होती हैं उनकी विभिन्न प्रतिक्रियाऐं होती हैं। माध्यम उनमें एक प्रबल प्रेरणा जागृत करता है क्योंकि माध्यम में अपना प्रभाव छोडने की प्रबल क्षमता होती है। हालांकि यह प्रेरणा दर्शक की मानसिक संरचना पर निर्भर करता है।

24.6.6 वैचारिक निरन्तरता (Continuity of Thought)

ध्यान की वृद्धि तथा विषयवस्तु को दीर्घकाल तक धारण करने की क्षमता, दृश्य-श्रव्य सामग्री द्वारा भली प्रकार प्राप्त की जा सकती है तथा यह वैचारिक निरन्तरता बनाने में सहायक होती है। दृश्य-श्रव्य सामग्री मूर्त अधिगम को मौखिक सम्प्रेषण विधि के बजाय, ज्यादा समर्थ बनाता है।

24.6.7 अवधारणा विकास (Development of Concept)

दृश्य-श्रव्य सामग्री विचार एवं उदाहरण को मूर्त रुप से विकसित कर स्थापित करने में सहायक होती है, जबकि भाषण कथन भ्रम निर्मित करते है।

24.6.8 अनुभव के दायरे को विकसित करना (Enlarge the Scope of Experience)

मनुष्य के पास व्यावहारिक दृष्टि से समय एवं जगह का अभाव होता है। दृश्य-श्रव्य सामग्री, समय एवं स्थान की इस समस्या को व्यावहारिक दृष्टि से उबार देती है। फिल्म देखकर उसे जो अनुभव होता है, वह पुस्तक पढ़कर नहीं होता। इस तरह दृश्य-श्रव्य साधन समय एवं स्थान की समस्या को हल करते हुए हमारे अनुभवों एवं कल्पनाओं को विस्तृत करते है।

24.6.9 प्रभावी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया (Effective Teaching Learning Process)

फिन के अनुसार विज्ञान अवधारणा पर एक लेख या व्याख्यान किसी प्रयोग या प्रदर्शन के समान प्रभावी इसी स्थिति में होता है, जब इसमें गतिशीलता निहित हो। दृश्य अनुभव विषय-वस्तु को प्रभावी का से समाहित कर लेते हैं। इस तरह दृश्य-श्रव्य सामग्री अन्य किसी माध्यम की तुलना में अधिक प्रभावी होती है।

24.6.10 दृश्य-श्रव्य सामग्री एवं विभिन्नता उत्पन्न करती है (Breaks Monotony)

दृश्य-श्रव्य साधन नीरसता एवं एकरुपता को भंग करते हैं तथा सीखे जाने वाली अवधारणा को नवीनता देते हैं। केवल व्याख्यान एवं वार्ता समझ को बाधित करते हैं, जबकि दृश्य-श्रव्य सामग्री द्वारा प्रस्तुत अवधारणा विविध अनुभव प्रदान करती है। पोस्टर, फिल्म, चार्ट आदि के द्वारा अवधारणा को भली प्रकार समझा जा सकता है।

24.6.11 सीखने में सुस्पष्टता (Clarity in Learning)

दृश्य-श्रव्य सामग्री सीखने में सुस्पष्टता पैदा करती है। कई बार किसी अवधारणा की शब्दावली को पढ़ना समझना बहुत कठिन होता है, जबकि इसे दृश्य-श्रव्य द्वारा बच्चों के लिये प्रभावी रुप से सहज ही प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें अवधारणा से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों को प्रस्तुत किया जा सकता है। फिन्स का दृश्य-श्रव्य सामग्री वर्गीकरण विकसित देशों के अनुभवों पर आधारित है। अब वर्तमान साधन सामग्री जैसे कम्प्यूटर तथा माइक्रो प्रोसेसर टी.वी. एवं फिल्म के अतिरिक्त शिक्षा में सुसज्जित हो चुके हैं, भारत जैसे विकासशील देशों में अपना स्थान बना चुके हैं। भारत में कला एवं दस्तकारी की लम्बी परम्परा रही है। अत: यही आधुनिक साधनों के साथ ग्राफिक शिक्षण भी समानान्तर रुप से जारी रहेगा।

24.7 सारांश
(Summary)

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में अनुदेशनात्मक सहायक सामग्री का उपयोग करना आवश्यक है। इसके द्वारा शिक्षण सरल, बोधगम्य एवं स्थायी होता है। अमूर्त तथ्यों को समझाने के लिए सहायक सामग्री की आवश्यकता होती है। डी. एडगर डेल ने अपने एकीकृत अधिगम सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्र. जे.डी. फिन्स के अनुसार दृश्य-श्रव्य सामग्री के मुख्य वर्ग कौन से हैं?

प्र. दृश्य-श्रव्य सामग्री की प्रकृति समझाइये।

प्र. जे.डी. फिन्स के अनुसार दृश्य-श्रव्य विधियों की उपयोगिता क्या है? आपके द्वारा वरीयता दिए गए तीन श्रेष्ठ बिन्दु दर्शाइये।

24.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

फ्लेप, इल्से आर. : द यूज ऑफ रिसोरसेस इन एज्यूकेशन - हार्पर, यू.एस.ए.

डेल एडगर : द ऑडियो विजुअल मेथडस इन टीचिंग - द ड्रायडन प्रेस, न्यूयार्क

रोमिसजोस्की, ए.जे. : द सिलेक्शन एण्ड यूज ऑफ इन्सटॅकशनल मीडिया, कोगनपेज लन्दन

शेनोन सी.इ. एण्ड सीविअर डब्ल्यू : द मेथड थ्योरी ऑफ कम्यूनिकेशन युनिवर्सिटी ऑफ इलिनोइस प्रेस

विचवाल्टर, ए एण्ड चार्ल्स एफ. : ऑडियो विजुअल मटीरिअल्स देअर नेचर एण्ड कलर - हार्पर एण्डरो स्क्रेन्टोनपर

इकाई-25

स्थिर प्रक्षेपित सामग्री एवं गतिशील चित्र Still Projected Aids and Motion Picture

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

25.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

25.1 प्रस्तावना
(Introduction)

25.2 फिल्म स्ट्रिप
(Film Strip)

25.2.1 फिल्म स्ट्रिप एवं प्रोजेक्टर के उपयोग
(Use of Film strip and Projector)

25.2.2 सीखने की प्रक्रिया में फिल्म स्ट्रिप का योगदान
(Contribution of film strip in the earning process)

25.2.3 सीमाऐं
(Limitations)

25.3 स्लाइड एवं उनकी शिक्षा में भूमिका
(Slides and Their Role in Education)

25.3.1 स्लाइड का निर्माण एवं वर्गीकरण
(Classification and Construction of slides)

25.3.2 स्लाइड के उपयोग
(Use of Slides)

25.4 ओवर हेड प्रोजेक्टर
(Over Head Projector)

25.4.1 आकृति एवं प्रक्रिया
(Structure and Process)

25.4.2 ओवर हेड प्रोजेक्टर के उपयोग
(Use of Overhead Projector)

25.4.3 शिक्षा में ओवर हैड प्रोजेक्टर की भूमिका
(Role of Overhead Projector in Education)

25.4.4 ट्रान्सपेरेन्सी तैयार करना

(Preparation of Transparancies)
25.5 चलचित्र तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनकी भूमिका
(Motion Pictures and their role in the teaching learning process)
25.5.1 लाभ
(Advantages)
25.5.2 चलचित्र का योगदान
(Contribution of Motion Picture)
25.5.3 चलचित्रों की उपलब्धता
(Accessibility of Motion Picture)
25.6 सारांश
(Summary)
25.7 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

25.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी :

(अ) स्थिर एवं गतिशील चलचित्रों एवं प्रक्षेपित सामग्रियों के उपयोग को समझ पाएंगे।

(ब) स्थिर प्रक्षेपित चित्र सामग्रियों एवं गतिशील चलचित्रों की प्रक्रिया के संदर्भ में आप स्वयं की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के लिये जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

(स) स्थिर एवं गतिशील चित्रों के बहुमाध्यम पैकेज में अन्य सामग्रियों के साथ उपयोग हेतु आवश्यक पृष्ठभूमि प्रदान करेगी।

25.1 प्रस्तावना
(Introduction)

स्थिर एव गतिशील प्रक्षेपित (Projected) सामग्री भारतीय संस्थाओं के लिए बहुत उपयोगी है। ये सामग्रियाँ फिल्म स्ट्रिप स्लाइड अपारदर्शी प्रक्षेपण तथा ओवर प्रोजेक्शन के रुप में होती है। बहुत सी अवधारणाओं में अमूर्त विचार निहित होते हैं, जिन्हें स्थिर एवं गतिशील प्रक्षेपित सामग्रियों के माध्यम से भली प्रकार सीखा जा सकता है। ऐसे कई स्थिर प्रकरण सामग्रियाँ हैं, जिन्हें प्रक्षेपित कर कक्षा में दर्शाया जा सकता है। ये प्रदर्शन अमूर्त अवधारणाओं को मूर्त दायरे में ले आते हैं। ये सामग्रियों मुख्यत: या तो विषयवस्तु को पुष्ट करने के लिये या ऐसा कुछ जोड़ने के लिए होती हैं कि विषय अवधारणा अधिक मूर्त रुप में प्रकट हो सके तथा अमूर्त का उपयोग अर्थ करवाया जा सके।

आप सृजनात्मक उत्प्रेरण हेतु भी स्थिर एवं गतिशील प्रक्षेपण सामग्री का उपयोग कर सकते हैं। ऐसी सामग्रियों छोटे समूह में नवीन अवधारणाऐं प्रस्तुत करने में मूल भूत अवधारणाऐं सिखाने में शिक्षार्थियों को प्रेरित करने में उपयोग की जाती है। फिल्म एवं अन्य सामग्रियॉ कक्षा में संसार को समेट लाती है। दृश्य प्रक्षेपित स्थिर प्रदर्शन द्वारा किसी प्राकृतिक विषय को इसकी सूक्ष्म विशेषताओं के साथ प्रभावी रुप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

25.2 फिल्म स्ट्रिप (Film Strip)

फिल्म स्ट्रिप एक ऐसा साधन है, जिसकी मदद से किसी अवधारणा को स्थिर चित्रों के एक निश्चित निश्चित क्रम मे प्रक्षेपित कर प्रस्तुत किया जा सकता है। इसमें पारदर्शी स्थिर चित्र एक फिल्म पट्टिका पर होते हैं। इसका आकार 35mm होता है। ये फिल्म स्ट्रिप चित्रों की श्रृंखला होती हैं। ये रंगीन या श्वेत श्याम हो सकते हैं। ऐसी पट्टिका का फ्रेम आकार सिंगल या डबल हो सकता है। इन दोनों प्रकार की पट्टिकाओं के लिये एक ही, प्रोजेक्टर प्रयुक्त किया जा सकता है। फ्रेम की रेन्ज भिन्न होती है, यह 22 से 50 या अधिक होती है, परन्तु इसे आसानी से लपेटा जा सकता है। यह स्थान भी बहुत कम घेरती है अत: रखरखाव में काई समस्या नहीं होती। इसके अतिरिक्त भारतीय संदर्भ में इसका लागत मूल्य कम होता है। इसे कक्षा में उपयोग किए जाने की दृष्टि से उपयुक्त समझा गया है। कुछ फिल्म स्ट्रिप्स को साउण्ड / स्ट्रिप्स कहा जाता है। इसमें संगीत एवं ध्वनि का प्रभाव निहित होता है। नई फ्रेम के प्रारम्भ होने से पूर्व संकेत दिया जाता है। सामान्यत: इसका रिकार्ड 33 $\frac{1}{4}$ या 78 रिवोल्युशन चक्र प्रति मिनट होता है। जहां प्रकरण में परि. की संभावना न्यूनतम होती है। सम्भवत: इसे प्रयुक्त किया जाता है।

25.2.1 फिल्म स्ट्रिप एवं प्रोजेक्टर के उपयोग (Use of Film Strips and Projectors)

फिल्म स्ट्रिप रिकार्ड प्लेयर एवं फिल्म स्ट्रिप प्रोजेक्टर का उपयोग इसलिये सुझाया जाता है, क्योंकि यह सुविधाजनक एवं सघन होते हैं। ध्वनि युक्त फिल्म स्ट्रिप, तकनीकी एवं औद्योगिक प्रक्रिया किसी ऑटोमोबाईल की कार्य प्रणाली समझाने के लिए उपयुक्त होती है। यदि ध्वनि बन्द हो जाए तो इसकी पूर्ति शिक्षक / विद्यार्थी द्वारा की जा सकती है। ध्वनियुक्त फिल्म स्ट्रिप, मूक फिल्म स्ट्रिप को पर्दे पर दर्शाया जा सकता है। इसके लिये प्रकाश उपकरण आवश्यक होता है। इसमें प्रकाश सम्बन्धी भौतिक विज्ञान का यह सिद्धान्त निहित है कि यदि कोई प्रदीप्त वस्तु किसी उत्तल लैंस (Convex) के फोकस की दूसरी तरफ फोकस दूरी से दो गुना अधिक बड़ा प्रतिबिम्ब निर्मित करती है।

प्रोजेक्टर में धातु का आवरण होता है। इसमें अवलत लैंस (Concave) परावर्त्तक Reflector, होते है तथा एक 500 Watt या 1000 Watt या फिलामेन्ट बल्ब युक्त होता

है। एक उत्तल लैंस की जोड़ी कडेंसर कहलाती है। यह फिल्म स्ट्रिप को प्रदीप्त करता है। इस प्रोजेक्टर के आवरण वक्स में शीतल पंखा, Exhaust Fan लगा रहता है। यह पंखा अतिरिक्त उष्मा को बाहर फैंक देता है। फिल्म स्ट्रिप को स्प्रोकेट दांतेदार पहिये पर लगा दिया जाता है और इसका स्वतंत्र सिरा नॉब से जोड़ दिया जाता है।

25.2.1 सीखने की प्रक्रिया में फिल्म स्ट्रिप का योगदान (Contribution of Film Strip in the Learning Process)

फिल्म स्ट्रिप जिसमें स्थिर चित्र होते हैं, उसे पर्दे पर स्थिर रुप में दिखाया जा सकता है। प्रत्येक प्रदर्शित चित्र को अधिगम उद्देश्यों से श्रृंखलाबद्ध किया जा सकता है। फिल्म स्ट्रिप के चित्र एक निश्चित क्रम में होते हैं। इन्हें कमरे में थोड़ा सा अन्धेरा करके दिखाया जा सकता है। चित्रों के माध्यम से सम्पूर्ण सोपान समझाया जा सकता है। यह कक्षा के रुप में भी हो सकता है या अन्य प्रकार की समझाईश हो सकती है। फिल्म स्ट्रिप का मुख्य उद्देश्य एक तर्कसंगत क्रम में विषयवस्तु को स्थिर चित्रों के माध्यम से प्रदर्शित करना है। रंगीन फिल्म स्ट्रिप के अच्छे प्रदर्शन के लिये कमरे में अंधकार अधिक होना चाहिए, जबकि ऐसे ही अंधकार में श्वेत श्याम फिल्म स्ट्रिप भी देखी जा सकती है।

ये फिल्म स्ट्रिप कम लागत में प्रत्येक विषय प्रकरण पर उपलब्ध हो सकती हैं। फिल्म स्ट्रिप का अधिकतम लाभ उठाने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न विषयों पर बड़े पैमाने पर इसका उत्पादन किया जावे तथा जटिल प्रकरणों पर इसे विषयवस्तु के रुप में समाहित किया जावे।

25.2.3 सीमाऐं (Limitations)

फिल्म स्ट्रिप स्थिर चित्र प्रदर्शन माध्यम यह उन विषयों के लिये उपयुक्त नहीं, जिनमें गति दर्शाई जाना आवश्यक है। उदाहरण, किसी इंजन का गतिशील प्रदर्शन वैज्ञानिक प्रयोग जिनमें गति प्रदर्शन निहित हो, उन्हें उस माध्यम से प्रभावी रुप से प्रदर्शित नहीं किया जा सकता है। दूसरे इसमें स्थिर चित्रों का क्रम निश्चित होता है। अत: इस क्रम को बदला नहीं जा सकता है। फिर भी पुनरावलोकन एवं विशिष्ट सन्दर्भ के लिये गतिशील चित्रों के साथ यह एक प्रभावी माध्यम है। इसका जीवनकाल कम होता है तथा आसानी से टूट-फूट जाते हैं। यदि प्रोजेक्टर ठीक प्रकार से व्यवस्थित न हो तो स्प्रोकेट छिद्र अक्सर टूट जाते है। अत: इनके उपयोग में विशेष सावधानी रखना आवश्यक होता है। इन्हें टूट-फूट से बचाने के लिये यह आवश्यक है कि इन्हें लपेटकर बेलनाकार डिब्बे में रखा जाए तथा उस पर नामपत्र चिपका दिया जाये।

25.3 स्लाइड एवं उनकी शिक्षा में भूमिका (Slides and Their Role in Education)

स्लाइड पूरक शिक्षण सहायक सामग्री के रुप में प्रयुक्त होती है। शिक्षक इन्हें या तो स्वयं निर्मित कर सकता है या बाजार से विषय अनुसार क्रय भी कर सकता है तथा इसे एक महत्वपूर्ण शिक्षण सहायक सामग्री के रुप मे प्रयुक्त कर सकता है। स्लाइड छोटी आकृति की सघन रचना होती हैं। उसे कक्षा में आसानी से प्रयुक्त किया जा सकता है।

25.3.1 स्लाइड का निर्माण एवं वर्गीकरण (Classification and Construction of Slides)

मुख्यत: स्लाईड्स चार प्रकार की होती है, जैसे सेलोफोन स्लाइड, सिलहोट स्लाइड, स्लाइड विद मार्क इंक तथा हेंडमेड इच्ड ग्लास स्लाईड। टिप मार्कर पेन के द्वारा या भारतीय स्याही की मदद से कोई चित्र या रेखाचित्र कांच की पट्टी पर बनाया जाता है तथा सुविधानुसार इस कांच पट्टी को पुठे या लकडी के फ्रेम से जोड़ दिया जाता है।

Silhouete Slide बनाने के लिये कांच के टुकड़ों पर छोटे कागज के कटआउट चिपका दिये जाते हैं। डार्क पृष्ठभूमि के कारण तथा पारदर्शी होने से स्पष्ट प्रतिबिम्ब दिखलाई देता है।

Cello Phone Slide स्लाईड्स के लिये कटआउट को जो सेलोफोन्स के होते हैं, उन्हें कांच पर चिपकाया जाता है तथा ऊपर से दूसरा कांच चिपका दिया जाता है।

Handmade Slide के निर्माण के लिये सिर्फ कांच का स्लाईड्स पर चित्र बना दिया जाता है। कई बार किसी तीखी सुई के ऊपर का दूसरा कांच चिपका दिया जाता है। इस तरह से सुन्दर हस्त निर्मित स्लाइड तैयार की जाती है। हालांकि कांच की स्लाइड हट सकती है। अत: इन्हें बहुत ही सावधानी पूर्वक उपयोग किया जाता है तथा रखरखाव में सावधानी बरतनी होती है। इन्हें पुट्ठे के खोखे में खड़ा रखा जाता है। इन्हें सुरक्षित रखने हेतु तापक्रम का ध्यान भी रखना होता हैं। 15 से 30^0 C तापक्रम पर रखा जाता है, ताकि ये नष्ट न हो और टिकाऊ रह सके। इन्हें विषयानुसार नामांकित क्रम में रखा जा सकता है।

25.3.2 स्लाइड के उपयोग (Use of Slides)

स्लाइड एक माउन्टेड पारदर्शी चित्र होता है, जिसे तीव्र प्रकाश में स्लाइड प्रोजेक्टर से प्रदर्शित किया जा सकता है।

Transparency जो कि $\frac{3}{4}$ इंच स्लाइड पर होती है। वह आकार मे दोगुनी फ्रेम के तुल्य होती है। 3 $\frac{1}{4}$ x 4 इंच स्लाइड को कांच के टुकडे में जड़ा जाता है, किन्तु 2x2 इंच स्लाइड को या तो कार्ड बोर्ड गत्ते पर या कांच के बीच माउण्ट कर सकते हैं। 2x2 इंच कार्डबोर्ड माउन्ट स्लाइड को सुरक्षित रखा जाता है, ताकि उसकी सतह पर कोई नुकसान न पहुंचे।31/4

x 4 इंच कांच की स्लाइड प्राय: भारी होती है, परन्तु अधिक सुरक्षित होती हैं। परन्तु यह आकार 2x2 से अधिक उपयुक्त होता है। बड़ी स्लाइड ग्राफ सारणी नक्शे आदि प्रदर्शित करने के लिये उपयुक्त होती है। इस पर इन्हें प्रभावी रुप से प्रस्तुत किया जा सकता है। शिक्षक स्वयं अपने हाथों से बड़े आकार की स्लाईड बना सकते हैं तथा विश्वासपूर्वक प्रयोग कर सकते हैं। इन स्लाइडों के निर्माण के दौरान भी अधिगम अनुभव होता है तथा अवधारणा को सारभूत एवं सारांश रुप में प्रस्तुत करने में सहायक होती है। इनके माध्यम से आवश्यक पृष्ठपोषण (Feed Back) पाया जाता है।

2x2 इंच की स्लाईड बहुत लोकप्रिय हुई है, क्योंकि इन्हें कम लागत पर बनाना आसान है तथा इनकी गुणवत्ता भी विश्वसनीय है। इनका व्यवहार में लाना तथा रखरखाव भी आसान होता है। जो हार्डवेयर इन स्लाइडों के प्रदर्शन के लिये प्रयुक्त होता है। वह फिल्म स्ट्रिप्स या स्लाइड प्रोजेक्टर के समान ही होता है। ये स्लाइडें विभिन्न विषयों में भारत तथा विदेशों के बाजार में उपलब्ध हो सकती हैं। स्लाइड प्रदर्शन मे जो सिद्धांत, चयन, दृष्टिकोण श्रेत्र तथा प्रस्तुतीकरण के सम्बन्ध में निहित है, वे फिल्म स्ट्रिप के सिद्धांत के समान ही हैं। दोनों ही समान रुप से प्रभावी हैं तथा सूक्ष्म अवलोकन रुचि वैज्ञानिक अवलोकन लचीलेपन को प्रोत्साहित करती है।

25.4 ओवर हेड प्रोजेक्टर (Over Head Projector)

25.4.1 आकृति एवं प्रक्रिया

ओवर हेड प्रोजेक्टर एक महत्वपूर्ण शैक्षिक साधन है। इसके द्वारा स्थिर प्रक्षेपण (चित्र, आकृति, लिखावट आदि) को दर्शाया जा सकता है। इसकी अन्य शैक्षिक माध्यमों से उपयोगिता एवं श्रेष्ठता अधिक है सामान्य रुप से इसे OHP के नाम से पुकारा जाता है। यह OHP ट्रांसपेरेंसी प्रोजेक्टर भी कहलाता है। ट्रांसपेरेन्सी को यह प्रकाश की तीव्र किरणों के साथ पर्दे पर प्रक्षेपित कर प्रदर्शित करता है। इसका पर्दा वक्ता के पीछे होता है। जो दर्शकों को स्पष्ट दिखलाई देता है पर्दे के सामने कक्षा या दर्शक होते हैं। वक्ता शिक्षक प्रदर्शित सामग्री पर टिप्पणी आदि कर सकता है। जो सामग्री प्रदर्शित करनी है, उसकी ट्रांसपेरेंसी पूर्व में तैयार कर ली जाती है। इस प्रदर्शन के माध्यम से शिक्षक सीढ़ी दर सीढ़ी अपनी बात प्रस्तुत करता जाता है। प्रोजेक्टर के प्रकाश को थोड़ा तीव्र दिखाने के लिये कमरे में थोड़ा सा अन्धेरा पर्याप्त होता है। इसका उपयोग भी आसान है। एक घुन्डी को घुमाकर प्रकाश के फोकस को ऊपर नीचे व्यवस्थित कर स्पष्ट किया जा सकता है। इसमें प्रयुक्त ट्रांसपेरेंसी, प्लास्टिक पारदर्शी झिल्ली, कार्बन, सेलोफेन आदि की बनी होती है तथा इन पर लिखी या चित्रित सामग्री को पर्दे पर आसानी से दर्शाया जा सकता है। इसकी ट्रांसपेरेंसी पर हाथ से, स्केच पेन से लिखा जाता है

या टाईप या कम्प्यूटर प्रिंट द्वारा भी सामग्री बन सकती है तथा पर्दे पर प्रदर्शित की जा सकती है।

25.4.2 ओवर हेड प्रोजेक्टर का उपयोग (Uses of Over Head Projector)

शिक्षक जब सामग्री प्रदर्शित कर रहा होता है उसका मुँह कक्षा की ओर होता है तथा कक्षा से सदैव आमने-सामने प्रत्यक्ष संवाद स्थापित होता है। OHP मार्कर पेन के द्वारा महत्वपूर्ण बिन्दु ट्रांसपेरेंसी पर लिखे जाते हैं और यदि आगे उस सामग्री का उपयोग न करना हो तो टिश्यू पेपर से इसे मिटाया भी जा सकता है। कक्षा प्रदर्शन के दौरान शिक्षक ट्रांसपेरेन्सी लिख सकता है, जिसे साथ-साथ प्रदर्शित किया जा सकता है। ऑडियो विजुअल विभाग (ET) कक्षा अपने स्वयं के ट्रांसपेरेन्सी लेख तैयार कर सकते हैं। जिन्हें दिन प्रतिदिन उपयोग हेतु प्रयुक्त किया जा सकता है। ट्रांसपेरेन्सी बाजार में भी उपलब्ध हो सकती है, परन्तु स्वनिर्मित ट्रांसपेरेन्सी उपयोगी होती है, क्योंकि यह विषय प्रकरण के अनुरुप होती है तथा शिक्षक उसे कई प्रकार से उपयोग कर सकता है तथा साथ ही शिक्षक द्वारा निर्मित ट्रांसपेरेन्सी की लागत भी बहुत कम होती है। OHP पर दूसरी सामग्री भी प्रदर्शित की जा सकती है, जो सेलोफेन गील बंडल में होती है। उसे प्रोजेक्टर में लगा दिया जाता है जो सामग्री प्रदर्शित की जाना है। उसे पूर्व में तैयार कर ट्रांसपेरेन्सी केन्द्र पर लगा दी जाती है। OHP को चॉकबोर्ड के पूरक के रुप में भी उपयोग (प्रयुक्त) किया जा सकता है। यदि कक्षा बडी हो या समय की कमी हो, तब शिक्षक इसके माध्यम से अपने विभिन्न पक्ष सहज रीति से प्रस्तुत कर सकता है तथा अपने प्रस्तुतीकरण को निश्चित क्रम में आगे बढ़ा सकता है। इसके द्वारा विभिन्न तकनीकों का उपयोग कर नक्शे डायग्राम आदि प्रदर्शित किए जा सकते हैं। कई बार ट्रासपेरेन्सी की अनुपलब्धता OHP के उपयोग में बाधक बन जाती है।

25.4.3 शिक्षा में OHP की भूमिका (Role of OHP in Education)

यदि किसी विषय या प्रकरण में गतियुक्त प्रदर्शन न दिया जाना हो, तो OHP किसी अवधारणा को समझाने में एक सशक्त प्रभावी माध्यम है। ट्रांसपेरेन्सी आसानी से उपयोग की जा सकती है तथा ये भारी भरकम भी नहीं होती है। ट्रांसपेरेन्सी का जो हिस्सा प्रदर्शित न किया जाना हो, उसे कागज से ढँका जा सकता है तथा चाहे तो क्रम से थोडा-थोडा करके दर्शाया जा सकता है। यह ज्यादा उपयुक्त होता है कि OHP पर्दे को कक्षा में बिल्कुल सामने न लगाया जाए, बल्कि इसे एक कोने में लगाया जाए। क्योंकि यदि पर्दा कक्षा में बिल्कुल सामने रहा तो बाधा उत्पन्न करेगा। यह बाधा स्वयं शिक्षक द्वारा या OHP लैंस द्वारा हो सकती है। यदि OHP उपयोग में सामग्री का चयन जिसे ट्रासपेरेन्सी द्वारा प्रदर्शित किया जाना है, उसकी पूर्व योजना बनाना, कक्षा तैयारी अभिप्रेरण आदि इसके प्रमुख घटक हैं OHP में विशेष सावधानी आवश्यक है कि उपयोग न होने की स्थिति में इसका बटन बन्द कर देना

चाहिए, वरना अधिक गर्म होने पर इसका बल्ब फ़्यूज हो सकता है जो कि बहुत महंगा होता है।

25.4.4 ट्रांसपेरेन्सी तैयार करना (Preparation of Transparencies)

OHP के विविध उपयोग के लिये ट्रोसपेरेन्सी विभिन्न तरीकों से निर्मित की जा सकती है। सर्वाधिक लोकप्रिय तरीका इसका हाथ से लिखा जाना है। आजकल कम्प्यूटर टाईप सामग्री को जेरॉक्स कराके भी ट्रांसपेरेन्सी तैयार की जाती है इस सम्बन्ध में कुछ सामान्य मार्गदर्शक तथ्य अपनाया जाना चाहिए। इनमें प्रमुख हैं लाइनों की दूरी, सुस्पष्ट लिखावट जिसे 30 फीट दूरी से पर्दे से स्पष्ट देखा जा सके। इसकी मोटाई 0.108 इंच 30 फीट दूरी के लिये तथा 0.36 इंच 10 फीट दूरी के लिये होना चाहिए। अक्षरों की ऊँचाई सामान्यत: 0.1 इंच होनी चाहिए जो सामान्यत: टाईप के अक्षरों की साईज होती है।

25.5 चलचित्र तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इनकी भूमिका (Motion Pictures & their Role in the Teaching Learning Process)

शिक्षा में गतिशील चित्रों ने जन संचार प्रणाली मे क्रांतिकारी भूमिका निभाई है। इसके परिणामस्वरुप शिक्षार्थियों के दृष्टिकोण में रुपान्तरण हुआ है। फिल्म का सबसे बड़ा लाभ यह हुआ है कि इसके द्वारा विषय वस्तु को स्पष्ट रुप में समझाया जा सकता है। ये चलचित्र विषय को अधिक रोचक बनाते हैं तथा शिक्षार्थी की तल्लीनता बढ़ाते हैं। ये चलचित्र यदि शिक्षार्थी के व्यवहार को परिवर्तित कर पाते हैं तो इनकी उपयोगिता एवं महत्व स्पष्ट हो जाता है। 8mm चित्रों के बजाए शिक्षा एवं प्रशिक्षण में 26mm गतिचित्रों का उपयोग लोकप्रिय है।

25.5.1 व लाभ

इन चलचित्रों को देखकर शिक्षार्थी अपने ज्ञान एवं अनुभव में वृद्धि करता है तथा विभिन्न परिस्थितियों को समझ पाता है। प्रेरणा के अलावा यह चित्र वास्तविक जीवन के सजीव-चित्र प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण स्वरुप कोशिका विभाजन प्रदर्शन में चलचित्र हमें कोशिका का विभाजन होते हुए वास्तविक रुप में दर्शाता है। विभिन्न चित्र उनकी गतिशीलता शिक्षार्थी का ध्यान आकर्षित कर लेते हैं अत: फिल्म के माध्यम से समझना आसान हो जाता है। ध्वनि एवं दृश्य के समन्वय एवं सम्पादन द्वारा वास्तविकता को निकट लाया जा सकता है। आधुनिक Slow Motion Picture तकनीक के द्वारा समय को नियंत्रित किया जा सकता है। तीव्रगति कैमरा व अन्य तकनीकों से विभिन्न प्रभाव उत्पन्न किए जा सकते हैं। इन चलचित्रों के माध्यम से वर्तमान एवं भूतकाल को कक्षा में प्रस्तुत किया जाता है। वे तथ्य एवं घटनाएं जो भूत एवं वर्तमान में दूरस्थ थी उन्हें चलचित्र द्वारा दर्शाया जा सकता है। ऐसी घटनाऐं जो अजीबोगरीब व अनोखी है जिनकी पुनरावृत्ति शताब्दियों तक नहीं होती। जैसे सूर्यग्रहण जैसी

घटनाओं का फिल्मांकन कर इन्हें सजीव रूप मे दर्शाया जा सकता है। टेलिस्कोपिक लैंस के द्वारा छोटी वस्तुओं का फिल्मांकन किया जा सकता है, जो खुली आँखों से दिखलाई नहीं देते। इसी तरह ऐमिनेशन लैंस कैमरे के द्वारा प्रक्रिया को सुना एवं देखा जा सकता है। तीव्र एवं मन्दगति से सीखने वाले शिक्षार्थियों के लिये सामान्य संवाद उपस्थित किया जा सकता हैं। दृश्य एवं ध्वनि के द्वारा सजीव एवं निर्जीव वस्तुओं में सम्बन्ध दर्शाया जा सकता है। चलचित्रों के माध्यम से सौन्दर्य बोध अनुभव बहुरंगों में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

25.5.2 चलचित्र का योगदान (Contribution of Motion Picture)

चलचित्र के द्वारा हम विशाल संसार का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। यह इन चित्रों का बहुमूल्य योगदान है। इनके द्वारा प्रभावीरुप से शिक्षार्थी से दृष्टिकोण मे परिवर्तन तथा कौशल शिक्षण महत्वपूर्ण तथ्य है। इस साधन के द्वारा व्यवहार परक शिक्षा उद्देश्यों को कम समय में पाया जा सकता है। इसमें शिक्षार्थी की रुचि भी महत्व रखती है। चलचित्र निम्नांकित लक्ष्यों की पूर्ति करता है -

(अ) **गतिविधियों को सक्रिय बनाना (Stimulate Activity)** - प्रदर्शन, समूह चर्चा, प्रयोग आदि की परिस्थितियों में ये अधिगम को सक्रिय बनाते है। विभिन्न दृश्य एवं शब्दों के द्वारा अधिगम प्रक्रिया को समृद्ध करते हैं।

(ब) **विचारोत्तेजना (Provoke Thinking)** - चलचित्र (Motion Picture) तर्क संगत क्रमानुगत अधिगम में सहायक होते हैं। इनमें घटनाओं प्रयोगों को सुगठित रुप प्रदर्शित किया जाता है, जो कि शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के लिये विचारोत्तेजक होता है। इनसे जटिल समस्याओं का मार्ग खोज पाते है।

(स) **पुनर्बलन प्रदान करना (Provide Reinforcement)** - पाठ्य पुस्तक में दी गई सामग्री के लिये चलचित्र (Motion Picture) पुनर्वलन प्रदान करते हैं तथा ज्ञान में वृद्धि करते है। चित्रों के साथ संलग्न, सहवश्त्तान्त, कॉमेन्ट्री शिक्षार्थी के व्यवहार रुपान्तरण में बहुत प्रभावी होता है। शिक्षण की लक्ष्य पूर्ति में यह प्रभावी होता है। फिल्म प्रदर्शन के पूर्व शिक्षक सुसंगत प्रश्न पूछकर अपने उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है।

(द) **मन्द गति एवं तीव्र गति अधिगमकर्ता के लिये उपयुक्त (Suits to slow learner & Rapid learner)** - मंदगति से सीखने वाले और तीव्रगति से सीखने वाले, शिक्षार्थियों द्वारा एक साथ देखे जाते हैं। यह देखा गया है कि अन्य माध्यमों के बजाय इन फिल्मों से मन्द गति से सीखने वाले शिक्षार्थी जल्दी सीख पाते हैं। शिक्षार्थी जब फिल्म के द्वारा अपने परिवेश से जुड़े तथ्यों को देखता है, तब यह उन पर बहुत प्रभावी होता है तथा वे उन तथ्यों को भली प्रकार समझ पाते हैं।

(इ) **चलचित्र बनाम मौखिक कथ्य (Accessibility of Motion Pictures)** - जैसा कहा जाता है कि ताजमहल का एक चित्र हजारों शब्दों के तुल्य हैं, इसी तरह शब्दों के साथ फिल्म प्रदर्शन एक लम्बी चौडी व्याख्या के बजाय बहुतही प्रभावी माध्यम है। संचार, कृति, प्रयोग तथा सजीव घटनाक्रम को ये कक्षा में प्रस्तुत कर देते हैं। इसमें बीती घटना सजीव बन जाती है। चित्रात्मक

तथ्य के द्वारा शिक्षार्थी आत्मानुभूति आत्म निष्ठा का अनुभव कर पाते हैं। कई बार शिक्षक शिक्षार्थी को समझ कर स्तर को समझे बिना इसके प्रदर्शन से विषय वस्तु को अनावश्यक रुप से बोझिल बना देते हैं। इस प्रवृत्ति से शिक्षक को बचाना चाहिए।

25.5.3 चलचित्रों की उपलब्धता (Accessibility of Motion Picture)

भारत में सभी राज्य शिक्षा विभागों एव विश्वविद्यालयों में व्यावहारिक रुप से शैक्षिक तकनीक प्रकोष्ठ होता है, जिनकी अपनी शैक्षिक फिल्म लायब्रेरी होती है। ये फिल्में अन्य शिक्षण संस्थाओं द्वारा उपयोग हेतु उधार ली जा सकती है। यदि उनके पास 26mm फिल्म प्रोजेक्टर होता है। Central Institute of Education Technology- NCERT New Delhi केन्द्रीय फिल्म लायब्रेरी है, जिसमें 8000 शीर्षकों में शैक्षिक फिल्में उपलब्ध है। ये फिल्में प्राथमिक विद्यालय स्तर से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक की विषय वस्तु को समाहित किये हुए है। कोई भी शिक्षण संस्था जिसके पास 26mm फिल्म प्रोजेक्टर उपलब्ध है। इस सेंट्रल फिल्म लायब्रेरी का सदस्य बन सकती है तथा फिल्म उपयोग हेतु प्राप्त की जा सकती है। इसकी सदस्यता पूर्णत: निशुल्क है। यह केन्द्रिय फिल्म लायब्रेरी दक्षिण-पूर्व एशिया की संभवत: सबसे बडी फिल्म लायब्रेरियों में से एक हैं। अब यद्यपि ETV का चलन हो चुका है। अत: 26mm फिल्मों का प्रयोग महंगा होने से कम हो गया है तथा ये प्रोजेक्टर भी समय के साथ चलन से निकल गए है।

25.6 सारांश (Summary)

शिक्षा प्रक्रिया में बहुत सी अवधारणाओं में अमूर्त विचार निहित होते है जिनको समझाने के लिए प्रक्षेपित सामग्रियों का उपयोग किया जाता है।

सृजनात्मक उत्प्रेरणा के लिए भी स्थिर एवं गतिशील प्रक्षेषण सामग्री का उपयोग किया जाता है। ये सामग्रियाँ कई प्रकार की होती है, जैसे, फिल्म स्ट्रिप, ओवर हेड प्रोजेक्टर, चलचित्र इत्यादि।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. फिल्म स्ट्रिप का शिक्षा में क्या उपयोग है? तथा इसकी सीमाओं का उल्लेख कीजिये।
   What is the use of film strip in education and write its limitations.
2. स्लाइड का शैक्षिक महत्व क्यों है? उल्लेख कीजिये।
   Why is the Educational Importance of slide? Explain it.
3. ओवरहेड प्रोजेक्टर के प्रमुख घटक कौन-कौन से है?
   What are the main components of Overhead Projector?
4. गतिशील चलचित्र के लाभ एवं सीमाओं को स्पष्ट कीजिये।
   Explain the advantages and Informations of motion pictures.

25.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

ब्राउन ए.एल. एण्ड एम.एम. स्कॉट: मेमोरी फॉर पिक्चर्स इन प्री स्कूल चिल्ड्रन: जरनल ऑफ मेन्टल चाइल्ड सायकोलोजी वाल्यूम II-1971

डेल एडगर: ऑडियो विजुअल एड्स इन टीचिंग: द ड्राइडन प्रेस, न्यूयार्क

डेन्ट इ.सी. : ऑडियों विजुअल हेण्ड बुक, सोसाइटी फॉर विजुअल एज्यूकेशन, शिकागो

डिफोर जॉन डब्ल्यू एण्ड मेरी फोली हार्केमर: एज्यूकेटर्स गाइड टू फ्री फिल्म स्ट्रिप्स एज्यूकेटर्स प्रोग्रेस सर्जिस, रेन्डोल्फविस

इरिक्सन, कार्लटन डब्ल्यू, एच. एण्ड डेविड सी कर्ल: फन्डामेंटल्स ऑफ टीचिंग विथ ऑडियों विजुअल टेक्नोलॉजी मेकमिलन, न्यूयार्क

मूर डेविड एम. एण्ड एडवार्ड बी. सासे: इफेक्ट ऑफ साइज एण्ड टाईप ऑफ स्टिल प्रोजेक्टड पिक्चर्स आन इमिडिएट रिकॉल ऑफ कन्टैंट, ऑडियों विजुअल कम्युनिकेशन रिव्यु वाल्यूम 19,No.4, 1971

समर डब्ल्यू एल. : विजुअल मेथडस इन एज्यूकेशन ऑक्सफोर्ड बेसिल ब्लेक बेल

स्यीवार्ड डोगल्स: ऑडियों विजुअल इंस्ट्रक्शन वाल्यूमम 15, 1970

विलियमस केथेरिन: लर्निग फार एज्यूकेशनल कम्युनिकेशन एण्ड टेक्नोलॉजी, वाशिंगटन डी.सी. **बिच डब्ल्यू.ए. एण्ड ब्यूलर सी.एम.** : ऑडियो विजुअल मटीरिअल्स देअर नेचर एण्ड यूज हार्पर इन्सटीट्यूट पब्लिकेशन न्यूयार्क

इकाई-26

शिक्षा में आकाशवाणी प्रसारण एवं श्रव्य टेप का महत्व तथा रेडियो पाठों का निर्माण Importance of Audio Tap and Radio Broadcast in Education and Preparation of Radio Lesson

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

26.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

26.1 प्रस्तावना
(Introduction)

26.2 श्रव्य टेप एवं आकाशवाणी प्रसारण का अर्थ एवं प्रकृति
(Meaning and Nature of Audio Tap and Radio Broad Cast)

26.3 श्रव्य टेप एवं आकाशवाणी प्रसारण का महत्व
(Importance of Audio Tap and Radio Broad Cast)

26.4 श्रव्य टेप एवं आकाशवाणी प्रसारण की अच्छाईयाँ
(Merits of Audio Tap and Radio Broad Cast)

26.4.1 श्रव्य टेप के विशिष्ट लक्षण
(Specific Characteristics of Audio Tap)

26.4.2 आकाशवाणी प्रसारण के विशेष लाभ
(Advantages of Radio Broadcast)

26.5 श्रव्य टेप एवं आकाशवाणी प्रसारण की सीमाएं
(Limitations of Audio Tap & Radio Broad Cast)

26.5.1 श्रव्य टेप की कमियां
(Limitations of Audio Tap)

26.5.2 आकाशवाणी प्रसारण की कमियां
(Limitations of Radio Broad Cast)

26.6 शैक्षिक आकाशवाणी प्रसारण की कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ
(Major Achivements of Education of Radio Broadcast)

26.7 श्रव्य / आकाशवाणी कार्यक्रमों की सीमाओं के समाधान के तरीके एवं साधन

(Methods & Equipments of Solution of limitations of Audio/Radio Programme)
26.8 आकाशवाणी / श्रव्य कार्यक्रमों की पाण्डुलिपि का निर्माण
(Preparation of Radio / Audio Lesson Script)
26.9 आकाशवाणी / श्रव्य पाठों की वर्तमान प्रक्रिया
(Current Procedure Preparation of Radio / Audio Programme)
26.10 क्या किया जाना चाहिए?
(what to do?)
28.11 सारांश
(Summary)
26.12 संदर्भ ग्रंथ सूची
(Bibliography)

26.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई को पूर्ण करने के बाद विद्यार्थी -

- श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण का अर्थ एवं प्रकृति जान सकेंगे।
- शिक्षा में सुधार की दृष्टि से ऐसी सामग्री का महत्व समझ सकेंगे।
- ऐसी सामग्री की अच्छाइयाँ एवं कमियों को पहचान सकेंगे।
- अच्छाइयों का उपयोग तथा कमियों का निराकरण करने के कुछ तरीके अपना सकेंगे।
- टेप / रेडियो के लिये पाण्डुलिपि लेखन की तकनीकियों से अवगत हो सकेंगे।
- ऐसे सोफ्टवेयर के विकास के निर्देशक सिद्धांतों के अनुरुप कुछ पाण्डुलिपियों का निर्माण कर सकेंगे।
- आकाशवाणी पाठों का प्रभावी उपयोग जान सकेंगे।

26.1 प्रस्तावना
(Introduction)

इस इकाई में हमने शिक्षा में श्रव्य एवं आकाशवाणी कार्यक्रमों की भूमिका, उनका महत्व एवं सीमाएं, समझाने का प्रयास किया है तथा ऐसे कार्यक्रमों के लिए सोफ्टवेयर के विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत आने वाले तर्क संगत बिन्दु तथा तकनीकियों की व्याख्या की है।

26.2 श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण का अर्थ एवं प्रकृति (Meaning and Nature of Audio Tap and Radio Broad Cast)

आप भली-भाँति जानते हैं कि शैक्षिक प्रौद्योगिकी के अन्तर्गत हम दो घटकों के सम्पर्क में आते हैं, (i) हार्डवेयर एवं (ii) सोफ्टवेयर।

रेडियो सेट्स एवं टेप रिकार्ड्स तथा रेडियो, टेप रिकार्डर तथा प्लेअर सहित टू-इन-वन हार्डवेयर के अन्तर्गत आते हैं तथा बाजार में आसानी से उपलब्ध है। रेडियो, ट्रान्जिस्टर, टेप रिकार्डर तथा टू-इन-वन आजकल सस्ते मिलने लगे हैं। विभिन्न लक्ष्य समूहों के लिए आकाशवाणी कार्यक्रमों का निर्माण एवं प्रसारण 'ऑल इन्डिया रेडियो' द्वारा किया जाता हैं तथा श्रव्य टेप एवं केसेट का निर्माण एवं वितरण विभिन्न व्यापारिक एवं व्यावसायिक अभिकरणों द्वारा किया जाता है। ये कार्यक्रम एवं सामग्री सॉफ्टवेयर कहलाते हैं तथा शिक्षा के क्षेत्र ऐसे सॉफ्टवेयर के विकास की अधिक महत्ता एवं सार्थकता है। ऐसे कार्यक्रमों का निर्माण लक्ष्य समूह की आवश्यकता एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के आधार पर किया जाना चाहिए। श्रव्य टेप वैयक्तिक अथवा छोटे समूहों के लिए, जबकि आकाशवाणी प्रसारण जन-संचार के माध्यम के रुप में विशाल जन समूहों के लिए उपयोगी है।

26.3 श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण का महत्व (Merits of Audio Tap and Radio Broad Cast)

आपने अनुभव किया होगा कि रेडियो एक सस्ता एवं प्रभावशाली माध्यम है। इसका लंबे समय से जन-संचार के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आकाशवाणी प्रसारण विभिन्न श्रोता समूहों को सूचनाएँ देता हैं, मनोरंजन करता है, निर्देश देता है तथा प्रेरित करता है। ये कार्यक्रम मात्र ज्ञान व समझ ही प्रदान नहीं करते, वरन् मूल्य एवं योग्यताएँ भी उद्भासित करते हैं। इनसे जिज्ञासा, अभिवृत्ति एवं विवेचन शक्ति का विकास भी होता है। आकाशवाणी कार्यक्रम एक साथ बहुत बड़े क्षेत्र को लाभान्वित कर सकते हैं। इन सबसे परे आकाशवाणी कार्यक्रमों का निर्माण अन्य कार्यक्रमों की तुलना में कम खर्चीला तथा अत्यन्त सुविधाजनक होता है।

आकाशवाणी कार्यक्रमों का निर्माण एवं प्रसारण केन्द्रित तथा विशाल जन समूहों की दृष्टि से उपयोगी है। श्रव्य टेप का अतिरिक्त लाभ यह है कि इसका निर्माण स्थानीय अथवा संस्थागत भी हो सकता है तथा सीखने वालों के विशेष समूह की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी निर्मित किया जा सकता है। इसके अलावा श्रव्य टेप का उपयोग पठन-पाठन सत्रों में अतिरिक्त शिक्षण, सहगामी शिक्षण तथा विशिष्ट शिक्षण बिन्दुओं एवं घटनाओं एवं वृत्तान्त को समझाने की दृष्टि से भी सुविधाजनक है। श्रव्य टेप की निर्माण लागत अत्यन्त कम एवं निर्माण प्रक्रिया सरल होने के साथ-साथ इसे विशिष्ट उद्देश्य परक भी बनाया जा सकता है।

इस प्रकार श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण दोनों का शिक्षा के विभिन्न स्तरों (जैसे पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक, माध्यमिक, अनौपचारिक शिक्षा और उच्च शिक्षा में भी) पर विशेष महत्व है। भाषा संगीत जैसे विशेष विषयों के सीखने में, जिनमें कि अभ्यास एवं पुनर्बलन की आवश्यकता है। रेडियो तथा ऑडियो कार्यक्रम अत्यन्त उपयोगी एवं प्रासंगिक साबित हुए हैं।

26.4 श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण की अच्छाईयाँ (Merits of Audio Tap and Radio Broad Cast)

उक्त विचार-विमर्श के पाश्चात् निम्न प्रकार उल्लेख कर सकते हैं

26.4.1 श्रव्य टेप के विशिष्ट लक्षण (Specific Characterstics of Audio Tap)

1. अन्य इलेक्ट्रॉनिक साधनों की अपेक्षा टेप रिकार्डर कम खर्चीला है।
2. कार्यक्रमों का निर्माण इतना अधिक तकनीकी तथा कठिन नहीं है।
3. टेप कार्यक्रम का निर्माण लागत अन्य कार्यक्रमों की तुलना में कम है।
4. टेप तथा श्रव्य कार्यक्रम शिक्षार्थियों के लक्षित समूह की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति करने में सक्षम है।
5. टेप रिकार्डर का उपयोग विद्युत की अनुपस्थिति में बेटरी सेट की सहायता से किया जा सकता है।
6. टेप रिकार्डर पर कार्यक्रम के प्रसारण को इच्छानुसार नियंत्रित किया जा सकता हैं। इसके कार्यक्रमों का उपयोग ड्रिलिंग (अभ्यास) के लिये तथा विशिष्ट शिक्षण बिन्दुओं एवं स्थितियों को समझाने के लिये किया जा सकता है।
7. श्रव्य कार्यक्रमों का निर्माण एवं उपयोग विकेन्द्रित है। इसका निर्माण एवं उपयोग सुविधापूर्वक हो सकता है।
8. टेप रिकार्डर ज्यादा भारी नहीं होने से आसानी से हाथ में उठाया जा सकता है तथा विभिन्न स्थानों पर आसानी से सुनाया जा सकता है।
9. श्रव्य टेप आजकल विशेषज्ञों एवं वाणिज्यक संस्थाओं द्वारा तैयार किए जाते हैं। अत: व्यावसायिक तौर पर गुणात्मकता में वृद्धि हेतु प्रतिस्पर्धा की संभावना रहती है।

26.4.2 आकाशवाणी प्रसारण के विशेष लाभ (Advantages of Radio Broad Cast)

1. रेडियो सेट्स आजकल कम खर्चीले हैं।
2. बिजली उपलब्ध नहीं होने वाले स्थानों पर भी इनका उपयोग बिना किसी आन्तरिक संरचना (Infrastructure) के किया जा सकता है।
3. आकाशवाणी कार्यक्रमों का निर्माण केन्द्रीय स्तर पर किया जाता है। अत: व्यावसायिक तौर पर इनकी गुणवत्ता में सुधार किया जाना चाहिए।

4. आकाशवाणी कार्यक्रमों की निर्माण लागत भी अन्य इलेक्ट्रॉनिक साधनों / कार्यक्रमों की तुलना में कम है।
5. आकाशवाणी कार्यक्रमों के निर्माण एवं प्रसारण हेतु आन्तरिक संरचना पूर्व में स्थापित है। अत: इसके अनुभवों एवं निवेशों की पर्याप्त पृष्ठभूमि पूर्व में उपलब्ध है।
6. आकाशवाणी कार्यक्रमों की निर्माण प्रक्रिया तुलानात्मक रुप से सरल है, अन्य कार्यक्रमों की भाँति जटिल नहीं है।
7. श्रोता अपनी दिनचर्या के अन्य कार्यो में व्यस्त रहते हु ए भी आकाशवाणी कार्यक्रमों को आसानी से सुन सकते हैं।
8. रेडियो सेट्स एवं ट्रान्जिस्टर्स भारी नहीं होते तथा सरलतापूर्वक संचालित किए जाने योग्य तथा एक स्थान से दूसरे स्थान पर सरलता पूर्वक ले जाकर काम में लेने योग्य होते हैं।
9. अब श्रेत्रीय तथा स्थानीय आकाशवाणी केन्द्रों की स्थापना हो जाने से स्थानीय एवं श्रेत्रीय आवश्यकताओं पर आधारित कार्यक्रम बनाना तथा प्रसारित करना संभव हो गया है।
10. आकाशवाणी कार्यक्रमों को उपयुक्त ध्वनि-प्रभावों के प्रयोग से वास्तविकता के निकट तथा मनोरंजक तो बनाया ही जा सकता है, साथ ही श्रोताओं को कल्पना लोक मे विचरण करने के लिये भी उत्पेरित किया जा सकता है।

26.5 आकाशवाणी प्रसारण एवं श्रव्य टेप की कमियां एवं सीमाएं (Drawbacks and Limitations of Audio Tap and Radio Broad Cast)

उक्त समस्त अच्छाईयों के बावजूद आप पाएंगे कि श्रव्य तथा आकाशवाणी कार्यक्रमों की निम्न कमियाँ एवं सीमाएं हैं:

26.5.1 श्रव्य टेप की कमियाँ (Limitations of Audio Tap)

(i) श्रव्य टेप कार्यक्रमों में मात्र ध्वनि ही प्रमुख होता है। इसमें दृश्य प्रभाव नहीं दिखाया जा सकता। अत: निरन्तर सुनते रहने से व्यक्ति ऊब जाता है।

(ii) श्रव्य टेप का निर्माण स्थानीय तथा संस्थागत भी हो सकता है। अत: इसमें व्यावसायिक गुणवत्ता का अभाव होता है।

(iii) श्रव्य कार्यक्रमों में संवाद एक तरफा होता है। इसमें शिक्षक एवं शिष्य के मध्य अन्तःक्रिया तथा आपसी सम्पर्क का अभाव रहता है।

26.5.2 आकाशवाणी प्रसारण की कमियाँ (Limitations of Radio Broadcast)

(i) आकाशवाणी प्रसारण में भी ध्वनि माध्यम की ही प्रमुखता होती है, जिसका लाभ उठाने के लिये लम्बे समय तक सुनने की आदत आवश्यक है। अधिकांश शिक्षार्थियों के लिए लम्बी अवधि तक निरन्तर सुनते रहना एक चुनौतीपूर्ण तथा थोपा हुआ कार्य है।

(ii) आकाशवाणी प्रसारण अस्थायी, तथा तत्काल लुप्त होने वाला होता है। इसके ऊपर श्रोता का कोई नियंत्रण नहीं होता है।

(iii) आकाशवाणी प्रसारण में आपसी अन्तःक्रिया तथा आपसी सम्बन्धों के लिए प्रावधान नहीं होता, क्योंकि यह एक ध्रुवीय (Unipolar) प्रक्रिया होती है।

26.6 शैक्षिक आकाशवाणी प्रसारणों एवं श्रव्य कार्यक्रमों की कुछ महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ (Major Achivements Of Education Radio Broadcast and Audio Tap)

श्रव्य एवं आकाशवाणी की सीमाओं की तुलना में उनकी क्षमताएं और लाभ संख्या में अत्यधिक है। परिणामत: शैक्षिक आकाशवाणी कार्यक्रम सम्पूर्ण विश्व के विकासशील और विकसित राष्ट्रों में काफी लोकप्रियता से उपयोग में लाए गए हैं। आकाशवाणी कार्यक्रम औपचारिक, अनौपचारिक तथा शिक्षा की अन्य धाराओं के लिए अत्यधिक प्रभावशाली रहे हैं। बिलबर स्कम एवं अन्य के द्वारा किए गए अनुसंधान "दि न्यू मीडिया: मेमो टू एज्यूकेशनल प्लानर्स" में शिक्षा और प्रशिक्षण के क्षेत्र में विभिन्न विमर्श किया गया है। विशेष तौर से अल्जीरिया में आजादी के बाद आपातकाल में अध्यापकों की कमी को पूरा करने के लिए सेवापूर्व व सेवारत प्रशिक्षणों में रेडियो का उल्लेखनीय योगदान रहा है। आस्ट्रेलिया में दूर-दराज तथा विद्यालयों से सैकड़ों किलोमीटर दूर तक फैली हुए आबादी में स्कूल शिक्षा उपलब्ध कराने तथा न्यूजीलैण्ड में दूरस्थ बसे परिवारों को शैक्षिक सुविधाएँ उपलब्ध कराने में आकाशवाणी का योगदान रहा है।

यूनेस्को के ध्वनि प्रसारण विशेषज्ञ गुडमेन ने अपने शोधपत्र (एज्यूकेशनल रेडियो: सम नोट्स ऑन पोटेंशियल एण्ड यूटीलाइजेशन" में तीन देशों में आकाशवाणी प्रसारणों की सफलता की कहानियों का उल्लेख किया है।

तस्मानिया की आस्ट्रेलिया स्टेट मे व्यापक तैयारियों तथा सहकारिता के आधार पर हस्तलेखन की नई विधा प्रारम्भ की गई। न्यू जीनिया में पपावा में 700 भाषायी समूहों द्वारा विभिन्न डिजाइन युक्त मुद्रित सामग्री तथा अन्य तकनीक का उपयोग करते हुए अंग्रेजी को संवाद की सामान्य भाषा के रुप में स्वीकार किया गया। इन्डोनेशिया में सघन पायलेट प्रोजेक्ट के माध्यम से सेवारत शिक्षकों का शिक्षण रेडियो द्वारा किया गया। केरल में आकाशवाणी कार्यक्रम द्वारा शिक्षकों के अंग्रेजी के ज्ञान में अभिवृद्धि की गई तथा भारत के छ: राज्यों आन्ध प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा राजस्थान में आकाशवाणी कार्यक्रम के नियोजन, निर्माण एवं प्रसारण द्वारा विज्ञान शिक्षकों की दक्षता में वृद्धि की गई। हाल ही मे दूरस्थ शिक्षा के विद्यालयी तथा विश्वविद्यालयी स्तर पर भी शिक्षार्थियों के लिए आकाशवाणी पाठों का प्रसारण प्रारम्भ किया गया है।

26.7 श्रव्य / कार्यक्रमों की सीमाओं के समाधान की विधियाँ एवं साधन (Methods & Equipments for solution of Limitation of Audio/Radio Programme (Lesson)

श्रव्य आकाशवाणी कार्यक्रमों की सीमाओं के समाधान की दृष्टि से निम्न कदम उठाए जा सकते हैं -

(i) संचार का प्रमुख माध्यम ध्वनि है। इसे मुद्रित सामग्री, प्रदर्शन, पोस्टर्स तथा स्लाइड के साथ प्रयोग किया जाना चाहिए।

(ii) निरन्तर सुनना मनुष्य के लिये उबाऊ है। अत: आकर्षक, मनोरंजक एवं उपयुक्त तकनीक काम में ली जानी चाहिए, ताकि कार्यक्रम प्रभावोत्पादक बन सके।

(iii) श्रव्य / रेडियो कार्यक्रमों को रुचिकर बनाने के लिये संगीत एवं ध्वनि प्रभावों का काल्पनिक उपयोग किया जाना चाहिए।

(iv) पाण्डुलिपि श्रव्य / आकाशवाणी के शैक्षिक कार्यक्रमों की रीड की हड्डी होती है। अत: इन्हें शिक्षार्थी के शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक रुचियों एवं आवश्यकताओं के अनुरुप सावधानीपूर्वक तैयार किया जाना चाहिए।

(v) श्रव्य / आकाशवाणी के शैक्षिक कार्यक्रमों की निर्माण तकनीक में नवीनता, शंका, जिज्ञासा, संगीत तथा नम्रता का समावेश किया जाना चाहिए।

(vi) क्योंकि श्रव्य / आकाशवाणी कार्यक्रम एक तरफा होते हैं। अत: इनमें, पूर्व प्रसारण, प्रसारण तथा प्रसारणोपरान्त गतिविधियों का समावेश कक्षा-कक्ष में किया जाना चाहिए।

26.8 श्रव्य / आकाशवाणी कार्यक्रमों की पाण्डुलिपि का निर्माण (Preparation of Audio / Radio Programme [Lesson])

आप श्रव्य / आकाशवाणी कार्यक्रमों की पाण्डुलिपि निर्माण के निर्देशक बिन्दुओं को जानने के इच्छुक होंगे। पाण्डुलिपि श्रव्य / आकाशवाणी कार्यक्रमों के लिए आवश्यक संरचनात्मक ढाँचा होता है। अत: अच्छी पाण्डुलिपि के निर्माण के लिए पर्याप्त सावधानी बरती जानी चाहिए। उक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए निम्न निर्देशों के अनुरुप पाण्डुलिपि का निर्माण किया जाना चाहिए :-

26.8.1 आकाशवाणी / श्रव्य पाण्डुलिपि लेखन अर्थात् श्रवण के लिए लेखन

1. पाण्डुलिपि आकाशवाणी कार्यक्रम का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है। जब तक यह श्रेष्ठ नहीं होगी, तब तक कार्यक्रम निर्माण के सभी पहलू व्यर्थ हैं।
2. सफलता प्राप्त करने की दृष्टि से पाण्डुलिपि शिक्षार्थी की भाषा में लिखी जानी चाहिए।
3. सही भाषा का अर्थ है, वह भाषा जिसे शिक्षार्थी / श्रोता आसानी से समझ सके। अत: शिक्षार्थी की रुचियों एवं मानसिक एवं शैक्षिक स्तर ध्यान में रखा जाना चाहिए।

4. इसी प्रकार पाण्डुलिपि लेखक को पाठ की संरचना, ढाँचा, भाषा एवं शब्दकोष आदि का विचारपूर्वक उपयोग करना चाहिए।
5. पाण्डुलिपि लेखक द्वारा लिखे गए शब्दों को शिक्षार्थी पढ़ता नहीं, सुनता है। अत: शब्द कानों को आकृष्ट करने वाले होने चाहिए, न कि आँखों को।
6. आँखों के लिए लिखना पारम्परिक तरीकों पर आधारित है, जैसे विराम चिन्ह आदि, पैराग्राफ, टाईप का आकार, कॉलम्स शीर्षक पंक्तियाँ आदि। पाठक अपनी गति से पढ़ता है तथा कठिन बिन्दु की जाँच के लिए दुबारा भी पढ सकता है तथा उसके पढ़ने की प्रक्रिया को अपनी सुविधानुसार स्थगित कर सकता है।
7. कानों के लिए लेखन पूर्णत: भिन्न प्रकार का है। श्रोता को एक साथ बहुत अधिक तथ्य नहीं दिए जा सकते और उसे बहुत अधिक संख्याएँ भी नहीं दी जा सकती। उसकी रुचियों को ध्यान मे रखकर पाण्डुलिपि को मनोरंजक ढंग से प्रदर्शित करना चाहिए। भाषा पूर्णत: अनौपचारिक एवं सरल होनी चाहिए। पाण्डुलिपि साधारण बोल-चाल की भाषा में लिखी जानी चाहिए।
8. पाण्डुलिपि लेखन बुद्धिमत्तापूर्ण तथा तार्किक बिन्दुओं पर आधारित होना चाहिए। पाठ का विकास शनै: शनै: होना चाहिए। आकाशवाणी के पाण्डुलिपि लेखक को पुनरावृत्ति, विस्तार तथा पुनर्बलन का उपयोग करना चाहिए, ताकि श्रोता शारीरिक एंव मानसिक रुप से कार्यक्रम से जुड़ा रहे।
9. श्रोताओं को जोडे रखने के लिए आकाशवाणी आलेखक को श्रोता / शिक्षार्थी का मित्र बनना होगा। उसे श्रोता से बात करना होगा, स्वयं से नहीं। उसे पाण्डुलिपि से निकलने वाली ध्वनियों की लय को मस्तिष्क में सुनना होगा। उसे श्रोता को देखना होगा।

   उसे पाण्डुलिपि को जोर से पढकर अपने आपसे निम्न प्रश्न पूछने होंगे:

- मैं ऐसी ध्वनि क्यों करुँ?
- मेरे कहने का क्या अर्थ है?
- क्या यह पूर्णत: आकृष्ट करने वाला है?

26.9 श्रव्य / आकाशवाणी पाठों की वर्तमान प्रक्रिया (Current Procedure for Preparation of Audio/Radio Lesson)

आल इण्डिया रेडियो अथवा 'आकाशवाणी' पर आकाशवाणी के शैक्षिक कार्यक्रमों के निर्माण का दायित्व है। परन्तु उसे पाण्डुलिपि लेखन के लिए बाहर के सन्दर्भ व्यक्तियों पर निर्भर रहना पडता है। यद्यपि शैक्षिक प्रसारण के प्रोड्यूसर द्वारा पाण्डुलिपि का औपचारिक सम्पादन किया जाता है, वरन् वह बारीकी से नहीं होता, वरन् ऊपरी तौर पर सरसरी निगाह से होता है।

दिल्ली (1980) में विद्यालयी प्रसारणों के व्यक्तिगत अध्ययन (Case Study) में पाया गया कि "कुछ कठिन शब्दों के स्थान पर सरल शब्द रखकर तथा बोली जाने वाली सामग्री में कुछ जोड़कर अथवा घटा कर सम्पादन की प्रक्रिया पूरी की जाती है। सामान्यतया बिना विषय विशेषज्ञ से परामर्श किए विषय सामग्री एवं तथ्यों की प्रामाणिकता को स्वीकार कर

लिया जाता है। इस प्रवृत्ति के कारण अच्छी गुणवत्ता प्राप्त किए बगैर विषय सामग्री सम्पादन स्तर से बिना प्रमाणिकता प्राप्त किए प्रसारण के लिए आगे बढ़ जाती है। यह प्रवृत्ति नई दिल्ली के सभी रेडियो स्टेशनों पर प्रचुर मात्रा में पाई जाती है। अत: आकाशवाणी पाठों में इस प्रकार की गलतियों की संभावनाएँ कम नहीं है।

26.10 आकाशवाणी पाठ की पाण्डुलिपि का निर्माण करते समय हमें क्या करना चाहिए?

हमें यह प्रयास करना चाहिए कि पाण्डुलिपि -

- विषय वस्तु एवं भाषा सम्बन्धी त्रुटियों से मुक्त रहे।
- बोल चाल की सरल एवं आकर्षक भाषा एवं शैली में लिखी जाए।
- विषय विशेषज्ञों द्वारा नियमानुसार सम्पादित होना चाहिए।
- लक्षित शिक्षार्थी समूह की आवश्यकता एवं रुचियों पर आधारित होना चाहिए।
- लक्षित श्रोता समूह के उपयुक्त प्रारुप में प्रस्तुत की जानी चाहिए।
- सृजनात्मक क्षमता वाले तथा भाषा प्रवाह वाले, विभिन्न प्रकार की संरचनाओं के ज्ञाता एवं कौशल वाले व्यक्तियों द्वारा लिखी जानी चाहिए।
- प्रसारण की प्रौद्योगिकी एवं तकनीक ज्ञान वाले व्यक्तियों द्वारा लिखी जानी चाहिए।
- आकाशवाणी पाठ लेखन में प्रशिक्षित एवं अनुभवी व्यक्ति द्वारा लिखी जानी चाहिए।

26.11 सारांश (Summary)

यह मोड्यूल इसके पाठकों को श्रव्य/आकाशवाणी कार्यक्रमों-का अर्थ, महत्व, लाभ एवं सीमाओं का ज्ञान कराने के साथ-साथ पाण्डुलिपि लेखन के शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का ज्ञान भी कराता है।

आकाशवाणी एक प्रभावशाली एवं कम खर्चीला माध्यम है। यह श्रोताओं को सूचित करता है, निर्देश देता है, मनोरंजन करता है और प्रेरित करता है। यह बड़े क्षेत्र के लिए उपयोगी है तथा बिजली न आने की स्थिति में भी सुना जा सकता है। लेकिन यह केन्द्रित, ऊबा देने वाला तथा एक तरफा है। इसमें शिक्षकों एवं शिक्षार्थियों के बीच आपसी अन्तःक्रिया एवं परस्पर सम्बन्धों का अभाव रहता है। श्रव्य टेप को शिक्षार्थी समूह की रुचियों एवं आवश्यकताओं के अनुरुप कुछ सीमा तक विकेन्द्रीकृत किया जा सकता है। अत: यह लक्षित श्रोताओं के लिए ज्यादा उपयोगी एवं उपयुक्त है। श्रव्य एवं आकाशवाणी कार्यक्रम मुख्यत: ध्वनि पर आधारित तथा एक तरफा होते हैं। इन कमियों को पूरा करने के लिए कक्षा में सहायक सामग्री (मुद्रित पुस्तकें, तस्वीरें, पोस्टर स्लाइड आदि) तथा पूर्व क्रियाओं का प्रावधान रखा जाता है।

पाण्डुलिपि लेखन के कार्य को ध्यानपूर्वक क्रिया जाना चाहिए। इसे मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक सिद्धांतों पर तथा श्रोता समूहों की आवश्यकताओं के अनुरुप होना चाहिए। पाण्डुलिपि में बोलचाल की भाषा, रुचिकर संरचना, तर्कसंगत विषय सामग्री तथा उचित प्रस्तुतीकरण

उपयोग में लिया जाना चाहिए। उपयुक्त पाण्डुलिपि श्रव्य/आकाशवाणी पाठों का महत्वपूर्ण भाग होता है। इसके लेखक जन्मते नहीं हैं, वरन् प्रशिक्षण एवं अनुभवों के आधार पर बनते हैं।

स्वमूल्यांकन (self Evaluation)

1. श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी कार्यक्रमों को शिक्षा में महत्वपूर्ण माना गया है? कारण लिखिए।
2. श्रव्य टेप तथा आकाशवाणी प्रसारण से होने वाले लाभों को संक्षिप्त में समझाइये।
3. पाण्डुलिपि लेखन निर्माण के समय कौन-कौन सी बाते ध्यान में राखी जानी चाहिए? विवरण दीजिये।
4. श्रव्य एवं आकाशवाणी प्रसारण कि सीमाओं को दूर करने के उपाय बताइये।

26.13 संदर्भ ग्रंथ सूची (Bibliography)

Mohanthy, J : School Broadcast: Sterling, New Delhi, 1974

इकाई-27

ई.टी.वी. क्लोज सर्किट टी.वी. वी.सी.आर. तथा उपग्रह सम्प्रेषण का महत्व Importance of ETV, CCTV, VCR and Satellite Instruction

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

27.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

27.1 प्रस्तावना
(Introduction)

27.2 शैक्षिक दूरदर्शन (ई.टी.वी.)
(Educational Television)

27.2.1 संक्षिप्त इतिहास
(Brief History)

27.2.2 शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम उत्पाद
(Production Educational Television Programme)

27.2.3 शैक्षिक दूरदर्शन की शिक्षा में भूमिका
(Role of Education Television in Education)

27.2.4 शैक्षिक दूरदर्शन के तकनीकी आयाम
(Technical Dimension of Educational Television)

27.2.5 सीमाएँ
(Limitations)

27.3 सर्किट टी.वी.: एवं सी.सी.टी.वी. की प्रकृति
(Close Circuit T.V. and its Nature)

27.3.1 सी.सी.टी.वी. के मूलभूत तत्त्व
(C.C.T.V. and E.T.V.)

27.3.2 सी.सी.टी.वी. एवं इ.टी.वी.
(C.C.T.V. and E.T.V.)

27.4 वीडियो कैसेट रिकार्डर
(Video Cassette Recorder)

27.4.1 वी.सी.आर. और टी.वी. कार्यक्रम

(V.C.R. and T.V. programme)
27.4.2 वी.सी.आर. के उपयोग
(User of V.C.R.)
27.4.3. समस्याऐं एवं सीमाऐं
(Problem and Limitations)
27.5 उपग्रह शैक्षिक अनुदेशन
(Satellite Educational Instruction)
27.5.1 परिचय एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
(Introduction and Historical Background)
27.5.2 उपग्रह शैक्षिक अनुदेशन का प्रारंभ
(Starting of Satellite Educational Instruction)
27.5.3 सकारात्मक परिणाम
(Positive Results)
27.5.4 शैक्षिक टी.वी. के लिये सेटेलाइट (उपग्रह) का सुसज्जित
27.6 भविष्यगत सम्भावनाएँ
(Future Possibilities)
27.7 सारांश
(Summary)
27.8 संदर्भ ग्रंथ सूची
(Bibliography)

27.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई की समाप्ति पर विद्यार्थी -

- शैक्षिक दूरदर्शन, क्लोज सर्किट टी.वी, वीडियो कैसेट रिकॉर्डर एवं उपग्रह शैक्षिक अनुदेशन के महत्त्व का बोध कर पायेंगे।
- इन तकनीकियों के उपयोग की सम्भावनाओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
- इन तकनीकियों का यथासम्भव उपयोग कर पायेंगे।

27.1 प्रस्तावना
(Introduction)

प्रस्तुत इकाई में आप शैक्षिक दूरदर्शन (ETV) क्लोज सर्किट टी.वी. वी.सी.आर. तथा उपग्रह सम्प्रेषण की हमारे देश के सन्दर्भ, क्षमता के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।

उपग्रह सम्प्रेषण के माध्यम से दृश्य माध्यम का बढता हुआ प्रयोग, उसके द्वारा ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों को समाहित किया जाना तथा इसकी उपयोगिता, महत्व एवं प्रभाव स्पष्ट है। साथ ही सम्प्रेषण अनुसंधानों का महत्व भी स्पष्ट है। वी.सी.आर. तथा क्लोज सर्किट टी.वी., टी.वी. के आधारभूत घटक हैं। इसके अन्तर्गत कई अन्य सामान्य घटक भी शामिल हैं जो कि किसी पाठ के या अवधारणा के विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिये होते हैं। क्लोज सर्किट टी.वी. एवं वी.सी.आर. दोनों ही टी.वी. कार्यक्रम के लिये प्रयुक्त किये जा सकते हैं।

27.2 शैक्षिक दूरदर्शन (ई. टी.वी.) (Education Television)

27.2.1 संक्षिप्त इतिहास

भारत में देहली में विद्यालय प्रसारण में सन् 1959 में टी.वी. का प्रवेश हुआ तथा अग्रणी अध्ययन तथा नियमित आधार पर सन् 1961 में इसका प्रारंभ हुआ। दूसरा टी.वी. उपग्रह 8 वर्ष पश्चात् स्थापित किया गया। ई.टी.वी. का महत्वपूर्ण पहलू 1975-76 में सम्मिलित हुआ, जब कि उपग्रह निर्देशित टी.वी. प्रयोग (सेटेलाइट इन्सट्रक्शनल टी.वी. प्रयोग) कार्य हेतु अपनाये गये। इसने 2329 दूर-दराज के गाँवों तक शैक्षिक दूरदर्शन की प्रसारण सम्भावनाओं के द्वार खोल दिये। तकनीकी क्रांति के द्वारा शैक्षिक दूरदर्शन का क्षेत्र उच्च स्तर तक परिवर्तित हुआ। टी.वी. कार्यक्रमों के निर्माण पर जोर दिया जाने लगा। ये कार्यक्रम विभिन्न अवधारणाओं की समझ अन्तर्सम्बन्धों को लेकर हुआ करते थे। इसमें शिक्षण अवधारणा से हटकर ज्ञान सम्पन्न कार्यक्रमों पर जोर दिया जाने लगा। प्रौढ़ दर्शक, विद्यालयी बच्चे, तथा शिक्षक (एस.आई.टी.ई.) परियोजनाओं के प्रमुख दर्शक थे। सत्तर के दशक में प्रौढ़ शिक्षार्थियों की आवश्यकता की पूर्ति की दृष्टि से 'खुला विश्वविद्यालय' की अवधारणा अस्तित्व में आयी तथा ओपन यूनिवर्सिटी यू.के., इन्दिरा गाँधी यूनिवर्सिटी नई दिल्ली, कोटा ओपन यूनिवर्सिटी कोटा, डी. भीमराव ओपन यूनिवर्सिटी, हैदराबाद महाराष्ट्र ओपन देशव्यापी कक्षा द्वारा महाविद्यालयी विद्यार्थियों हेतु कार्यक्रम प्रसारित किये गये। इंदिरा गाँधी ओपन यूनिवर्सिटी शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम वि.वि. में प्रवेश प्राप्त स्नातक एवं स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों के विद्यार्थियों हेतु प्रसारित करती है।

शैक्षिक दूरदर्शन ने निम्नलिखित पृष्ठभूमियों को केन्द्रित करते हुए शैक्षिक कार्यक्रम बनाये जैसे महिलाओं से सम्बन्धित कार्यक्रम, विशिष्ट शिक्षा (विभिन्न नियोग्यताओं से ग्रस्त बच्चों एवं व्यक्तियों के लिए), स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, चिकित्सा शिक्षा, कृषि आदि तात्पर्य यह है कि जन समुदाय के समस्त वर्गो के लिये इन कार्यक्रमों में विचार किया गया। शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रमों के निर्माण एवं प्रसारण में केन्द्रीय शैक्षिक तकनीक संस्थान नई दिल्ली अग्रणी रहा है। इस संस्थान ने उक्त कार्यक्रम क्षेत्रीय भाषा में विद्यालयी बच्चों के लिये भी प्रसारित किये।

27.2.2 शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम उत्पाद की विधि

किसी भी सम्प्रेषण माध्यम के लिये अन्तर्सकाय प्रयास तथा समूहगत कार्य भावना आवश्यक होती है। यह कथन ई.टी.वी. पर भी लागू होता है। इन कार्यक्रमों का निर्माता समस्त गतिविधियों का प्रभारी होता है एवं उसे उत्पादन के समस्त तत्वों के सम्बन्ध में समझ एवं क्षमता होती है। सॉफ्टवेयर (दृश्य श्रव्य सामग्री) निर्माण हेतु प्रशिक्षण आवश्यक है। यह प्रशिक्षण दूरस्थ माध्यम विशेषज्ञों तथा विषय विशेषज्ञों द्वारा होना आवश्यक होता है। हालांकि इस प्रकार का संयोग दुर्लभ होता है, परन्तु बहुत ही प्रभावी होता है। सॉफ्टवेयर के निर्माण के लिये यह आवश्यक है कि उपभोक्ताओं के पूर्वज्ञान, व्यवहार की समझ हो, जिनके लिये सामग्री निर्मित की जा रही है, ताकि यह सामग्री रोचक बन सके। यदि यह सामग्री क्रिया आधारित तथा नवाचार युक्त होती है, तो यह दर्शकों का सहज ही ध्यान आकर्षित कर लेती है। यह आवश्यक नहीं है कि ये कार्यक्रम सामग्री पाठ्यपुस्तक आधारित हो और पाठ्यपुस्तक से परे हों या फिर पाठ्य पुस्तक के पूरक के रुप में हों।

27.2.3 शैक्षिक दूरदर्शन (ई.टी.वी.) की शिक्षा में भूमिका

इसके द्वारा किसी क्रिया प्रणाली को अधिक स्पष्टता से दर्शाया जा सकता है। विशेष रुप से ऐसी बातें जहां गति आदि दर्शाना हो, उदाहरणार्थ, किसी इंजन की कार्य प्रणाली या प्रयोग' आदि जैसे विषय स्पष्टता के लिये आयोजित किया जाता है। इन्हें इस माध्यम से बदलते हुए रुपों में दर्शाया जा सकता है जो कि अन्यथा सम्भव नहीं हो पाता। शैक्षिक दूरदर्शन (ई.टी.वी.) कक्षा शिक्षण को प्रभावी और सम्पन्न बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जैसे, नाटकीयकरण, कथा तथा गतिविधियों के सम्बन्ध में। परम्परागत शिक्षण निर्देशों की बनिस्बत (ई.टी.वी.) बहुत प्रभावशाली हैं। यह अधिगम अनुभवों का अभिन्न अंग होता है। माध्यम एवं विधि दोनों ही सम्पूर्ण अधिगम प्रणाली के लिये आवश्यक होती है। आजकल ई.टी.वी. का प्रयोग शिक्षार्थी के दृष्टिकोण को परिवर्तित करने तथा स्व मूल्यांकन के उद्देश्य से किया जाता है। ई.टी.वी. की दृश्य श्रव्य क्षमता के कारण इसका प्रयोग बड़े पैमाने पर शिक्षार्थियों में सम्प्रेषण हेतु भी किया जाता है। इसका प्रयोग औपचारिक तथा औपचारिकेत्तर दोनों ही स्थितियों के लिये किया जाता है। टी.वी. एक ऐसा शैक्षिक माध्यम है, जिसमें आँख एवं कान दोनों की सीखने में संलग्न रहते हैं। इस माध्यम के द्वारा एक अनोखा शिक्षण एव अधिगम अभ्यास होता है, जिसे विभिन्न स्त्रोतों, जानकारियों तथा सामग्रियों से पुष्ट कर प्रभावी एवं आनन्ददायी बनाया जा सकता है। ई.टी.वी. अन्य संचार माध्यमों की अपेक्षा संचार प्रक्रिया में अधिक प्रभावी है। यह एक ऐसा माध्यम है, जिससे बच्चे एवं प्रौढ़ घंटों अपने टी.वी. सेट से ज्ञानार्जन के लिये चिपके रहते हैं।

टी.वी. के द्वारा प्रत्येक बच्चे एवं प्रौढ़ को श्रेष्ठ शिक्षण उपलब्ध कराया जाता है। विज्ञान में प्रचुर सामग्री के साथ ई.टी.वी. कार्यक्रम तैयार किये जा सकते हैं। ई.टी.वी. का सीधा प्रसारण कक्षा में स्वाभाविकता लाता है और इन कार्यक्रमों को हम पूर्ण तनमयता से देखते

हैं। रोमांचकारी ऐतिहासिक तथ्य जैसे प्रथम अंतरिक्ष उड़ान आदि प्रेरक स्त्रोत होते हैं। विभिन्न आयु समूह के लोगों के लिए टी.वी. कार्यक्रमों की विस्तृत श्रृंखला होती है। यह माध्यम विभिन्न अनुभव स्तरों वाले दर्शकों के बीच एक वाहक का कार्य करता है। चित्रांकन की आधुनिक तकनीक के द्वारा छोटे बडे, निकट दूर आदि चित्रांकनों के द्वारा दर्शकों को वास्तविकता से सजीव रुप से परिचित कराया जाता है।

टी.वी. शिक्षक एवं विद्यार्थियों का बहुत समय बचाता है तथा विभिन्न समस्याओं के हल समझाता है, जिनसे कि वे सम्बन्धित होते हैं। इसमें बहुत सी पुनरावृर्त्तियों को भी हटा दिया जाता है, जो कि प्रदर्शन, नाटकीकरण के रुप में कार्यक्रमों को प्रभावित करती है। वह शिक्षक एवं शिक्षार्थियों को कम समय में अधिक सीखने में मदद करता है। विषय वस्तु के विविध रुप में प्रदर्शन जो कि रोचक होते हैं। हमारे अनुभव एवं ज्ञान को सम्पन्न बनाते हैं।

27.2.4 शैक्षिक दूरदर्शन के तकनीकी आयाम

ई.टी.वी. को प्राय: दृश्य श्रव्य के संकुचित अर्थ के अन्तर्गत लिया जाता है, परन्तु इसे केवल दृश्य श्रव्य शिक्षण निर्देश तक ही वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। यद्यपि इसमें अन्य माध्यमों से संयुक्त होने की क्षमता है। हालांकि यह एकतरफा माध्यम है, फिर भी यह जन संचार का महत्वपूर्ण घटक है। टी.वी. प्रसारण केन्द्रों की क्षमता, जो सीमित क्षेत्र तक थी। उसे उपग्रह के द्वारा बढ़ा दिया गया है। इसके अतिरिक्त उच्च क्षमता वाले प्रसारण टावर के निर्माण से भी प्रसारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। प्रसारण सिग्नलों को कोएक्सल केबल या सूक्ष्मतरंग टावर के द्वारा भी प्रेषित किया जा सकता है। 25 से 30 मील की दूरी तक उक्त तकनीक द्वारा प्रेषण किया जा सकता है। आधुनिक तकनीक एवं उपग्रह के द्वारा अधिक दूरी तक प्रसारण सम्भव हो गया है।

27.2.5 सीमाऐं

एडगर डेल के अनुभव शंकु में टी.वी. को निम्न स्थान प्राप्त है। इसे अक्सर सम्प्रेषण के एक तरफा सम्प्रेषण माध्यम के रुप में देखा जाता है। यह एक समान विषय वस्तु प्रस्तुत करता है, जबकि विद्यार्थी विभिन्न स्तरों के होते हैं। उनकी योग्यता व क्षमताऐं भिन्न-भिन्न होती हैं। वे इन कार्यक्रमों से लाभांवित नहीं हो पाते। अन्य चलचित्रों की अपेक्षा टी.वी. का पर्दा भी छोटा होता है। इससे इसका दृश्य प्रभाव भी कम होता है। कई बार विस्तृत जानकारियों के लिये स्पष्टता के लिये विडियो प्रोजेक्टर आवश्यक होता है जो काफी खर्चीला होता है तथा इसकी व्यवस्था जुटाना कठिन होता है।

उपरोक्त सीमाओं / कमियों के बाद भी यह माना जाता है कि ई.टी.वी. की प्रभावशीलता इसके द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रमों की गुणवत्ता एंव प्रकृति पर निर्भर करतीहै। वास्तविक प्रसारण के पूर्व प्रश्नों के द्वारा प्रतिउत्तर प्राप्त किये जा सकते है। टी.वी. के सक्रिय अवलोकन को

प्रोत्साहित करना चाहिए तथा सहभागिता पद्धति की पहल करनी चाहिए। अक्सर यह आक्षेप लगाया जाता है कि टी.वी. कार्यक्रम शिक्षक से व्यक्तिगत सम्पर्क को हतोत्साहित करते हैं, जिसकी नितांत आवश्यकता है। यह भी पाया गया है कि टी.वी. द्वारा शिक्षण तथा टी.वी. के बिना शिक्षण में सार्थक अन्तर नहीं होता है। वे अवधारणाऐं जिनमें गति, क्रिया, प्रदर्शन आदि समाहित होते हैं, उन्हें टी.वी. के माध्यम से बहुत अच्छी तरह से पढ़ाया जा सकता है। अन्यथा कक्षा शिक्षण उपयुक्त होता है।

केथ टायलर ई.टी.वी. के सकारात्मक एवं नकारात्मक पहलुओं को निम्न शब्दों में सारांश रुप में प्रस्तुत करते हैं "यह शिक्षार्थी को प्रेरित करने में सहायक हो सकता है। यह प्रतिस्पर्धा मॉडल प्रस्तुत कर सकता है। यह प्रश्न उपस्थित कर सकता है तथा समस्या प्रदर्शित कर सकता है और कुछ अभ्यास प्रदान कर सकता है। परन्तु यह व्यक्तिगत प्रगति, समूह गतिविधि प्रदान नहीं कर सकता। यह किसी विशिष्ट समस्या पर छात्र-छात्राओं को सलाह भी प्रदान नहीं कर सकता, प्रयोगशाला के अनुभव भी प्रदान नहीं करता, सृजनात्मकता विकास के सम्बन्ध में इसकी भूमिका न्यून है। यह समूह में प्रजातांत्रिक(डेमोक्रेटिक) सिद्धांतों के प्रयोग एवं अभ्यास के लिये अवसर प्रदान नहीं करता। तथ्यों के संकलन एवं समूह की समस्याओं के प्रजातांत्रिक समाधान के लिये यह कुछ नहीं कर सकता।

27.3 क्लोज सर्किट टी.वी. : सी.सी.टी.वी. की प्रकृति (Close Circuit T.V. : Nature of C.C.T.V.)

सी.सी.टी.वी. एक ऐसा माध्यम है, जिसमें (रिसीव मेकेनिज़्म) स्त्रोत उपकरण से सीधे संयुक्त होता है। यह कोक्सीअल केबल, माइक्रोवेव रेडियो या टेलीफोन लाइन द्वारा संयुक्त होता है। यह प्रेषण केवल उन्हीं टी.वी. सेट तक पहुंचता है, जो स्त्रोत से संयुक्त होता हैं। नेटवर्क प्रसारण में इसकी विशेष उपयोगिता है। नेटवर्क प्रसारण की अपेक्षा इस पर संचालक का नियंत्रण रहता है। नेटवर्क ब्रॉडकास्टिंग के लिये एल.पी.टी. (लो पावर ट्रांसमीटर) या एच.पी.टी. (हाई पावर ट्रांसमीटर) या उपग्रह प्रसारण आवश्यक होता है। इसे कार्यरत बनाया जा सकता है।

27.3.1 सी.सी.टी.वी. के मूलभूत तत्व

क्लोज सर्किट टीवी के पाँच मूलभूत तत्व निम्नानुसार हैं -

1. विषयवस्तु (Content)
2. कार्यक्रम दृश्य (Programme Visualizer)
3. कैमरा (Camera)
4. पर्दा (Screen)
5. दर्शक (audience)

1. विषयवस्तु

इसकी विषयवस्तु के अन्तर्गत इसे किसी कक्ष में आयोजित किया जा सकता है तथा इसमें साक्षात्कार, शिल्पकार-नक्शे, उद्योग आदि के सम्बन्ध में, शिक्षक प्रशिक्षणार्थी व शिक्षाविद् आदि के लिए प्रदर्शन आयोजित किये जा सकते हैं।

कार्यक्रम निर्माता, कैमरा एवं पर्दा :

प्रदर्शन के पूर्व निर्माता के निर्देशानुसार एक या दो कमरे एक निश्चित स्थिति में रखे जाते हैं, जहां से या जहां पर प्रदर्शित की जाने वाली घटना घटित होने वाली है, जिसे किसी अन्य कक्ष में दिखाया जाना है। जैसे, कोई ऑपरेशन आदि। कैमरा परिस्थितियों के अनुसार या तो (प्रोड्यूसर द्वारा) मेन्युली (कैमरा मैन) के द्वारा संचालित हो सकता है। स्क्रीन (पर्दा) उसी भवन में परन्तु दूसरे कक्ष में हो सकता है, या पास के भवन में (परिसर में) भी रखा जा सकता है अथवा किसी बहुत बड़े कक्ष में दर्शकों के निकट प्रदर्शन हेतु रखा जा सकता है। इसे किसी ऐसे महत्वपूर्ण स्थान पर रखा जा सकता है, जहां से दर्शक सुगमतापूर्वक देख सकें।

दर्शक:

दर्शक एक या विभिन्न कक्षों में हो सकते हैं, प्रदर्शन या तो किसी घटना का सीधा प्रसारण होता है या पहले से रिकॉर्ड की गई सामग्री हो सकती है। जो विडियो कैसेट के रुप में हो सकती है। सीधा प्रसारण में किसी घटना विशेष का चित्रांकन कमरे में सतत् करते हुए केबल की मदद से उसे दर्शकों के सामने रखे स्क्रीन पर दर्शाते जाते हैं तथा प्रदर्शन भी देख सकता है कि स्क्रीन पर क्या प्रदर्शित हो रहा है, यदि वहां पर एक स्क्रीन लगा दी जाये। प्रदर्शन के दौरान दृश्य नियंत्रण तकनीक के लिये आपरेटर आवश्यक नहीं होता। इसका संचालन प्रदर्शन देने वाले की पहुंच में रहता है। इसमें प्रदर्शनकर्त्ता की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण होती है। उसे कैमरा लेंस की ओर अपना लक्ष्य रखना होता है। यह किसी रोगी के आपरेशन के सम्बन्ध में प्रदर्शन दिये जाने पर बहुत जटिल होता है। किसी आपेरशन के प्रदर्शन के सम्बन्ध के कार्यक्रम संचालकों को सारी परिस्थितियों का अवलोकन कर लेना होता है। किसी ऑपरेशन आदि के सम्बन्ध में प्राकृतिक रोशनी पर निर्भर नहीं रहा जा सकता। अत: कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था आवश्यक होती है।

यूरोपीय देशों में इस दिशा में बहुत उपयोगी कार्य हुए हैं बिना तिपाई स्टैण्ड के हाथ में उठाकर संचालित होने वाले कैमरों की मदद से अनुसंधान उद्देश्य से कक्षा गतिविधियों का सूक्ष्म अवलोकन किया जा सकता है। जबकि किसी नवीन तकनीक से शिक्षण हो रहा हो। इस दिशा में सर्वाधिक अग्रणी कार्य साठ के मध्य दशक में हुआ यह कार्य सी.सी.टी.वी. द्वारा स्वर्गीय पी.एन. खन्ना द्वारा आयोजित किया गया, जिन्होंने सी.सी.टी.वी. पर रोगी के आपरेशन के सम्बन्ध में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान न्यू देहली में अनुसंधान कार्य आयोजित किया। भारत में बहुत से विश्वविद्यालय, शिक्षा विभाग, एवं शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, शिक्षण कौशल विकसित करने की दृष्टि से सूक्ष्म शिक्षण (Micro Teaching) में इस तकनीक का उपयोग कर रहे हैं।

27.3.2 सी.सी.टी.वी. एवं ई.टी.वी.

सी.सी.टी.वी. को फिल्म स्लाइड के पर्याय के रुप में लिया गया है। निःसंदेह इसके कुछ तत्व ब्रॉडकास्टिंग मीडिया के समान हैं, परन्तु सी.सी.टी.वी. केबल की मदद से इसके साथ जुड़ा रहता है और इस पर सहज पहुंच एवं नियंत्रण होता है। प्रारम्भ सेअन्त तक इसकी प्रक्रिया को जाना समझा जा सकता है। कैमरा लेंस, इसकी ट्यूब तथा अन्य क्रियाकलाप टी.वी. कार्यक्रम की तरह ही होते हैं। केबल के प्रचुर प्रचलन ने सी.सी.टी.वी. को बहुत लोकप्रिय बना दिया है। मल्टी चैनल केबल के द्वारा पूर्व रिकार्डेड कार्यक्रम दर्शकों तक पहुँच रहे हैं। इनके प्रसारण की पूर्व सूचना दर्शकों को मिल जाती है और वे अपने चुने हुए कार्यक्रम को देख पाते हैं। बहुत से शिक्षा संस्थान केबल टीवी. का प्रयोग प्रभावी रुप से विभिन्न कक्षा परिस्थितियों में शिक्षण गतिविधियों के लिये कर रहे हैं।

27.4 वीडियो कैसेट रिकार्डर (Video Cassette)

वीडियो कैसेट रिकार्डर (वी.सी.आर.) की प्रकृति -

वीडियो कैसेट रिकार्डर जिसे प्रचलन में वी.सी.आर. कहते है। यह आधुनिक तकनीक का महत्वपूर्ण घटक है। शिक्षा में प्रभावी अधिगम में यह नवीन सहायक के रुप में है तथा शिक्षण गुणवत्ता सुधारने में इसकी तकनीकी भूमिका है। वी.सी.आर. के द्वारा हम केबल टीवी के कार्यक्रमों को रिकॉर्ड भी कर सकते हैं।

27.4.1 वी.सी.आर. और टी.वी. कार्यक्रम

वी.सी.आर. किसी भी टी.वी. कार्यक्रम की धुरी होता है। यह प्रसारण के लिये तो उपयोगी होता है। साथ ही जिसका प्रसारण न किया जाना है, इसके लिये भी उपयोग किया जाता है। अब वी.सी. आर. विभिन्न मॉडलों में उपलब्ध हैं। इसमें पूर्व में रिकॉर्डेड तथा देखे हुए कार्यक्रम की कैसेट लगाकर उसे विभिन्न पदों पर या रिसीवर पर देखा जा सकता है। इसमें यह भी सुविधा रहती है कि इसमें बाहर के कार्यक्रम रिकॉर्ड किये जा सकते हैं तथा टी.वी. कैमरा के लिये उपयोग किये जा सकते है। इसमें पूर्व में रिकॉर्डेड कार्यक्रम की कैसेट लगाकर कार्यक्रम को मशीन पर देखा जा सकता है। वर्तमान में $1/4$", $1/2$", $3/4$" और (Bitacorn) वी.सी.आर. रिकार्डिग उद्देश्य से उपयोग किये जा रहे हैं। वी.सी.आर. की अवधारणा पूर्व रिकार्डेड विडियो कैसेट के सन्दर्भ में भी अब इसका उपयोग सीधे प्रसारण को रिकॉर्ड करने में भी होता है या पूर्व में निर्मित शैक्षिक कार्यक्रम को पुनः रिकॉर्ड करने में भी होता है। हालांकि शैक्षिक कार्यक्रमों के वीडियो कैसेट प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं होते। भारत में एज्यूकेशनल मीडिया रिसोर्स सेन्टर (इ.एम.आर.सी.) तथा दृश्य श्रव्य अनुसंधान केन्द्र (इ.वी.आर.सी.) यू.जी.सी. के सहयोग से कार्यक्रम निर्माण में संलग्न है। ये यू.जी.सी. के लिये सहयोगी ऐजेन्सी की तरह कार्य करती

है। तथा छः राज्य शैक्षिक तकनीक संस्थान हैदराबाद, पूना, अहमदाबाद, भुवनेश्वर, लखनऊ, पटना, केन्द्रीय शैक्षिक तकनीक संस्थान के साथ कार्यरत हैं। एन.सी.ई.आर.टी. इनकी शैक्षिक कार्यक्रम निर्माण में इनकी सहयोगी संस्थान है। ये कार्यक्रम प्राथमिक विद्यालय छात्रों एवं शिक्षकों के लिये निर्मित होते हैं। ये कार्यक्रम प्रसारण के उद्देश्य से निर्मित किये जाते हैं तथा ये कार्यक्रम $1/2''$ (बी.एच.एस.) में बिक्री के लिए उपलब्ध होते हैं। जो कि ब्रॉडकास्टिंग के लिए बिक्री नही होते। भारत शासन ने शैक्षिक तकनीक योजना के तहत विभिन्न राज्यों के विद्यालयों को रंगीन टी.वी. वितरित किये है, जहां भी विद्युत सुविधा उपलब्ध है। इसके अतिरिक्त जिला प्रशिक्षण संस्थानों को भी कलर टी.वी., वी.सी.आर., टी.वी. शैक्षिक कार्यक्रमों के पेकेज के साथ उपलब्ध कराये गये हैं। इन कार्यक्रम पैकेजों में शिक्षक प्रशिक्षण, भाषा, गणित, तथा पर्यावरण अध्ययन से सम्बन्धित कार्यक्रम पैकेज सम्मिलित हैं।

27.4.2 वी.सी.आर. के उपयोग

वी.सी.आर. पर जो रिकार्डिंग की जाती है। उसे पुनः देखा जा सकता है तथा विडियो कैसेट के रुप में सुरक्षित रखा जा सकता है। वीडियो टेप पर कार्यक्रमों की संख्या में वृद्धि हो रही है तथा सामान्य किराये पर कैसेट लाइब्रेरी से कैसेट वी.सी.आर. उपलब्ध हो जीते हैं। $3/4''$ वी.सी.आर. ट्रांसमीशन के लिए उपयोगी होते हैं। इनकी मशीन अपेक्षाकृत महंगी होती है। घरेलू वी.सी.आर. ($1/2''$) मध्यमश्रेणी परिवार की आर्थिक पहुंच के भीतर ही है। जबकि $1/4''$ वी.सी.आर. व्यवसायिक उद्देश्य से उपयोग किये जा रहे है। इनका उपयोग व्यावसायिक स्तर पर कार्यक्रम निर्माण एवं प्रसारण के लिये होता है। सभी प्रकार के वी.सी.आर. पर चित्र के साथ ध्वनि को भी रिकॉर्ड किया जा सकता हैं। कार्यक्रम के सम्पादन के लिये दो वी.सी.आर. मशीन आवश्यक होती है। जब चित्रों की धीमी गति में देखने की आवश्यकता होती है, तब विडियो मिक्सर मशीन उपयोग की जाती है, जो महंगी होती है। यह मशीन वी.सी.आर. से संयुक्त- की जाती है।

शिक्षक प्रशिक्षण के दौरान पुनर्बलन फीडबेक देने के लिये भी वी.सी.आर. प्रयुक्त होता हैं। ऐसी स्थिति में कार्यक्रम नियंत्रण हेतु वी.सी.आर. से विभिन्न तकनीक संसाधन संयुक्त किये जाते हैं। गति को नियंत्रित कर कार्यक्रम के सम्बन्ध में चर्चा की जा सकती है तथा किसी विशिष्ट तकनीक का उपयोग किया जा सकता है।

27.4.3 समस्यायें एवं सीमाएँ

प्रारम्भ में वी.सी.आर. के साथ सुगमता की समस्या थी। बहुत से उपकरण हुआ करते थे। परन्तु अब इसमें स्टेंडर्ड मशीनें लगाकर इस समस्या को व्यवहारिक दृष्टि से हल कर दिया गया है, परन्तु इसकी कीमत भारतीय विद्यालयों की पहुंच से बाहर है। इसके अलावा टेप का

जीवन (टिकाऊपन) भी सीमित होता है, जिसका एक स्कूल के लिये खर्च वहन करना सम्भव नहीं होता। हाल ही में केबल टी.वी. ने यह सम्भव कर दिया है कि हम विभिन्न शैक्षिक कार्यक्रम टी.वी. पर्दे पर देख सकते हैं। इसमें संयुक्त विशेष एन्टीना प्रयुक्त होता है। अत: वी.सी.आर. का प्रयोग सीमित हो गया है।

27.5 उपग्रह शैक्षिक अनुदेशन (Satellite Based Educational Instruction)

27.5.1 परिचय एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

संचार के क्षेत्र में उपग्रह टेलीविजन का प्रयोग सर्वाधिक विशाल एवं आधुनिक प्रयोग है। (एस. आर.टी.ई.) भारत में इसका प्रारम्भ सन् 1975-76 के मध्य हुआ, जिसका उद्देश्य राष्ट्र विकास के लिए विस्तृत सूचनाएँ प्राप्त करना था। ऐसी सूचनाएँ जो तकनीकी रुकावटों के कारण अब तक उपलब्ध नहीं थी। यह अनोखा प्रयोग सन् 1970 से किया गया। स्वर्गीय विक्रम साराभाई की यह दूरदर्शिता थी कि उन्होंने जाना कि कोई भी राष्ट्र तब तक प्रगति नहीं कर सकता, जब तक उसका तकनीकी सूचना तन्त्र अंतिम दूर-दराज गाँव तक न जुड़ा हो। अत: ऐसा तकनीकी अभियान अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग से शुरु किया जावे, जो इस उद्देश्य की पूर्ति कर सके।

डॉ विक्रम साराभाई ने (नेशनल एरोनोटिक्स एण्ड स्पेसएडम) नासा के साथ यू.एस.ए. संयुक्त राज्य अमेरिका में सितम्बर 1969 में एक समझौता हस्ताक्षर किया, जिसके तहत नासा उपग्रह एप्लीकेशन तकनीक एवं अन्य तकनीकें प्रदान की जानी थी तथा अन्य तकनीक एवं मानव संसाधन भारत सरकार को जुटाने थे।

27.5.2 इसका प्रारंभ

ए.टी.एस. - 6 सर्वाधिक समुन्नत एव क्षमता सम्पन्न उपग्रह अंतरिक्ष में मई 1974 में छोड़ा गया। कार्यक्रम निर्माण की सम्पूर्ण जिम्मेदारी दूरदर्शन केन्द्र की थी, जिसके लिये आधारभूत निर्माण इकाई की स्थापना की जानी थी। वास्तविक प्रयोग अप्रैल 1975 में प्रारम्भ हुआ। यह प्रारम्भ में एक वर्ष के लिए था, जिसे बाद में बढ़ाकर दो वर्ष कर दिया गया। उपग्रह प्रयोग ने समय एवं स्पेस की अवधारणा को व्यापक रुप से परिवर्धित कर दिया। यह संचार के क्षेत्र में ऐसा कदम था, जिसने राष्ट्रों के बीच संचार की सार्वभौमिक भाषा स्थापित की।

इस प्रयोग के तहत 2329 ग्रामों को समाहित किया गया। ये ग्राम विभिन्न राज्यों से सम्बन्धित थे, जैसे आम्र प्रदेश, मध्यप्रदेश, उडीसा, बिहार, कर्नाटक तथा राजस्थान। इस प्रयोग ने नवाचार के लिये द्वार खोले तथा उपग्रह के लिये शैक्षिक परियोजनाएं बनायी गई। सेटेलाइट टेलीविजन फ्रेम वर्क को विशेष टी.वी. सेट चिकन मेश एन्टीना के साथ प्रयोग किये

गये जैसे डी.आर.एस. (डायरेक्ट रिसेप्शन सिस्टम) के नाम से जाना जाता हैं। इसके अतिरिक्त 490 टी.वी. सेट खेड़ा जिले के ग्रामों में स्थापित किये गये।

यह सेटेलाइट इंस्ट्रक्शनल टी.वी. की शुरुवात थी। इसके तहत कार्यक्रम निर्माण कर ग्रामीण दर्शकों हेतु प्रसारित किये गये। इन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है, जैसे देहली से हिन्दी में समाचार, कन्नड, तेलुगु उड़ीसा, मनोरंजक कार्यक्रम जिसमें संगीत ड्रामा आदि सम्मिलित हैं। कुछ बच्चों के कार्यक्रम भी प्रसारित किये गये।

सेटेलाइट इंस्ट्रक्शनल प्रयोग के लिये सॉफ्टवेयर एक अनिवार्य घटक है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक राज्य से 3-4 जिलों को लिया गया था। इसमें मानवीय घटक भी सम्मिलित था, जो कि गाँव के चयन कार्यक्रम निर्माण, अनुसंधान एवं मूल्यांकन से सम्बन्धित था। इस प्रयोग का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक था। दर्शकों से फीडबेक (पुनर्बलन) प्राप्त करना। अनुसंधानकर्त्ता साक्षात्कार आयोजित करते तथा बच्चों एवं प्रौढ़ों का अवलोकन करते थे तथा प्राप्त आकड़ों को तत्काल विश्लेषित किया जाता था। इसके आधार पर सूचना परक संदेशों को पुष्ट किया गया, जो कि स्वास्थ्य, परिवार कल्याण पोषण तथा कृषि से सम्बन्धित थी। इनकी विधि, प्रणालियों के भविष्य उपयोग की दृष्टि से रिकॉर्ड किया गया। इन सुविधाओं को जुटाने में लगभग 8-9 वर्ष का समय लगा और शायद यह बहुत ही दुरस्त प्रयास था।

27.5.3 सकारात्मक परिणाम

सेटेलाइट इंस्ट्रक्शनल ने सामाजिक परिवर्तनों की प्रक्रिया ने बड़ी गहरी समझ प्रदान की है। इस संचार माध्यम का भारतीय ग्रामों में प्रभाव हुआ है, जो कि भविष्य में योजनाओं के लिये सहायक होगा। सेटेलाइट तकनीक एवं विधि भविष्य के लिये मार्गदर्शक क्षमता है। इसने ग्रामों से संचार चेनल की भूमिका एवं इसकी आवश्यकताओं की पूर्ति की है तथा ग्रामीण सांस्कृतिक ढांचे पर सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न किया है। इस सम्बन्ध में संसाधन एवं अनुसंधान अध्ययन क्षेत्र के निर्णायक घटक बन गये हैं।

भारत के दूर-दराज कोनों तक प्रौढ़ एवं बच्चों तक संचार स्थापित करने के उद्देश्य से पहली बार भारतीय अंतरिक्ष संगठन, दूरदर्शन, शिक्षा एवं विभिन्न मंत्रालयों ने एकजुट हो प्रयास किया। 1976 के अन्तराल में इन्सेट सम्बन्धी योजनाएं बनायी गई। क्षेत्रीय ग्राउण्ड ट्रांसमीटरों की शुरुआत 80 के दशक में हुई। एशियन खेलों के दौरान 1982 में भारत में रंगीन टी.वी. की अवधारणा ने प्रवेश किया।

27.5.4 शैक्षिक टी.वी. के लिये सेटेलाइट (उपग्रह) का सुसज्जित किया जाना

शिक्षा मन्त्रालय द्वारा शिक्षा के लिये इन्सेट परियोजना हाथ में ली गई। शैक्षिक टी.वी. के द्वारा 5-11 वर्ष के बच्चों एवं प्राथमिक विद्यालय शिक्षकों के लिये कार्यक्रम रखे गये। छः राज्य शैक्षिक तकनीक संस्थाएं आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, यूपी, केन्द्रीय शैक्षिक तकनीकी संस्थान के साथ हिन्दी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में कार्यक्रम निर्माण हेतु स्थापित

किये गए। साथ ही साथ यू.जी.सी. ने विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों, छात्रों के लिये कार्यक्रम निर्माण कर इस क्षेत्र को समृद्ध बनाया। इस हेतु ए.वी.आर.सी. एवं ई.एम.आर.एस. जैसे जामिया मीलिया इस्लामिया, नई देहली, पूना विश्वविद्यालय, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद, केन्द्रीय अंग्रेजी भाषा संस्थान हैदराबाद, आदि स्थानों पर कार्यक्रम निर्माण सम्बन्धी उपलब्ध करायी गई।

इनसेट 1 ने शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम बच्चों एवं विश्वविद्यालयी छात्रों के लिये प्रसारित करना प्रारम्भ किया। ये कार्यक्रम प्रात: एवं सायंकाल प्रसारित होते हैं। सी.आई.ई.टी. ने बच्चों के कार्यक्रम संचालित करने की जवाबदारी ली है। इग्नू (IGNOU) अपने छात्रों हेतु कार्यक्रम प्रसारित करता है, जो कि विभिन्न संकायों के शिक्षार्थियों के लिए दूरस्थ माध्यम के रुप में होता है। इन कार्यक्रमों के प्रसारण की जवाबदारी दूरदर्शन पर है।

27.6 भविष्यगत सम्भावनाऐं

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत संचार माध्यम एवं तकनीक का शिक्षा में विशेष प्रावधान रखा गया है तथा इसके लिये समर्पित सेटेलाइट प्रणाली का प्रावधान है, जो दीर्घ काल तक आवश्यकता की पूर्ति कर सके। सी.आई.ई.टी. में इंस्ट्रक्शनल सेटेलाइट के सम्बन्ध में अप्रैल-मई 93 में अनोखा प्रयोग किया। कुछ चुने हुए विद्यालयों को जोकि विभिन्न राज्यों के थे सी.आई.ई.टी. एल.सी.ई.आर.टी. न्यू देहली के प्रसारण से सीधा विभिन्न तकनीकी साधनों द्वारा सीधा जोडा गया। जिसमें कम्प्यूटर, की-पेड जैसे उपकरणों को प्रयुक्त किया गया। यह परियोजना यू.एस. के सौजन्य से थी तथा एक अग्रणीय अध्ययन था। इस हेतु गणित एवं भौतिक शास्त्र कक्षा बारहवीं हेतु विषयों का चयन किया गया। यह द्विमार्गी श्रवण (ऑडियो) तथा एकल मार्गी दृश्य (विडियो) से संयुक्त संचार अन्तःक्रिया स्थापित करने का अनोखा प्रयास था। इस प्रयोग ने संसार में माध्यम की विभिन्न सम्भावनाएँ पैदा की, जिनके द्वारा इस दिशा में विद्यालय, परिवार एवं राष्ट्रीय उद्देश्यों को पाया जा सके।

सेटेलाइट आय.बी. एवं आय.सी. में 2. घण्टे कार्यरत रहने की क्षमता है, जो ई.टी.वी. पर कार्यरत रह सकता है। इस दृष्टि से विभिन्न भाषाओं में त्वरित कार्यक्रम निर्माण एक चुनौती है। हमें कार्यक्रम ग्रहण करने की क्षमता भी विकसित करना है क्षेत्रीय एवं उपग्रह संचार ने इसे सम्भव बना दिया है। इससे हम लगातार कार्यक्रम प्राप्त कर सकते हैं। 70 प्रतिशत आबादी में बिजली उपलब्ध होने से उपग्रह संचार उन सभी स्थानों तक भेजना संभव हुआ है जहां-जहां विद्युत सुविधा उपलब्ध है।

27.7 सारांश

(Summary)

शिक्षा को सार्वभौमिक करने, प्रौढों को शिक्षित करने तथा शिक्षा को प्रभावशाली बनाने के लिए शैक्षिक दूरदर्शन, सी.सी.टी.वी., वी.सी.आर. तथा उपग्रह सम्प्रेषण का उपयोग किया

जाने लगा है। इसके द्वारा ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में सरल एवं बोधगम्य शिक्षण सुविधाएं उपलब्ध कराई जा सकती है तथा शिक्षण को प्रभावी एवं सफल बनाया जा सकता है।

संचार के क्षेत्र में उपग्रह, टी.वी. का भी उपयोग किया जाने लगा है। हालांकि इसके उपयोग की बहुत सी सीमाएँ है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. शैक्षिक दूरदर्शन के इतिहास को संक्षिप्त में समझाइये.
   Explain is short the history of Education Television.
2. शैक्षिक दूरदर्शन की शिक्षा के क्षेत्र में क्या भूमिका है?
   What are the role of Education Television in area of Education?
3. वी.सी.आर. के क्या उपयोग है तथा इसकी सीमाओं का उल्लेख करे।
   What is the use of V.C.R. and explain its limitations.
4. शिक्षा के क्षेत्र में शैक्षिक उपग्रह अनुदेशन के क्या -क्या योगदान है।
   What are the contribution of Education Satellite instruction in area Education?

27.8 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

ब्राउन जेम्स डब्ल्यू : आर.बी.ए.वी. इंस्ट्रक्शनल टैक्नोलॉजी मीडिया, एण्ड मेथडस् मैग्रा हिल्स, न्यूयार्क।

डेल एडगर : चिल्ड्रन टी.वी. वर्कशाप, यू.एस.ए. एवी मेथडस इन टीचिंग, द डायडेन ब्रेस, न्यूयार्क

डायमण्ड आर.एम. : ए गाइड दू इंस्ट्रक्शनल टी.वी. इन ब्रिटेन, मैग्रा हिल्स, लन्दन

गॅरडन जी.एन. : एज्यूकेशनल टी.वी. प्रेन्टीसहाल, लेसर जी.एस. चिल्ड्रन एण्ड टी.वी. रेडाम हाउस, न्यूयार्क

मोरिस एन.एस. : टीवी स चाइल्ड, लिटिलब्राउन एण्ड कम्पनी, बोस्टन

नेक्टा : बुलेटिन, नेशनल एण्ड एल., क्लोस्ड सर्किट टी.वी. एसोसिएशन डीन सेन्टर, बेलफोर्ड रोड, डनबर्ग

पोखरपुरकर डी.के. : डेवलपमेन्ट ऑफ टीवी प्रोग्रामस फॉर रुरल चिल्ड्रन (अनपब्लिश्ड फिल्म एण्ड टी.वी. इन्सटीटयूटं ऑफ इंडिया, पूना।

स्क्राम डब्ल्यू : एड.एल.टी.वी. दे नेक्स टेन इयर्स, इंस्टीटयूट फॉर कम्यूनिकेशन रिसर्च, स्टेर्नफोर्ड

रोमिस जोस्की ए.जे. : द सिलेक्शन एण्ड यूज ऑफ इंस्ट्रक्शनल मीडिया, वनेगन पेज, लन्दन।

श्रीनिवास आर. : समरी टेलीकास्ट एवेल्यूएशन रिपोर्ट, फिल्म एण्ड टीवी इन्सटीट्यूट ऑफ इंडिया, पूना।

यूनीसेफ : टेलीविजन एण्ड इंडियन चाइल्ड डायनेमिक आर्ट प्रिंटर्स, न्यू देहली।

इकाई - 28

बहु आयामी उपागम की अवधारणा, भूमिका एवं महत्व (Concept, Role and Importance of Multi-Media Approach)

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

28.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

28.1 प्रस्तावना
(Introduction)

28.2 अनुदेशन माध्यमों का अर्थ एवं प्रकृति
(Meaning and Nature of Instructional Media)

28.2.1 अनुदेशन माध्यम की प्रकृति
(Nature of Instruction Media)

28.2.2 अनुदेशन के सहायक के रुप में माध्यम
(Media as an Assistant of Instruction)

28.3 बहु आयाम की अवधारणा
(Concept of Multi Media)

28.4 बहु आयामी अनुदेशन तंत्र की प्रासंगिकता
(Relevancy of Instructional Multimedia)

28.5 अनुदेशन में बहु आयामी अधिगम की विशेषताएँ
(Characteristics of Multimedia)

28.6 बहु आयामी अनुदेशन सामग्री का विकास
(Development of Multi Media Instructional Material)

28.7 बहु आयामी अनुदेशन सामग्री की योजना
(Planning for Multi Media Instructional Material)

28.8 माध्यम चयन के मानदण्ड
(Criteria for Selection of Media)

28.8.1 कार्य घटक
(Task Component)

28.8.2 शिक्षार्थी घटक

(Pupil Component)
28.8.3 भौतिक घटक
(Physical Component)
28.8.4 अनुदेशन घटक
(Instructional Component)
28.8.5 आर्थिक घटक
(Economic Component)
28.9 बहुआयामी अनुदेशन सामग्री की वैधता
(Validity of Multimedia Instructional Material)
28.9.1 विशेषज्ञों की सलाह का प्रारूप
(Format of Suggestions given by Special)
28.9.2 बहु आयामों पर अनुसंधान
(Research on Multimedia)
28.10 सारांश
(Summary)
28.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

28.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद विद्यार्थी -

- बहु आयामी विधि का अर्थ एवं प्रकृति को स्पष्ट कर सकेंगे।
- बहु आयामी अनुदेशन सामग्री के उपयोग की सार्थकता समझ सकेंगे।
- विशिष्ट अनुदेशन उद्देश्यों को प्राप्त करने की दृष्टि से विभिन्न विधियों एवं माध्यमों को संगठित कर सकेंगे।
- साधनों के चयन हेतु विभिन्न मानदण्डों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- अनुदेशन के विशिष्ट माध्यम की वैधता जाँचने हेतु उपकरण का विकास कर सकेंगे।

28.1 प्रस्तावना
(Introduction)

प्रकृति में पठन-पाठन की क्रिया बड़ी जटिल है। इसमें कई घटक सम्मिलित है, यथा-शिक्षार्थी, अधिगम के उद्देश्य, विषयवस्तु अधिगम अनुभव, विधियाँ एवं साधन, मूल्यांकन, शिक्षक एवं प्रसंग। अधिगम अनुभवों को सुगम बनाने के लिए कई विधियाँ एवं साधन प्रयुक्त किए जाते हैं। ये शिक्षार्थी एवं शिक्षक को निर्देशन के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता करते है। अधिगम उद्देश्यों, अधिगम सामग्री, शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि, संस्थितियो एवं अन्य कई तथ्यों

की जटिलताओं को ध्यान में रखते हुए पठन-पाठन के लिए किसी भी एक विधि या साधन का उपयोग करते हुए लक्ष्यों की प्राप्ति असंभव है। तकनीक प्रगति के साथ-साथ विशिष्ट अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त वैकल्पिक शिक्षण विधियों एवं साधनों का सृजन हुआ है। यह हमारा दायित्व है कि हम विभिन्न प्रकार की पठन-पाठन संस्थितियो में किन विधियों एवं साधनों का श्रेष्ठ उपयोग करें। निर्देशन की बहुआयामी पद्धति हमें इस दिशा में कुछ उपाय सुझाती है।

28.2 अनुदेशन माध्यमों का अर्थ एवं प्रकृति (Meaning and Nature of Instructional Media)

बहुआयामी माध्यमों में कार्य प्रणाली की प्रकृति समझने से पूर्व हमें माध्यम के बारे में जानना आवश्यक है। जैसा आप जानते हैं कि खुले विश्वविद्यालय तंत्रों में आपके अध्ययन को सुगम बनाने के लिए विभिन्न माध्यम जैसे मुद्रित शिक्षण सामग्री श्रव्य कैसेट पाठ, दृश्य पाठ, शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम एवं टेलीकान्फ्रैन्सिंग आदि काम में लिए जाते हैं। ये वे साधन हैं, जो आपके पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायता करते हैं। ये आपको ज्ञान प्राप्त करने, मूल्य एवं अभिवृत्ति विकसित करने तथा कौशलों के विकास में सहयोग करते है। दूसरे शब्दों में दूरदर्शन कार्यक्रम, वीडियो पाठ, कम्प्यूटर समर्थित अधिगम सामग्री तथा मुद्रित पाठ जैसी सामग्री आपके पाठ्यक्रम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उपयुक्त परिस्थितियों का निर्माण करती हैं। यही सब चीजें माध्यम कहलाती हैं। ये संदेश संचरण के विभिन्न तरीके तथा विचार स्थानान्तरण के वाहक है।

28.2.1 अनुदेशन माध्यम की प्रकृति

सामान्यतया माध्यम को इस प्रकार परिभाषित किया जाता है, "कोई भी व्यक्ति, सामग्री या घटना, जो शिक्षार्थी के लिए ज्ञान, कौशल व अभिवृत्ति अर्जित करने की परिस्थितियाँ स्थापित करती हैं।" इडलिंग जे.वी. एवं पालसन सी.ए. ब्रिज ने अनुदेशन माध्यम को निम्न प्रकार से समझाया है, - "वे सब साधन जिनके द्वारा अनुदेशन स्थितियों के लिए उत्प्रेरण उपस्थित किया जाता है।"

राइज़ व गैग्ने (1983) के अनुसार अनुदेशन माध्यम की परिभाषा निम्नानुसार दी गई है :- "वह भौतिक साधन जिसके द्वारा अनुदेशन समाचार संचारित होता है।"

उक्त विचार विमर्श से यह स्पष्ट होता है कि -

1. माध्यम संचार के साधन हैं।
2. अनुदेशन माध्यम अधिगम उद्देश्यों को प्राप्त करने वाले संदेश का संचारण करते हे।
3. अनुदेशन माध्यम उद्देश्य केन्द्रित होते हैं, जैसे ज्ञान में वृद्धि, मूल्यों में वृद्धि, कौशलों में अभिवृद्धि आदि।
4. अनुदेशन माध्यम अधिगम को सुगम बनाने हेतु उत्प्रेरण के रुप में कार्य करते हैं।

28.2.2 अधिगम के सहायक के रुप में माध्यम

आप विद्यार्थी के रुप में या एक से अधिक माध्यमों का चयन कर लें। आपका प्रमुख उद्देश्य इसका प्रयोग करते हुए अधिगम को प्रभावी बनाना है। उदाहरण के तौर पर आप इस सामग्री का उपयोग बहुआयामी अनुदेशन सामग्री के बारे में ज्ञान अर्जित करने हेतु करते हैं।

अधिगम की स्थितियों में माध्यम निम्न कार्य सम्पादित करता है -

- विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करने हेतु उत्प्रेरणा प्रदान करता है।
- विद्यार्थियों में पढ़ने की तत्परता उत्पन्न करता है।
- वास्तविक एवं सही-सही सूचना संचरण एवं प्रत्यय को स्पष्ट करता है।
- स्व-मूल्यांकन एवं समीक्षा को सुगम बनाता है।
- अधिगम के बार में सकारात्मक अभिवृत्ति विकसित करता है।

28.3 बहुआयामी माध्यम की अवधारणा (Concept of Multi Media)

एक माध्यम से अधिक अथवा अनके माध्यमों के उपयोग का अर्थ है-बहु माध्यम अथवा बहुआयामी माध्यम। दूसरे शब्दों में निर्देशित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कई माध्यमों का उपयोग करना बहुमाध्यमी कार्य प्रणाली कहलाता है। फिर भी हमें बहुमाध्यम की अवधारणा के बारे में गम्भीरता पूर्वक विचार करना चाहिए। इसमें मात्र माध्यमों का मिलाना अथवा एक विधि को दूसरी विधि के साथ मिलाना ही नहीं है। यदि एक शिक्षक रेडियो पाठ लेखन का कौशल विकसित करने के लिए पाठ्य पुस्तक एवं व्याख्यान का उपयोग करता है, तो यह बहुमाध्यम नहीं कहलाएगा। बहुमाध्यमी अनुदेशन का अर्थ है कि पठनपाठन संस्थितियों में दो अथवा दो से अधिक अनुदेशन माध्यमों अथवा विधियों का व्यवस्थित उपयोग।

यहां व्यवस्थित शब्द के उपयोग से सारी स्थिति स्पष्ट है। व्यवस्थित का अर्थ हैं तंत्र के समान अनुदेशन। बहुमाध्यम का अर्थ है पठनपाठन के उद्देश्यों, विषय वस्तु अधिगम स्थितियों आदि के उपयुक्त विश्लेषण के आधार पर वैकल्पिक माध्यमों एवं साधनों का एकीकरण करना। दूसरे शब्दों में बहुमाध्यमी अनुदेशन का अर्थ है अधिगम उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनुदेशन की उपयुक्त व्यूह रचना द्वारा प्राप्त विभिन्न अधिगम अनुभवों का उपयुक्त प्रयोग करना।

सार रुप में एक माध्यम का उपयोग अधिगम के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करता। स्वतंत्र रुप से विभिन्न विधियाँ अथवा माध्यम अधिगम के विकास में आंशिक योगदान करते हैं। चूँकि उच्च स्तर पर अधिगम उद्देश्यों को खण्ड रुप में नहीं देखा जा सकता। इसलिए अनुदेशन के लिए कोई भी एक विधि अथवा एक माध्यम खण्ड रुप में काम में नहीं लिया जा सकता।

अधिगम की गैस्टाल्ट अवधारणा पर नए सिरे से सोचने की आवश्यकता है। विभिन्न शिक्षण विधियों एवं माध्यमों के एकीकरण से ही अधिगम की सम्पूर्णता का उद्देश्य हल हो सकता है।

दूरस्थ शिक्षा के बारे में विशेष तौर से विभिन्न माध्यमों पर प्रकाश डाला गया है, क्योंकि अधिगम के सभी उद्देश्यों को एक माध्यम द्वारा अर्जित नहीं किया जा सकता। यही बात आमने-सामने पठन-पाठन के लिए घटित होती है। एक माध्यमी शिक्षण की अपेक्षा एकीकृत माध्यम और बहु माध्यमी अधिगम का उपयोग अधिक प्रभावी सिद्ध हुआ है।

28.4 बहुमाध्यमी अनुदेशन तंत्र की तर्कसंगतता (Relevancy of Instructional Multi media system)

बहुमाध्यमी कार्यप्रणाली के पीछे प्रमुख कारण अनुदेशन के विशिष्ट उद्देश्य हैं। प्रत्येक माध्यम अथवा विधि की उद्देश्य प्राप्ति के संदर्भ में अपनी-अपनी सामर्थ्य है। एक सामर्थ्य को दूसरी सामर्थ्य से प्रतिस्थापित करने में अनुदेशन के कहीं कोई रिक्तता रह जाना संभव है। उदाहरण के लिए स्वनिर्देशित मुद्रित सामग्री की अपनी कुछ सामर्थ्य है, जिसे वीडियो पाठों द्वारा पूर्णत: प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता और यही बात वीडियो पाठों को मुद्रित सामग्री द्वारा प्रतिस्थापित करने के लिए घटित होती है। प्रथम दृष्टा सूचनाएँ, विवादित मसलों को समझाना तथा विवादित मसलों पर सोच हेतु पृष्ठभूमि तैयार करना आदि व्याख्यान विधि की अपनी विशेषताएँ हैं। दूसरी ओर प्रदर्शन विधि कार्य करने के विभिन्न चरण एवं उस गति विधि में समाहित कौशलों को उभारती हैं। व्याख्यान विधि को प्रदर्शन विधि द्वारा प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता, जैसे कि मुद्रित सामग्री विधि को वीडियो पाठ द्वारा स्थापित नहीं किया जा सकता।

चूँकि एक सामर्थ्यवान माध्यम को दूसरे से प्रतिस्थापित करने में अधिगम परिस्थितियाँ परिवर्तित हो जाती हैं। उनके संयोग से अधिगम तंत्र की सामर्थ्य बढाई जा सकती है। अत: यह संयोग या एकीकरण विशिष्ट प्रासंगिकताओं के आधार पर किया जाना चाहिए। उदाहरण के तौर पर सूचना प्रसारण के पाठ्यक्रम में अभिवृत्ति का उद्भाषित होना और तार्किकता के विकास की आवश्यकता होगी, जिसके लिए विभिन्न माध्यमों एवं विधियों (यथा-स्वनिर्देशित मुद्रित सामग्री, व्याख्यान, वीडियो फिल्म, समस्या केन्द्रित कार्य तथा परियोजना विधि) को मिलाकर चलने की आवश्यकता है।

शिक्षार्थी के दृष्टिकोण से अनुदेशन में बहुमाध्यमी कार्य प्रणाली की आवश्यकता के ठोस आधार है। शिक्षार्थी में संवेदना ग्रहण करने की क्षमता भिन्न-भिन्न होती है। माध्यमी शिक्षण विभिन्न प्रकारों की संवेदना ग्रहण करने के लिए अवसर प्रदान करता है। शिक्षार्थी अपनी-अपनी सीखने की सामर्थ्य रुचि व तत्परता के अनुसार बहुमाध्यमी कार्य प्रणाली का लाभ उठा सकते हैं।

अनुदेशन में बहुमाध्यमी कार्यप्रणाली में वैकल्पिक बहुआयाम आधारित अधिगम सामग्री सम्मिलित है। शिक्षार्थी की संज्ञात्मक संरचना एवं अन्य घटकों के आधार पर बहुआयामी विधि द्वारा उपस्थित पठन-पाठन गतिविधियों अधिकतम उपयोग कर सकता है। धीमे सीखने वाला शिक्षार्थी बहुआयामी शिक्षण के एक सेट का तो तेज सीखने वाला शिक्षार्थी

उसी विषय वस्तु के लिए बने बहुमाध्यम पठन सामग्री के दूसरे सेट का उपयोग कर सकता है।

बहुमाध्यमी शिक्षण सामग्री शिक्षण विधियों में खुलापन लाती है। खुले विद्यालय एवं खुले विश्वविद्यालय में दूरस्थ शिक्षा मुख्यतता बहुमाध्यमी कार्य प्रणाली पर निर्भर करती है। शिक्षार्थी को उनकी गति, समय, कठिनता स्तर, कार्य करने की स्थितियॉ एवं उपयुक्तता के अनुसार उनके लिए उपयुक्तता अधिगम सामग्री चुनने की स्वायत्तता होती है।

28.5 अनुदेशन में बहुमाध्यमी, कार्य प्रणाली की विशेषताएँ (Characteristics of Multi Media System in Instruction)

1. सूचना संग्रहण एवं सूचना प्रसारण की क्षमता: एकीकृत माध्यम में सूचना संचरण के कई तरीके होने से सूचनाओं का व्यापक प्रसारण संभव है।
2. विविधता: बहुआयामी अनुदेशन तंत्र विविध अधिगम अनुभवों को अधिकाधिक शिक्षार्थियों तक पहुंचाने के अवसर प्रदान करता है।
3. विषय-वस्तु की व्यापकता, बहुमाध्यमों के द्वारा शिक्षार्थी को विविध पाठ्य वस्तुओं को व्यापक: स्वरुप में उपलब्ध कराया जा सकता है। यह शिक्षार्थी पर निर्भर करता है कि वह जो पाठ्यक्रम पढ़ने की रुचि रखता हो, उसका चयन करे।
4. उपयुक्त सहायक तंत्र: विशेषत: दूरस्थ शिक्षा मे शिक्षार्थियों के लिए बहुआयामी सहायक तंत्र अधिक प्रभावशाली पाया गया है।
5. वैकल्पिक अधिगम प्रारुप : स्वयं अध्ययन करने के उद्देश्य से शिक्षार्थी के लिए वैकल्पिक अधिगम मॉड्यूल की भी व्यवस्था होती है। शिक्षार्थी उनका प्रयोग अपनी स्वयं की इच्छा से कर सकता है।
6. जटिल उद्देश्यों का विकास: बहुमाध्यम केन्द्रित अनुदेशन में अनुदेशन के उच्च स्तरीय उद्देश्य जैसे - विश्लेषणात्मक सोच एवं मूल्यांकन, मूल्यों का विकास एवं सृजनात्मकता का भली-भाँति विकसित किया जा सकता है।

स्वमूल्यांकन (self Evaluation)

1. माध्यम को अपने शब्दों में परिभाषित कीजिए।
2. अनुदेशन की बहुमाध्यमी पठन सामग्री का उपयुक्त उदाहरण दीजिए।
3. आपको पठन-पाठन की पारम्परिक विधि के बजाय बहुमाध्यमी निर्देशन तंत्र का उपयोग क्यों करना चाहिए?
4. आपकी राय में दूरस्थ शिक्षा में बहुमाध्यम की क्या-क्या उपयोगिताएँ है?
5. बहुमाध्यम के प्रमुख लक्षण बतलाइए।

28.6 बहुमाध्यमी अनुदेशन सामग्री का विकास (Development of Multi Media Instruction Materials)

बहुमाध्यमी अनुदेशन सामग्री के विकास के अन्तर्गत पठन-पाठन की व्यूह रचना मे तंत्रीय पद्धति के चरणों का अनुसरण किया जाता है। अब हम माध्यम के चयन संगठन एवं इसकी प्रभावशीलता पर प्रकाश डालेंगे।

जैसा कि आप जानते हैं कि अनुदेशन मे तंत्रीय पद्धति की उपयोगिता में निम्न बिन्दु सम्मिलित हैं-

1. किसी कार्यक्रम के लक्ष्य एवं उद्देश्यों का विश्लेषण, अधिगम के उद्देश्यों की पहचान, पाठ्य वस्तु का विश्लेषण, जाँच के संदर्भ में मानदण्डों का विकास करना आदि।
2. शिक्षार्थी की विशेषताओं का विश्लेषण, उनका प्रवेश के समय आचरण, पूर्व अर्जित ज्ञान नये कौशल एवं अभिवृत्ति, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि।
3. आवश्यक साधनों एवं उनकी उपलब्धता का विश्लेषण, विकल्पों की खोज, संसाधनों के अवसर, रुकावटें एवं सीमाओं का विश्लेषण।
4. उपयुक्त माध्यम एवं विधि की पहचान, चयन एवं उपयोगिता। बहुमाध्यम को काम में लेने की व्यूह रचना।
5. शिक्षार्थियों के प्रतिनिधि समूह में निर्देशन की बहुमाध्यमी सामग्री का उपयोग।
6. पाठ्य सामग्री की विभिन्न मानदण्डों के सन्दर्भ में वैधता स्थापित करना। कार्यक्रम की सामर्थ्य एवं कमियों का पता लगाना। भावी सुधार करना तथा क्षेत्र में ट्राई आउट करना।
7. क्षेत्र में ट्राई आउट (Try out) के परिणामों का विश्लेषण एवं उसके आधार पर व्यूह रचना में आवश्यक सुधार करना।

तंत्रीय पद्धति में माध्यम का चयन, निर्देशन व्यूह रचना के चौथे चरण के रुप में आता है फिर भी हमें उक्त सभी बिन्दुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित करना होगा। हमें अनुदेशन व्यूह रचना के विकास में प्रमुखत: तीन मुख्य चरणों (आयोजन, उपयुक्त मानदण्डों के साथ बहुमाध्यम का चयन, एवं बहुमाध्यम की वैधता स्थापित करना) पर ध्यान देना होगा।

28.7 बहुमाध्यमी अनुदेशन सामग्री की योजना (Planning for Multi Media Instructional Material)

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, तंत्रीय पद्धति के प्रथम चार चरणों को दृष्टिगत रखते हुए निश्चित ही माध्यम का चयन, मानदण्डों के चयन के बाद आता है।

पाठ्यक्रम के प्रारुपकारों को प्राथमिकता के आधार पर निर्देशन तंत्र के प्रमुख उद्देश्यों का विश्लेषण करना चाहिए। मुख्य उद्देश्यों का पाठ्यक्रम के उद्देश्यों के संदर्भ में पुन: विश्लेषण किया जाना चाहिए। उद्देश्यों का विषय वस्तु केन्द्रित, शिक्षार्थी केन्द्रित एवं कर्म केन्द्रित उद्देश्यों के रुप में विश्लेषण किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु हमें विषय वस्तु का व्यवस्थित रुप में विश्लेषण करना होगा। उद्देश्यों में विशिष्ट उद्देश्यों के संदर्भ में शिक्षार्थी द्वारा किये जाने वाले कार्य भी सम्मिलित किए जाने चाहिए। वर्गीकरण के सिद्धांतों के अनुसार शैक्षिक

उद्देश्यों को उच्च क्रम से निम्न क्रम की ओर व्यवस्थित किया जा सकता है। उन्हें व्यवस्थित क्रम से लिखा जाना चाहिए।

दूसरे शब्दों में अधिगम के उद्देश्यों को शिक्षार्थी के दिखाई देने योग्य व्यवहार के रुप में विशिष्टीकृत किया जाना चाहिए। इन घटकों के विश्लेषण से माध्यम की पहचान एवं कर्म का चयन सुगम हो जायेगा।

उदाहरण के तौर पर अनुदेशन उद्देश्य इस प्रकार हैं - माइक्रो-टीचिंग कार्यक्रम पूरा करने के बाद बी.एड. प्रशिक्षु अध्यापन कौशल में प्रवीणता प्राप्त कर लेगा। यहां अध्यापन में समझाना, प्रश्न करना, पुनर्बलन तथा उद्दीपन शामिल है। इस उद्देश्य के कथन से बी.एड. प्रशिक्षुओं के लिए निर्धारित चार शिक्षण कौशलों के संदर्भ में शिक्षण व्यूह रचना, शिक्षण माध्यम एवं शिक्षण विधियों की पहचान की ओर संकेत होता है। इसके अतिरिक्त शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि, संस्था में उपलब्ध मानवीय एवं भौतिक संसाधन, सुविधाएँ एवं रुकावटें तथा उनका सूचीकरण का विश्लेषण के आधार पर बहुमाध्यमी व्यूह रचना की योजना बनाई जाती हैं।

बहुमाध्यमी सामग्री के योजना में माध्यम की पहचान, उसके लक्षण, उनके संचालन करने के तरीके, तैयार पाठ्य सामग्री की उपलब्धता तथा पाठ्य सामग्री जो निर्मित की जानी है, आदि विभिन्न पहलू सम्मिलित हैं।

उदाहरण के तौर पर माइक्रोटीचिंग पाठों द्वारा शिक्षण कौशल का विकास करने की दृष्टि से माध्यम, पाठ्य सामग्री एवं विधि के रुप में प्रदर्शन, पाठ्य वस्तु का अध्ययन, अवलोकन सूची, वीडियो पाठ, सी.सी.टी.वी. सुविधा, समान आयु समूह के छात्रों की अन्तःक्रिया, स्वयं का पृष्ठपोषण, शिक्षक का पृष्ठपोषण तथा समान आयु समूह का पृष्ठपोषण आदि विभिन्न उपक्रम सम्मिलित हैं। इस स्तर पर बहुमाध्यमी शिक्षण योजना में इस बात को ध्यान में रखा जाएगा कि कौनसा पाठ्य बिन्दु किस विधि एवं माध्यम से पढ़ाया जायेगा? मौखिक विषय वस्तु को किस प्रकार तथा दृश्य विषय वस्तु को किस प्रकार समझाया जायेगा? कितने समय, दूरी और माध्यम द्वारा कितना पाठ्यक्रम पढ़ाया जायेगा? प्रशिक्षण के किस घटक के लिए कौनसा हार्डवेयर उपयोग में लिया जाएगा? तथा विभिन्न अधिगम अनुभवों को समेकित रुप में कौन संगठित करेगा? माध्यमों की वैधता के लिए उपकरण का प्रशासन किस प्रकार होगा? बहुमाध्यमी शिक्षण योजना के स्तर पर इन प्रश्नों के बारे में विचार किया जाता है।

28.8 माध्यम चयन हेतु मानदण्ड (Criteria for selection of Media)

बहुमाध्यमी निर्देशन सामग्री के विकास में यह एक महत्वपूर्ण घटक है। प्रत्येक कार्यक्रम विकसित करने वाले को विशिष्ट पाठ्यक्रम के लिए माध्यम चयन करने से पूर्व निम्न मानदण्डों की जानकारी होना आवश्यक है। जैसा कि पूर्व में चर्चा कर चुके हैं। विशिष्ट आवश्यकताओं एवं उद्देश्यों

को दृष्टिगत रखते हुए विभिन्न माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है। सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक माध्यम दूसरे माध्यम के साथ में काम में लिया जा सकता है। एक उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक माध्यम सर्वोत्तम है, परन्तु वह उस समय उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। माध्यम चयन के रास्ते में इस तरह की समस्याएँ आ सकती है।

पाठ्यक्रम निर्माता को बहुमाध्यमी अनुदेशन सामग्री के चयन व्यवस्थीकरण के समय निम्न बातों को ध्यान रखना चाहिए-

माध्यम चयन को प्रभावित करने वाले विभिन्न घटकों को निम्न 5 प्रमुख वर्गो में विभाजित किया जा सकता है-

- कार्य घटक (Task Component)
- शिक्षार्थी घटक (Pupil Component)
- भौतिक घटक (Physical Component)
- निर्देशन घटक (Economic Component)
- आर्थिक घटक (Task Component)

28.8.1 टास्क घटक

इसमें दो प्रमुख बिन्दु सम्मिलित हैं, अधिगम उद्देश्य एवं पाठ्यवस्तु चर।

(अ) अधिगम उद्देश्य - इस बिन्दु पर पूर्व में चर्चा हो चुकी है। इसे निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है। शैक्षिक उद्देश्यों के वर्गीकरण में विभिन्न क्षेत्रों का ब्यौरा आया है, यथा-संज्ञानात्मक, एवं क्रियात्मक। प्रत्येक क्षेत्र के अपने उपघटक हैं। प्रत्येक विधि की अपने-अपने क्षेत्र में विशिष्ट उद्देश्य प्राप्त करने की अपनी-अपनी सामर्थ्य है। हम आवश्यकतानुसार उनमें से उपयुक्त विधि / माध्यम का चुनाव कर सकते हैं। आइए निम्न पर विचार करें -

- जानकारी में वृद्धि, विभिन्न विचारों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त करने आदि के लिए व्याख्यान विधि सर्वोत्तम है।
- समीक्षात्मक चिन्तन, आत्मविश्वास, वैज्ञानिक अभिवृत्ति और विचारों को तार्किक रुप से प्रस्तुत करने का कौशल आदि विकसित करने के लिए सेमीनार सर्वोत्तम है।
- समस्या समाधान करनें की क्षमता, समूहात्मक प्रवृत्ति, विचारों को मूल्यांकित करने की क्षमता तथा स्वयं करके सीखने की सकारात्मक अभिवृत्ति आदि विकसित करने की दृष्टि से परियोजना विधि (Project Method) सबसे अच्छी है।
- प्रदर्शन विधि द्वारा पर्यावरण के प्रति लगाव, तथ्यों तथा घटनाओं की जानकारी तथा विश्लेषणात्मक सोच विकसित होती है।
- स्वनिर्देशित मुद्रित सामग्री शिक्षार्थी में ज्ञान वृद्धि, समझ एवं विश्लेषणात्मक सोच एवं स्व मूल्यांकन क्षमता का विकास करने में सहायक है।
- श्रव्य कैसेट पाठ कल्पना शक्ति का विकास, सुनकर समझने की क्षमता विकसित करने तथा भाषा ज्ञान एवं शब्दकोष बढाने के लिए उपयुक्त है।

– शैक्षिक दृश्य श्रव्य पाठ के माध्यम से घटना एवं तथ्यों की निरीक्षण क्षमता तथा विश्लेषणात्मक चिंतन का विकास, विचारों का आदर करना तथा अभिरुचि एवं अभिवृत्ति में विकास किया जा सकता है।
– टेलीकॉन्फ्रैसिंग दूरस्थ शिक्षार्थी मे चैतन्यता, वास्तविकता जानने की क्षमता तथा विश्लेषणात्मक सोच विकसित करने मे सहायता करती है।
– उक्त विचार विमर्श से आप जान गये होंगे कि विभिन्न विधियों के अपने विशेष लक्षण हैं तथा वे विशिष्ट उद्देश्यों से जुडे हुए हैं। आप उस विधि एवं सामग्री का चयन कर सकते हैं जो उस उद्देश्य विशेष के लिए सर्वोत्तम है।

(ब) पाठ्य वस्तु चर- पाठ्य सामग्री की दृष्टि से प्रत्येक विषय क्षेत्र की अपनी विशेषताएं होती हैं। भौतिक विज्ञान में वस्तु एवं अनुभव आधारित साक्ष्य का विवेचन किया जाता है, जबकि साहित्य में कल्पना, सृजनात्मक चिंतन, विचारों का संक्षिप्तीकरण तथा विचारों के विस्तार पर विचार किया जाता है। गणित में तार्किक एवं विश्लेषणात्मक सोच की बात आती है।

विभिन्न पाठ्य सामग्री के क्षेत्र पर कार्य करते समय उपयुक्त माध्यम का चयन किया जा सकता है। सूचना देने का कार्य एक मार्गीय विधि से संभव हो सकता है, जबकि विश्लेषणात्मक अभ्यास के लिए द्विमार्गीय अन्तःक्रिया आधारित माध्यम की आवश्यकता होगी।

विभिन्न पाठ्य वस्तुओं से सम्बन्धित अधिगम अनुभव भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। विज्ञान के विषयों में प्रदर्शन, प्रयोग एवं समस्या समाधान माध्यम पर जोर दिया जाता है, जबकि साहित्य के अध्ययन में स्व अध्ययन पाठ्य सामग्री, श्रव्य पाठ एवं सामूहिक अन्तःक्रिया का महत्व दिया जाता है।

28.8.2 शिक्षार्थी घटक

शिक्षार्थी घटक के अन्तर्गत शिक्षार्थी की अधिगम सामर्थ्य, समूह आकार, उम्र अभिरुचि, अभिवृत्ति सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, शारीरिक क्षमताएँ आदि बातें सम्मिलित हैं।

1. अधिगम सामर्थ्य: शिक्षार्थी की अधिगम सामर्थ्य द्वारा ही माध्यम की प्रकृति निर्धारित होती है। निरक्षर बालकों की अपेक्षा निरक्षर प्रौढ़ क्रियात्मक साक्षरता पर वार्ता को अच्छी प्रकार सुन व समझ सकते हैं। यहां तक कि संज्ञानात्मक दृष्टि से भी शिक्षार्थी की सामर्थ्य महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है। तीव्र गति से सीखने वाले शिक्षार्थी को माध्यमों की सहायता की कम आवश्यकता होती है, जबकि मन्द गति वाले शिक्षार्थी को माध्यमों की अधिक सहायता की आवश्यकता होती है।

2. समूह आकार: माध्यम की प्रकृति बहुत कुछ शिक्षार्थियों के समूह के आकार पर निर्भर करती है। बड़े जन समूह के लिए माँस मीडिया (जन संचार माध्यम) की आवश्यकता होती है, जबकि विशेषज्ञों के लिए विशेष पाठ्य सामग्री वाली संदर्भ पुस्तकें उपयुक्त है। व्यक्तिश: शिक्षार्थी के लिए वैकल्पिक स्व- निर्देशित पाठ्य सामग्री की आवश्यकता है, जबकि शिक्षार्थी समूह के लिए सेमीनार, सामूहिक विचार-विमर्श, प्रोजेक्ट कार्य, क्षेत्रीय भ्रमण, क्विज तथा सिम्पोजियम प्रयुक्त होते हैं।

3. शिक्षार्थी का परिवेश: शिक्षार्थी के परिवेश द्वारा माध्यम की प्रकृति निर्धारित होता है। दूरस्थ शिक्षा के लिए आमने-सामने शिक्षण स्थिति की अपेक्षा बहुत भिन्न माध्यमों की आवश्यकता होती है। व्याख्यान, समूह, चर्चा, शिक्षक द्वारा प्रदर्शन, प्रयोग, ओवर हेड प्रोजेक्टर का उपयोग आदि कक्षा-कक्ष स्थिति में पढाने के लिए उपयुक्त है, जबकि दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रम के लिए मुद्रित पाठ्य सामग्री, दूरदर्शन कार्यक्रम, आकाशवाणी, कम्प्यूटर समर्थित शिक्षण, टेलीकांफ्रैसिंग आदि की अत्यधिक आवश्यकता होती है।

4. उम्र: विकास की विभिन्न अवस्थाएँ विशेषत: शिक्षार्थी की आयु पर भी माध्यम की प्रकृति बहुत अधिक निर्भर करती है। बच्चों के कार्यक्रम वयस्कों के कार्यक्रमों से एकदम भिन्न होते हैं। माध्यम की प्रकृति, विषय वस्तु का प्रस्तुतीकरण, अक्षरों का आकार, भाषा का प्रयोग, प्रस्तुतीकरण का संदर्भ, पात्र एवं प्रस्तोता में शिक्षार्थी की आयु के आकार पर भिन्नता होती है।

5. सामाजिक सांस्कृतिक एवं आर्थिक पृष्ठभूमि: अनुदेशन तंत्र में शिक्षार्थी का माध्यम से परिचय एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता हैं। ग्रामीण बालकों की अपेक्षा शहरी क्षेत्र के बालक विभिन्न माध्यमों से अच्छी प्रकार परिचित होते हैं। उदाहरण के तौर पर कम्प्यूटर साक्षरता से नगरीय मध्यम वर्गीय छात्र भली-भाँति परिचित होते हैं। दूसरी ओर अच्छे खाते-पीते बालकों की अपेक्षा सामाजिक पिछड़े वर्ग के बालकों के लिए शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए माध्यम एक निर्णायक भूमिका अदा करता है। लड़का या लड़की का होना भी माध्यम के चयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। महिलाओं एवं सामाजिक रुप से पिछड़े एवं दलितों के लिए भी माध्यम का विशिष्ट महत्व है।

आर्थिक पृष्ठभूमि शिक्षार्थी के लिए विभिन्न माध्यमों की सुगमता का निर्धारण करती है। निम्न सामाजिक एवं आर्थिक स्तर के लोगों की अपेक्षा आर्थिक रुप से सम्पन्न लोगों के लिए मल्टी चैनल दूरदर्शन कार्यक्रम, कम्प्यूटर समर्थित अधिगम, इन्टरनेट एवं ई.मेल कार्यक्रम आदि सुगमता से उपलब्ध है।

शिक्षार्थी की भाषा विशेषतौर से शिक्षार्थी की बोली माध्यम निर्धारण में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। बहुत सी भाषाएं बोले जाने वाले राष्ट्र जैसे भारत में खुले विश्वविद्यालय के द्वारा विशिष्ट स्थानीय भाषा में कार्यक्रम तथा अध्ययन सामग्री बनाने की आवश्यकता है।

मनोवैज्ञानिक लक्षण जैसे रुचि, अभिवृत्ति, पूर्वज्ञान, संतोष प्राप्ति का स्तर एवं ज्ञान ग्रहण करने का स्तर माध्यम चयन की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। शिक्षार्थी के इन लक्षणों का अध्ययन किया जाना विशेषज्ञों के लिए माध्यम चयन हेतु उपयोगी है।

शारीरिक दोष वाले शिक्षार्थी के लिए विशिष्ट माध्यम की आवश्यकता है। अनुदेशन सामग्री के निर्माण के समय रंगान्धता आदि दोषों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।

28.8.3 भौतिक घटक

इनका सम्बन्ध माध्यम के तकनीकी पहलुओं से है। उपलब्ध तकनीक के आधार पर माध्यम की प्रकृति निर्धारित की जाती है। उदाहरण के लिए अग्रणी राष्ट्रों मे तकनीकी विकास के कारण माध्यमों की उपलब्धता अधिक है। सेटेलाइट तकनीक ने विभिन्न दूरदर्शन कार्यक्रम,

टेलीकान्फ्रैन्सिंग तथा नेट वर्किंग आदि सुविधाऐं उपलब्ध कराई हैं, जो आज से दो दशक पूर्व उपलब्ध नहीं थी।

28.8.4 अनुदेशन सम्बन्धी घटक

ये घटक अनुदेशन के प्रबन्ध (अध्यापक की भूमिका, पठन-पाठन माध्यमों के वर्गीकरण का उपयोग एवं निर्देशन घटनाएं) से सम्बन्धित है।

(अ) अध्यापक की भूमिका- माध्यम के उपयोग में अध्यापक किस सीमा तक पहल करता है, इस पर भी बहुमाध्यमी कार्य प्रणाली की सफलता निर्भर करती है। पठन-पाठन संस्थितियो में माध्यमों के चयन के लिए अध्यापक की तत्परता, माध्यम से जानकारी, माध्यम उपयोग का कौशल एवं बहुमाध्यमों की सहायता से गतिविधियाँ आयोजित करने आदि घटक महत्वपूर्ण स्थान रखते है।

(ब) पठन-पाठन शैली- पठन-पाठन संस्थितियों में पठन-पाठन शैली बहुत कुछ माध्यम के लचीलेपन एवं अनुकूलता से सम्बद्ध हैं। पठन-पाठन संस्थितियों में क्या शिक्षक विभिन्न माध्यमों को एकीकृत करने को तैयार है? शिक्षक माध्यम का सर्वोत्तम उपयोग करते हुए किस सीमा तक विभिन्न तकनीक को अपनाता रहा है। इन बातों पर भी बहुमाध्यमी की सफलता निर्भर करती है।

(स) माध्यमों के वर्गीकरण का उपयोग- इसका तात्पर्य है, पाठ्यवस्तु की प्रकृति, चलित अथवा स्थिर चित्र, अवधारणा की प्रकृति, सार बिन्दु लक्ष्य की प्रकृति आदि के संदर्भ में माध्यम का संगठन। किस प्रकार के अधिगम अनुभवों के लिए किस प्रकार के उद्दीपनों की आवश्यकता है? इन बातों पर माध्यम का चयन निर्भर है।

(द) अनुदेशन घटनाएँ- इसका अर्थ है अधिगम संस्थितियों में माध्यम का उपयोग करते हुए शिक्षार्थी का अभिनवन। दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों के संदर्भ में माध्यम प्रयोग के बारे में शिक्षार्थी की जागरुकता का स्तर बहुमाध्यमी अनुदेशन में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

28.8.5 आर्थिक घटक

इसमें सामग्री की उपलब्धता, समय, संसाधन, व्यावहारिकता एवं पठन सामग्री का मूल्य सम्मिलित किए जा सकते हैं।

1. पाठ्य सामग्री की उपलब्धता- पाठ्य सामग्री एवं सम्बन्धित वस्तुएँ, माध्यम के देखभाल व मरम्मत की सुविधा आदि बहुत महत्वपूर्ण घटक है।
2. समय-पाठ्य सामग्री के विकास एवं उत्पादन हेतु आवश्यक समय एवं इसके वितरण, ब्रॉडकास्ट एवं टेलीकास्ट के लिए उपलब्ध समय आदि पर भी माध्यम का चयन निर्भर करता है। पाठ्यक्रम की विषय अनुसूची के अनुकूल माध्यम चयन में समय को भी प्रमुखता से ध्यान में रखा जाता है।
3. संसाधन- माध्यम उत्पादन हेतु मानवीय एवं तकनीकी सहयोग की आवश्यकता होती है। सॉफ्टवेयर निर्मित करने की सुविधा, शिक्षित एवं प्रशिक्षित व्यक्ति, सामग्री का निर्माण एवं वितरण आदि पर माध्यम का चयन निर्भर करता है। जटिलता पूर्वक उत्पादित माध्यम की अपेक्षा सरलतापूर्वक उत्पादित माध्यम को प्रमुखता दी जाती है।

4. व्यावहारिकता - क्या उपलब्ध माध्यम वास्तविक परिस्थितियों में व्यावहारिक है? माध्यम की सफलता में यही प्रमुख प्रश्न है। माध्यम के उपयोग हेतु पर्यावरणीय परिस्थितियाँ, ऊर्जा वितरण, सुरक्षा, माध्यम का प्लेसमेंट, रख-रखाव आदि अत्यन्त महत्वपूर्ण बिन्दु हैं।
5. मूल्य प्रभाव - यह अति महत्वपूर्ण बिन्दु है। विशेषत: विकासशील देशों के संदर्भ में विभिन्न मूल्य घटकों की गणना विकास, उत्पादन, वितरण, उपयोगिता आदि की दृष्टि से की जाती है। मूल्य प्रभाव दूसरी विधियां एवं माध्यमों की तुलना में भी देखा जाता है। मूल्य घटक का विचार प्रमुखत: तंत्र के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति के संदर्भ में किया जाता है।

28.9 बहुमाध्यमी पाठ्य सामग्री की वैधता (Validity of Multi Media Instructional Materials)

यह अनुदेशन व्यूह रचना का महत्वपूर्ण चरण है जिसमें यह स्थापित किया जाता है कि बहुमाध्यमी कार्यप्रणाली से हो रही है अथवा नहीं? बहुमाध्यमी अनुदेशन तंत्र में वैधता ज्ञात करना तंत्रों का ही एक भाग बन गया है। सामग्री के बारे में वैधता का पता दो स्तरों पर लगाया जा सकता है, क्रमश: विशेषज्ञों की राय जानकर तथा सेम्पल के ट्राई आउट द्वारा।

ट्राई आउट द्वारा उद्देश्यों की पूर्ति के संदर्भ में सामग्री की प्रभावशीलता का पता लगाते हैं। प्रभावशीलता का पता लगाने के अन्य मानदण्ड जैसे शिक्षार्थी की प्रतिक्रिया, शिक्षार्थी की अभिवृत्ति, शिक्षक की प्रतिक्रिया, उपयोगिता तथा मूल्य प्रभाव आदि भी हो सकते हैं।

सामग्री की वैधता के बारे में विशेषज्ञों की सलाह अनुदेशन व्यूहरचना की विकास प्रक्रिया का ही एक भाग माना जा सकता है। चयनित न्यादर्श पर अनुदेशन व्यूह रचना का प्रयोग करने के बाद मानदण्ड जाँच द्वारा छात्रों की उपलब्धि तथा शिक्षकों की प्रतिक्रिया, अभिवृत्ति तथा सलाह ज्ञात की जाती है। नमूने के तौर पर वास्तविक मूल्य ज्ञान किया जाता है तथा उसकी लक्ष्य समूह हेतु गणना कर ली जाती है।

28.9.1 बहुमाध्यमों के विभिन्न घटकों पर विशेषज्ञों की सलाह जानने की प्रारूप-

इसे निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

क्र.स	घटक	विशेषज्ञों का मूल्यांकन			
		श्रेष्ठ	उत्तम	संतोषप्रद	असंतोषप्रद
1.	उद्देश्य पूर्ति के संदर्भ में माध्यम की उपयुक्तता				
2.	अनुदेशन का कार्य करने वाली सामग्री				
3.	अवधारणा की स्पष्टता एवं विकास				
4.	सामग्री की अनुकूलता				
5.	सामग्री की नवीनता, गतिशीलता एवं संक्षिप्तता				
6.	माध्यम / सामग्री द्वारा अन्तःक्रिया को प्रोत्साहन				
7.	शिक्षार्थियों द्वारा प्रयोग हेतु सामग्री का लचीलापन				
8.	चिंतन के लिए उद्दीपन के रुप में सामग्री				

9. सकारात्मक सहयोग उत्पन्न करने में सहयोग के रुप में सामग्री
10. शिक्षार्थियों में तत्परता एवं उत्प्रेरण उत्पन्न करने के रुप में
11. शिक्षार्थियों में उचित अनुक्रिया जाग्रत करने के रुप में
12. गतिविधि आधारित शिक्षण में सहयोगी
13. शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि के अनुरुप सामग्री की उपयोगिता
14. तकनीकी सरलता से उपलब्ध होना
15. संचालित करने में लचीली
16. टिकाऊपन / स्थायित्व
17. संचालन एवं रख-रखाव का ज्ञान
18. मूल्य दृष्टिकोण

उक्त बिन्दुओं के आधार पर विशेषज्ञों की राय जानी जा सकती है और समान बिन्दुओं के आधार पर शिक्षक और शिक्षार्थियों का अभिमत ज्ञात किया जा सकता है। विशेषज्ञों द्वारा वैधता ज्ञात करने हेतु माध्यम केन्द्रित अन्य बिन्दु भी सलाह अनुसूची में जोड़े जा सकते हैं।

28.9.2 बहु माध्यमी अनुदेशन पाठ्य सामग्री पर अनुसंधान एवं उसकी प्रभावशीलता-

भारतीय सन्दर्भ में बहु माध्यमी अनुदेशन पाठ्य सामग्री के विकास एवं वैधता के क्रम में विभिन्न स्तरों पर कतिपय प्रयास किए गए हैं-

– सन् 1982 में रविन्द्रनाथ ने सैकेंडरी स्कूल स्तर पर विज्ञान शिक्षण पर 12 घटकों (शिक्षक द्वारा प्रस्तावना, अभिक्रमित अधिगम सामग्री, व्याख्यान, समूह शिक्षण, प्रश्नोत्तरी विद्या, शिक्षक प्रदर्शन के साथ छात्रों द्वारा गतिविधियॉ, विचार-विमर्श, दृश्य-श्रव्य प्रदर्शन, संक्षिप्तीकरण, मानदण्ड संदर्भ टेस्ट, फीडबेक अधिगम अभ्यास एवं गृहकार्य) के साथ बहु माध्यमी सामग्री निर्मित की।

– वर्धिनी ने 1982 में सैकेंडरी स्तर पर भौतिक एवं रसायन पढ़ाने के लिए इसी प्रकार की व्यूह रचना का संचालन किया। दोनों अध्ययनों में बहु माध्यमी पाठ्य सामग्री की उपलब्धि की दृष्टि से प्रभावशीलता प्रवीणता के स्तर की प्राप्ति हुई तथा बहु माध्यमी कार्यप्रणाली के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण प्राप्त हुआ।

– मेनन ने 1984 में उच्च शिक्षा के स्तर पर शैक्षिक प्रौद्योगिकी पाठ्यक्रम के संदर्भ में बहु माध्यमी अनुदेशन व्यूह रचना विकसित की। उन्होनें व्यूह रचना में पी.एल.एम., नियोजित पाठ, व्याख्यान, समूह पाठन, सेमीनार, कमेन्ट्रीयुक्त स्लाईड प्रदर्शन, अभ्यास पुस्तिकाएँ, विचार विमर्श, पुस्तकालय कार्य एवं संक्षिप्तीकरण आदि 9 तत्वों को समाहित किया।

– सन्सनवाल ने 1979 में अधिस्नातक स्तर पर अनुसंधान विधिशास्त्र के लिए एकीकृत माध्यम पाठ्य सामग्री का विकास किया। इन्होंने अपनी सामग्री में पी.एल.एल., लाईब्रेरी कार्य, विचार-विमर्श, सेमीनार आदि को विभिन्न घटकों के रुप में सम्मिलित किया। सामग्री का अधिगम की प्रवीणता, एवं शिक्षार्थियों की सकारात्मक प्रतिक्रिया के रुप में मूल्यांकन किया गया। 1984 में मेनन ने अपनी सामग्री को पारम्परिक शिक्षण विधि की अपेक्षा मूल्य की दृष्टि से प्रभावशाली पाया। उक्त प्रयोग भारतीय संस्थितियों में बहु माध्यमी पाठ्य सामग्री की प्रभावशीलता को प्रदर्शित करते हैं। उसके बाद के अध्ययनों

से स्कूल तथा उच्च स्तर पर ई.टी.वी. के कार्यक्रमों के साथ शिक्षक की प्रस्तावना तथा अन्त:क्रिया को एकीकृत करके प्रभावशाली बनाया गया है। इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय बहु माध्यमी पाठ्यक्रम, जिसमें अध्ययन सामग्री, श्रव्य कैसेट पाठ, वीडियो पाठ, शिक्षक की मार्गदर्शन, काउन्सलिंग तथा टेलीकांफ्रैसिंग सम्मिलित है, काम में लेता है। ऐसे पाठ्यक्रमों की प्रभावशीलता का अध्ययन किया जाना चाहिए।

28.10 उपसंहार (summary)

इस इकाई में आपने बहु माध्यमी अवधारणा, इसके लक्षण तथा बहु माध्यमी अनुदेशन तंत्र काम में लेने का औचित्य आदि की जानकारी प्राप्त की। बहु माध्यमी के विकास के विभिन्न घटकों (टास्क घटक, शिक्षक घटक, शिक्षार्थी घटक, भौतिक घटक, निर्देशन घटक तथा आर्थिक घटक) के बारे में सावधानी बरतनी होगी। सामग्री का मूल्यांकन करते समय विशेषज्ञों की राय, शिक्षक व शिक्षार्थी का अभिमत, मूल्य प्रभावशीलता, समय एवं उद्देश्यों की प्राप्ति आदि को ध्यान में रखना चाहिए।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

1. माध्यम को प्रभावित करने वाले दो अति महत्वपूर्ण घटक बतलाइए। उपयुक्त कारण दीजिए।
2. बहु माध्यम पाठ्य सामग्री की प्रभावशीलता के मानदंड बतलाइए। उपयुक्त उदाहरण दीजिए।
3. कोई 5 घटक बतलाइए, जिनके आधार पर बहु माध्यमी पाठ्य सामग्री की वैधता के बारे में अभिमत लिया जा सके।
4. बहु माध्यम के प्रमुख लक्षण बतलाइए।
5. माध्यम को परिभाषित कीजिए।

28.11 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

1. शुक्ला एस., : ट्रेण्ड रिपोर्ट ऑन एज्यूकेशनल टेक्नोलोजी इन बुच: एम.बी. फोर्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एज्यूकेशन, एन.सी.ई.आर.टी., न्यू देहली, 1992.
2. मुखोपाध्याय एम., ईयर बुक ऑन एज्यूकेशनल टेक्नोलोजी ए.आई.ए.ई.टी., नई दिल्ली, 1989.

इकाई-29

दूरस्थ शिक्षा में मुद्रण आधारित, स्व-अध्ययन सामग्री, इलैक्ट्रॉनिक मीडिया, सी.ए.आई. इन्टरैक्टिव वीडियों. टैलीकॉफ्रैन्सिंग कम्प्यूटर नैटवर्किंग माध्यम का प्रयोग Use of Media in Distance Education, Print Based, Self Study Materials, Electronic Media, CAI, Interactive Video, Teleconferencing, Computer Net Working

इकाई की संरचना

(Structure of Unit)

29.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

29.1 प्रस्तावना
(Introduction)

29.2 मुद्रण आधारित माध्यम
(Print Based Media)

29.2.1 पाठ्य पुस्तकें
(Text Books)

29.2.2 निर्देश पुस्तिका
(Manual)

29.2.3 अभिक्रमित अधिगम सामग्री
(Programmed Learning Material)

29.2.4 उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री
(Advanced Organiser Learning Material)

29.2.5 पत्राचार पाठ
(Correspondence Lesson)

29.2.6 मुक्त अधिगम सामग्री
(Open Learning Material)

29.3 ऑडियो-वीडियो आधारित माध्यम
(Media Based on Audio Video)

29.3.1 शैक्षिक आकाशवाणी

(Educational Broad Cast)
29.3.2 आकाशवाणी दृष्टि
(Broadcast View)
29.3.3 शैक्षिक दूरदर्शन
(Educational Television)
29.3.4 ऑडियो कैसेट एवं वीडियो कैसेट
(Audio Cassette and Video Cassette)
29.3.5 शिक्षक द्वारा वीडियो अनुदेशन
(Video Instruction by Teacher)
29.3.6 दूरभाष
(Telephone)
29.4 इलैक्ट्रॉनिक माध्यम
(Electronic Media)
29.4.1 कम्प्यूटर समर्थित अधिगम
(Computer Assisted Learning)
29.4.2 इन्टर एक्टिव वीडियो
(Interactive Video)
29.4.3 टेली कान्फ्रेसिंग
(Tele Conferencing)
29.4.4 टेली टैक्स
(Tele Text)
29.4.5 वीडियो टैक्स
(Video Text)
29.4.6 कम्प्यूटर नेटवर्किंग
(Computer Networking)
29.5 सारांश
(Summary)
29.6 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
(Bibliography)

29.0 लक्ष्य एवं उद्देश्य
(Aims and Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद विद्यार्थी-

(1) दूरस्थ शिक्षा में काम आने वाले माध्यमों का अर्थ एवं प्रकृति समझ सकेंगे। जैसे, मुद्रण आधारित माध्यम, यांत्रिक माध्यम तथा इलेक्ट्रोनिक माध्यम आदि।

(2) पाठ्यपुस्तकों, परीक्षा निर्देशिकाओं, हेण्डबुक्स अभिक्रमित अधिगम सामग्री, एडवान्स ऑर्गनाइजर अधिगम सामग्री, पत्राचार पाठ, अध्ययन निर्देशिकाएं, मुक्त अधिगम सामग्री जैसे मुद्रित माध्यमों की कमियां व अच्छाईयाँ बता सकेंगे।

(3) दूरस्थ शिक्षा में आकाशवाणी, दूरदर्शन, दृश्य-श्रव्य साधन, इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों, टेलिफोन, श्रव्य कैसेट, दृश्य कैसेट, कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन, इन्टर एक्टिव वीडियो, टेलिकांफ्रेनसिंग टेलिटैक्स्ट एवं कम्प्यूटर नेटवर्किंग के उपयोग एवं कमियों की सूची बना सकेंगे।

29.1 प्रस्तावना (Introduction)

प्रौद्योगिकी उन्नति ने संचार प्रणाली में पर्याप्त योगदान किया है, जबकि जटिल हार्डवेयर तकनीक पर आधारित संचार विश्व में सब जगह उपलब्ध है। सॉफ्टवेयर प्रणाली में उन्नति से संचार प्रगति हुई है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में संचार प्रौद्योगिकी का सर्वोत्तम उपयोग हुआ है। व्यवहार विज्ञान एवं समाज विज्ञान में उन्नति ने शिक्षा व्यवस्था में उन्नत संचार व्यवस्था को बढ़ावा दिया है। दूरस्थ शिक्षा में संचार से प्रक्रिया के साथ-साथ प्रबन्ध में भी सहयोग मिला है। भारत तथा दूसरे देशो में दूरस्थ शिक्षा में उपयोग में आने वाले लगभग 20 माध्यमों का वर्णन इस इकाई में किया गया है। इसमें से कुछ भारतीय स्थितियों में भी काफी लोकप्रिय है।

29.2 मुद्रण आधारित माध्यम (Print Based Media)

दूरस्थ शिक्षा में मुद्रण आधारित माध्यम अत्यन्त लोकप्रिय हैं। आपको खुला विश्वविद्यालय के मुद्रित पाठों के अध्ययन का अनुभव है। दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में कई प्रकार की मुद्रित सामग्री काम में ली जाती है। इनमें पाठ्य पुस्तकें, निर्देश पुस्तिकाएं, मार्ग दर्शिकाएं, पत्राचार पाठ, अभिक्रमित अधिगम सामग्री एवं अन्य अधिगम सामग्री सम्मिलित है। आइए, खुला विश्वविद्यालय के संदर्भ में इस सामग्री का अर्थ, उपयोगिता एवं सीमाएं जानने का प्रयास करें।

29.2.1 पाठ्य पुस्तकें (Text Books) :

पाठ्यपुस्तकों से आप सब परिचित हैं। स्कूल की प्रारम्भिक अवधि में पाठ्य पुस्तकें समस्त पाठ्यक्रम को समाहित करते हुए लिखी जाती है। भारतीय सन्दर्भो में ज्यादातर छात्र तथा अध्यापक सर्टिफिकेट, डिप्लोमा अथवा डिग्री हेतु अध्ययन के लिए पाठ्यपुस्तकों पर निर्भर रहते है।

पाठ्य पुस्तकों के अत्यधिक लाभ हैं। पाठ्यक्रम से सम्बन्धित समस्त अधिगत बिन्दु एक मुद्रित पाठ्यपुस्तकों में आ जाते हैं। प्रौढों के लिए इसे काम में लेना सरल होता है। एक शिक्षार्थी पाठ्य पुस्तक का उपयोग कक्षा में कालांश में, कालांश से पूर्व अथवा बाद में तथा विद्यालय समय के अतिरिक्त समय में भी कर सकता है। प्रभावशाली स्व अधिगम का साधन होते हुए भी पाठ्य पुस्तक की सीमाएँ निम्नानुसार हैं -

1. पाठ्य पुस्तकें विषय वस्तु केन्द्रित होती है। सामान्यतया लेखक स्व अधिगम के सिद्धान्तों को ध्यान में नहीं रखते।
2. शिक्षार्थी को स्वयं की प्रगति के बारे में फीडबेक प्राप्त करने हेतु विशेष प्रयास नहीं किये जाते।
3. एक लेखक "वह क्या जानता है?" और ' "क्या नहीं जानता?"' को आधार मानकर पुस्तक लिखता है। इस प्रकार वह शिक्षार्थी की आवश्यकताओं, स्थितियों एवं अभिप्रेरणा की अवहेलना कर देता है।
4. कुछ पाठ्य पुस्तकों में इकाई के अन्त में प्रश्न दिये होते हैं। यह सन्देहास्पद है कि ये प्रश्न विद्यार्थी को भविष्य में उन्नति के लिए आवश्यक फीडबेक जिज्ञासा तथा अभिप्रेरणा प्रदान करते होंगे।
5. पाठ्य पुस्तकें "थर्ड पर्सन" शैली में लिखी जाती है, जिससे पाठकों में भेदभाव की स्थिति उत्पन्न होती है।
6. पाठ्य पुस्तकों में सारणियां, नक्शे, चार्ट्स जैसी दृश्य सामग्री होती है, परन्तु उनके उपयोग के लिए आवश्यक निर्देश नहीं होते।
7. पाठ्य पुस्तकों का छात्रों में विभिन्न स्तर के कौशल से कोई सरोकार नहीं होता।

उक्त बातों के अतिरिक्त पाठ्य पुस्तकों की और भी सीमाएं हैं। अत: यह ध्यान रखना चाहिए कि पढ़ने के लिए सम्पूर्ण रूप से पाठ्य-पुस्तक पर ही निर्भर नहीं रहे। निश्चित तौर पर दूरस्थ शिक्षार्थी के लिए पाठ्य पुस्तकें पढ़ने के तरीकों में से एक है।

29.2.2 निर्देश पुस्तिका (Manuals) एवं मार्गदर्शिका (Handbooks)

निर्देश पुस्तिका में मुद्रित सामग्री का उपयोग कैसे करना है? प्रायोजना को कैसे चलाना है? जांच कैसे करना है? तथा प्रयोगों को कैसे करना है? आदि के बारे में दिशा निर्देश होते है।

मार्ग दर्शिका अधिगम पाठ्य सामग्री तथा निर्देश पुस्तिका दोनों का कार्य सम्पन्न करती है। उनका निर्माण विभिन्न विषय वस्तु से सम्बन्धित विभिन्न गतिविधियों को आधार बना कर किया जाता है। निर्देश पुस्तिका एवं मार्गदर्शिका के दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में कुछ लाभ हैं। दूरस्थ शिक्षार्थी शिक्षकों से दूर रहते है। अत: निर्देश पुस्तिकाएं अध्यापकों के प्रतिस्थापक के रूप में काम करती है, क्योंकि इनमें प्रत्येक पाठ के बारे मे जानकारी होती है। इनमें चित्र, अभ्यास तथा निर्देश भी दिये हुए होते है। आपने इन्दिरा गांधी खुला विश्वविद्यालय द्वारा अपने छात्रों के लिए लिखी मार्ग दर्शिकाएं देखी होगीं, जिसमें अध्ययन

अनुसूची, अध्ययन इकाईयों में सम्बन्ध, गृह कार्य, दृश्य-श्रव्य पाठ तथा दूरदर्शन कार्यक्रमों आदि का उल्लेख होता है।

कभी-कभी मार्ग दर्शिकाओं में बहुत अधिक दिशा निर्देश तथा सूचनाएं होने से भी शिक्षार्थी को सहायता मिलने के बजाय उपयोगकर्ता जटिलताओं में उलझ जाता है।

29.2.3 अभिक्रमित अध्ययन सामग्री (Programmed Learning Material)

दूरस्थ शिक्षा में अभिक्रमित अध्ययन सामग्री का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। इसे सामान्यतया पी.एल.एम. के नाम से जाना जाता है। निम्न लक्षणों के कारण इसे प्रभावशाली स्व अध्ययन सामग्री माना गया है -

(1) छोटे-छोटे अंशों में तथा निश्चित क्रमानुसार प्रस्तुतीकरण का सिद्धान्त

(2) तत्काल पुनर्बलन का सिद्धान्त

(3) शिक्षार्थी द्वारा तुरन्त प्रतिक्रिया का सिद्धान्त

(4) शिक्षार्थी की गतिविधियों एवं अध्ययन को अपनी गति एवं सुविधा के अनुसार चलाने का सिद्धान्त

(5) अध्ययन की सतत् प्रक्रिया में स्व मूल्यांकन का सिद्धान्त

आप अभिक्रमित सामग्री के विभिन्न प्रकारों के बारे में जानते होंगे, जैसे, रेखीय कार्यक्रम, शाखीय कार्यक्रम तथा मैथेटिक कार्यक्रम। प्रत्येक प्रकार की अभिक्रमित सामग्री की स्व अध्ययन सामग्री की दृष्टि से अपनी-अपनी सुविधाऐं तथा सीमाऐं हैं।

रेखीय कार्यक्रम (Linear Programme) क्रमानुसार अध्ययन को प्रोत्साहित करता है। मन्द गति (Slow leaner) वाले तथा मध्यम गति वाले शिक्षार्थी इससे अधिक लाभान्वित होते हैं। इससे ज्ञान एवं समझ के शिक्षण बिन्दुओं को अच्छी प्रकार पढाया जा सकता है। रेखीय कार्यक्रम से कौशल आधारित अधिगम को भी गति मिलती है।

रेखीय कार्यक्रम की कुछ सीमाऐं हैं। इसमें शिक्षार्थी विशिष्ट गति एवं यांत्रिक रूप से पढ़ने में हतोत्साहित अनुभव करता है। तीव्र बुद्धि वाले विद्यार्थी चरणबद्ध गतिविधियों को दोहराते रहने के लिए विवश होता है।

शाखीय कार्यक्रम (Branching Programme) तीव्र बुद्धि वाले शिक्षार्थियों तथा मन्द गति से सीखने वाले शिक्षार्थियों के अध्ययन को प्रोत्साहित करता है। लम्बी मुख्य शाखा, छोटे-छोटे भागों में विषय वस्तु बहुत विकल्पी प्रश्न तथा शिक्षार्थी को अपनी गति व रास्ता चुनने की सुविधा प्रदान करती है, जो रेखीय कार्यक्रम में नहीं होती।

रेखीय कार्य की भांति शाखीय कार्यक्रम की भी कुछ सीमाऐं है। इससे उच्च स्तरीय अनुदेशन उद्देश्यों जैसे मूल्यांकन क्षमताऐं, विश्लेषण क्षमताऐं तथा व्याख्या की क्षमताऐं विकसित नहीं हो पाती है। समस्त प्रकार की विषय वस्तु के लिए शाखीय कार्यक्रम उपयुक्त नहीं है।

अभिक्रमित अधिगम सामग्री की मैथेटिक शैली (Mathetic System) में परम्परागत अभिक्रमित अधिगम सामग्री की अपेक्षा कुछ विशेषताऐं होती है। मैथेटिक शैली अधिगम उद्देश्यों के अनुरूप सीखने के चरणों को सुव्यवस्थित करने, बड़े चरणों, अवधारणाओं पर निष्णातता तथा विविध प्रकार के अधिगम तरीकों (खेल, दृश्य साधन, स्व आधारित गतिविधियां तथा विचारों के सामान्यीकरण आदि) पर जोर देती है। मैथेटिक शैली में संरचनात्मक अधिगम गतिविधियों की कमी रहती है। अधिगम के सभी उद्देश्यों को व्यावहारात्मक स्वरूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। अत: मैथेटिक शैली को अधिगम उद्देश्यों (जैसे मूल्यांकन, मूल्यों का विकास तथा अभिवृत्ति निर्माण आदि) के लिए काम में नहीं लिया जा सकता। कतिपय सीमाओं के होते हुए भी पीएल.एम. भारत में तथा विदेशों की अधिकांश दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में परम्परागत अथवा रूपान्तरित स्वरूपों में काम में लिया जाता है।

29.2.4 उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री (Advance Organiser Learning Material)

उन्नत प्रबन्धक एक प्रारम्भिक अधिगम सामग्री है, जिसका उद्देश्य सारांश का विकास तथा सामान्यीकरण का समावेश है। इसकी निम्न विशेषताऐं है -

- मौखिक व दृश्य सूचनाओं का छोटा संग्रह।
- अधिगम से पूर्व प्रस्तुत की जाने वाले पाठ्य सामग्री का विस्तृत रूप।
- स्मरण की जाने वाली सूचनाओं में से विषयवस्तु जिसमें कुछ भी विशिष्ट न हो।
- "जो कुछ पढ़ा जाना है" के तत्वों में आपस में तर्कसंगत सम्बन्ध को स्थापित करना।
- शिक्षार्थी की समझने की क्षमता को प्रभावित करना।
- साधारणतया उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री के उपयोग के निम्न चरण होते है -
- विषयवस्तु को क्रमानुसार जमाना।
- अधिगम कार्य के संदर्भ में शिक्षार्थी का निदान।
- उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री का निर्माण।
- उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण।
- पूर्व जाँच (Try out) करना।

उन्नत प्रबन्धक अधिगम सामग्री का उपयोग प्रभावशाली स्व-अधिगम सामग्री के रूप में किया जाता है, क्योंकि वे दिन-प्रतिदिन के उदाहरणों अथवा विशिष्ट वातावरण वाले उदाहरणों को प्रोत्साहित करते है। पुराने अनुभवों को नये अनुभवों से जोड़ा जाता है। विचारों के संक्षिप्तीकरण के अतिरिक्त यह वास्तविक अधिगम को भी प्रोत्साहित करता है। एडवान्स आर्गेनाइजर की कुछ सीमाएँ है।

29.2.5 पत्राचार पाठ (Correspondence Lesson)

पत्राचार पाठों का उपयोग बड़ी संख्या में व्यापक रूप से भारत तथा विदेशों की दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में किया जाता है। प्रत्येक दूरस्थ शिक्षण संस्था पाठ्य वस्तुओं को प्रस्तुत करने का अपना स्वयं का प्रारूप तैयार करती हैं। इन्हें संरचनात्मक स्वरूप में प्रस्तुत किया जाता है। इनका केन्द्र बिन्दु विषय वस्तु उद्देश्य, शिक्षार्थी की पृष्ठभूमि तथा वितरण अनुसूची

होते है। कतिपय दूरस्थ शिक्षण संस्थाऐं कई पाठों को एक पुस्तक के रूप में, जब कि कुछ शिक्षण संस्थाऐं भिन्न रूपों से प्रस्तुत करती हैं, वे अभिक्रमित अधिगम के निर्देशों पर आधारित अथवा मोडयूल के रूप में हो सकते हैं। कुछ प्रगतिशील संस्थाऐं पत्राचार पाठों के प्रस्तुतीकरण में स्वअधिगम के सिद्धान्तों का कठोरता पूर्वक पालन करती है।

बड़ी संख्या में दूरस्थ शिक्षण संस्थाऐं ऐसी है, जो पत्राचार पाठों के निर्माण में किसी प्रकार के अधिगम सिद्धान्तों का पालन नहीं करती। शिक्षार्थी अव्यवस्थित पत्राचार पाठों के रूप में स्वअधिगम सामग्री से काफी नुकसान उठाता है।

29.2.6 मुक्त अधिगम सामग्री (Open Learning Material)

मुद्रित सामग्रियों में सबसे उन्नत स्वरूप है, मुक्त अधिगम सामग्री। भारत तथा विदेशों के मुक्त विश्वविद्यालयों में इनका उपयोग किया जाता है। इस प्रकार की सामग्री में स्व अधिगम प्रणाली की अनोखी विशेषताएँ होती है।

मुक्त अधिगम सामग्री की प्रमुख विशेषताऐं निम्नानुसार हैं :-

(1) मुक्त अधिगम सामग्री अन्तक्रिया आधारित होती हैं। इसकी विषय वस्तु सीधी-सीधी शिक्षार्थी के व्यवहार से जुड़ी होती है। ये छोटी-छोटी इकाईयों में व्यवस्थित होती है। स्वतन्त्र रूप से तैयार तथा अलग-अलग बंडलों में बंधी होती है।

(2) मुक्त अधिगम सामग्री के प्रस्तुतीकरण की शैली द्वारा शिक्षार्थी की शिक्षण में रूचि व अभिप्रेरणा बनाये रखा जाता है।

(3) शिक्षार्थी को प्रस्तुत मुद्रित सामग्री पर स्वयं के तरीके से सोचने एवं प्रतिक्रिया करने का अवसर प्रदान किया जाता है। उन्हें अपनी प्रगति में स्वयं के सम्मिलित होने का अवसर मिलता है।

(4) मुक्त अधिगम सामग्री सीधी-सीधी शिक्षार्थी की आवश्यकताओं तथा अधिगम उद्देश्यों से जुड़ी होती है।

(5) मुक्त अधिगम सामग्री प्रयोगात्मक रूप से सीखने को प्रोत्साहित करती हैं। इसमें शिक्षार्थी द्वारा दिये गए प्रश्नों का स्वयं उत्तर देकर सुधार के लिए पुनर्बलन प्राप्त करता है।

(6) मुक्त अधिगम सामग्री की संरचना शिक्षार्थी की रूचियों एवं आवश्यकताओं पर अधिक तथा लेखक की रूचि पर कम आधारित होती हैं।

(7) इसमें अलग-अलग उप इकाईयों की समाप्ति पर विशिष्ट प्रकार के स्व मूल्यांकन प्रश्न भी होते हैं। ये प्रश्न विद्यार्थी को स्व-मूल्यांकन प्रश्नों का दो प्रकार से जवाब देने के लिए प्रेरित करते हैं-एक तो लिखित रूप में तथा दूसरा परियोजना से रूप में है।

(8) प्रत्येक स्व-मूल्यांकन प्रश्न के साथ शिक्षार्थियों के जवाब देने के लिए पर्याप्त स्थान होता है। पाठ्य-पुस्तक को काम मे लेते समय एक रिक्त स्थान शिक्षार्थियों को स्व-अधिगम आधारित गतिविधियां करने के लिए सहायता करता है।

(9) मुक्त अधिगम सामग्री की शैली एवं प्रस्तुतीकरण प्रकृति में अत्यन्त मित्रवत होती है।

(10) यह अधिगम सामग्री के भाग के रूप में दृश्य सामग्री तथा सम्बन्धित अमुद्रित माध्यम को प्रोत्साहित करती है।

(11) मुक्त अधिगम सामग्री के प्रत्येक ब्लाक में कुछ इकाईयां या कैप्सूल्स होते हैं। प्रत्येक इकाई कुछ भागों में विभाजित होती है। सामान्यतया प्रत्येक इकाई अथवा कैप्सूल में प्रारम्भिक भाग, मध्य भाग तथा अन्तिम भाग होते है।

(12) समेकित रूप से स्व अधिगम सामग्री शिक्षार्थी को यह जानने योग्य बनाता है कि "मैं कैसा कर रहा हूँ?" तथा "मुझे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए ?"

स्वमूल्यांकन

प्र.1 दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में कौन सा मुद्रण आधारित माध्यम ज्यादा उपयोगी है? अपने उत्तर के पक्ष में तर्क दीजिए।

प्र.2 आपकी राय से दूरस्थ शिक्षा अध्ययन सामग्री के रूप में मुक्त अधिगम सामग्री ज्यादा लोकप्रिय होने के क्या कारण है?

29.3 श्रव्य-दृश्य आधारित माध्यम : (Media Based on Audio-Visual)

आप कई ऐसे माध्यमों के सम्पर्क में आयेंगे जिनमें दृश्य एवं श्रव्य दोनों प्रकार के अनुभव होते है। ऐसे माध्यमों में से कुछ तो आमने-सामने सम्पर्क पर आधारित है तथा कुछ में विद्यार्थी तथा शिक्षण संस्था में दूरी होती है। शैक्षिक आकाशवाणी, शैक्षिक दूरदर्शन, टेलिफोन, रेडियो वीजन, ओडियो कैसेट्स, वीडियो कैसेट्स, वीडियों कैसेट्स, शैक्षिक वीडियों, अनुदेशन आदि श्रव्य-दृश्य आधारित माध्यम के अन्तर्गत आते है।

29.3.1 शैक्षिक आकाशवाणी (Educational Radio Broad Cast)

दूरस्थ शिक्षा के माध्यम के रूप में आकाशवाणी एक अच्छा माध्यम है। सूचनाओं के प्रसारण, शिक्षार्थियों में कल्पना शक्ति का विकास, शिक्षार्थियों में कुछ रहस्यों के बारे में जिज्ञासा पैदा करना आदि में इसका महत्वपूर्ण स्थान है। आस्ट्रेलिया, यूरोप, अमेरिका तथा एशिया के देशों मे दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में इसका उपयोग बहुतायत से होता है। मुक्त अधिगम माध्यम के रूप में इसके कई लाभ है।

29.3.2 रेडियो वीजन (Radio Vision) :

संयुक्त राष्ट्र (यू.के.) के मुक्त विश्वविद्यालय में दूरस्थ शिक्षा में अनुदेशन के माध्यम के रूप में रेडियो वीजन अत्यधिक प्रचलित है। इसका तात्पर्य है, आकाशवाणी प्रसारण के साथ उपयुक्त दृश्य साधनों का उपयोग करना। उपयुक्त दृश्य सामग्री उनकी मार्गदर्शन पुस्तिकाओं के साथ दूरस्थ शिक्षार्थियों को पूर्व में ही वितरित कर दी जाती है। कभी-कभी रिकार्ड किये हुए आकाशवाणी कार्यक्रम दृश्य सामग्री के साथ में रेडियों वीजन के स्थान पर काम में लिये जाते है।

1. आकाशवाणी प्रसारण द्वारा काफी बड़े भौगोलिक क्षेत्र में लाभ उठाया जा सकता है। आस्ट्रेलिया जैसा देश, जहां की आबादी छितरी हुई है, रेडियों वीजन का सर्वाधिक उपयोग होता हैं। भारत में भी सम्पूर्ण क्षेत्र का 80% तथा सम्पूर्ण आबादी का 90% आकाशवाणी प्रसारण कार्यक्रमों का उपयोग करते है। आकाशवाणी की लोकप्रियता एवं सहज उपलखता के कारण इसका उपयोग दूरस्थ शिक्षा में प्रभावशाली माध्यम के रूप में होता है।
2. आकाशवाणी कम खर्चीला माध्यम है। गरीब और धनी दोनों वर्गो के लोग अनुदेशन माध्यम के रूप में इसका उपयोग कर सकते है। आकाशवाणी कार्यक्रमों एवं इनके प्रसारण के दृष्टिकोण से यह दूरदर्शन से काफी सस्ता है। आकाशवाणी कार्यक्रमों के प्रसारण हेतु अनिवार्य मूलभूत संरचना (Infrastructure) दूरदर्शन की भांति ज्यादा जटिल नहीं होती। इन्हीं सब कारणों से आकाशवाणी दूरस्थ शिक्षा में लोकप्रिय माध्यम के रूप में काम में लिखा जाता है।
3. कोई भी व्यक्ति आकाशवाणी कार्यक्रम को आसानी से सुन सकता है। चाहे शिक्षार्थी उसके घर पर हो या उसके काम करने के स्थान पर, वह आकाशवाणी कार्यक्रमों को आसानी से सुन सकता है। शिक्षार्थी इन कार्यक्रमों को अपने आराम की स्थितियों में भी सुन सकता है।
4. आकाशवाणी कार्यक्रमों का उपयोग व्यक्तिश: स्वतन्त्र अध्ययन एवं समूह-अध्ययन दोनों में किया जा सकता है। जैसा पहले कहा जा चुका है, आकाशवाणी साक्षरता अभियान, किसान विकास कार्यक्रम तथा सम्पर्क कार्यक्रमों के केन्द्रों पर सामूहिक विचार विमर्श के रूप में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आकाशवाणी कार्यक्रम के तत्काल बात निर्दिष्ट समूह चर्चा मुक्त अधिगम को अधिक प्रभावशाली बनाती है।
5. आकाशवाणी के उपयोग में संज्ञात्मक और भावनात्मक अनुभव जैसे कल्पना, विचारों के व्याख्या की स्वतन्त्रता, आगे जानने की उत्सुकता आदि के विकास के पर्याप्त अवसर प्राप्त होते है, जो दूरदर्शन के उपयोग से उतनी प्रभावशीलता से प्राप्त नहीं होते।

सीमाएँ

मुक्त अधिगम गतिविधियों के संदर्भ में आकाशवाणी की निम्न सीमाऐं है -

1. यह माध्यम मात्र ध्वनि पर आधारित है। शिक्षार्थी अधिगम अनुभवों को मौखिक प्रणाली से ग्रहण करता हैं। जब तक शिक्षार्थी में विषय वस्तु को सुनने की उपयुक्त श्रवण क्षमता विकसित न हुई हो, इस माध्यम का अधिक लाभ नहीं उठा सकता। कई विद्यार्थी आकाशवाणी कार्यक्रमों को लगातार गम्भीरता पूर्वक नहीं सुन पाते।
2. क्यों कि यह एक तरफा संचार प्रणाली है। अत: इसमें शिक्षार्थी एवं शिक्षक के मध्य अन्तःक्रिया नही हो पाती। इस माध्यम के उपयोग से न तो शिक्षक अपने श्रोताओं (शिक्षार्थियों) को देख पाता है और न ही शिक्षार्थी अपने शिक्षक को देख पाते है।
3. चूंकि आकाशवाणी कार्यक्रम पूर्व में रिकार्ड किये हुए तथा मिले जुले रूप में होते है अत: उन पर नियंत्रण नहीं होता है। शिक्षार्थी किसी अंश को आवश्यकतानुसार दोहरा नहीं सकता। यदि शिक्षार्थी प्रसारण के समय स्वतन्त्र नहीं है तो वह उस प्रसारण का लाभ नहीं उठा पाता।
4. आकाशवाणी के माध्यम से सारे प्रयास ध्वनि आधारित अभिव्यक्ति पर केन्द्रित होते है। दृश्य प्रस्तुति का अभाव इस माध्यम को विकलांग बना देता है। यह प्रणाली मनोगत्यात्मक

(Psychomotor) क्षमताओं को ज्यादा प्रभावित नहीं करती, क्योंकि इन क्षमताओं के विकास के लिए दृश्य एवं श्रव्य दोनों अध्यापन अनुभवों का होना जरूरी है।

5. आकाशवाणी कार्यक्रम का लाभ उठाने के लिए भारी कल्पना शक्ति एवं संवेदना की आवश्यकता है। शिक्षार्थी को अपनी अनुभवों की पृष्ठभूमि को आकाशवाणी द्वारा दिये गए अनुभवों से जोड़कर अपने स्वयं के अनुभव (ज्ञान) विकसित करना होता है। शिक्षक एवं शिक्षार्थी में अन्त: क्रिया के अभाव में शिक्षार्थी में गलत अवधारणाऐं भी विकसित हो सकती है।
6. आकाशवाणी कार्यक्रम जनता के अर्थात् बड़े समूह के स्तरानुकूल कार्यक्रम है, इनमें छोटे समूहों की शैक्षिक आवश्यकताओं की अनदेखी हो सकती है।

यदि दूरस्थ शिक्षा के लिए एकमात्र आकाशवाणी माध्यम का ही उपयोग किया जाता है, तो उसे उक्त कमियों का सामना करना पड़ेगा। आकाशवाणी के लाभों को ध्यान में रखते हुए अन्य कुछ माध्यम एव विधियों को इसके साथ सम्मिलित करके मुक्त अधिगम प्रणाली को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। आवश्यक कार्यक्रमों को वीडियो कैसेट में रिकार्ड करके शिक्षार्थी की सुविधा एवं आवश्यकतानुसार उसका प्रसारण किया जा सकता है। मुद्रण सामग्री के पूरक के रूप में आकाशवाणी को एक शक्तिशाली माध्यम के रूप में काम में लिया जा सकता है।

आकाशवाणी कार्यक्रमों में श्रोता की रूचि बनाये रखने की तकनीक का पूरा ध्यान रखा जाना चाहिए। एक प्रकार के ध्वनि प्रभावों का उपयोग किया जाना चाहिए। श्रव्य कार्यक्रमों को वास्तविकता प्रदान के लिए उपयुक्त प्रकार के संगीत का उपयोग किया जाना चाहिए।

आकाशवाणी कार्यक्रम की पाण्डुलिपि विषय विशेषज्ञों द्वारा लिखी जाती है जिसे आकाशवाणी के शैक्षिक कार्यक्रमों के अनुकूल बनाया जाता है। प्रस्तुतीकरण सावधानीपूर्वक इस प्रकार किया जाता है कि पूरे समय तक श्रोताओं की रूचि बनी रहे तथा रहस्य तथा जिज्ञासा बनी रहे।

29.3.3 शैक्षिक दूरदर्शन (Educational Television) :

दृश्य-श्रव्य अनुभवों को शक्तिशाली रूप में प्रस्तुत करने की सामर्थ्य के करण दूरदर्शन को दूरस्थ शिक्षा में एक लोक प्रिय माध्यम के रूप में स्वीकारा गया है। इसका उपयोग विकसित एवं विकासशील दोनों प्रकार के देशों में हो रहा है। भारत में इन्दिरा गांधी रा.मु.वि.वि.; वि.वि. अनुदान आयोग तथा शैक्षिक प्रोद्योगिकी का केन्द्रीय संस्थान आदि के शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम दूरस्थ शिक्षा के माध्यम के अच्छे उदाहरण है।

लाभ :

दूरस्थ शिक्षा के माध्यम के रूप में दूरदर्शन के निम्न लाभ है -

1. दूरदर्शन दूरस्थ शिक्षार्थी तक सन्देश को आकाशवाणी तथा मुद्रित अनुदेशन की अपेक्षा ज्यादा व्यक्तिगत एवं स्वाभावित तरीके से पहुंचा सकता है। ध्वनि तथा दृष्टि प्रभाव दूरदर्शन की प्रस्तुति को ज्यादा स्वाभाविक बनाते है।
2. विभिन्न क्षेत्रों में फैले हुए जन समूह तक विचारों के संप्रेषण के लिए दूरदर्शन अत्यधिक उपयोगी है। विशेष तौर से जब दूरस्थ शिक्षा पाठ्यक्रम लेने वाले शिक्षार्थियों की संख्या बहुत अधिक हो, तो दूरदर्शन कार्यक्रम अपनी प्रभावशीलता बनाये हुए भी मितव्ययी होता है। उदाहरण के लिए यदि विभिन्न दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों की विषयवस्तु एक जैसी है तथा

शिक्षार्थियों की संख्या बहुत अधिक है, तो दूरदर्शन द्वारा छात्रों के अनुदेशन में मितव्ययता की भूमिका का निर्वहन भली-भांति किया जाता है।

3. दूरदर्शन में दृश्य सामग्री द्वारा समर्थित मौखिक अभिव्यक्ति तथा श्रव्य प्रभाव द्वारा समर्थित दृश्य सामग्री शिक्षार्थियों को अध्ययन में अभिप्रेरणा बनाए रखते है। शैक्षिक दूरदर्शन के विशेषज्ञों द्वारा वास्तविक दृश्य प्रभावों के साथ प्रस्तुतीकरण से कार्यक्रम के प्रति जिज्ञासा एवं अभिप्रेरण बना रहता है।
4. दूरदर्शन की सॉफ्टवेयर सामग्री नाटकों तथा चलचित्रों के रूप में पूर्व में उपलब्ध सामग्री से प्रतिस्पर्धा कर सकती है, जिससे दूरदर्शन कार्यक्रम मितव्ययी बनता है।
5. दूरदर्शन कार्यक्रम पूर्व में भेजी गई अनुदेशन सामग्री के अध्ययन सम्पर्क कार्यक्रमों में की गई समूह चर्चाओं तथा शिक्षक के मार्गदर्शन पर आधारित होती है, जिससे दूरस्थ शिक्षा ज्यादा प्रभावकारी बनती है।
6. श्रव्य-अध्ययन रूचि के साथ दूरदर्शन अनुदेशन शिक्षार्थी की प्रगति का स्व मूल्यांकन करने के लिए अत्यधिक उपयोगी होती है। अध्ययन केन्द्रों पर समूह चर्चाएं तथा दूरदर्शन कार्यक्रम अधिगम अनुभवों को बल प्रदान करते है।

सीमाएँ -

उक्त लाभों के बावजूद दूरस्थ शिक्षा में दूरदर्शन की निम्न सीमाऐं है-

1. भारत जैसे विशाल देशों में दूरदर्शन पूरे भाग का प्रसारण नहीं कर पाता यद्यपि इसमें नगरीय क्षेत्रों का ज्यादा प्रसारण होता है। समाज के गरीब वर्ग के शिक्षार्थी दूरदर्शन उपकरण नहीं खरीद सकते। पड़ोस में उपलब्ध दूरदर्शन का शैक्षिक कार्यक्रमों हेतु उपयोग नहीं हो पाता है।
2. आकाशवाणी की भांति दूरदर्शन में भी संप्रेषण एक तरफा होता है। इसमें शिक्षक तथा शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया का प्रावधान नहीं होता।
3. दूरदर्शन कार्यक्रम का समय सभी शिक्षार्थियों को सुविधाजनक नहीं होता। शिक्षार्थी के लिए वीडियो कैसेट में रिकार्ड करना संभव नहीं है, क्योंकि यह महंगा होता है। यद्यपि दूरदर्शन कार्यक्रम को अधिक संख्या में छात्रों द्वारा देखा जा सकता है परन्तु इसमें चाहे जाने पर कार्यक्रम को दोहराने / पुन: प्रसारण का प्रावधान नहीं होता। इस प्रकार दूरदर्शन कार्यक्रम स्तर पर सीखने को ज्यादा प्रोत्साहित नहीं करता।
4. दूरदर्शन उपकरण की लागत तथा कार्यक्रमों का निर्माण दोनों ही अन्य माध्यमों की अपेक्षा अत्यधिक महंगे है। सभी वार्ताकारों का समझाने के ढंग पर पूर्ण अधिकारी नहीं होता क्योंकि विशेषज्ञों के स्वतन्त्र विचार-विमर्श को अक्षरश: उसी रूप में नहीं लिखा जा सकता।
5. जो भी कार्यक्रम बनाये जाते है उन्हें सामान्य शिक्षार्थी समूह के अनुरूप मानकित किया जाता है। शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति दूरदर्शन से नहीं होती। कम संख्या में नामांकन वाले पाठ्यक्रमों के लिए दूरदर्शन कार्यक्रम तैयार करना संभव नहीं होता।

   दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों पूर्वक प्रयास करने से दूरदर्शन कार्यक्रमों की इन कमियों का समाधान सकता है।

1. दूरदर्शन का उपयोग उन्हीं उद्देश्यों के लिए किया जाना चाहिए, जिनकी प्राप्ति अधिक मात्रा में हो सकती हो। दूरदर्शन मुद्रण आधारित एवं श्रव्य माध्यम के पूरक के रूप में कार्य करता है।
2. दूरदर्शन कार्यक्रमों के वीडियों कैसेट तैयार किये जाकर क्षेत्रीय अध्ययन केन्द्रों को उपलब्ध कराये जा सकते है, जहां पर दूरदर्शन कार्यक्रम शिक्षार्थियों की आवश्यकता के आधार पर पुन: प्रसारित किये जा सकते है।
3. दूरदर्शन के पश्च प्रसारण कार्यक्रम (Post Telecast Programme) के रूप में विद्यार्थियों के छोटे-छोटे समूहों में विचार-विमर्श द्वारा अधिगम के लिए उपयोगी हो सकते है।
4. अनुदेशन कार्यक्रमों के वितरण एवं प्रसारण के समय विभिन्न माध्यमों के सावधानी पूर्वक समन्वयन से माध्यम की पुनरावृत्ति को रोका जा सकता है। निर्माण के स्तर पर समय-समय पर दूरदर्शन के साथ विभिन्न माध्यमों के एकीकरण के प्रयास किये जा सकते है।
5. दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं के दूरदर्शन कार्यक्रमों की भागीदारी औपचारिक विश्वविद्यालयों / महाविद्यालयों तथा दूरस्थ शिक्षा के शिक्षार्थियों के लिए समान कार्यक्रमों में होनी चाहिए। उदाहरण के तौर पर स्नातक पाठ्यक्रम का अधिकांश भाग नियंत्रित एवं दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रमों में समान रहता है।

स्व मूल्यांकन प्रश्न (Self Evaluation)

प्र.1. दूरस्थ शिक्षा में आकाशवाणी व दूरदर्शन कार्यक्रमों के समान लाभ कौन-कौन से है?

प्र.2. दूरदर्शन कार्यक्रम की अपेक्षा शिक्षण द्वारा तैयार वीडियो कार्यक्रम के क्या-क्या लाभ है?

29.3.4 ऑडियो एवं वीडियो कैसेट्स (Audio Video Cassettee) :

ऑडियो कैसेट्स आकाशवाणी पाठ प्रसारणों के प्रतिस्थापक के रूप में तथा वीडियों कैसेट्स दूरदर्शन पाठ प्रसारणों के प्रतिस्थापक के रूप में जाने जा सकते है। ऐसे कैसेट्स अधिक संख्या में निर्मित किये जाते है। दूरस्थ शिक्षा शिक्षार्थियों की विशिष्ट प्रकृति तथा बड़ी संख्या में विशेषज्ञता के कारण वीडियों तथा ऑडियो कैसेट्स अत्यधिक उपयुक्त माध्यम है। भारत तथा विदेशों में लगभग सभी खुले विश्वविद्यालयों में ऑडियो तथा वीडियों कैसेट्स का उपयोग किया जाता है।

लाभ :

दूरस्थ शिक्षा की परिस्थितियों में ऑडियो कैसेट्स के निम्न लाभ है -

1. निर्माण, वितरण तथा उपयोग में कम खर्चीले है।
2. उपलब्ध आकाशवाणी प्रसारण तथा विशेषज्ञों की वाताऐं रिकार्ड की जा सकती है।
3. बिना किसी जटिलता के पुन: प्रसारण संभव है।
4. शिक्षार्थी अपनी गति एवं आवश्यकतानुसार काम कर सकता है।
5. ऑडियो कैसेट्स में किसी भी विषय को, कितना भी लम्बा हो, कई आवाजों के साथ या स्वतन्त्र रूप से रिकार्ड किया जा सकता है।

6. समूह अधिगम की स्थितियों में काम में आ रहे वीडियो कैसेट्स के साथ-साथ विचार-विमर्श सत्र जोड़ा जा सकता है।

ऑडियो कैसेट्स की कुछ कमियां निम्न है -

1. इनमें मात्र मौखिक अभिव्यक्ति होती है।
2. ये वास्तविक स्वरूप को प्रस्तुत नहीं करते।
3. निर्धन छात्रों के पास वीडियों कैसेट प्लेयर उपलब्ध होना संभव नही है।

दूरस्थ शिक्षा प्रणाली में वीडियो फिल्म के बहुत अधिक लाभ है। वीडियों फिल्म हाथ में उठाने योग्य (Portable) होती है। उनमें अधिक स्वाभाविक अनुभव होते है। उच्च किस्म का दृश्य एवं श्रव्य प्रस्तुतीकरण शिक्षार्थी में ज्ञानात्मक, प्रभावात्मक तथा मनोगत्यात्मक उद्देश्यों की पूर्ति करते है। ऑडियो कैसेट्स तथा अन्य फिल्मों की अपेक्षा वीडियों फिल्म की कुछ विशेषताएं है-

1. ऑडियो कैसेट्स में केवल ध्वनि प्रभाव होता है जबकि वीडियो कैसेट्स में दृश्य एवं श्रव्य दोनों घटक होते है।
2. वीडियो फिल्म उठाने, रखने में ज्यादा भारी नहीं होती।
3. इनका उपयोग छोटे और बड़े दोनों प्रकार के समूहों में किया जा सकता है।
4. इनका उपयोग शिक्षार्थी अपने-अपने स्थानों पर तथा अध्ययन केन्द्रों पर सम्पर्क कार्यक्रम के समय कर सकता है।
5. विशेषज्ञ वीडियों फिल्म का उपयोग सम्पर्क कार्यक्रमों में उनकी वार्ता के समय कर सकते है।

सीमाएँ

वीडियो फिल्मों के निर्माण की दृष्टि से सीमाऐं है। इनके निर्माण के लिए जटिल गेजेट्स तथा तकनीकों एवं उपयुक्त प्रौद्योगिकी का ज्ञान आवश्यक है। मुक्त विश्वविद्यालय/ दूरस्थ शिक्षा संस्थाओं के पास सब संसाधन नहीं होते। गरीब शिक्षार्थियों के लिए वीडियो कैसेट्स प्लेयर रखना संभव नही होता।

वीडियो कैसेट एक तरफा संप्रेषण माध्यम के रूप में काम करता है। दूरस्थ शिक्षण संस्थाऐं अपने जैसी संस्थाओं द्वारा तैयार वीडियो कैसेट्स का उपयोग कर सकती है। वे शिक्षार्थियों को अध्ययन केन्द्रों तथा सम्पर्क कार्यक्रम सत्रों में वीडियो कैसेट के उपयोग हेतु प्रोत्साहित कर सकते है।

29.3.5 शैक्षिक दृष्टि से तैयार वीडियो कैसेट अनुदेशन :

छोटे-छोटे समूहों में शिक्षण के साथ वीडियो कैसेट्स के प्रस्तुतीकरण का माध्यम दो तरफा सम्प्रेषण (Two way communication) को प्रोत्साहित करता है। वीडियो निर्माण की प्रक्रिया रिकार्डिग किया जा सकता है। इसे केन्डिड कक्षा-कक्ष वीडियो टेप कहते है। मुद्रित पाठों के साथ ये वीडियो टेप शिक्षार्थियों को अध्ययन केन्द्रों पर भेजे जा सकते है। शिक्षक उनके उपयोग अध्ययन केन्द्रों की गतिविधि के रूप में समूह चर्चा को प्रारम्भ करने के लिए कर

सकते है। अमेरिकन विश्वविद्यालय के दूरस्थ शिक्षा कार्यक्रमों में इस सुविधा का लाभ व्यापक रूप से उठाया जाता है।

लाभ

1. वीडियो टेप का निर्माण कम कीमत में तथा बिना जटिल प्रयासों के संभव है।
2. वीडियों टेप का उपयोग मुद्रित समानों के साथ एकीकरण अधिगम को ज्यादा प्रभावशाली बनाता है।
3. अन्तःक्रिया के साथ वीडियों टेप की प्रस्तुति ऐसी प्रभाव छोड़ती है, जैसा विशेषज्ञ शिक्षक कक्षा-कक्ष शिक्षण के समय छोड़ता है।
4. ऐसे कार्यक्रम के माध्यम से प्रयोग तथा प्रयोगशाला गतिविधियों में भी दिशा निर्देश दिये जा सकते है।
5. परा व्यवसायिक (Para Professional) शिक्षक समूह अन्त: क्रिया की व्यवस्था कर सकते है। इसकी कतिपय सीमाऐं निम्न है-

सीमाएँ

1. निम्न स्तर की दृश्य-श्रव्य सामग्री का निर्माण होता है।
2. कक्षा-कक्ष शिक्षक द्वारा दूरस्थ शिक्षार्थी की आवश्यकताओं को ध्यान में नहीं रखा जाता।
3. केन्डिड वीडियो टेप में दूरस्थ शिक्षार्थी की आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त विषय वस्तु सम्मिलित नहीं होती।

उक्त सीमाओं के होते हुए भी केन्डिड वीडियो टेप को दूरस्थ शिक्षा के एक माध्यम के रूप में काम में लिया जा सकता है। शिक्षार्थी छोटे-छोटे समूहों में वीडियों टेप को प्रत्येक 5 से 10 मिनट में 3 से 5 मिनट तक के लिए बन्द कर सकते है। शिक्षक से फोन पर कुछ प्रश्न उत्तर प्राप्ति के लिए पूछे जा सकते है। अध्ययन केन्द्र की गतिविधियों में ऐसी व्यवस्था सम्मिलित की जा सकती है।

29.3.6 दूरभाष (Telephone) :

दूरभाष का उपयोग दूरस्थ शिक्षार्थियों में अन्तःक्रिया को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जा सकता है। अमेरिकन विश्वविद्यालय में दूरभाष का व्यापक उपयोग दूरस्थ शिक्षा की गतिविधियों के लिए किया जाता है। दूरस्थ शिक्षा में दूरभाष का उपयोग विशेष शैक्षिक दूरभाष नैटवर्क द्वारा संभव है। शिक्षार्थी के निवास को अध्ययन केन्द्र से, विभिन्न संदर्भ केन्द्रों से पुस्तकालयों से, प्रयोगशालाओं से, शैक्षणिक संस्थाओं तथा व्यावसायिक संगठनों से माइक्रोफोन तथा लाउड स्पीकर द्वारा जोड़ा जा सकता है। माइक्रोफोन तथा लाउड स्पीकर्स को एक स्टेण्डर्ड टेलीफोन कपलर द्वारा जोड़ दिया जाता है। लगभग 16 विद्यार्थियों के समूह द्वारा शैक्षिक दूरभाष नैटवर्क सुविधा पूर्वक उपयोग किया जा सकता है। विद्यार्थी शिक्षक से तथा दूसरी जगह रहने वाले छात्रों से अन्त:क्रिया के लिए माइक्रोफोन का उपयोग कर सकता है। ऐसे नैटवर्क द्वारा ऑडियो कैसेट पाठों के प्रसारण का उपयोग किया जा सकता है।

लाभ :

टेलीफोन नैटवर्क प्रणाली के निम्न लाभ है-

1. शिक्षार्थियों और शिक्षकों के मध्य अन्तःक्रिया को प्रोत्साहन मिलता है।
2. कम संख्या में दूरस्थ शिक्षार्थियों के लिए विशिष्ट बिन्दुओं पर पाठ इस प्रणाली की पहुंच में है।
3. दूरस्थ शिक्षार्थियों की सेमीनार के लिए अच्छे दूरभाष नैटवर्क का उपयोग किया जा सकता है।
4. आकाशवाणी, दूरदर्शन, कम्प्यूटर तथा मुद्रित सामग्री के विपरीत टेलीफोन शिक्षक से स्वाभाविक तथा असंगठित बातचीत को प्रोत्साहित करता है।
5. कक्षा के साथियों तथा शिक्षकों से अन्त:क्रिया द्वारा जिज्ञासाओं की सन्तुष्टि की जा सकती है।
6. दूरदर्शन कार्यक्रमों के साथ टेलीफोन सेमीनारों को सम्मिलित किया जा सकता है, ताकि दूरदर्शन प्रस्तुति के साथ-साथ सामूहिक अन्तक्रिया हो सके।

सीमाएँ

दूरभाष नैटवर्क आधारित अनुदेशन में उपयुक्त मूलभूत उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है। पूरे देश में फैले हुए शिक्षार्थियों को ऐसा अवसर प्रदान करने में भारत जैसे उप महाद्वीप की काफी सीमाऐं है। निश्चित तौर पर ऐसे नगरीय क्षेत्रों में जहां पर शिक्षार्थियों की संख्या अधिक है, विशेष तौर पर व्यावहारिक पाठ्यक्रमों के लिए इसका उपयोग किया जा सकता है।

29.4 इलैक्ट्रॉनिक माध्यम (Electronic Media)

इलैक्ट्रॉनिक सम्प्रेषण प्रणाली का दूरस्थ शिक्षा में अत्यधिक योगदान रहा है। कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन इटर एक्टिव वीडियो, टेली कान्फ्रेन्सिंग, कम्प्यूटर नैटवर्क, टेली टेक्स्ट, वीडियों टेकस्ट आदि शैक्षिक प्रौद्योगिक के कुछ उदाहरण है। दूरस्थ शिक्षा में इन प्रौद्योगिकी के उपयोग से अधिगम की प्रभावशीलता एवं दक्षता बढ़ाने में सहयोग मिलता है।

29.4.1 कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन :

कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन स्व अनुदेशन प्रणाली के मुख्य घटक के रूप में कार्य करता है। दूरस्थ शिक्षण स्थितियों मे इसके कुछ लाभ निम्न है -

लाभ :

1. पाठ्य सामग्री अनुदेशन क्रमानुसार अधिगम प्रोत्साहित करता है।
2. कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन क्रमानुसार अधिगम को प्रोत्साहित करता है।
3. समस्याओं का समाधान शिक्षार्थियों की अन्तःक्रिया के माध्यम से कम्प्यूटर द्वारा किया जाता है।
4. कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन में पुनर्बलन विधि समाहित होती है। अत: शिक्षार्थी को अपनी स्थिति सुधारने का अवसर मिलता है।
5. इस विधि द्वारा शैक्षिक कक्षाओं की व्यवस्था की जा सकती है।

6. कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन में स्व अधिगम के लिए स्वांग, खेल व प्रादर्श बनाने का उपयोग भली-भांति किया जा सकता है।
7. उच्च स्तरीय ज्ञानात्मक तथा भावात्मक उद्देश्यों की पूर्ति इस विधि द्वारा की जा सकती है।
8. कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन द्वारा जटिल आकड़ों को कुशलता पूर्वक प्राप्त किया जा सकता है।
9. शिक्षार्थी की प्रतिक्रिया तथा निर्माण की सुविधा के कारण यह विश्वसनीय अधिगम अनुभवों के लिए शिक्षार्थियों को सहजता से प्राप्त हो सकता है।
10. गतिशील, रंगीन तथा ध्वनि आधारित प्रस्तुति होने के कारण कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन शिक्षार्थी के सम्मुख वास्तविक चित्र प्रस्तुत करने में सक्षम है।
11. विभिन्न प्रकार के ग्राफ तथा विभिन्न शैड्स के साथ तस्वीरों की प्रस्तुति इस विधि का विलक्षण गुण है।
12. कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन का उपयोग विभिन्न क्षेत्रों के जटिल उद्देश्यों जैसे विज्ञान, गणित, कला, साहित्य, मूर्तिकला, चित्रकारी, सामाजिक विज्ञान एवं संगीत आदि के लिए किया जा सकता है।
13. शिक्षार्थियों को मार्गदर्शन देने के लिए विशेषज्ञ प्रणाली काम में ली जा जाती है।

सीमाएँ -

इन सबके बावजूद दूरस्थ शिक्षा में कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन की कमियां निम्नानुसार है-

1. विभिन्न पाठ्यक्रमों के लिए कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन सामाग्री का उपलब्ध होना कठिन है।
2. भारतीय सन्दर्भो में विद्यार्थियों को भौतिक सुविधाओं की उपलब्धता भी एक समस्या है।
3. अनुदेशन के दृष्टिकोण से इस विधि में पूर्व निर्धारित प्रक्रिया द्वारा तैयार सुसंगठित अधिगम सामग्री का अभाव भी एक समस्या है।
4. सृजनात्मक प्रश्नों का उत्तर इस विधि द्वारा सम्भव नहीं है।

उक्त सीमाओं के बावजूद इसकी गत्यात्मकता, विशिष्ट समस्याओं के समाधान की विलक्षण क्षमता, कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन की गतिविधियों में शिक्षार्थी की भागीदारी एवं स्व मूल्यांकन की सुविधा आदि गुणों के कारण दूरस्थ शिक्षार्थी इस प्रणाली द्वारा उपलब्ध सुविधाओं का सर्वोत्तम उपयोग कर सकता है।

28.4.2 इन्टर एक्टिव वीडियो (वीडियो डिस्क) (Interactive Video)

कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन के क्षेत्र में 80 के दशक में इन्टर एक्टिव वीडियों एक उभरती हुई तकनीक है। इन्टर एक्टिव वीडियो के अन्तर्गत वीडियों में रिकार्ड की हुई सूचनाऐं (कम्पयूटरीकृत सूचनाओं के साथ) कम्प्यूटर के नियंत्रण में प्रस्तुत की जाती है। शिक्षार्थी अपनी रूचि व गति के अनुसार प्रस्तुत शब्दों, तस्वीरों व ध्वनि प्रभावों को क्रम से ग्रहण करता है। इन्टर एक्टिव वीडियो व्यक्तिश: उपयोग के लिए आधुनिकतम जटिल दृश्य-श्रव्य संप्रेषण प्रणाली मानी जाती है। विशेष इन्टरफेस के माध्यम से कम्प्यूटरीकृत ग्राफ तथा पाठ्य उत्पादन

क्षमताओं से जुडी लेजर वीडियो डिस्क, जिसका उपयोग एवं नियंत्रण कम्प्यूटर के अधीन हैं अत: गतिशील, स्थिर पाठ्य सामग्री तात्कालिक होने के कारण उनको रिकार्ड करना कभी-कभी ही संभव है।

वीडियो डिस्क में लेजर आधारित प्रकाश रासायनिक प्रक्रिया का उपयोग किया जाता है। वीडियों डिस्क द्वारा कार्यक्रम की वास्तविक सामग्री के दृश्य-श्रव्य गुणों का दुबारा उत्पन्न करना संभव है। यह एक घण्टे से अधिक समय तक कार्य कर सकती हैं। वीडियो डिस्क में बहुत बड़ी संख्या मे सूचना संकलन कीक्षमता होने से इसका उपयोग कई प्रकार के पाठ्यक्रमों में किया जाता है। वीडियो डिस्क को स्टेण्डर्ड दूरदर्शन सेट से जोड़ दिया जाता है, जिसके द्वारा चित्रों को ध्वनि प्रभावों के साथ मिलाकर उभारा जा सकता है। वीडियों डिस्क प्लेयर पर कम्प्यूटर द्वारा सीधे-सीधे कुछ संख्यात्मक संकेत दिये जाते है। इन्टर एक्टिव वीडियो का उपयोग गतिशील चित्रों, स्थिर चित्रों, चित्र एवं संकेतों, पाठ्य सामग्री आदि को दिखाने के लिए किया जा सकता है। स्थिर तथा गतिशील चित्रों का उपयोग करते हुए ज्ञानात्मक तथा संज्ञात्मक एवं कौशल आधारित सभी पाठ्यक्रमों में इन्टर एक्टिव वीडियो प्रणाली का उपयोग किया जा सकता हैं। विशेष तौर से दूरस्थ शिक्षा के संदर्भ में अध्ययन केन्द्रों की गतिविधियों हेतु व्यक्तिगत अधिगम के अनुसार लचीलेपन के साथ इन्टर एक्टिव वीडियो द्वारा उच्च स्तरीय तस्वीरें तथा ध्वनि काफी उपयोगी होती है।

चित्र, संकेत, पाठ्यवस्तु तथा ग्राफ के यर्थाथ रूप से पुन: प्रदर्शन के संदर्भ में सामान्य कम्प्यूटर तथा विडियो कैसेट प्लेयर की अपेक्षा इन्दरएक्टीव वीडियो के कुछ लाभ है। इसमें धीमे तथा तेज आगे अथवा पीछे चलाने की सुविधा होती है। दृश्य-श्रव्य विशेषता वाले कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर का लचीलापन एवं तर्क संगत नियंत्रण दोनों संयुक्त रूप से वीडियो डिस्क प्रणाली के माध्यम से नया साधन प्रदान करते है। हमारे देश में इस माध्यम के लोकप्रिय होने में आर्थिक तथा तकनीकी दृष्टि से कुछ सीमाऐं है। यह सत्य है कि उपयुक्त मूलभूत संरचना के साथ बड़े जनसमूह के लिए वीडियों डिस्क दूरस्थ शिक्षा का शक्तिशाली माध्यम है।

29.4.3 टेली कान्फ्रेसिंग (Tele Conferencing)

टेली कान्फ्रेसिंग सेटेलाइट आधारित बड़े पैमाने पर अन्तःक्रिया की सुविधा के लिए एक मध्यम साधन है। देशों के मध्य अथवा विश्व में सेटेलाइट प्रणाली की सहायता से इलैक्ट्रॉनिक मीटिंग होती है। इसके अन्तर्गत दृश्य एवं श्रव्य दोनों प्रकार की संप्रेषण प्रणाली सम्मिलित है। विकसित देशो में शैक्षिक स्थितियों में टेली कान्फ्रैसिंग व्यापक रूप से लोकप्रिय है। विशेष तौर से दूरस्थ शिक्षार्थी इन सुविधाओं का प्रमुख लाभ उठाते है। उपग्रह आधारित अनुदेशन की लोकप्रियता के कारण टेली कान्फ्रेसिंग काफी मंहगा है। यह प्रणाली वास्तविक रूप से सूचनाऐं प्रदान करती हैं। यह सार रूप में प्रणाली अधिगम स्थितियों की आवश्यकताओं के अनुरूप मौखिक एवं दृश्य सुविधाऐं प्रदान करता है।

दूरस्थ शिक्षा की स्थितियों में विभिन्न प्रकार की टेली कान्फ्रेसिंग सुविधाऐं उपलब्ध है-

(अ) एक तरफा वीडियो: दो तरफा ऑडियो अन्तःक्रिया इस प्रणाली द्वारा विभिन्न भागों में रहने वाले शिक्षार्थी दूरदर्शन केन्द्र के प्रस्तोताओं से अन्तःक्रिया कर सकते है। उपग्रह आधारित सम्प्रेषण प्रणाली से शिक्षार्थी व प्रस्तोता के मध्य दूरभाष संप्रेषण सरल है। दूरदर्शन द्वारा पाठ प्रसारण के समय शिक्षार्थी द्वारा उठाई जिज्ञासाओं एवं प्रश्नों का प्रस्तोता उसी समय दूरदर्शन पर जवाब दे सकता है। शिक्षार्थी की जिज्ञासा का प्रस्तोता द्वारा जवाब चूंकि उपग्रह आधारित दूरभाष द्वारा होता है, अत: इसमें दूरदर्शन के माध्यम से दृश्य एवं श्रव्य प्रभाव आधारित होता है। दूरदर्शन देखने वाले दूरस्थ शिक्षार्थी द्वारा उठाए प्रश्नों को मात्र सुन सकते है, जबकि वे प्रस्तोता द्वारा दूरदर्शन के पर्दे पर दृश्य एवं श्रव्य प्रभाव प्राप्त कर सकते है। यह सुविधा ई.टी.वी. के प्रस्तोता तथा दूरस्थ शिक्षार्थी के मध्य दूरदर्शन प्रसारण के समय ही अन्तःक्रिया को प्रोत्साहित करती है। भारतवर्ष में प्रयोगात्मक रूप से संचालित कक्षा अन्तःक्रिया से निकट भविष्य में इस प्रणाली के लोकप्रिय होने की आशाऐं उभरती है।

(ब) दो तरफा ऑडियो : दो तरफा वीडियो अन्त:क्रिया : इस प्रकार की कान्फ्रेसिंग दो तरफा दूरदर्शन नैटवर्क से ही संभव है। विभिन्न दूरदर्शन केन्द्रों से प्रस्तोता एक दूसरे से दृश्य-श्रव्य प्रणाली द्वारा अन्तःक्रिया कर सकते है। उपग्रह प्रणाली दूरस्थ शिक्षार्थियों को शिक्षक-शिक्षार्थी अन्तक्रिया पर आधारित शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम दिखाने में सक्षम है। घर पर बैठा हुआ शिक्षार्थी दूरदर्शन के पर्दे के उपयोग से ऑडियो विडियो टेलिकॉन्फ्रेसिंग के माध्यम से कक्षा के कमरे जैसी अनुभूति करता है। कुछ प्रश्न जो विद्यार्थी के मन में होते है ई.टी.वी. में कार्यक्रम में भाग ले रहा विद्यार्थी पूछ लेता है। यह माध्यम अत्यधिक मंहगा हैं यह प्रणाली दो प्रकार से लाभप्रद है, - एक तो विशेषज्ञों की अन्त:क्रियाऐं और दूसरा लोकप्रिय अन्त:क्रिया।

(स) चित्र दूरभाष टेली कान्फ्रेन्स : दो तरफा दृश्य-श्रव्य टेलीकान्फ्रेसिंग के विरूद्ध इस प्रणाली में एक तरफा अगतिशील चित्रों के प्रसारण द्वारा समर्थित ध्वनि आधारित अन्तःक्रिया सम्मिलित है। अगतिशील चित्र सूक्ष्म तरंगों, केबल लाईन तथा अन्य श्रव्य संकेतों द्वारा दूरभाष के माध्यम से भेजे जाते है। इस प्रणाली में दूरभाष तथा उपग्रह का नैटवर्क संप्रेषण होता है, जो क्षेत्र विशेष में काम करता है।

(य) कम्प्यूटर कान्फ्रेसिंग: केन्द्रीय कम्प्यूटर प्रणाली उपग्रह के माध्यम से स्थानीय कम्प्यूटर प्रणाली से जुड़ी रहती हैं। केन्द्रीय कम्प्यूटर प्रणाली में विभिन्न विषयों के बड़े पैमाने पर आकड़े सम्मिलित होते है। दूरस्थ शिक्षार्थियों की कुछ जिज्ञासाऐं होती है, जिनके उत्तर केन्द्रीय कम्प्यूटर से प्राप्त किये जा सकते है। इस प्रकार के मामले में केन्द्रीय कम्प्यूटर प्रणाली सम्प्रेषण टर्मिनल्स के द्वारा उन जिज्ञासाओं का समाधान प्रस्तुत करती है। औपचारिक शिक्षण संस्थाऐं, शिक्षा प्रसार केन्द्र, खुले विश्वविद्यालयों के क्षेत्रीय अध्ययन केन्द्रों पर सूचना की उन्नत प्रौद्योगिकी द्वारा इस प्रकार की कान्फ्रेन्सों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्र.1. टेली कान्फ्रेसिंग के विभिन्न तरीके कौन-कौन से हैं?

प्र.1.	भारतीय सन्दर्भों में उपलब्ध सुविधाओं को दृष्टिगत रखते हुए दूरस्थ शिक्षा संस्थितियो में कौनसा ज्यादा संभाव्य है?

29.4.4 टेली टैक्स्ट (Tele Text) :

नियमित दूरदर्शन संकेतों के माध्यम से टेली टैक्स्ट की सेवाऐं विद्यार्थियों के घरों तक पहुँच रही है। साधारणतया मुद्रित सामग्री का एक पृष्ठ दूरदर्शन पर्दे के पांच पृष्ठों पर आता है। टेली टैक्स्ट साप्ताहिक, पाक्षिक एवं मासिक पत्रिकाओं को प्रोत्साहित करता हैं। विशेष आकस्मिक मुद्रित पत्रिकाओं की अपेक्षा टेली टैक्स्ट का यह लाभ है कि यह आज दिन तक तथा एक घंटे पूर्व तक की नवीनतम आकड़ों, मौसम तंत्र, सूचनाओं घटनाओं तथा प्रतिवेदनों से पूरित हो सकता है, जिन्हें कि समाचार-पत्र भी उस स्वरूप में प्रस्तुत नहीं कर सकते।

आकाशवाणी तथा दूरदर्शन की अपेक्षा इसके कई लाभ है। इसकी सेवाऐं कुछ क्षणों में उपलब्ध हो जाती है। आकाशवाणी तथा दूरदर्शन की भांति टेली टैक्स्ट में निर्धारित प्रसारण समय की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। टेली टैक्स्ट में मात्र बटन दबाने से पृष्ठ अनुसूची प्रकट हो जाती है। आवश्यकतानुसार सूचनाओं के संकेतांक दबाकर हम वांछित पृष्ठ संख्या को पर्दे पर ला सकते है। इस प्रकार हम सूचना देने वाले तथा टेली टैक्स्ट प्रणाली के मध्य अन्तःक्रिया स्थापित कर सकते है।

29.4.5 वीडियो टैक्स्ट (Video Text)

वीडियो टैक्स्ट और टेली टैक्स्ट में कुछ विशेषताऐं समान है। वीडियों टैक्स्ट का उपयोग भी टेली की भांति घरों में किया जा सकता है, क्योंकि इनका प्रसारण नियमित दूरदर्शन संकेतों का हिस्सा बन चुका है। वीडियो टैक्स्ट का उपयोग घरों में टेलीफोन के तारों के माध्यम से होता है। कभी-कभी वीडियो टैक्स्ट का अत्यधिक उपयोग करने वाले उपयोग के लिए विशेष लाईनों का उपयोग करते है। टेली टैक्स्ट के विपरीत वीडियो टैकस्ट इसमें संचित समस्त सूचनाओं का संप्रेषण कुछ सैकण्ड के अन्तराल से नहीं कर सकता। वीडियो टैक्स काम में लेने वाला कुछ चयनित पृष्ठों का उपयोगकर्ता के घर पर संप्रेषण हेतु निवेदन करता है। केन्द्रीय एक्सचेंज तथा उपयोगकर्ता के मध्य दो तरफा संप्रेषण होता हैं उपयोगकर्ता अपने स्थान से ही संकेतों के माध्यम से उन पृष्ठों का चयन करता है जिन्हें दूरस्थ स्थानों पर दिखाया जाना है। समस्या पाठ्य सामग्री का नियंत्रण सीधा-सीधा उपयोगकर्ता की पहुंच में होता है। वीडियो-टैक्स्ट का केन्द्रीय एक्सचेंज कम्प्यूटरीकृत डेटा आधारित प्रणाली की सहायता से कार्य करता है। वीडियों टैक्स्ट प्रणाली दूरभाष तार प्रणाली से युक्त होती है जबकि टेली टैक्स्ट प्रणाली प्रसारण द्वारा संचालित होती है। वीडियो टैक्स्ट में आँकड़ो का शैक्षिक उपयोग होता है। टेली टैक्स्ट में उपयोगकर्ता संप्रेषण से प्राप्त सीमित सूचनाओं में से ही सूचनाओं का चयन कर सकता हैं। वीडियों टैक्स्ट में उपयोगकर्ता अनेक पृष्ठों की सूचनाऐं जो विभिन्न कम्प्यूटरों में संचित होती है, का उपयोग कर सकता है।

29.4.6 कम्प्यूटर नैटवर्क आधारित अनुदेशन (Instruction Based on Computer Network):

कम्प्यूटर नैटवर्क संदेश शीघ्र भेजने का अत्यन्त उपयोगी साधन हैं यह कम्प्यूटर तथा शिक्षार्थी, शिक्षक तथा शिक्षार्थी, तथा शिक्षार्थी एवं शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया की सुविधा प्रदान करता है। विभिन्न प्रकार के कम्प्यूटर्स को नैटवर्क प्रणाली से आपस में सम्बद्ध किया जा सकता है।

कम्प्यूटर आधारित अनुदेशन का उपयोग दूरस्थ तथा स्थानीय नैटवर्क द्वारा संभव है। दूरस्थ नैटवर्क के अन्तर्गत केन्द्रीय स्तर डेटा बेस तथा कम्प्यूटर एवं डिलीवरी स्तर पर माइक्रो कम्प्यूटर के मध्य सम्प्रेषण सम्मिलित है। स्थानीय नैटवर्क में टर्मिनल्स होते है, जिन्हें संस्था में स्थापित प्रणाली से जोड़ दिया जाता है।

इलैक्ट्रॉनिक व्याख्यान कम्प्यूटर नैटवर्किंग द्वारा संभव है। कक्षा में अथवा कक्षा से बाहर दी गई वार्ता को इलेक्ट्रोनिक वार्ता में रूपान्तरित किया जा सकता है। अनुदेश कम्प्यूटर नैटवर्क के किसी भी बिन्दु से वार्ता प्रसारित कर सकता हैं कान्फ्रेन्सिंग के लिए संशोधित गुणवत्ता वाले कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर द्वारा इलेक्ट्रॉनिक वार्ताऐं लोकप्रिय होती जा रही है। इसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य अन्तःक्रिया को सम्मिलित किया जा सकता है। दूरस्थ शिक्षण संस्थाओं में कम्प्यूटर नैटवर्क उपलब्ध सुविधाओं के आधार पर व्यक्तिगत अधिगम अथवा सामूहिक अधिगम को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

29.5 सारांश
(Summary)

आपको दूरस्थ शिक्षा में विभिन्न माध्यमों जैसे मुद्रण आधारित ऑडियो-वीडियों आधारित तथा इलैक्ट्रॉनिक माध्यमों के बारे में बताया गया।

भारतीय संदर्भों में शिक्षण संस्थाओं में आधुनिक इलैक्ट्रॉनिक प्रौद्योगिकी का लोकप्रिय होना अभी बाकी है। दूरस्थ शिक्षा प्रणाली का उक्त माध्यम की सहायता से प्रसार किया जा सकता है सहायक साधनों के माध्यम से दो तरफा संप्रेषण को प्रोत्साहित किया जा सकता हैं। इसके लिए शिक्षण संस्था तथा शिक्षार्थी के घर पर मूलभूत संरचना विकसित करनी पड़ेगी। तकनीक सहयोग के अतिरिक्त आधुनिक संप्रेषण में सफलता पूर्वक उपयोग के लिए कम खर्चीला होना भी एक महत्वपूर्ण घटक है।

स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)

प्र.1 मुक्त अधिगम सामग्री किसे कहते है? तथा इसकी विशेषताएँ लिखिए।

प्र.2 मुद्रित पाठ सामग्री की अपेक्षा कम्प्यूटर समर्थित अनुदेशन के क्या-क्या लाभ है?

29.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची (Bibliography)

- आनन्द, एस.पी. : कम्यूनिकेशन टैक्नोलॉजी इन एड ऑफ डिस्टेन्स एज्यूकेशन इन मुखोपध्याय एम (इड) एज्यूकेशनल टैक्नोलॉजी, चेलेन्जिंग इशूज, न्यू देहली : स्टरलिंग 1970
- आसुबेल, डी.पी.इन डिफेन्स ऑफ एडवान्स आर्गेनाइजर्स : ए रिप्लाई टू दि क्रिटिक्स, रिव्यू ऑफ एज्यूकेशनल रिसर्च, वाल्यूम 48, संख्या 2 1978
- ब्रेटज आर : मीडिया फॉर इन्टर एक्टिव कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली, 1983
- रेस, पी. : दी ओपन लर्निंग हेन्ड बुक, लन्दन, कीगन पेज, 1989
- शाह, बी. एज्यूकेशनल टैक्नोलॉजी सम रिसेन्ट इन्नोवेशन्स, यूनिवर्सिटी न्यूज, अप्रैल 17,1989
- सोनी, एस.के., इन्टर एक्टिव वीडियो, एन इमर्जिग टैक्नोलोजी इन मुखोपाध्याय, एम (इड), ई. टी. ईयर बुक, 1988, ए.आइ.ए.ई.टी. नई दिल्ली, 1990
- वैंकटैया, एन., एज्यूकेशनल टैक्नोलोजी, ए.बी.एच. पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1997

ISBN - 13/978-81-8496-075-4